ऋषि दयानन्द जन्म शताब्दी संस्करण।

संगीत रत्न प्रकाश

उत्तार्द्ध

पांचवाँ भाग

———◌✱◌———

विविध विषयक देश भक्ति पूर्ण राग रागनियों का
मनोहर संग्रह

संग्रहकर्त्ता व प्रकाशक
मुं० द्वारकाप्रसाद अत्तार
बाज़ार बहादुरगंज, शाहजहाँपुर

——:o:——

चतुर्थ वार | सन् १९२६ ई० | मूल्य सजिल्द
६.००

के० सी० बनर्जी के प्रबन्ध से
ऐंग्लो ओरियंटल प्रेस, लखनऊ में मुद्रित

❀ विषय सूची ❀

भजन सूची

संगीत-रत्न-प्रकाश उत्तार्द्ध

पांचों भाग

संख्या	टेक	भजन

संगीत-रत्न-प्रकाश ।

❀ उत्तरार्द्ध ❀

पाचवाँ-भाग ।

❀ ईश्वर स्तुति प्रार्थनोपासना ❀

ओं आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायताम्
आ राष्ट्रे राजन्यः शूर इषव्योऽतिव्याधि
महारथो जायताम्
दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धि-
र्योषा जिष्णू रथेष्ठाःसभेयो युवास्य यजमानस्य
वीरो जायाताम्
निकामे निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु
फलवत्यो न ओषधयः पच्यताम्
योगक्षेमो नः कल्पताम्
सुप्रजाः प्रजाभिस्याम् सुवीरो वीरैः
सुपोष पोषैः

हरिगीत १

परमात्मन् इस राज्य में हों ब्रह्मवर्चस विप्रवर,
राजन्य भी हों महारथी आरोग्य युत हों वीरनर;
धेनु अरु वाणी भी हों कल्याणी अरु दोग्ध्री सदा,
हों अश्व अरु बलिवर्द भी बलवंत सुखदाई सदा;
युवती सुशीला सुंदरी सुभगा सदा हों प्रेमदा,
जिगीशु रथारूढ़ वीरनर विद्वान् सभ्य सभा सदा;
शुभ यज्ञ कर्ता ज्ञानी अरु विज्ञानी वीर यजमान हों,
इच्छित समय पर वृष्टि होकर सृष्टि का कल्याण हों
बहु रसवती हो वसुमती फलवति वनस्पति सर्व हों,
अन्नादि औषधियें बहुत बलदायिनी सर्वत्र हों;
हे ईश आशा आप से संसार भरका क्षेम हो,
सिद्धांत वैदिक धर्म के संसार भर में व्याप्त हों;

चौताल २

प्रथम मान ओंकार, वरुण, इन्द्र, अनन्त, अनादि शुद्धबुद्ध मुक्त, नित्य अजर अमर निराकार, विद्यामान, सरस्वती, जगतमान प्रजापति, ध्यानमान निर्गुण सगुण, धर्ममान, धर्मराज, न्यायमान, न्यायकारी, रचित मान विश्वकर्त्ता, धारण मान सर्वाधार ॥ प्रथम मान ओंकार० ॥

चक्षुमान सूर्यचन्द्र, सूर्यचन्द्र प्रकाशमान.प्रकाशमान हिरण्यगर्भ,नवलसिंह यह विचार,अगम निगम अपारम्पार, जगत स्थूल अन्तमान, आदि अन्त धर्मसार ॥प्रथम मान ओंकार०॥

भजन ३

टेक-अनहद अलख ओंकार जी।

तू निराकार अकाल है. तू न्यायकारी दयाल है।
तेरी न कोई मिसाल है॥ अनहद० १॥
तेरा न आज कोई तोल है, लम्बा न चौड़ा गोल है।
तेरा अजब एक डौल है॥ अनहद० २॥
नहीं रूप रस और गन्ध है, नहीं नाड़ी नस का बंध है।
तू सत् चित्त आनन्द है॥ अनहद० ३॥
तू अचल और अकूट है, अखण्ड और अटूट है।
एक सम, नहीं कहीं फूट है॥ अनहद० ४॥
काला न पीला लाल है, नर नारि वृद्ध न बाल है।
एक रस तू तीनों काल है॥ अनहद० ५॥
सारा तेरा स्थान है, तू ज्ञान का भी ज्ञान है।
तू प्राण का भी प्राण है॥ अनहद० ६॥
इतना बड़ा आकाश है, इसका भी तुझ में वास है।
सब में तेरा प्रकाश है॥ अनहद० ७॥
तू मुक्त और विज्ञान है, तेरे न कोई समान है।
तू सर्व शक्तिमान है॥ अनहद० ८॥
कारण जगत तेरे हाथ है, यह जीव अनादी साथ है।
एक तू ही सब का नाथ है॥ अनहद० ९॥
जितना यह सब संसार है, तेरेही सब आधार है।
तू सबका रचनेहार है॥ अनहद०॥ १०॥
नहिं आप देह धरता है तू, नहिं जन्मता मरता है तू।
नहिं दुःख में पड़ता है तू॥ अनहद० ११॥
जगत रचता बारम्बार तू, करता है फिर संहार तू।
रखता है यही व्यवहार तू॥ अनहद० १२॥
करता है पर उपकार तू, देता कर्म अनुसार तू।
देखे है सब का कार तू॥ अनहद० १३॥
नहिं पापियों को तारता, नहिं धर्मियों को मारता।

नहिं नियम अपना टारता ॥ अनहद० १४ ॥
जो युक्ति और प्रमाण से, सब कुछ यथार्थ जान ले।
वह तृप्त हो तेरे ध्यान से ॥ अनहद० १५ ॥
योगी जो दशवें द्वार को, देखे है तत्व के सार को।
तर जाय यह संसार को ॥ अनहद० ॥ १६ ॥
तुझ को नहीं जो जानता, आज्ञा तेरी नहीं मानता।
वह मुफ्त मिट्टी छानता ॥ अनहद० १७ ॥
मुझ को न तेरा पार है, वेदों में सब विस्तार है।
तुझ को जो जान भार है ॥ अनहद० १८ ॥
है 'नवलसिंह' की लौ लगी, है तेरेही नित धुन लगी।
बुद्धि रहे नित जगमगी ॥ अनहद० १९ ॥

भजन ४

टेक-अटल प्रताप तुम्हारा, मेरे प्रभु जी ॥
दया भण्डार सकल प्रतिपालक, तुही जगत आधारा।
नित्य निरंजन जगत् के कारण, स्वामी जगत् पसारा ॥
सब जीवन प्रभु पोषणकर्त्ता, तुझसा नहीं कोई दातारा।
तू परिपूर्ण सब जन त्राता, दुःख निवारण हारा ॥
तू जग पावन अधम उधारण, निर्मल रहित विकारा।
तू करुणामय जग पितु माता, तुझे प्रणाम हमारा।
तू प्रभु दीन दयालु मोरे, तुझ ही से है पुकारा ॥
सीस नवाय दोऊ कर जोड़े, विनवे हे करतारा ॥
जगत् जंजाल निवारण कीजे, हो भवसिन्धु पारा।
निज सहवास करो प्रभु अर्पण, याचें हम वारम्बारा ॥

भजन ५

टेक-ईश्वर तू अपरम्पार है, तेरा ही सब संसार है।

इस में तूही एक सार है, तुझको सदा प्रणाम हो ॥ १ ॥
सर्व जगदाधार तू, है सब का पालन हार तू।
हम सबका एक कर्तार तू, तुझमें न कोई विकार है।
तूही एक अपार है, तुझ को सदा प्रणाम हो ॥ २ ॥
एक तू अनुपम है प्रभु, त्रिकाल में है एक तू।
है तुझ में नाहीं रंच भू, तुझको सदा प्रणाम हो ॥ ३ ॥
तू सतचित्त आनन्द है, तू नित्य शुद्ध अखण्ड है।
बल तज में प्रचण्ड है, तुझ को सदा प्रणाम हो ॥ ४ ॥
सब विश्व में है समा रहा, आकाश में तू रम रहा।
है जीव में भी बस रहा, तुझ को सदा प्रणाम हो ॥ ५ ॥
तू धर्म पालक है सदा, है न्यायकारी तू पिता।
है दुष्ट नाशक सर्वदा, तुझको सदा प्रणाम हो ॥ ६ ॥
तू धर्म में हम को बढ़ा, शुभ कर्म ही हम से करा।
दो पाप से हमको छुड़ा, तुझको सदा प्रणाम हो ॥ ७ ॥
इक तेरे ही हम दास हैं, तुझ पर धरे सब आस हैं।
तुझ से करें अरदास हैं, तुझको सदा प्रणाम हो ॥ ८ ॥
हम दीनों पर तू दया कर, ले सबकी स्वामी तू खबर।
निज ज्ञान से कर बहरावर, तुझको सदा प्रणाम हो ॥ ९ ॥

गजल ६

परस्पर मिलके प्रीति से, प्रभु चरणन में आते हैं।
तरन तारन वही हमरा, उसी के यश को गाते हैं ॥ १ ॥
यह अद्भुत सृष्टि की रचना, उसी का सब पसारा है।
पदारथ सर्व सृष्टी के, उसी को ही जनाते हैं ॥ २ ॥
यह सूर्य चन्द्र नक्षत्र, वही इन सब का उत्पादक।
हमारा है वही कर्त्ता, उसी में प्राण पाते हैं ॥ ३ ॥
वही है ज्ञान भण्डारा, वही है ज्ञान का दाता।

ज्ञान उससे जा चाहते हैं, निरासी वे न जाते हैं ॥ ४ ॥
वही है सत्य का सागर, वही है सत्य उपदेशक।
जो जन है सत्य अभिलाषी, उसी की जय मनाते हैं ॥ ५ ॥
वही एक धन है निर्धन का, वही निर्बल का बल दाता।
दरिद्री और निर्बल जन उसी की शरण आते हैं । ६ ॥
पवित्र शुद्ध है निर्मल, वही है जगत का शोधक।
उसी के मल से पापी, सब पापों को हटाते हैं ॥ ७ ॥
न्यायकारी वह है स्वामी, न्याय को सर्वदा पाले।
अधर्मी राज में बसके, सदा दुख ही उठाते हैं ॥ ८ ॥
अजन्मा सर्वव्यापी और, अकायम मुक्त वह पूरण।
जो ऐसा पूजते उसको, अमर निश्चय हो जाते हैं ॥९॥

भजन ७

टेक-तुझे प्रणाम हमारा, प्रभु जी।
तू महाराज जगत का स्वामी, तुमरा सकल पसारा।
जीव जन्तु रचना सब तेरी, तू ही जगत अधारा ॥
एक देव त्रिभुवन का राजा, तिस को वर्णन हारा।
द्वीप खण्ड दिक महिमा गावें, यश गावे जग सारा ॥
कोटि २ पापी जन तारे, सब अपराधी भारा।
मुक्ति दान करें करुणा वश, तारें मुग्ध गँवारा।
ऊपर नीचे तें सिंहासन, व्यापत सर्व संसारा।
धन्य २ तेरी प्रभु मेरे, महिमा अपरम्पारा ॥
तूही एक शरण जग माहीं तूही प्राण अधारा।
तूही सकल जगत् प्रतिपाले, स्वयं प्रकाश कर्त्तारा ॥
निर्विकल्प निश्चल जग ज्ञाता, पूर्ण रहित विकारा।
जिस सा और न कोई जग में, हुआ न होवन हारा ॥
सकल चराचर का है तुझ से, जन्म पोषण संहारा।

राजों का महाराज तुहीं है, यह सब काम तुम्हारा ॥
दोऊ कर जोड़ तुझे हरि ध्यावें, लेहु प्रणाम हमारा ।
भक्ति दान देहु निज दया से देखें सत्य दुआरा ॥

भजन ८

तुम्हारी कृपा से जो आनन्द पाया ।
वाणी से जावे वह क्यों कर बताया ॥
नहीं है यह रस जिसे रसना चाखे ।
नहीं रूप उसका कभी दृष्टि आया ॥
नहीं है यह गुण गन्ध को प्राणजाने ।
त्वचा से न जावे यह छुआ छुवाया ॥
संख्या में आना असम्भव है उसका ।
दिशा काल में भी रहे न समाया ॥
तुझसा न दाता है तुझसा न दानी ।
इतना बड़ा दान जिसने दिलाया ॥
आत्म उन्नति में तुम्हारी दया से ।
मेरी ज़िन्दगी ने अजब पलटा खाया ॥
सच्चिदानन्द अनन्त स्वरूप ।
तुझे मेरे अनुभव ने निश्चय कराया ॥
गूंगे की रसना के सदृश 'अमीचन्द' ।
कैसे बतावे कि क्या रस उड़ाया ॥

ग़ज़ल ९

टेक—तुम्ही हो सहायक सृष्टि के नायक ।
तुम्हारा कोई पार पाता नहीं है ॥
न जन्म और मरण के हो बन्धन में आते ।
तुम्हारा पिता और माता नहीं है ॥

सदा तुम विकारों से रहते हो न्यारे।
कुकर्मी तुम्हें कोई पाता नहीं है॥
तुम्हारी शक्ति काम करती है हर जा।
तेरा रूप दृष्टि में आता नहीं है॥
शिफारिश की तुझ पै ज़रूरत नहीं है।
और रिशवत तू खाता किसी से नहीं है॥
किसी खास घर में नहीं तेरा रहना।
मकां अपना तू कोई रखता नहीं है॥
तू सब का है प्यारा न शत्रु किसी का।
जोरू और बेटे का नाता नहीं है॥
हम आप तेरे द्वार पर बस लिये हैं।
जो तुझसा और कोई दाता नहीं है॥
कोई है "रत्न" वह सदा दुःख भोगे।
तेरे आगे जो सिर झुकाता नहीं है॥

भजन १०

तुम हो प्रभु चांद मैं हूं चकोरा।
तुम हो कमल फूल, मैं रस का भौंरा॥ १॥
ज्योति तुम्हारी का मैं हूं पतंगा।
आनन्द घन तुम हो, मैं वन का मोरा॥ २॥
जैसे है चुम्बक की लोहे से प्रीति।
आकर्षण करे मोहि लगातार तोरा॥ ३॥
पानी बिना जैसे हो मीन व्याकुल।
ऐसा ही तड़फाय तेरा बिछोड़ा॥ ४॥
एक बूंद जल का मैं प्यासा हूं चातक।
अमृत की करो वर्षा हरो ताप मोरा॥ ५॥

भजन ११

तुही है सनातन तुही है अनूपम,
तू राजों का अधिराज,सरकार उत्तम।
छोटासा कमरा है ब्रह्माण्ड उसका,
जो तेरा शयन है दरबार उत्तम।
पवन देवता तेरा पखा कुली है,
बरषा भरे पानी पनिहार उत्तम।
अँगीठी जलाने पै नौकर है आग्न,
सूर्य का दीपक जले द्वार उत्तम।
फुलवाड़ी का फरश कोमल से कोमल,
बना बेल बूटे गुलज़ार उत्तम।
पुष्पावली है लवेण्डर की शीशी,
ऋतुराज है तेरा मलियार उत्तम।
तेरी लाइवरी के पुस्तक, मुकद्दस,
मिले सृष्टि की आदि में चार उत्तम।
ऐश्वर्य तेरा अपरमित है इतना,
करें किस बुद्धि से बिस्तार उत्तम।
अखण्ड एकरस की लगी हमको प्यासा,
अमीरस पिलाकर करो प्यार उत्तम॥

ग़ज़ल १२

जिस मन में सच्चा ज्ञान है, वह निश्चय बुद्धिमान है।
तेराही करता ध्यान है, तू सर्व शक्तिमान है।
सूरज को दी तूने चमक, बिजली ने ली तुझ से दमक।
कोई नहीं तुझ से अधिक। तू सर्व०।
तेरा रचा संसार है, सब कुछ तेरे आधार है।

नहीं कुछ तुझे दरकार है। तू सर्व०।
तू है अगोचर और अगम, आकाश से भी सूक्ष्म।
होता नहीं तेरा जन्म। तू० सर्व०।
तू है अमृत्यू और अमर, है सर्व व्यापक और अजर।
रखता है सब की तू खबर। तू सर्व०।
नहीं तू कभी अभिमानी है, तुझ में नहीं नादानी है।
भिक्षुक हैं हम तू दानी है। तू सर्व०।
तूने जगत उत्पन्न किया, भक्तों के दुःख को दूर किया।
सब कुछ हमें तूने दिया। तू सर्व०।
तूने रचा चरखेंवरीं, तेरा ही फ़र्श है ज़िमीं।
तेरी कोई उपमा नहीं। तू० सर्व।
तू सब में है सब से जुदा, न्यारा भी है और मिल रहा।
बुद्धि लगाये क्या पता। तू सर्व०।
जिस ने लगाया तुझ से मन, आनन्द है वह और मग्न।
दे ज्ञान का मुझको भी धन। तू सर्व०।
है सब से तेरी मित्रता, रखता है सब पर तू दया।
जो योग्य था सब कुछ दिया। तू सर्व०।
"केवल" कहे करजोड़ कर, स्वामी मिले यह मुझको वर।
मन मेरा हो विद्या का घर। तू सर्व०।

भजन १३

जो जन शरण तेरी में आवे, धर्म भाव उस में बस जावे।
शोक मोह से हो अवर्तारन, काम क्रोध, सब ही बिसरावे।
सब प्राणी आत्म सम देखे, दुःख पराया अपना भावे।
परस्वार्थ में निज सुख जाने, पर हित में मन तनको लगावे।
सत ही माने सत ही बोले, सत्य करे और सत्य करावे।
कष्ट सहे अरु निन्दा सहे, पर धर्म कहे और धर्म सिखावे।

ईंट खोवे फूल बरसावे, जहर पिये अमृत को पिलावे।
पल २ में तेरा यश गावे, जन्म मरण उसका कट जावे॥

गज़ल १४

धर्म्म की डूबती नैय्या को तराने वाले।
दुख के सागर से हमें पार लगाने वाले॥
चाँद् यह तारे रचे और सृष्टि अद्भुत।
नाना प्रकार के फल फूल उगाने वाले॥
पंचतत्व काल ऋतु और प्रमाणु भानु।
सर्व को नियम अटल में हो चलाने वाले॥
रूप रस गन्ध विकारों से हो बाहर स्वामी।
नाड़ी नस आदि के बन्धन मे न आनेवाले॥
तिमिर अज्ञान में पड़ हमको कहां थी सुधबुध।
सत उपदेश के डंके से जगाने वाले॥
आज्ञा पालन में तेरे रहते सदा है जो जन।
भक्त वत्सल हो उन्हें मोक्ष दिलाने वाले॥
तेरी भक्ति की लगन जिनको लगी है ईश्वर।
उनके आनन्द को हिम्मत को बढ़ाने वाले॥
शरणागत छोड़ तेरी और कहां हम जावें।
सर्व आधार हो गिरतों को उठाने वाले॥
तुच्छ बुद्धि है गंगाराम करे क्या वर्णन।
अकथ अगोचर हो हरेक जा पै समाने वाले॥

भजन १५

महां हो पिता नाम तेरा महां हो, नमस्कार हमारा तुझे हर जबान हो॥ १॥
तुमही एक सब के हो पालक स्वामी, तुम्हीं सर्व रक्षक सृष्टि की जान हो॥ २॥

तुमही ज्ञान मय ज्ञान दाता तुमही हो, अविद्या के नाशक विद्या की खान हो ॥ ३ ॥

स्वयं सत्य उपदेश हो नित्य करते, धर्म दान से तिम् नाशक तुम्हीं हो ॥ ४ ॥

सर्व शक्तिमान आप शक्ति प्रदाता, तुम ही सर्व आधार सब से बली हो ॥ ५ ॥

न्यायकारी हो न्याय धारण कराते, कि प्रजा के सेवन से उसका भला हो ॥ ६ ॥

स्वयं शुद्ध शोधक हों सब के दयामय, कि हर जीव जन्तु को परम शांति हो ॥ ७ ॥

पिता ! द्वार मुक्ति का तेरा खुला है, उसे पाये वह जिसको तेरा ज्ञान हो ॥ ८ ॥

हमें शरण लीजे हे दीनबन्धु, कि यह लोक परलोक हमारा सुफल हो ॥ ९ ॥

भजन १६

न होगा हुआ और न है कोई तुझ सम ।
तुही सबका राजा तुही सब से उत्तम ॥
ब्रमाण्ड सारा तुझे है जनाता ।
सर्व भूतों का है तू आधार उत्तम ॥
तेरी ज्योति अद्भुत करे कौन वर्णन ।
सर्व में तेरा ही है प्रकाश उत्तम ॥
तू है सच्दिानन्द निर्मल पवित्र ।
तेरा ज्ञान है सर्वथा श्रेष्ठ उत्तम ॥
तेरी शक्ति का वार पारा नहीं है ।
तुही है चराचर का आधार उत्तम ॥

करें है विनय तुझ से हे दीन बन्धु।
तुही एक सब का सहारा है उत्तम॥
अति पापी तर जायँ करुणा से तेरी।
यदि लेवें सुनचत तेरी शरण उत्तम॥
अति पतित हैं हम सब अय दयामय!
करो हम पै निज दयालुता वृष्टि उत्तम॥
विषय वश हुये हैं अति मलीन हैं हम।
धर्म धन का दो दान हे नाथ उत्तम॥
गुणावाद तेरा करें मिल के निशिदिन।
मिले अन्त को मोक्ष का द्वार उत्तम॥

भजन १७

नमः हो नमः हो नमः प्राणदाता।
नमः हो नमः हो नमः प्रिय दाता।
तू आकाश सम हर स्थान में व्यापक,
सृष्टि का रचता तुही है विधाता॥
अकायम है तू काया तेरी नहीं है,
निराकार है तू नहीं जन्म पाता।
अति सुक्ष्म से भी सूक्ष्म तू,
है परमाणुओं के भी अन्तर समाता॥
तू है नाड़ी नस के बंधन से बाहिर,
सदा मुक्त और एकरस तू कहाता॥
तू शुद्ध और निर्मल तू है ज्ञान सागर,
अविद्या का नाशक तू विद्या बढ़ाता॥
नहीं पाप का लेश तुझ में ज़रा भी,
न्यायकारी है तू न्याय को जनाता।
सर्ववित, सर्वज्ञ सब का द्रष्टा,

सर्व साक्षी मन के अन्दर रमाता ॥
ब्रह्माण्ड का एक स्वामी तुही है,
सर्वेश सब को नियम में चलाता।
अकारण है तू, आदि तेरा नहीं है,
निराधार तू सब में शक्ति बसाता ॥
सृष्टि के आरम्भ में वेद द्वारा,
परम सुख मोक्ष का रस्ता दिखाता।
नहीं पार पा सकते तेरी दया का,
अभागी है वहजन तुझे जो भुलाता ॥

भजन १८

नमो वेद विद्या के प्रकाशकर्ता, नमस्कार अज्ञान के नाशकर्ता।
नमस्कार बलबुद्धि के देनेहारे, नमस्कार दुःखों के हरलेनेवाले।
नमस्तेनिरंजनअविद्याविनाशक, नमो सच्चिदानन्द घट २ व्यापक
नमस्तेनिराकार निर्दोषनायक,नमस्ते परम मित्र सबके सहायक
निराकार निरवयव मुक्ति के दाता, तुम्हें है नमस्कार सायं प्रातः
नमोनाड़ीऔरनसकेबंधन से बाहर, नमोसर्वआधारकृपा के सागर
यहहैमांगता आपकादास केवल, किशुद्धिहोहृदयमेंबुद्धिहो निर्मल
रहेआपकाचित्तमेंनित्यसुमिरन, रहूं करतावेदोक्त क्रिया को सेवन

भजन १९

अपनीउपासनाअपनाहीजाप, सिखाओप्रभुपूजाकीविधिआप।
शिक्षा हमारीतुम्हारे अधीन, मैं हूँ बालबुद्धि तुमहो ज्ञानीबाप।
प्रीतिकरीतिबतादीजै हमको,जिसविधिसेहोवे तुम्हारामिलाप।
ज्योतिकासौंदर्य देखूं तुम्हारा,करूं मिलके तुमसे मैं वार्तालाप।
तुम्हारीकृपाकीनहींकोई सीमा,नहींतेरीकरुणाकाकोई तोलनाप।
तनकी तपत और मनकी अपतको,मिटाओ२ 'प्रभु' तीन ताप।

करें तेरी आज्ञा का पालन सदा हम, कि कर न सकें हम कभी कोई पाप।
वृथा जाता है जन्म जिनका भजन बिन, वह चलते करेंगे महा पश्चताप।
“अमी” रस की वर्षा वहां क्यों न होवे, जहां तेरा होवे मनोहर अलाप।

कवित्त २०

भारत की रक्षा करो कष्ट और क्लेश हरो,
तेरी एक टेक, मोको तेरा ही सहारा है।
हमरी दशा हीन, हीनन से हीन दीन,
भारत निवासियों ने रो २ यह पुकारा है।
विनय करजोड़े हाथ, सुनिये दीनन के नाथ
तुही परम मित्र मेरो, तुही रखवारा है।
“अमीचन्द्र” बार २, करत हैं नमस्कार,
कीजिये स्वीकार, यह तो दास ही तुम्हारा है।

भजन २१

अंत समय में हे जगदीश मुझ को,

तुमरा ही स्मरण तुमरा ही ध्यान हो।
लवलीन हो तुझ में चित्त वृत्ति मेरी,
जबतक स्वासों में प्राण और अपान हो।
योगी के सदृश लगाऊँ समाधि,
ओंकार अक्षर का वाच्यार्थ ज्ञान हो।
न शोक हो न मोह हो न ममता किसी में,
न पीड़ा हो तन को न कुछ दुःख भान हो।
जीवात्मा का निवास हो वहां पर,
जहां तेरे सुख पद का उत्तम स्थान हो।

भजन २२

पिता परम सुनिये विनय एक हमारी,

द्वारे पै तेरे हैं आये भिखारी।
अति क्लेश से हृदय पीड़ित है हमारे,
विपद हमसे ईश्वर न जाये सहारी।
है अज्ञान का तिमिर हम सब पै छाया,
दिखाई न दे तेरी ज्योति प्यारी।
असत्य और मिथ्या का लीना सहारा,
कपट दम्भ म सारी आयू है हारी।
विषय भोग में रात दिन को विताया,
स्वार्थ ने सुध बुध सभी है बिसारी।
दुराचारी दुष्टों का ही साथ भाया,
धर्म भाव से सर्वथा हुये आरी।
हे सर्वज्ञ! तुझ से भला क्या कहें हम,
मनीषी हो तुम जानों अन्दर की सारी।
तेरी आज्ञा भंग करते रहे हैं,
पिता मूर्खता हम से हुई है भारी।
तेरी करुणा की पर न सीमा कोई है,
अति पापियों को भी देवे है तारी।
तेरा नाम है पतित पावन दयामय।
लेओ शरण में हमको आनन्दकारी।
देओ सत्य विज्ञान अपना स्वामिन्.
धर्म की तरंगे हों तन मन में जारी।
तेरे यश को गावें सदा सारे हिलमिल,
कि हो अन्त को वृत्ति तुझ में हमारी॥

भजन २३

टेक—प्रीतम शरण गही है तेरी।

डूबत हूं प्रभु पाप सागर में, बांह पकड़ लो मेरी ॥
काम और क्रोध की धार में स्वामी, नाव पड़ी है मेरी ।
नाव टूटी अब चक्कर खावे, रक्षा करो इक बेरी ॥
तीक्ष्ण धार और वायु तीक्ष्ण, उलटा देवे है बेड़ी ।
बेड़ी में अब जल भर आया, चहुँदिशि लहरों मेरी ॥
हिरदा तड़फे जिया लरजत है, देख के घुम्मन घेरी ।
मगर मच्छ मोहि खाने को दौड़ें, आस है प्रभु एक तेरी ॥

भजन २४

टेक-तुम बिन नाथ न कोई हमारो ।

कृपा करो जन जान आपनो, जाऊँ कहां तज चरण तिहारो ।
पतित उधार कहत सब कोई, मोसम पतित को भारो ॥
जो कोई शरण आप की आयो, तुम जगदीश उधारे ।
सोई भरोस राख अपने मन में, तुमरो प्रभु नाम पुकारो ॥
मैं अति क्रूर कुटिल खल कामी, महा मलीन मतिमन्द गँवारो
तुम सर्वज्ञ सकल घट वासी, अलख निरंजन अगम अपारो॥
सत्य धर्म में श्रद्धा दीजे काम क्रोध मद लोभ विदारो ।
दास जान बलदेव आपनो, करो न नाथ चरण से न्यारो ॥

भजन २५

तुम ही हमारे नाथ दास मैं तिहारो जी,
अवर की न आस, खास आपको सहारो जी ।
काम क्रोध लोभ मोह निशि दिन करें द्रोह,
इन से दयानिधान ! दीजे छुटकारो जी ।
धर्म से हो प्रीति, छूट जावे अनरीति,
प्रभु नाम की प्रीति और भरोसा मोंहि भारो जी ।
तुम सम दानी और कौन है जगत बीच,

सर्व शक्तिमान ! मान राखो हमारो जी ।
अधम उधार निर्वैर निराकार, विनवत बार २,
बलदेव को उभारो जी, तुमही हमारे नाथ ॥

भजन २६

जय जय पिता परम आनन्द दाता ।
जगदादि कारण मुक्ति प्रदाता ॥१।
अनन्त और अनादि विशेषण हैं तेरे ।
सृष्टि का तू स्रष्टा तू धर्ता संहारता ॥२॥
सूक्ष्म से सूक्ष्म तू स्थूल इतना ।
कि जिसमें यह ब्रह्माण्ड सारा समाता ॥३।
मै लालित व पालित हूं पुत्री स्नेह का ।
यह प्रकृति सम्बन्ध है तुझसे ताता ॥४॥
करो शुद्ध निर्मल मेरे आत्मा को ।
करूं मैं विनय नित्य सायं वा प्राता ॥५॥
मिटाओ मेरे भय आवागवन के ।
फिरूं न जन्म पाता और बिलबिलाता ॥६।
बिना तेरे है कौन दीनन का बन्धु ।
कि जिसको मैं अपना अवस्था सुनाता ।७॥
'अमी' रस पिलाओ कृपा करके मुझको ।
रहूं सर्वदा तेरी कीर्ति को गाता ॥८॥

भजन २७

दयावान सुखरूप कल्याणकारी,
स्वीकार कीजे विनय यह हमारी ।
रहूं कीर्ति को तुम्हारी मैं गाता,
न हो त्याग सन्ध्या का सायं व प्राता ।

अधिष्ठाता हो आप सारे जगत के,
सदा दुःख हरते हो अपने भक्त के।
न क्यों होवे, भक्तों को भक्ति प्यारी,
मनोकामना जिस से हो सिद्ध सारी।
तुम्हारी दया का है भंडार जारी,
करो तीव्र बुद्धि को उससे हमारी।
रहे खोटे कर्मों से हर वक्त नफ़रत;
तुम्हारी ही भक्ति की हो मनमें उलफत।
जो हैं नास्तिक उनकी संगतिसे भागूं,
क्रोधी न हूं और अहंकार से भागूं।
न कामी न लोभी हूं और हूं न मोही,
रक्खूं मित्र अपना परोपकार को ही।
कपट दम्भ और इर्षा दूर जावें,
हर्ष शोक मुझको न आकर सतावें।
रहे मन में केवल तुम्हारी प्रीति,
न होवे कभी मुझ से कोई अनीति।

भजन २८

दया की दृष्टि करो मुझ पै भगवन,
यह तन मन मेरा आप के होवे अर्पण ॥ १ ॥
बने आप के ज्ञान का घर मेरा मन,
प्रेम आप का मेरे मन में हो पूर्ण ॥ २ ॥
तुम्हारी ही भक्ति का निशदिन हो सेवन,
निछावर रहे आप पर जान और तन ॥ ३ ॥
रहे मन लगा आप ही की लगन में,
न इच्छा कोई और पैदा हो मन में ॥ ४ ॥
न सन्ध्या का इक वक्त त्याग होवे,

मेरे मन में उत्पन्न वैराग होवे ॥ ५ ॥
रहे खोटे कर्मों से मन मेरा पृथक्,
अनुग्रह सदा आपकी हो सहायक ॥ ६ ॥
मेरे हृदय में ज्ञान प्रकाश होवे,
अविद्या के अज्ञान का नाश होवे ॥ ७ ॥
सदा वेद अनुकूल चाल और चलन हो,
न शुभ काम में कोई पैदा विघ्न हो ॥ ८ ॥
रहे सत्य पुरुषों की मुझ से प्रीति,
सदा दूर होवे कुसंगत कुनीति ॥ ९ ॥
विषय भोग का ध्यान मन में न आवे,
न लोभ और अहंकार आकर सतावे ॥ १० ॥
मेरे मन की सत्याचरण में रुचि हो,
तुम्हारी ही लौ मन में केवल लगी हो ॥ ११ ॥

भजन ४९

टेक-शरण पड़ा हूं मैं तेरी दयामय ।
जगत सुखों में फँसकर स्वामी, तुझ से लिया चित फेरी ॥
पाप ताप ने दग्ध किया मन, दुर्मति ने लिया घेरी ।
बहा जाता हूँ भवसागर में, पकड़ लेउ भुज मेरी ॥
अनेक कुकर्म गिनो मत मेरे, क्षमा दृष्टि देउ फेरी ।
सत्य ज्ञान मधुर मुख अपना, करो प्रकाश एक बेरी ॥
पाप मलीन हृदय में मेरे, ज्योति प्रकाशे तेरी ।
प्रेम तरंग उठें मम अन्तर, दीन विनय सुनो मेरी ॥

भजन ३०

टेक—गावे हरि तेरा यश जग सारा ।
तू जग करता संकट हर्ता, हर्ता सकल पसारा ।

जीव चराचर तेरी रचना, सब का तू ही सहारा ॥
सब संसार में महिमा गावें, रवि शशि मण्डल सारा ।
स्वर्ग पताल सब तेरी दर ठाढ़ी गावें पुकार पुकारा ॥
तू एक स्वामी अन्तर्यामी अद्भुत ज्ञान भण्डारा ।
शिव सर्वज्ञ स्वतन्त्र एको, पूरन एक ओंकारा ॥
तूही अनन्त तूही अविनाशी तुहि प्राण आधारा ।
जग जन रक्षक तुही दयामय, शक्ति तेरी है अपारा ॥
तैं सम कोई न दीखे जग में, तव प्रताप तुम्हारा ।
घट २ का प्रेरक हरि तूहि तारन हारा ॥
तुझ को छोड़ न जावें कितही, दीजे वर यह भारा ।
निर्मल यश तुमरा प्रभु मेरे एक ही हो पियारा ॥
सब जग को नित सेवा दीजे, भक्ति पर उपकारा ।
भक्ति करें निष्काम हो तेरी, जावें तेरे बलिहारा ॥
दान दिउ प्रभु भिक्षा मांगे सत चित आनन्द कारा ।
दोउ कर जोड़ हृदय होय आतुर, दीन यह दास तुम्हारा ॥

भजन ३१

टेक—लीजिये अब मोहि तार दयामय लीजिये अब मोहिं तार ।
मन वच कर्म के पाप पुंज मम, शीघ्र भस्म कर डार ॥ दया० ॥
जैसे तिनक चिंगारी जलावत, घासके कोट अम्बार ।
ऐसो नाम है अघनाशक तव जिसने लिया विचार ॥ दया० ॥
तुमरा पुत्र सुपुत्र कहलाकर, जाऊं किस के द्वार ।
श्रीमान् महाराजाधिराजा, आवत शरण तिहार ॥ दया० ॥
नहीं पियारी तहसीलदारी, नहीं जज्जी दरकार ।
यदि राखो अपनी सेवा में, किंकर चौकीदार ॥ दया० ॥
होवें गवर्नर तब क्या बनेगा, जाउं अन्त सिधार ।
अभिलाषी हूं उस पदवी का, बना रहूं लगातार ॥ दया० ॥

कपिल पतञ्जलि गौतम आदी, करनी कर हुए पार ।
अमीचंद जैसे नीचको तारो, हे पिता पतित उद्धार ॥ दया० ॥

ग़ज़ल ३२

टेक–हे दयामय हम सबों को शुद्धताई दीजिये ।
दूर कर के हर बुराई को भलाई दीजिये ॥
तेरी कृपा और अनुग्रह हम पै हो परमात्मा,
हों सभासद इस सभा के सबके सब धर्मात्मा । १ ॥
हो उजाला सब के मन मे ज्ञान के प्रकाश से,
और अन्धेरा दूर सारा हो अविद्या नाश से २ ॥
खोटे कर्मों से बचें सब, तेरे गुण गावें सभी,
छूट जावें दुःख सारे, सुख सदा पावें सभी । ३ ॥
सारी विद्याओं को सीखें, ज्ञान से भरपूर हों,
शुभ कर्म में होवे तत्पर, दुष्ट गुण सब दूर हों । ४ ॥
यज्ञ हवन से हो सुगंधित, अपना भारतवर्ष देश,
वायु जल सुखदाई होवे, जायें मिट सारे क्लेश । ५ ॥
वेद के प्रचार में, होवें सभी पुरुषार्थी,
होवे आपस में प्रीति, और बनें परमार्थी । ६ ॥
लोभी और कामी क्रोधी, कोई भी हम में न हो,
सब व्यसनों से बचें, और छोड़ दवें मोह को । ७ ॥
अच्छी संगत में रहें और वेद मारग पर चलें,
तेरे ही होवें उपासक, और कुकर्मों से बचें । ८ ॥
कीजिये "केवल" का हिरदा, शुद्ध अपने ज्ञान से,
मान भक्तों में बढ़ाओ सब का भक्ति दान से । ९ ॥

लावनी ३३

हे जगदीश्वर, हे जगदीश्वर, हे जगदीश्वर परम पिता ।

कृपा करके रखिये मुझको पाप कर्म से सदा जुदा ॥
आप की भक्ति निशि दिन होवे, भक्तजनों का संगत हो।
रहे कुनीति और कुसंगति मेरे निकट से अलग सदा॥
चलते फिरते सोते जागते ध्यान में मन लवलीन रहे।
बुरे कर्मों से घृणा हो और शुभ कर्मों में हो श्रद्धा॥
धारणा, ध्यान, समाधि में कोई हानिकारक, विघ्न न हो।
एकाग्रता मन को होवे जाती रहे सब चञ्चलता॥
काम लोभ और मोह अति बलवान हैं शत्रु हे प्रभुजी।
इन पर जय पाने के कारण दूर कीजिये निर्बलता॥
हृदय नगर में साक्षात् कर सकूं आप को मैं जैसे।
ज्ञान नेत्र खुल जावें मेरे ऐसी हो मुझ पर कृपा॥
विनय पूर्वक 'केवल' की है आप से विनती हे भगवन।
अति दीन हूं मैं भिक्षुक भक्ति की पाऊँ मैं भिक्षा॥

लावनी ३४

हे जगदीश्वर जगत उत्पादक दया दृष्टि प्रभु मुझ पर हो।
पाप मैल धुल जावे सारा, शुद्धता अन्दर बाहिर हो॥
मित्रता हो आपस में हमारे, वैर भाव से रहें अलग।
वेद का हो प्रचार देश में वेद पाठ भी घर घर हो॥
धर्म उत्साही पर उपकारी, होवें सब अपने साथी।
वेद आज्ञा पग २ ऊपर, साथ हमारे नायक हो॥
ऐसा साधन कर तू प्यारे, जिस से तेरे हृदय में।
काम आदि के लिये जगह, न बाकी बाल बराबर हो॥
पर उपकारी सत्याचारी, उसी का होना सम्भव है।
पुरुषार्थ से थके न जो, सन्तोष की ओढ़े चादर हो।
यही मार्ग है सुख पाने का, इसी में है परलोक सुधार।
मन वश में रहे सर्वदा, कभी नहीं यह चंचल हो॥

कैसे मूरख हैं जो छिपा कर, पाप कर्म को करते हैं।
उससे क्योंकर छिपे भला जो, व्यापक अपने अन्दर हो ॥
दोनों लोक उसी से सुधरें, उसी की होवे प्रतिष्ठा।
जगत पिता की भक्ति में, जो निश्चय कर के तत्पर हो ॥
तन मन ईश्वर अर्पण करके, जो काम सब निष्काम करे।
मुक्ति का भागी होवे 'केवल' जन्म मरण से बेडर हो ॥

लावनी ३५

दोहा–मेल को रचना कहो, बिछुड़न का मृत्यु नाम है।
जो न राखें मेल उनका, भौतिक जन्म तमाम है ॥
इस जगत को मेला कहो, मिलने से यहां आनंद है।
सब ओर देखो ज्ञान से सब मेल का प्रबन्ध है ॥

टेक–हे ईश्वर कर कृपा, हम जीवों में उपजे प्रीति।
वैर विरोध से दूर रहें और आयू सुखसे करें व्यतीत।

चौक १

आत्म ज्ञान होय हम सब को धर्म अहिंसा को धारें।
बिन अपराध पशू पक्षी और जीव जन्तु को नहीं मारें ॥
तन मन धन और वचन ज्ञान से एक का एक कारज सारें।
होवें परस्पर सभी सहायक, पक्ष मैल को धो डारें ॥
नीति से वर्ताव करें, कभी होवे न आपस में अनरीति।
वैर विरोध से दूर रहें और आयू सुख से करें व्यतीत ॥

चौक २

मनुष्य मात्र एक सभा बनाकर, सुख मारग को सिद्ध करें।
जिन २ कर्मों में दुख देखें, उन २ को हम दूर करें ॥
सत् असत् को विचार कर, तज असत् सत् का कोष भरें।

जिस मार्ग से ऋषि मुनि गए, उसी घाट से हम उतरें ॥
अन्धकार से निकल वेद अनुकूल रीति सब करलें ठीक ।
वैर विरोध से दूर रहें और आयू सुख से करें व्यतीत ॥

चौक ३

न्याय पूर्वक जहां मेल है वहां सुख सम्पत रहता है ।
पक्षपात जहां अपस्वार्थ है, वहीं सदा दुख रहता है ॥
अनरीति वहां रहे जहां, एक को एक नहीं कुछ कहता है ।
बिना सभा पंचायत के यों, कौन किसी की सहता है ॥
हिल मिल पंचों काम करें, नहीं उनको होता है भयभीत ।
वैर विरोध से दूर रहें और आयू सुख से करें व्यतीत ॥

चौक ४

दयानन्द प्रबन्ध किया, आओ सब मिलकर करें विचार ।
सत्य धर्म को ग्रहण करें, और सब जीवों का करें उपकार ॥
आपस में सब प्रेम बढ़ावें, चार वेद रहे यही पुकार ।
जहां तहां वेदों के बीच में. है यही बचन बारम्बार ॥
नवलसिंह कहे आओ सब मिलकर ईश्वर के गुण गावेंगीत ।
वैर विरोध से दूर रहें और आयू सुख से करें व्यतीत ॥

लावनी ३६

टेक—यह भारत दीन हीन विनवे कर जोरी ।
दुख हरो अनाथ के नाथ शरण में तेरी ॥
सब त्याग दियो सत् धर्म कुमति उर आनी ।
नहीं रह्यो आचार विचार करत मन मानी ॥
चहुं ओर घटा घनघोर अविद्या घेरी ।
दुख हरो अनाथ के नाथ शरण में तेरी ॥ १ ॥

बन गए नाम मात्र के साधु सन्त कहलावें।
नाना विधि रच पाखण्ड सभी भरमावें॥
निज स्वार्थ सिद्ध करते हैं घर घर फेरी।
दुख हरो अनाथ के नाथ शरण मैं तेरी॥ २॥
द्विज करत कर्म अति नीच न तनक लजावें।
उपदेश सत्य के सब विरोधी बन जावें॥
छल बल कर प्राण हतैं नहीं करत हैं देरी।
दुख हरो अनाथ के नाथ शरण मैं तेरी॥ ३॥
नहीं रही परस्पर प्रीति दम्भ उर छाई।
घर घर जन जन में होत है निच्च लड़ाई॥
बसे रोग द्वेष और कपट मन में सब केरी।
दुख हरो अनाथ के नाथ शरण मैं तेरी॥ ४॥
कहीं करत विलाप बाल विधवा बिलखाती।
सुन सुन दारुण दुख दुसह फटत है छाती॥
कहीं गउएं "प्राण बचाओ" शब्द अस टेरी।
दुख हरो अनाथ के नाथ शरण मैं तेरी॥ ५॥
जितने कुबुद्धि, कुकर्म, कुचाल कुरीति।
सब के संग भारतवासी करत अति प्रीति॥
यह अर्ज 'किशोर' सुनावत दुख भारत केरी।
दुख हरो अनाथ के नाथ शरण मैं तेरी॥ ६॥

ग़ज़ल ३७

किया जिसने पैदा यह संसार सारा,
भरोसा उसी पर है केवल हमारा।
उसी से मदद मैं सदा चाहता हूं,
सदा ढूंढ़ता हूं उसी का सहारा॥
उसी की जगत में है सब जगमगाहट,

उसी का सकल विश्व में है पसारा।
अहंकार एक जोरावर पहलवां है,
जो इसको पछाड़ा तो जीता अखाड़ा॥
जो मन होवे स्थिर रहे अपने वश में,
तो समझो गया आग में ठहर पारा।
लिया विश्वस्वामीको पहचान जिसने,
मिला मोक्ष मार्ग उसे ज्ञान द्वारा।
न क्यों ज्ञान प्रकाश हो उसके मन मे,
हो गायत्री मंत्र जिसने विचारा॥
मनुष्य का जन्म भी जो वृथा गवाँया,
तो जीती हुई बाज़ी है अब तो हारा।
तेरा मन ही "केवल" तेरा शत्रु है,
तेरे हाथ है खेत जो इस को मारा॥

भजन ३८

दोहा—ओं नाम सब से बड़ा, ऐसा बड़ा न कोय।
जो इसका सुमिरन करे, शुद्ध आत्मा होय॥

टेक—इस ओंकार अक्षर का, सद्गुरु ने भेद बताया।
सत्य ब्रह्म श्री ओंकार है, अजर अमर अद्भुत अपार है॥
सर्व व्यापक सर्वाधार है, नेति नेति कर गाया, जब हो
गया वास अमर का॥ इस० १॥

अकार उकार मकार मिलाकर, विश्व तेज वैराट दिखाकर,
आदि सृष्टि सब जगत रचाकर, भेद किन्हों ने न पाया, वह
स्वामी है घट २ का॥ इस० २॥
चार वेद उपवेद इसी से, व्याकरण पद छन्द इसीसे।
उत्पति परलय भेद इसी से, मूल मंत्र कहलाया, है परम
प्रिय ईश्वर का॥ इस० ३॥

परम मोक्ष का है दाता यह, सब नामों से विख्याता यह।
चीसा हित चित से गाता यह, और न दूजा भाया, स्वामी
सब नर नारी का ॥ इस० ४ ॥

गजल ३६

जिधर देखता हूँ उधर तू ही तू है,
कि हर शय में जलवा तेरा हूबहू है।
मैं सुनता हूँ हर वक्त तेरी कहानी,
कि तेरा ज़िकर हो रहा कूबकू है ॥
चमन में सरो पर वह गाती है कुमरी,
तुही तू तुही तू, तुही एक तू है।
बिना उसके माबूद औरों को बोले,
ज़बां को सँभालो यह क्या गुफ्तगू है।
हरएक गुलपे बुलबुल यह कहता है 'खालिस'
जिधर देखता हूँ उधर तूहि तू है ॥

भजन ४०

जा दिन आप प्रभो अपनैहैं।
ज्ञानी गुरु सविवेक भाव से चारों वेद पढ़ैहैं।
हम सब बालब्रह्मचारी हो धर्मवीर बनि जैहैं ॥
विद्या पाय धीर नारीगण विदुषी सती कहैहैं।
पराधीन भूखे भारत के फिर सुख के दिन ऐहैं ॥
संशयहीन शान्तिप्रिय योगी निर्भय ध्यान लगैहैं।
कानन में वास कन्दमूल दल फूल फली फल खैहैं ॥
"रामनरेश" साधु संन्यासी सत्युपदेश सिखैहैं।
सब को मंगलमूल रावरी महिमा गाय सुनैहैं ॥

भजन ४१

जय सर्वाधार, जगदीश्वर अविनाशी।
तू नित्य निरंजन नामी, अज व्यापक अंतर्यामी।
अलौकिक ज्ञानागार, जगदीश्वर अविनाशी॥
तू नाथ अनाथों का है, फलदाता कर्मों का है।
महाबल शील-उदार, जगदीश्वर अविनाशी॥
जब तेरी करुणा होगी, अपवर्ग लहेंगे योगी।
सुखी होगा संसार, जगदीश्वर अविनाशी॥
इस सेवक के दुखटारो, कवि "रामनरेश" निहारो।
दया की दृष्टि पसार, जगदीश्वर अविनाशी॥

गजल ४२

आनन्द दयासिंधु तू मुझको सुधार लो।
हे नाथ! दयादृष्टि तू मुझ से न टारलो॥
भूला भटक रहा हूं अविद्यान्धकार में।
विज्ञान का प्रकाश दिखा के पुकार लो॥
पाखण्ड दुराचार काम क्रोध लुटेरे।
हैं लूट रहे हे प्रभो! क्षण भर निहारलो॥
आशा "नरेश" रहगई बस एक तुम्हारी।
है प्रार्थना यही कि हे स्वामी सँभार लो॥

गजल ४३

तुम्हारा दास हूं मैं नाथ तू स्वामी हमारा है।
मुझे संसार में केवल तुम्हारा ही सहारा है॥
अनेकों जन्म से योंही अविद्या में भटकता हूं।
गँवाया भूल में जीवन सदा अज्ञान द्वारा है॥
सताया पंच क्लेशों ने तपाया तीन तापों ने।
पड़ा हूँ मोह सागर में नहीं मिलता किनारा है॥

फँसा हूं हाय "रामनरेश" माया की तरंगों में
बचा लो हे प्रभो ! मैं ने दुखी होकर पुकारा है ॥

भजन ४४

टेक–सच्चिदानन्द, रक्षा करो हमारी ।
अघ अवगुण ओघ नशाओ, अविवेक अधर्म हटाओ ।
नहीं उपजें दुख वृन्द, रक्षा करो हमारी ॥ सच्चिदा०
आलस्य अपौरुष भागें जड़ता भ्रम सोय न जागें ।
कटैं सब दैहिक फन्द रक्षा करो हमारी ॥ सच्चिदा०
अधिकार प्रमाद न पावे, अभिमान न घेरि सतावे ।
घटैं पातक मतिमन्द, रक्षा करो हमारी ॥ सच्चिदा०
कवि "रामनरेश" सुधारो, भवसागर पार उतारो ।
सुनो स्वामी सुखकन्द, रक्षा करो हमारी ॥ सच्चि०

भजन ४५

मेरी रक्षा कर करतार मैं हूं शरण तुम्हारी आया ।
हे अविनाशी जगदाधार, सारी वसुधा के भर्तार ॥
मैंने स्वामी तुम्हें विसार, अब तक महा २ दुख पाया ॥मेरी०॥
सिरपरधरभूलोंकाभार, भटका फिरा विहाय विचार ।
सदाचार को लातों मार, ठौर २ बस ठोकर खाया ॥मेरी०॥
कन्दर खोह नदीनदनार, झाड़ी कानन तुंगपहार ।
सब में घूमें बारम्बार, हुई न जड़ की चेतन काया ॥मेरी०॥
अब वेदों के निकट सिधार, पाया राम नरेश सुधार ।
देखा विद्या का दरबार, और तुमरा दास कहाया ॥मेरी०॥

भजन ४६

अहा ! जगदीश स्वामी को जो प्राणी जान लेता है ।

तथा उसको सदा सब का हितैषी मान लेता है ॥
सुधी सो साधु गुरुओं से सुखी हो वेद पढ़ता है ।
अनोखा योग साधन का सुपथ पहिचान लेता है ॥
हटा के मोह माया को निराले शांति-कुंजों में ।
उसी की सिद्धि का संकल्प चित में ठान लेता है ॥
उसी अभ्यास का फल श्रेष्ठ "रामनरेश" ईश्वर से ।
अपूर्वानंद प्रद कैवल्य पद का दान लेता है ॥

भजन ४७

वह निराकार करतार है, विभु व्यापक कहलाता है ॥
अज अखण्ड अधिपति अविनाशी, परमप्रतापी विश्वविलासी ।
नारायण निर्गुण गुणराशी, जीवन जगदाधार है ।
सुखमूल सर्वज्ञाता है ॥ विभु० १ ॥

उसने सारा जगत बनाया, अपनी अद्भुत शक्ति दिखाया ।
कभी किसी ने पार न पाया, महिमा अपरम्पार है ।
गुरुदेव पिता माता है ॥ विभु० २ ॥

उसका ओ३म् नाम है प्यारा, सबमें है पर सब से न्यारा ।
मिले अखण्ड योग के द्वारा, नहिं लेता अवतार है ।
नहीं क्लेश कभी पाता है ॥ विभु० ३ ॥

उसकी है इच्छा कल्याणी, प्रकट हुई उससे वर वाणी ।
"रामनरेश" हुआ सो प्राणी, निर्भय ज्ञानागार है ।
जिसने जोड़ा नाता है ॥ विभु० ४ ॥

गजल ४८

है सर्व व्यापक अनंत ईश्वर, विचार देखो विचार देखो ।
समाये उसमें हैं सब चराचर, विचार देखो विचार देखो ॥
उसी में तारे चमक रहे हैं, भरे प्रभा से दमक रहे हैं ।

प्रकाश देता सदा प्रभाकर, विचार देखो विचार देखो ॥
घनी घटायें उमड़ रही है, घिराव देकर घुमड़ रही हैं।
छमा दिखावे छटा मनोहर, विचार देखो विचार देखो ॥
झरा करें धार झील झरने, अपार शोभा कहां ला वरनै ।
कहीं है सरिता कहीं है सागर, विचार देखो विचार देखो ॥
कहीं अनोखे खड़े कुधर है, अलोक ऊंचे बड़े शिखर है।
कहीं अगम है विपिन भयंकर, विचार देखो विचार देखो ॥
बिछाय छाया छदन छबीले, प्रसन्न फूले फले फबीले।
सुखी बनेंगे जहां पथिकवर, विचार देखो विचार देखो ॥
कहीं लतापुंज लहलहाते, जहां पखेरू है चहचहाते।
सुना रहे गाय गीत सुन्दर, विचार देखो विचार देखो ॥
अशोक होकर स्वभाव बांका, दिखा रहे हैं स्वतंत्रता का।
प्रवीन करलो न ? दृष्टिगोचर, विचार देखो विचार देखो।
सुकीर्ति प्रभु की सुना रहे है, फुला परों को बता रहे हैं।
रहो इसी भाँति मग्न हे नर, विचार देखो विचार देखो ॥
निशार्द्धकी शांतिसनसनाहट, कि जबकिसीको मिले न आहट।
विलोकि नास्तिक बनोगेक्योंकर? विचार देखो विचार देखो ॥
सदैव दिनरात हो रहे हैं, हमारे सन्ताप खो रहे है।
अदम्य जग का नियम निरन्तर, विचार देखो विचार देखो।
'नरेश' है यह उसी की माया, कि जिसने धारी विराट काया।
वही विधाता वही विश्वम्भर, विचार देखो विचार देखो।

गजल ४९

सब दुखों का मूल है, ईश्वर जुदाई आप की।
दुःख नाशक पाप हर्त्ता, है दुहाई आप की ॥
किस जगह पापी करेंगे, छिपके पापों का विचार।
सर्व जग है आप का, सारी खुदाई आप की ॥

पहुँचना इस क्षुद्र चंचल, मनका दुर्लभ है बहुत ।
इस से पहले हर जगह पर, है रसाई आप की ॥
बह रहा टोटे में यहां, जिसने गँवाया आप को ।
लाभ लूटा उस ने की जिसने कमाई आप की ॥
धन्य है वह जन कि जो इच्छा में हो प्रसन्नचित्त ।
है अधम वह नर न हो जिसमें समाई आप की ॥
मन का दर्पण हो गया, पापों से काला इस क़दर ।
इस सबब ज्योति नहीं, देती दिखाई आप की ॥
आप के संयोग से, आनन्द मुक्ति का मिले ।
बन्ध का कारण है बस, स्वामी जुदाई आप की ॥
मुख जिह्वा से परे है, आप का शुद्ध स्वरूप ।
इस लिये आवाज़ ना देती सुनाई आप की ॥
तेज से औ रूप से पर है वह तजो मय अरूप ।
इस सबब देती नहीं, सूरत दिखाई आप की ॥
बलप्रदाता वायु औ, स्पर्श से हैं दूर आप ।
इस ही कारण से नहीं, होती छुवाई आप की ॥
सर्व व्यापक आप रसना, और रस से हैं परे ।
चखने में आती नहीं, मीठी खटाई आप की ॥
पृथिवी और उसके गुण से, आपकी ना है लगाव ।
गन्ध भी देती नहीं, इससे सुँघाई आप की ॥
हो नहीं मन के बिषय, इससे मनन करता नहीं ।
बुद्धि में भी हो नहीं, सक्ती समाई आप की ॥
इन्द्रियां मन आदि, पा सक्के नहीं हैं आप को ।
आत्मा को ही फक़त, होती जनाइ आप की ॥
रम रहा है 'राम' माया, मोह के कौतुक में हाय ।
पीके मद विषयों का इसने, सुध भुलाइ आप की ॥

ग़जल ५०

उस सनातन ब्रह्म को, हृदय में क्यों लाता नहीं।
क्या सबब है ध्यान उसका तुझको जो आता नहीं॥
है न पत्नी उसके सन्तति, क्यों वह बन्धन में फसे।
है वह कारण का भी कारण, उसका पितु माता नहीं॥

नाड़ी नस के बन्धनों से, है हमशा वह परे।
है अजन्मा गर्भ में वह, शुद्ध बुद्ध आता नहीं॥
जो बताता है तू उस का, जन्म अंशांशिभाव।
कह विकारी ईश को क्यों मूढ़ शरमाता नहीं॥

जन्मने बढ़ने व थमने, घटने से है दूर वह।
निर्विकारी मौत के, फन्दे में भी आता नहीं॥
क्या जरूरत है उसे, बन बन में जो मारा फिरे।
सर्व व्यापक है प्रभू, आता नहीं जाता नहीं॥

है वह निश्कल ध्रुव अविकल और निश्चल एकरस।
सर्वगत और सर्व द्रष्टा, दृष्टि पर आता नहीं॥
कर्म के अनुकूल देता, भोग सब जीवों को नित्य।
अन्न भोजन आप वह, पीता नहीं खाता नहीं॥

कर्म बन्धन पाप फल से, है हमेशा वह अलग।
है नियन्ता जग का उसका कोई फलदाता नहीं॥
सब के मन की जानता है, सब जगह सब काल में।
कोई वहां की यहां खबर, देता नहीं लाता नहीं॥

भेट रिशवत चल नहीं सकती है ईश्वर के समीप।
कर्म के विपरीत कोई, जीव फल पीता नहीं॥
गीत संसारी जनों के, गाये हैं तू ने बहुत।
'राम' के गुणवाद क्यों, अब अन्त में गाता नहीं॥

ग़ज़ल ५१

है ज्ञानियों के लब पर या रब कलाम तेरा।
और योगियों के दिल में बसता है नाम तेरा॥
वेदों को जब विचारा हुआ भेद आशकारा।
बेखुद हुआ हूं पीकर उल्फ़त का जाम तेरा॥
है लोक में भी तूही परलोक मे भी तूही।
यह भी मकान तेरा वह भी मुकाम तेरा॥
जलचरभीतुझको जपते बनचर भीतुझको रटत।
और शाखगुल पै बुलबुल गाती है नाम तेरा॥
खाली न जऊं मैं भी हिस्सा मुझे भी पहुंचे।
है फ़ैज़ आम तेरा और मैं गुलाम तेरा॥
दे तू अगर सहारा चढ़ाजाऊं मैं बेचारा।
गो मेरी दस्तरस से ऊचा है बाम तेरा॥
विनती यह दास की है आशा यही लगी है।
दिल में हो ध्यान तेरा लब पै हो नाम तेरा॥

ग़ज़ल ५२

रची है जिसने ये सृष्टि सारी, उसी से हरदम लगन हमारी।
उसी का हरदम में आसरा है, उसी की हरदम है इन्तज़ारी॥
उसी का हर दम हैं ध्यान धरते, ऋषी मुनी तापस ब्रह्मचारी।
उसी की महिमा को वेद गावें, उसी की गति है सबसे न्यारी॥
उसी को कहते हैं दीनबन्धू, उसी को कहते है सर्वाधारी।
नाम उसी का है पतितपावन, शोक नसावन जन दुःखहारी॥
वही है सब का पालनकर्ता, वही जगत् का है न्यायकारी।
वही "पुलन्दर" है मोक्षदाता, उसी को कहते हैं ज्ञातधारी॥

ग़ज़ल ५३

कुदरत को ज़र्रा ज़र्रा तेरी बता रहा है।
सनअत को पत्ता पत्ता तेरी जता रहा है॥
नक़्शो निगारे आलम बतला रहे हैं हरदम।
सन्नाए कोई कामिल इनको बना रहा है॥
सूरज जमीन तारे ये कह रहे है सारे।
तेरा ही दस्ते कुदरत हमको घुमा रहा है॥
खाती है अक्ल चक्कर ये देखकर कि क्योंकर।
अज़सामे कुर्रह फलकी को तू थमा रहा है॥
है कौन वो बतावे जो इस तरह बनावे।
शकलें जो रहमे मादर में तू बना रहा है॥
सब अक्ल वाले इंसां हैं देख २ हैरां।
कुदरत के वो तमाशे जो तू दिखा रहा है॥
भरपूर हो रहा है हर शै में नूर तेरा।
ज्योती से तेरी सारा जग जगमगा रहा है॥
सब प्राणियों की खातिर तू ऐ दया के सागर!
रहमत का अपने दरिया हरसू बहा रहा है॥
कितनी बड़ी दया है तेरी ये ऐ दयामय!
वैदिक धर्म का अमृत हमको पिला रहा है॥
उसका सुफल है जीवन जो कोई तुझमें स्वामिन!
भक्ती वो प्रेम से दिल अपना लगा रहा है॥
'बालक' ये दास तेरा दुख सह चुका घनेरा।
कर पार इसका बेड़ा डूबा जो जा रहा है॥

भजन ५४

दो कर जोड़ विनय करूं तोरे।
सब अपराध क्षमा करो मोरे॥

मैं छलिया कपटी अति कामी।
तुम ही पतित उद्धारक नामी ॥
तुम्हें छोड़ किस द्वारे जाऊं।
मन की विथा मैं किसे सुनाऊं ॥
मैं सेवक हूं अनुगत बालक।
तुम स्वामी रक्षक प्रतिपालक ॥
आन गिरा मैं शरण तिहारी।
जन्म मरण का है भय भारी ॥
विनय करूं प्रतिदिन उठ प्राता।
मुझ को कण्ठ लगाओ ताता ॥
हे मंगलमय मंगल दाता।
तुम हो मात पिता मम भ्राता ॥
चारों पदार्थ आप ही दीजे।
दर दर का नहिं भिक्षुक कीजे ॥

ग़ज़ल ५५

दुख दूर कर हमारा संसार के रचैया।
जल्दी से दो सहारा मंझधार में है नैया ॥
तुम बिन कोई हमारा रक्षक नहीं यहां पर।
ढूंढा जहान सारा तुम सा नहीं रखैया ॥
दुनिया में खूब देखा आंखें पसार करके।
साथी नहीं हमारा मा बाप औ न भैया ॥
सुख के है सब संगाती दुनिया के यार सारे।
तेराही नाम प्यारा दुख दर्द से बचैया ॥
दुनिया में फँस के हम को हासिल हुआ न कुछ फल।
तेरे बिना हमारा कोई नहीं सुनैया ॥
चारों तरफ से हम पर गम की घटा है छाई।

सुख का करो उजारा परकाश के करैया ॥
अच्छा बुरा है जैसा राजा मैं 'राम' रहता ।
चेरा है यह तुम्हारा सुध लेउ सुध लिवैया ॥

गजल ५६

पिता जी सर्व जीवों के चलन सारे ही सच्चे हों ।
बसें भूगोल में जितने सुजन सारे ही सच्चे हों ॥
न बोलें सैकड़ों वाणी कहें सब "संवदध्वम्" ही ।
उचारें वेदवाणी को कथन सारे हि सच्चे हों ॥
हटा कर द्वेष को मन से "संगच्छध्वम्" पै पद रक्खें ।
न हो कुछ भी कपट छल छिद्र मन सारेहि सच्चे हों ॥
हमारे सत्य ही संकल्प हों कर्त्तव्य भी सत् हों ।
करैं वैसा कहैं जैसा वचन सारे हि सच्चे हों ॥
दिखावा या बनावट न कुछ, हो रहन गत सच्ची ।
हो करनी और कथनी सत् रहन सारे हि सच्चे हों ॥
लिखें हम गीत पद या पोठरी हो झूंठ से ख़ाली ।
हों छन्द श्लोक रचना या भजन सारे हि सच्चे हों ॥
स्वयं हम सत्य विद्या पढ़ पढ़ावैं सर्व देशों को ।
हमारे यह विचारेच्छा जतन सारे हि सच्चे हों ॥
हों सच्चे आश्रम सारे लिखा है वेद में जैसा ।
बनावें वर्ण आश्रम चारों वरण सारे हि सच्चे हों ॥
लड़कपन में पढ़ें सत् औ जवानी में कमावें सत् ।
बुढ़ापे में पढ़ावें सत्य पन सारे हि सच्चे हों ॥
हों पैदा सत्य को ही 'राम' जीवें सत्य की खातिर ।
मरैं हम सत्य पै जन्मो मरन सारे हि सच्चे हों ॥

भजन ५७

जै जै जगत पिता जगदीश, ईश्वर नैया पार लगा दो ।

तुम्हरी कृपा बिना करतार, नैया डोल रही मँझधार ॥
प्रभु जी हो तुम सर्वाधार, दुःख सागर से हमें बचादो ॥१॥
है प्रभु महिमा अपरम्पार, अलख अगोचर सर्वाधार।
कीजे भव सागर के पार, वैदिक रीति हमें बता दो ॥२॥
हो तुम परम सच्चिदानन्द, सर्व व्यापक परमानन्द।
काटो सकल दुखों के फंद, अपनी भक्ति हमें सिखला दो ॥३॥
जो कोई शरण आपकी आवे, निश्चय मनवाछित फलपावे।
यों पद 'रामचन्द्र' भी गावे, भक्ति मार्ग प्रभू दिखा दो ॥४॥

गजल ५८

ईश्वर के ओ३म् नाम को निशि दिन लिया करो।
भक्ति के सुधा प्रेम को निशि दिन पिया करो॥
जीना जो चाहते हो तो जीवन का सार ये।
हिंसा को त्याग कर के तो सुख से जिया करो ॥ १ ॥
हिम्मत है भागने की तो भागो अधर्म से।
संध्या व अग्निहोत्र को प्रति दिन किया करो ॥ २ ॥
देखो यतीम सामने अपंत कहीं जहां।
श्रद्धा समान दान कुछ उन को दिया करो ॥ ३ ॥
ईश्वर का एक नाम है सब से बड़ा यही।
कहे 'रामचंद्र' ओ३म् सुधा को पिया करो ॥ ४ ॥

भजन ५९

वैदिक धर्म की जी, ईश्वर नैया पार लगा दो।
मात पिता भ्राता सुखदाई हो तुम पिता हमारे।
सकल जगत के पालक पोषक रक्षा करने हारे ॥ १ ॥
धर्म की नैया डोल रही है भवसागर मँझधार।
ज्ञान भक्ति से परम पिता जी कर दो उस को पार ॥ २ ॥

काम क्रोध अति प्रबल हैं हम गोते खाते हैं।
वेद ज्ञान बल्ली से उबारो नहीं डूबे जाते हैं॥ ३॥
नहीं आते हैं नज़र किनारे छाया है अंधकार।
पार लगाओ जगत पिता जी तुम हो सर्वाधार॥ ४॥
हे दीनबंधु जगतके पालक दीनों की सुनलो अर्जी।
रामचन्द्र कहैं अपनी भक्ती दो जब पूर्ण हो मर्जी॥ ५॥

भजन ६०

दोहा-तेरी सत्ता के विना, हे प्रभु मंगल मूल।
पत्ता तक हिलता नहीं खिले न कोई फूल॥

टेक-जिसमें तेरा नहीं विकाश, ऐसा कोई फूल नहीं है॥
मैंने देख लिया सब ठौर, तुझसा मिला न कोई और।
सबका एक तुही सिरमौर, इसमें कुछ भी भूल नहीं है॥जिस०१॥
तुझ से मिल कर करुणानन्द, मुनिवर पाते हैं आनन्द।
तेरा प्रेम सच्चिदानन्द, किसको मंगल मूल नहीं है॥ जिस० २॥
हर घर धर्म्म जीवनाधार, गुरुजन कहैं पुकार पुकार।
उसका बेड़ा होगा पार, जिसके तू प्रतिकूल नहीं है॥ जिस०३॥
जो नर पाय विपद विश्राम, जीवन मुक्त हुए निष्काम।
उनको है शंकर, सुख धाम, तेरा न्याय त्रिशूल नहीं है॥ जिस०४॥

भजन ६१

लीला तेरी लखी किसी से न जाय।
पारब्रह्म परमेश्वर स्वामी घट घट रहो समाय।
रूप रेख से तू है न्यारा, जन्म मरण से किया किनारा।
आसमान पर उड्गन तारा, कैसे दिये रचाय॥ लीला० १॥
तू दयाल हम दुखिया सारे, आन पड़े हम तेरे द्वारे।
खन्ना दास जैसे बेचारे, लीजो शरण लिपटाय॥ लीला० २॥

भजन ६२

टेक-प्रभु जी अब तो मोहिं उबारो।
सीख कुमन्त्र नीच लोगन के, कुल को नाम बिगारो।
साधु मण्डली पाय कभी कछु, यश बरनों न तिहारो ॥प्रभु०॥
लागी पापे प्रसंग हाय उर, एक न ढिंग सुधारो।
आरष ग्रन्थ पढ़े न पढ़ाये, मो सम को पशु भारो ॥प्रभु०॥
मन वच कर्म मलीन बनाये, वैदिक बोध न धारो।
बाहर जोगी भीतर भोगी, जाय न चरित बिचारो ।प्रभु०॥
मायिक मोह जाल अपनायो, सुख को साधन हारो।
का विधि कर्ण सुधार करैगो, सुमति प्रकाश पसारो ॥प्रभु०॥

भजन ६३

प्रभु अद्भुत खेल रचाया। प्रभु० ॥
प्रभु, झम झम झम झमकरत चन्द्र तारे, अ० ॥

तू निराकार और निर्विकार, तू एक सार, सबयह असार कर नमस्कार सौ बारा। अद्भुत २ सुन्दर महिमा जगमग जगमग होत अपार। बाजत हैं बाजा सितार, गुण गावें तेरा तार तार, सब ध्यावें तुझ को बार बार। सब प्रेमी तुझ को गाया ॥ प्रभु० १ ॥

सूरज की चमक, बिजली की दमक पौदों की लहक, फूलों की महक, तारों की झलक. व फलक। तुझे जतावें, हमें बतावें, तू मालिक ख़ालिक कर्तार, गड़ गड़ गड़ गड़ बादल गर्जें, छम छम छम छम वर्षा वर्षे, गड़ गड़ाट सुन २ जिया लर्जे। यह तेरी याद दिलाया ॥ प्रभु २ ॥

कड़कड़ात जो गर्मी पड़त है, बादल कहूं नहीं नज़र पड़त है प्रजा हाहाकार करत है। आबो दाना, पानी खाना,

मिलता नहीं है शाम व सुबह। आंधी आई ज़ोर शोर से, आई घटा घनघोर घोर से, बादल वर्षे ठौर ठौर। एक पल में समय बदलाया ॥ प्रभु० ३ ॥

बुलबुल चिह चिह, कोयल कू कू, चिड़ियां चिड़ चिड़, फ़ाख़ता हू हू, करते हैं हरसू हू। जंगल में मंगल करते हैं, पक्षी बोलें वृक्षों पर। हरिया बन का फर्श बिछा है, चुन २ के मोती सा जड़ा है, बन पर्वत फूलों से लदा है। और फलों से लदाया ॥ प्रभु० ४ ॥

भजन ६४

कोई क्या गावे संसार में, है अपार महिमा तेरी।
जग को आप बनानेवाले, जन्म मरण में नहीं आने वाले।
सब को सुख पहुँचाने वाले, रखने वाले प्यार से।
दो काट दुखों की बेड़ी ॥ है० ॥

पेड़ में फल और बीज है फल में, बीज में अंकुर बसे असल में। कैसे सोचें इसे अकल में आता नहीं है विचार में
अति तुच्छ बुद्धि है मेरी ॥ है० ॥

कैसे उदर में अंग बनाया, नहीं हथौड़ी हाथ लगाया क्या सुथरा और साफ़ बनाया, किस सांचे एक लार में।
क्या गला के धातू गेरी ॥ है० ॥

मुझ को इस तन रूप किले से निकाल दो मृत्यु के ज़िले से। हीरासिंह बिन तेरे मिले से। कैसे उतरूं पार मैं।
मिलो जल्द करो नहीं देरी ॥ है० ॥

भजन ६५

टेक—तुम बिन जगदीश ईश और कौन मेरो।
माया मतसर अखंड, दम्भ कपट छल पखंड।

न्द फंद, आनि मोहिं घेरो ॥तुम०॥
..ढ़ं २, आयों हूं शरण तोर।
पांते मोर, मॉहिं है भरोसो तेरो ॥ तुम० ॥
विद्या बल बुद्धि हीन, सब ही विधि मैं हूं दीन।
तुम प्रभु पूरण प्रवीण, हरो दुःख मेरो ॥ तुम० ॥
रचि २ मन गढ़त ग्रन्थ, नाना विधि चले पन्थ।
कुरान पुराण बाई बिल ने, कियो जगत चेरो ॥ तुम० ॥
मन्दिर मूरत बनाय, पूजत सब धाय धाय।
गंग जमुन न्हाय न्हाय, सहो दुख घनेरो ॥ तुम० ॥
भवसागर अति अपार, सूझत नहिं वार पार।
भवसागर अति अपार, सूझत नहिं वार पार।
बूड़त हूं मँझधार, करिये पार बेड़ो ॥ तुम० ॥
सर पर चढ़ि आयो काल, श्वेत भये सर के बाल।
चेतो अब हजारी लाल, अबहीं है सवेरो ॥ तुम० ॥

ख्याल ६६

पकड़ो मेरा हाथ नाथ अब देर लगाना नाहिं चहिये।
दीनदयाल दया का परिचय अबतो दिखलाना चहिये ॥

चौक १

तारे अधम अनेक नाम गिनती में जिनका नहीं आया।
अधम उधारन नाम आपका विदित वेदमें बतलाया ॥
ऋषि मुनि योगी जपें रात दिन पार किसी ने नहीं पाया।
गुण वर्नन कर थके अन्त में अनन्त सब न ठहराया ॥
बाल बुद्ध में कहूं कहां पै मन को समझाना चहिये ॥ दीन०

चौक २

भवसागर की अगम धार में पड़ा नाथ मेरा बेड़ा।
बड़े २ बह गये देख दिल धड़कत है निशदिन मेरा ॥

पड़ा लाख चौरासी भँवर में फिर २ के फिरता फेरा।
उपरन देत न विषय वायु कर लिया यत्न मैं बहुतेरा॥
पार करो अब शीघ्रनाथ मेरी सुरत न बिसराना चहिये ॥दी०

चौक ३

काम क्रोध मद लोभ मोह मम शत्रु महा दुखदाई हैं।
कलह अविद्या निद्रा तृष्णा इनकी दुष्ट लुगाई हैं॥
लिया घेरि घर इन सबहन मिल भूले सुखों सुखाई हैं।
मन को इन्द्रिन लिया जीत अब सँग ले इत उत धाई हैं॥
इन के पंजे से हे परमश्वर मोंहिं अब छुटवाना चहिये ॥ दी०

चौक ४

हे विश्वम्भर! मुझे बचाओ तुमही सब के सुख दाता।
तुम्हें छोड़ मैं किसी से जग में सवाल करने नहीं जाता॥
देखा दृष्टि पसार जगत् में है सब स्वारथ का नाता।
तुम बिन को सुत मित्र जीव को दया करे अब जगत्राता॥
कृपा करो अप वेग नाथ दर २ भटकाना नहीं चहिये ॥दी०॥

चौक ५

चौरासी में इक मुद्दत से फिरता हूं मारा मारा।
पावत नहीं विश्राम तनिकहू भ्रमत २ अबता हारा॥
विना तुम्हारी दयाहोत नहीं भवसागर से निस्तारा।
मांगत हूं मिलजाय मोहिं संतोष शांति सुखका द्वारा॥
विनय करतबलदेव जोड़कर दर्शन मिलजाना चहिये॥दी०॥

ग़ज़ल ६७

दयालू नाम है तेरा, प्रभू अब मो दया कीजे।
हरी सब तुमको कहते हैं, हमारे दुःख हरलीजे ॥१॥
विषय अरु भोग में निशिदिन, फँसा रहता है मूरखमन।

इसे अब ज्ञान देकर सत्य मारग पर लगा दीजै ॥ २ ॥
बहुत भटका फिरा दर दर, शरण तजि है पिता तेरी।
पकड़कर हाथ सुत का, दुख के सागर से छुड़ा दीजै ॥ ३ ॥
तुम्हारी भूलकर महिमा, किये अपराध अति भारी।
शरण आया खड़ा हूं माफ अब जनकी खता कीजै ॥ ४ ॥
तुम्हीं माता पिता मेरे, तुम्ही हो नाथ धन विद्या।
तुम्हीं हो "मित्र" सब जग के दयाकरि भरि वर दीजै ॥ ५ ॥

ग़ज़ल ६८

नाथ दीनों पर दया करना तुम्हारा काम है।
दीनबन्धू औ दयालू, इस लिये ही नाम है ॥ १ ॥
शान्ति सुख पाया उसी ने जिसने पकड़ी है शरण।
बिन कृपा तेरी प्रभू, किस को मिला आराम है ॥ २ ॥
आयु भर दिन रात, खोटे काम ही करता रहा।
फँस के माया मोह में, सोचा न कुछ अंजाम है ॥ ३ ॥
निज किये कर्मों का फल, मुझको मिलेगा हे प्रभू।
याद कर दुख चित्त, व्याकुल होत आठोयाम है ॥ ४ ॥
कूंच का डंका बजे कब, है ये क्षणभंगुर शरीर।
पथिक सदृश इस जगत् में, चार दिन विश्राम है ॥ ५ ॥
पाके नरतन कुछ न निज, कर्त्तव्य का पालन किया।
शोक ! इससे बढ़के कोई, और दुख का ठाम है ॥ ६ ॥
पतितपावन नाम सुन, मुझ को हुआ है आसरा।
"मित्र" पर कीजे दया, तूही सकल सुखधाम है ॥ ७ ॥

भजन ६९

प्रभू कब वे दिन फेरि फिरेंगे ॥ टेक ॥
प्रज्वलित धर्म यह अग्नी में, पापरु दुःख जरैंगे।

काम क्रोध मद लोभ मोह चित व्याकुल नाहिं करैंगे ॥ १ ॥
धर्म्मयुद्ध में कालहु सन्मुख, पाछे पग न धरैंगे ।
करि हम दान दीन दुखियन के सारे दुःख हरैंगे ॥ २ ॥
जलथल वायुमध्य निर्भय हम, निशिदिन कब विहरैंगे ।
आत्मिक बल को पाय दुष्ट अरु, नीचन से न डरैंगे ॥ ३ ॥
पढ़ि २ वेद सत्य विद्यन को, कब भंडार भरैंगे ।
पाखंडिन के मत खण्डन को, देश देश बिचरैंगे ॥ ४ ॥
वर्णाश्रम पालन करने में, तिल भरि हू न टरैंगे ।
वैदिक धर्म "पताके" जग में, देश दश फहरैंगे ॥ ५ ॥
आनन्द "मोक्ष" पाय पृथिवी पर, जन्मैं औ न मरैंगे ।
"मित्र" दया तरनी पर चढ़ि कै, भवनद पार तरैंगे ॥ ६ ॥

भजन ७०

दास तुव डूबों जात हरी ॥ टेक ॥
आश नदी इच्छा जल पूरित, है अति ही गहिरी ।
तामें पड़ी आयु की नैया, पाप पखण्ड भरी ॥ १ ॥
प्रबल तरंग उठत तृष्णा की गुन निकरी सिगरी ।
भ्रमर भयानक मोह बीच में, है अब आन परी ॥ २ ॥
नाना तर्क प्रबल वायू ने, तट ते दूरि करी ।
टूटि गयो धीरज पतवारो, मिटी आश सिगरी ॥ ३ ॥
छुटे ग्राह चिंता से अब हीं, मिलहि अमर नगरी ।
शिवनारायण करुणामृत क्यों, मेरी सुधि विसरी ॥ ४ ॥

भजन ७१

तर्ज़-पे सय्यां पड़ूं मैं तोरे पैयां ॥ थियेटर ॥
टेक-आये शरणा, पड़े हैं तोरे चरणा, निभाओ शरणगहि को। प्रभू शरणागति हैं तुम्हारी। हम आये हैं पापी लाचारी।

उभारो दीना बंधू, उतारो भवसिंधू। धड़कातियां तपड़तियां लरजतियां, हैं छतियां ॥ आये० ॥

कर्म्मों के मारे हम तो मारे फिरे हैं, मिलत नहीं है ठौर। तोरे द्वारे पे आये। चन्द्र और कहां जाये। जिया जाये, लो दुख पाये, हां घबराये, लो, न चाये ॥ आये० ॥

क़व्वाली ७२

ईश्वर! सज़ा किये की हम अपनी पा चुके हैं।
दु:खों को सहते सहते अब तंग आ चुके हैं॥
ताकत अधिक सहन की हम में नहीं रही है।
सदमे पै सदमे लाखों दिल पर उठा चुके हैं॥ १॥
नित पाप कर्म कर के दिल से तुम्हें भुला के।
मल से मलीन मन को निश्चय बना चुके हैं॥ २॥
गुमराह हो गये हैं खुदगर्जियों में फंस कर।
शिक्षा तुम्हारी सारी दिल से भुला चुके हैं॥ ३॥
तक कर के एक तुम को पूजी हजारों चीजें।
हर शै के आगे अपनी गर्दन झुका चुके हैं॥ ४॥
जब से विमुख पिता जी हम आप से हुए हैं।
सदहा मुसीबतों में खुद को फंसा चुके हैं॥ ५॥
अज्ञानता के कारण विद्या विवेक खो कर।
हिन्दू गुलाम काफ़िर वहशी कहा चुके हैं॥ ६॥
घर में फ़िसाद कर आपस में रोज लड़कर।
सुख सम्पती को घर से बिलकुल नसा चुके हैं॥ ७॥
तारीखदां हैं वाक़िफ आपस की फूट से ही।
तेगे मुहम्मदी को हम खूं चटा चुके हैं॥ ८॥
लाखों हमारे भाई जो वीरवर हकीकत।
तेगे सितम से अपनी गर्दन कटा चुके हैं॥ ९॥

ग़र्ज़ें कि छोड़ तेरा जगदीश्वर हा! सहारा।
आफ़ात सब तरह की शिर अपने ला चुके हैं ॥ १०
बिन आप की मदद के उठना नहीं है मुमकिन।
ऐसी जगह पै अपने को हम गिरा चुके हैं ॥ ११ ॥
कर दो क्षमा दयामय अपराध अब हमारे।
जो कुछ किया था सालिग फल उस का पा चुके हैं ॥ १२ ॥

ग़ज़ल ७३

तू निराकार है सब सृष्टि का कर्त्ता ईश्वर।
तेरी ही जात का सब जगह है जलवा ईश्वर ॥
तू है मालिक मेरा मैं हूं तेरा बन्दा ईश्वर।
तू बड़ों से बड़ा छोटों से छोटा, ईश्वर ॥
लुत्फ से पार कर इस देश का बेड़ा ईश्वर।
डूबी ही जाती है मँझधार में नैया ईश्वर ॥
छोटी सी उम्र में औलाद की शादी कर कर।
अपने हाथों से ही बल वीर्य्य गँवाया ईश्वर ॥
नशा पी पी के किया बुद्धि को अपनी बेकार।
मांस ने देश को बे रहिम बनाया ईश्वर ॥
ब्याह शादी की फजूली में किया खर्च तमाम।
तूने दे रक्खा था इसको जो खजाना ईश्वर ॥
दिया भूले से नहीं यज्ञ हवन में पैसा।
कुछ लुटाया उसे आग में फूंका ईश्वर ॥
हाथ ख़ाली हुये अब डंडे बजावें दिन रात।
रंडी और भँडुओं को सब माल खिलाया ईश्वर ॥
ब्याह तो ब्याह ग़मीं में भी नहीं खर्च का ठीक।
आदमी घट गया और बढ़ गया क़र्जा ईश्वर ॥
जीते बेशर्मी से हैं खून नहीं है तन में।

कर दिया फिक्र ने मिट्टी का खिलौना ईश्वर ॥
क्या करें रहगये संतान भी वे इल्मो हुनर ।
न चलन उनका सुधार न पढ़ाया ईश्वर ॥
आखिरश जा के जुआ खेलते हैं अडों में ।
देखते हैं कहीं बाजारों का चकला ईश्वर ॥
चोरी और झूठी गवाही से गुजारा कर कर ।
जेलखाना गये और पा लिया समरा ईश्वर ॥
अब भी गर चाल चलन अपना नहीं ठीक किया ।
वक्त ऐसा नहीं मिलन का दुबारा ईश्वर ॥
ऐसी बुद्धि दे कि हम लोग तेरे भक्त बनें ।
धर्म को जान के करने लगें सन्ध्या ईश्वर ।
वेद और शास्त्र को पढ़ पढ़के बनें हम विद्वान् ।
नित हवन यज्ञ करें तुझ पै हों शैदा ईश्वर ॥
अब तो आया है तेरे दर पै यह शीतलप्रसाद ।
तेरी कृपा की है इस को बड़ी आशा ईश्वर ॥

क़व्वाली ७४

तेरा करम दयामय कब यां पै आम होगा ।
सुख सम्पत हीन भारत कब स्वर्ग धाम होगा ॥
बस में नफ़स के होकर करते हैं जीव हिंसा ।
कब सात्विक भोजन इन का तुआम होगा ॥
सृष्टी में तेरी इन्सा पशुओं को मारते हैं ।
खंजर सितम का इन के कब दूर निआम होगा ॥
बिन्द्राबन और तपोवन हैं धूर्तों के मस्कन ।
ऋषियों का इन वनों में फिर कब क़याम होगा ॥
थी यह तो देव भूमी असुरों की अब है लंका ।
शुद्ध आचरण यहां का किस वक्त आम होगा ॥

चौरासी लाख योनी इन योनियों का चक्कर।
इस जीव नातवां से कब इन में काम होगा॥
श्री रामचन्द्र बेटा लक्ष्मण भरत सा भाई।
कब फिर मनुष्य यहां का ऐसा तमाम होगा॥
ठगाई से धन कमाना और रिशवतों का लेना।
दीनों का हक़ दबाना यहां कब हराम होगा॥

भजन ७५

दोहा—भयो न है नहि होयगो, शंकर कोई और।
सर्व शक्ति सम्पन्न है, एक तुही सब ठौर॥

टेक—अक्षर एक सच्चिदान्नन्द।

व्यापक ब्रह्म विशुद्ध विधाता, अखिल लोक त्राता पितुमाता।
त्रिविध तापहारी सुखदाता, पूरण करुणा कन्द॥ अ० १॥
अजअनादि अविचल अविकारी, विश्वविश्वपतिविश्वविहारी
नारायण निर्गुण गुणधारी, स्वाभाविक स्वछन्द॥ अ० २॥
संग सर्व संघात असंगी, अंग विहीन अंग सब अंगी।
रंग न रूप बनो बहु रंगी, प्रकृति चकोरी चन्द॥ अ० ३॥
सर्व शक्ति सम्पन्न प्रतापी, मुनि योगिन का मित्र मिलापी।
ताहि न पावत तोसे पापी, रे 'शंकर' मतिमन्द॥ अक्षर ४॥

ग़ज़ल ७६

सत्ता तुम्हारी भगवन् जग में समा रही है।
तेरी दया सुगन्धी, हरगुल से आ रही है॥
रवि चन्द्र और तारे, तूने बनाये सारे।
इन सब में ज्योति तेरी, एक जगमगा रही है॥
विस्तृत वसुन्धरा पर, सागर बहाये तूने।
तह जिनकी मोतियों से अब, चमचमा रही है॥

दिन रात प्रात सन्ध्या, मध्यान्ह भी बनाया।
हर ऋतु पलट पलट कर, करतब दिखा रही है॥
सुन्दर सुगन्धि वाले, पुष्पों में रंग है तेरा।
यह ध्यान फूल पत्ती, तेरा दिला रही है॥
हे ब्रह्म विश्व कर्त्ता, वर्णन हो तेरा कैसे।
जल थल में तेरी महिमा, हे ईश छा रही है॥
भक्ती तुम्हारी भगवन्, क्योंकर हमें मिलेगी।
माया तुम्हारी स्वामी, हमको भुला रही है॥
'देवी' चरण शरण है, तुझ से यही विनय है।
हो दूर यह अविद्या, हम को भुला रही है॥

गजल ७७

हर शाख़ से अयां है, हर सू जलाल तेरा।
माशूक़ बुलबुलां है, पै गुल जमाल तेरा॥
नाज़िर न देखता है, इन्साफ़ की नज़र से।
मंज़र दिखा रहे हैं, कामिल कमाल तेरा॥
वाइज़ बजा रहा है, तसलीस की सितारा।
माहिरे मुसल्मा है, दिल बेमिसाल तेरा॥
मख़लूत मानता है, मख़लूक़ में ख़ुदा को।
मुश्ताक़े मारफ़त है, ख़ालिस ख्याल तेरा॥
अल्लाह को अलहदा, साबित करे जहां से।
दल्लाल हल न होगा, क्या? यह सुआल तेरा॥
वे ख़ौफ़ कर रहा है, गुमराह जाहिलों को।
शैतान इस बदी से, जल जाय जाल तेरा॥
ग़ारत नहीं करेगा, उसको जहांने फ़ानी।
'शंकर' नसीब होगा, जिसको विसाल तेरा॥

गजल ७८

तू ही नियन्ता है पाप हन्ता, जहां में जलता ज़हूर तेरा।
चमक रहा है जो सबके अन्दर, तमाम आलम में नूर तेरा॥
है ज़र्रें २ में तू ही व्यापक, क्या चांद सूरज पवन व पानी।
जो तुझको घट २ में देखता है, उसी को हासिल सरूप तेरा॥
तू सब की हरकत को देखता है, हाज़िर नाज़िरओ न्यायकारी
है ज्ञानियों को समीप मिलता, अज्ञान को घर है दूर तेरा॥
जो जैसा करता सो तैसा भरता, किसी की होती न रू रियायत
जो कोई मूरख न ऐसा समझे, तो कुछ न इसमें क़सूर तेरा॥
नज़र इनायत का फ़क़त तालिब, है तेरा 'बलदेव' मुद्दतों से।
मकरन्दपुर का जो रहने वाला, है एक खादिम हजूर तेरा॥

गजल ७९

करें हम्द हौसला है इतना कहां हमारा।
बड़ी बात छोटा मुहँ है ये बेगुमां हमारा॥
किस मुँह से होवे तेरी हम्दो सनाए या रब!।
हस्ती हमारी क्या है और क्या बयां हमारा॥
आंधी हो या अँधेरा जंगल हो या बियाबां।
हर जगह सर्व व्यापक है पासबां हमारा॥
फिर जायें हम से सारे दुनियावी रिश्ते वाले।
मादर पिदर से ज्यादा वो मेहरबां हमारा॥
किसको सुनायें या रब! इस दर्दे दिल को अपने।
तेरे सिवा नहीं है कोई यहां हमारा॥
लाखों बिपति पड़े गर मुँह उससे पर न फेरें।
कुछ मसलहत हो शायद या इमतिहां हमारा॥
सौदा भी हो तो तेरा उलफ़त भी हो तो तेरी।

तू दिल सितां हमारा तू राज़दां हमारा ॥
ख्वाहिश न ताज की है हाजत न माल ज़र की।
नक़्शे क़दम हो तेरा और आस्तां हमारा ॥
ज़र्रे में मिस्ल जू है गुल में भी मिस्ल बू है।
सर्वत्र एक रस है वह लामकां हमारा ॥
माने न माने कोई पर हम यही कहेंगे।
राज़िक फ़क़त वही है रोज़ी रसां हमारा ॥
जो कुछ बुरा भला हूं पर हूं मैं तेरा बन्दा।
लेकिन यह तू भी कह दे सेवक है हां हमारा ॥

दादरा ८०

लीजो सुध जगदाधारी, हमारी।

जगत पिता जगदीश निरंजन प्रणतिपाल भक्तन भय भंजन।
दीनन को हितकारी ॥ हमारी। लीजो० ॥
मैं अति अधमलीन हूँ स्वामी दुर्बल दीन कुटिल खलकामी।
तुम प्रभु अधम उधारी ॥ हमारी। लीजो० ॥
काम क्रोध मद लोभ सतावत, ईर्षाद्वेष से चैन न पावत।
इनसे बहुत दुखारी ॥ हमारी। लीजो० ॥
मम अपराध क्षमा प्रभु कीजै, निज चरणन में आय मोहि लीजै।
आयो शरण तुम्हारी ॥ हमारी। लीजो० ॥
हो तुम दीनदयालु दयानिधि, अब का सोच रहे कृपानिधि।
काहे न लेत उबारी ॥ हमारी। लीजो० ॥
अति हूं दुखारी करि आरत पुकारी, दीन हितकारी सुध
लीजो हमारी। सेवक शरण तुम्हारी ॥ हमारी। लीजो० ॥

गजल ८१

वैदिक धर्म की किश्ती तूफ़ां में जा रही है।

फंस कर भँवर में अब यह चक्कर से खा रही है ॥
भारतवर्ष पै या रब ! आफ़त सी आ रही है।
इफ़लास की घटा अब हरसू से छा रही है ॥
जायें कहां निकल कर पायें मकां जो चलकर।
हमको हमारी हिम्मत खुद ही डरा रही है ॥
तुझ को भुला के स्वामी दर दर की खाक छानी।
करनी हमारी हमको धक्के खिला रही है ॥
भूले जगत् पिता को विषयों में होके मायल।
मगरूरी अब हमारी हमको रुला रही है ॥
हालत पै अब हमारी कर रहिम ऐ दयालु।
तू है रहीम खलकत यश तेरा गा रही है ॥
सेवक अभी सुबह है कुछ ईश ध्यान कर ले।
वह देख मौत तेरे सर पर भी आ रही है ॥

गजल ८२

सुनो जगदीश अब विनती हमारी।
भरोसा आप का है हम को भारी ॥
तुम्हें तज कर कहां मैं जाऊं स्वामी।
बिथा मन की कहूं जिस से मैं सारी ॥
हितू कोन और है दुनिया में मेरा।
तुम्हीं हो दीन दुख भंजन भयहारी ॥
पड़ा मंझधार मे बेड़ा हमारा।
लगाओ पार अब किश्ती हमारी ॥
निकालो जल्द इस आवागन से।
लगाई देर अब क्यों मेरी बारी ॥
अधम हूं दुष्ट हूं पापी हूं मूरख।
अधर्मी और कुकर्मी दुराचारी ॥

नहीं बल इतना भी पहुँचू जो तुझतक ।
मगर तारौ तो है कृपा तुम्हारी ॥
अधम हूं पर भी सेवक तुम्हारा ।
करो कृपा दृष्टी जगदाधारी ॥

गजल ८३

ज़मीं तेरी फ़लक तेरा खिला तेरी जहां तेरा ।
है सब मखलूक़ भी तेरा मकीं तेरी मकां तेरा ॥
मुसीबत में सऊबत में अज़ीयत में तू काम आये ।
करे तौ कोई वक्त रंजोग़म में इस्तेहां तेरा ॥
ज़माने भरसे लापरवाह हरेक आलम से मुस्तसना ।
न कोई राज़दां तेरा न कोई हमज़बां तेरा ॥
हर इक ज़र्रे से गो ज़ाहिर तेरे नूर का जलवा ।
मगर मिलता नहीं ढूंढे किसी को भी निशां तेरा ॥
करेगा क्या कोई तेरा न कर तू ख़ौफ़ कुछ सेवक ।
कि रक्षक हर जगह मौजूद है वह लामकां तेरा ।

ग़जल ८४

[सायंचिंता]

अहा ! बनी है ये कैसी संध्या, सुशोभनासी सुहा रही है ॥१॥
अनूप सौंदर्य हेतु जिस के, परेश को याद आ रही है ।
जहां फिराते हैं आंखें अपनी, वहीं उसी का प्रकाश पाते ।
अँधेरी रातों में भी उसी की, प्रभा सदा जगमगा रही है ॥२॥
उधरसे उड़ती चहकती चिड़ियां,समाज के साथ व्योमतलमें।
उसी के ऐश्वर्य की बधाई, प्रफुल्ल मनसे सुना रही है ॥ ३ ॥
इधर तो सूरज का डूब जाना, उधर निशानाथका निकलना ।
प्रबन्धकर्त्ता की चातुरी की, संदेह निश्चय जता रही है ॥४॥

यह चांदनी चन्द्र से निकलकर, विशुद्ध भू भाग पर समुज्वल
उसी जगन्नाथ की अचाई में, पांवड़ों को विछा रही है ॥५॥
हरेक पत्ता इसी की सत्ता से, हिल रहा है हवा के कारण।
हवा भी तत्पर त्रिविध उसी की हो, वंदना करती आरहीहै ६॥
पदार्थ प्रत्येक छोटे मोटे, सजीव निर्जीव चन्द्र चींटी।
समूचा दुनिया ही एक स्वरसे,पता उसी का वता रही है ॥७
कहूं कहां तक न पार है कुछ, न अर्थ आये न शब्द पाये।
तो भॅखके वेदों की तीव्र मेधाभि, नेति नेतीति गारही है ॥८॥
अनन्त ब्रह्माण्डका जो नायक, प्रणत जनोंका सो चालदायक।
उसी का चरणारविन्द सेवो, यह सुखद संध्या सिखारही है॥९

मन हरन मराडक ८५

पर्वत पाषाण पीन पंकज पपील पील,
पादपन पात पाद पल्लव लतान में।
दशहूं दिशानन में द्रुम वेलि कानन में,
पुष्पन में पानन में जल में कृशानन में ॥
मथुराप्रसाद काहिं कहां लों वखान करौं,
व्योम विदिशान अन्तरिक्ष शशि भान में।
घटघट वासी अविनाशी सुखरासी प्रभु,
पूरण पुरुष परिपूरण जहान में ॥ १ ॥
आपने अतुल वल अतुल पराक्रम सों,
सिरजै जगत जगदीश देह धारैना।
आपने असीम समरथ सों सकल लोक,
धारण करत आपु चाहत अधारैना ॥
पालन करते प्रभु परम उदार करतार,
द्वार द्वार हाथ आपनौ पसारैना।
आपदा के हरण दरण दुख द्रोह द्वन्द,

आनन्द करण अशरण को विसारैना ॥२॥
आपनि शक्ति अनूपम ते,
पल माहिं रच्यो यह जगत अनोखो।
थावर जंगम को उपजाय,
रचाय बनाय भले विधि पोखो ॥
राजत मानस मंजु कुटी बिच,
देखि उघारि विचारि झरोखो।
ईशहि ध्याव न बैस गँवाव,
भनै मथुरा जग जीवन धोखो ॥ ३ ॥
है वह एक न दूजो सहायक,
मुक्ति पदारथ को सोइ दाता।
मित्र कलत्र कुटुम्ब सहायक,
स्वामि समान न तात न माता।
एकहि भाव सदा रस एकहि,
विष्णु वशिष्ठ विरंच्य विधाता।
आदि न मध्य न अन्त कहूं,
मथुरा भजु ताहि प्रफुल्लित गाता ॥
है न विकार आकार कछू,
श्रुति आनन्द धाम अकाम बतावै।
सूरज चन्द्र अनेक पदारथ,
विद्युति भूमि समुद्र बतावै।
लै परिमाण रचै जग को.
लघु को गुरु रूप पसारि दिखावै।
आवत जात लखात न अन्त,
भनै मथुरा मन पार न पावै ॥ ४ ॥
राम न रावण के हित होत,
न वामन है बलि सों छल ठानै।

मीन न कच्छप रूप धरे,
न बजावत बांसुरि गावत तानै ॥
खंभ विदारि धरै अवतार न,
भूमि उधार पतार पयानै।
कीट पतंग निवारण को,
मथुरा न महीप गहै धनु बानै ।६॥
बाहु बिना सबको वश राखत,
पाउं बिना अति तीछन धावै।
नैन बिना सब को अवलोकत,
देह बिना जग को उपजावै ॥
आदि अनीह अनादि अनन्त,
अरूप अखण्डित वेद बतावै।
पूरि रह्यो सचराचर में,
मथुरा सोइ व्यापक ब्रह्म कहावै ॥७॥

गजल ८६

तेरी दया से हमने आनन्द जो है पाया।
वाणी से मुझ से कैसे जावेगा यह बताया ॥
रस हो तो रसना चाखे, अरु रूप कुछ न राखे।
जो देख सकीं आखें, कुछ रंग न दृष्टि आता ॥
कोई शब्द भी जो होता, महसूस कान करते।
गुण गन्ध भी न कुछ था, तब घ्राण भी घबराया ॥
स्पर्श गुण जो होता, त्वच जान लेती उस को।
सारी ही इन्द्रियों ने जिस से है मात खाया ॥
गंगा जो गुड़ को खावे अन्दर ही खुश हो जावे।
किसको वह क्या बतावे, क्या २ है रस उड़ाया ॥
होता जो इन्द्रि गोचर, कहि सक्ता तो पुरन्दर ॥
पर वह तो आत्मा में अद्भुत ही रंग लाया ॥

ग़ज़ल ८७

तेरा खास कोई न धाम है, तेरा हर जगह पै मुक़ाम है।
तेरा दीन रक्षक नाम है, तेरा हर जगह पै मुक़ाम है॥
तेरा चन्द्र है तेरा भान है, तू महान से भी महान है।
तेरा शीत है तेरी घाम है, तेरा हर जगह पै मुक़ाम है॥
तैने दिन दिया हमें काम को, और रात बख़्शी आरामको।
तेरा प्रात है तेरी शाम है, तेरा हर जगह पै मुक़ाम है॥
तैने तन जो हमको दिया प्रभू लेले चाहे जब तू लिया प्रभू।
तेरा हाड़ मांस व चाम है, तेरा हर जगह पै मुक़ाम॥
तेरा भेद कोई न पा सके, तेरे गुण को कोई न गा सके।
ये जहान तेरा तमाम है, तेरा हर जगह पै मुकाम है॥
टुक मेरी ओर निहारिये, मेरी नाव पार उतारिये।
तेरा रूप राम गुलाम है, तेरा हर जगह पै मुक़ाम है॥

भजन ८८

दीन-बन्धु जगत पति जगदीश्वर जगदाधार तू।
सर्व व्यापक सर्व शक्तिमान् सर्वाधार तू॥
पतित पावन दुःख टारन मात्त कारन भय हरन।
सत्त चित्तानन्द अनुपम न्यायी मंगलकार तू॥
तू अनादि अजन्मा अनन्त अभेद अन्तर्यामी है।
नित पवित्र अविनाशी है और अमर निराकार तू॥
जगदीश अजर अछेद है गुण ईश ज्ञान स्वरूप हैं।
सब कुछ है तू हम कुछ नहीं महकूम हम सरकार तू॥
छोड़ कर तेरी शरण सेवक भला जाये कहां।
मात तात भ्रात पति अरु मित्र गुरु परिवार तू॥

ठुमरी देश ८६

नाथ तुम मेरे प्राण अधार, मैं हूं अधम गँवार।
तुम महाराज जगत् के स्वामी, करुणामय अरु अन्तर्यामी।
हो तुम जगदाधार, आधार तुम मेरे प्राण अधार॥ मैं०॥
निर्विकल्प निश्चल जग प्राता, अधम उधार पाप परित्राता।
पूरण रहित विकार, कार तुम मेरे प्राण अधार॥ मैं०॥
जग जीवन और पोषण कर्त्ता, पाप ताप भय संकट हर्ता।
महिमा अमित अपार, पार तुम मेरे प्राण अधार॥ मैं०॥
ओंकार महाराज दया निधि, अब का सोच रहे करुणा निधि।
मैं रहा तुम्हें पुकार, पुकार तुम मेरे प्राण अधार॥ मैं०॥
करुणानिधि करुणा अब कीजै, भक्त जान सेवक को दीजै।
देखूं मोक्ष का द्वार, द्वार तुम मेरे प्राण अधार॥ मैं०॥

दादरा ६०

टेक-सारी दुनियां में ईश्वर की माया है।
शैर-ज़मीं मे अर्श में महताब में कैवान नैयर में।
जूहल में ज़ोहरा में मरीख़ में माहे मुनव्वर में॥
समुन्द्र कोह में और दश्त में दीवार में दर में।
शजर मे शाख में गुल में समर में वर्ग में बर में॥
हर अशिया में जलवा नुमायां है॥ सारी० १॥
शैर-बे सतूनों के अजब वात ज़िमीं अर्श खड़े।
बिना जंज़ीर सितारे यह आस्मां में जड़े॥
नन्हें से तुख़्म से शज़र पैदा आलीशान करे।
ज़रासी फूंक से लाखों मन मिट्टी हिले फिरे॥
अपनी कुदरत का क़रश्मा दिखाया है॥ सा० २॥
शैर-हर इक अशिया में टपकता ज़हूर ईश्वर का।

हर एक दिल में रमा है सरूर ईश्वर का ॥
हर इक पदार्थ में व्यापक है नूर ईश्वर का ।
हर एक नूर में भी नूर ही है ईश्वर का ॥
क्योंकि नाचीज़ ज़र्रा चमकाया है ॥ सा० ३ ॥
शैर-साफ़ दिल करके जिस ने आत्मा विचार लिया ।
विषय से हटके जिसने मन को अपने मार लिया॥
निश्चयात्मिक से निश्चय जिसने ईश धार लिया।
उदयसिंह कार उस ने अपना संकल्प सार लिया॥
वर्ना मिन्नो चौरासी भ्रमाया है सा० ॥ ४ ॥

गजल ९१

हे दीन बन्धु दयाल दया दीन पर अब कीजिये ।
आयू धरम धन और विद्या हे कृपालु दीजिये ॥
जीवन रहे जब तक हमारा आप ही का ध्यान हो ।
निज ज्ञान का वरदान दो यह दूर सब अज्ञान हो ॥
सर्वज्ञ सर्वाधार सर्वेश्वर तुम्हारा नाम है ।
स्वीकार कीजे दास की प्रणाम है प्रणाम है ॥
आप ही की आश से है आश अशरण शरण ।
आप ही पितु मातु कारण आप ही जीवन मरण ॥
वेद शास्त्र अरु उपनिषद् में आप की महिमा महां ।
है नहीं अस्थान कोई आप ना होवे जहां ॥
शिल्पकारी आप की हर वस्तु बनलाती हमें ॥
आंख भी अद्भुत तमाशा करके दिखलाती हमें ।
पशु व पक्षी जीव आदिक गुण तेरे सब गा रहे ।
तेरे ही करुणा से मुन्नीलाल पद्य बना रहे ॥

भजन ९२

टेक—नाथ मोहिं घड़ी पल छिन न बिसारो ।

है तुम्हरा ही एक सहारो ॥ ना० १ ॥
दीन दयाल दया के सागर भ्रम फंद से निरबारो।
मो अनाथके नाथ तुम्हीं हो, आयो शरण तुम्हारो ॥ ना० २ ॥
भवसागर भ्रम भँवर में फंस रह्यो, सूझत नाहिं किनारो।
तृष्णा धार प्रबल मोह व्यापत, मम विनी चित धारो ॥ना०३॥
चित चंचल यह थिर न रहत है, कोट यत्न करि हारो।
भक्ति आपनी देउ दयालू, करो मन शुद्ध हमारो ॥ ना० ४ ॥
झुन्नीलाल छोड़ कहां जावे, प्रभुवर शरण तुम्हारो।
करो कृपा कोई लगे न दूजो तुम सम और प्यारो ॥ ना० ५ ॥

भजन ६३

टेक—अब तो प्राण राख लेउ, प्राण नाथ मेरो।
जगत पिता जगदाधार, मोहि विश्वास तेरो ॥
चहुँ दिश विपता दिखाय, लखि २ जिया अति डराय।
तुम बिन को हो सहाय, क्षमिये पाप मेरो ॥ अ० १ ॥
मात पिता भाई सुता, चारौं तन हेरो।
चारौं दिश चितै चितै, आयो शरण तेरो ॥ अ० २ ॥
विनय मेरी धरो ध्यान, भक्ती को देउ दान।
त्रविध दुख दूर करो, दास विकल तेरो ॥ अ० ३ ॥
तुम्हारे न कोई समान, तुम्हीं सर्व शक्तिमान।
झुन्नी को देउ दान, चरणन को चेरो ॥ अ० ४ ॥

गजल ६४

दुराचारों से अब तो बचाओ प्रभु,
सदाचारों में मुझ को लगाओ प्रभु।
करो दास पै दृष्टि दया की पिता,
पतित पावन पतित को उठाओ प्रभु ॥

काम क्रोध औ मोह जो लोभ हैं यह,
उन्हें मार के दूर भगावो प्रभु।
अन्धाधुन्ध में धर्म न दीख पड़े,
मुझे ज्ञान की चक्षु दिलाओ प्रभु॥
मन चंचल मूरख ऐसो हठी,
मोह विषयन में लपटावे प्रभु।
करो दास पै दया दयानिध अब,
मेरो प्राण महा घबड़ावे प्रभु॥
रहा बोध न अपरा परा का कछू,
निज ज्ञान मुझे सिखलाओ प्रभु।
मंझधार में नाव है आन फंसी,
करो करुणा पार लगाओ प्रभु॥
झुन्नीलाल दीन दयाल हो तुम,
भक्ती दान दे अपनावो प्रभु।
नहीं जात वही बिन केवटिया,
मेरी धार पे नाव लगाओ प्रभु॥

गजल ६५

जयति जय जगदीश प्यारे, धन्य हो! प्रभु धन्य हो।
सब में लय और सबसे न्यारे, धन्य हो प्रभु धन्य हो॥
शब्द कर कर सुरसरी, गुण गान करती है तेरा।
परिक्रमा दें चन्द्र तारे, धन्य हो प्रभु धन्य हो॥
तेरी प्रतिमा की झलक, दिखलाती है दामिन हमें।
हैं विलक्षण खेल सारे, धन्य हो प्रभु धन्य हो॥
जगत् में निर्बल सबल, सब तेरे सिर्जे जीव हैं।
सबकी रक्षा करन हारे, धन्य हो प्रभु धन्य हो॥
सर्व मंगल सर्व शक्ति सर्व ज्ञाता हो तुम्हीं।

जक्त को तुमही हो धारे, धन्य हो प्रभु धन्य हो ॥
तेरी दया से हे दयामय, मेघ वर्षाते हैं जल।
जिस से उगते अन्न सारे, धन्य हो प्रभु धन्य हो ॥
पद कमल वन्दन करूं, निर्गुण सगुण जो कुछ भी हो।
जन्मदाता हो हमारे, धन्य हो प्रभु धन्य हो ॥
कामना 'कृष्णा' की है कर्तार हे दिल से यही।
गुण सदा गावें तुम्हारे, धन्य हो प्रभु धन्य हो ॥

भजन ६६

टेक-हमें हरि दीजे विद्या दान।
तुम सर्वज्ञ सकल विद्या विद, हो प्रभु पुरुष महान।
देकर अखिल ज्ञान जगदीश्वर, मेट देहु अज्ञान ॥ हमें० १ ॥
यही संसार अतुल बल शाली, तुम सम और न आन।
देहु शक्ति सम्पूर्ण हमें प्रभु, करुणामय भगवान, ॥ हमें० २ ॥
दीना नाथ दीन दुःख भंजन, तुम हरि दया निधान।
हम भक्ति पावें प्रभु तेरी, लहैं मोक्ष निर्वान ॥ हमें० ३ ॥
पिता हमें मारग दिखलाओ, अति उत्तम सुख दान।
जासों सुमति पाय हम स्वामी,उपजावें सत ज्ञान ॥ हमें० ४ ॥
प्रीति प्यार संचार परस्पर, बनें चतुर सज्ञान।
हैं निष्काम धर्म रत होवें, लखि सुख दुःख समान ॥ हमें०५॥
'कृष्णकला' की यही है वीनती, सुनिये प्रभु धरि ध्यान।
इक क्षण नाथ तुमहिं नहिं भूलै, यह दीजे वरदान ॥ हमें० ६॥

गजल ६७

हे प्रभु ! तेरी शरण से, फिर कहीं जाना न हो।
मार्ग दिखला दे वही, पीछे जो पछताना न हो ॥
हे पिता तव कुञ्ज पद का, मन मेरा मधुकर बने।

है महाचंचल इसे, दुनियां में भटकाना न हो ॥
दान भक्ती का मुझे देकर प्रभु सत् ज्ञान दो।
मोह मद लोभों में पड़ कर, दिल यह दीवाना न हो ॥
याद है जगदीश तेरी, हम न भूलें एक क्षण।
अन्त अवसर पर हे स्वामी, जिससे शर्माना न हो ॥
जब करो दाया तुम्हीं, माया से छूटें हम तभी।
फिर कभी तृष्णा नदी से, हम को भय खाना न हो ॥
जीते जी संसार में, अपना बनाते हैं सभी।
अन्त में तेरे सिवा, कोई अपना बेगाना न हो ॥
मुक्ति दे आवागवन से, चाहती 'कृष्णा' यही।
हे प्रभु संसार में अब, फिर मुझे आना न हो ॥

गजल ६८

हमारे देश में भगवन् ब्राह्मण ब्रह्मज्ञानी हों।
करें षट्कर्म्म निशिबासर वेदत्रयी जिनकी बानी हों ॥
हों क्षत्री शूर अति व्यार्धा रथी अरु बाणधारी भी।
विषय से रहित गुणसम्पन्न तेजस्वी व दानी हों ॥
पशुपालक कृषीरक्षक वैश्य हों वेद के ज्ञाता।
कुशल व्यापार में धर्म्मात्मा धनवान् मानी हों ॥
हों शुद्ध आचरण के सब शूद्र सेवा वृत्ति में पूरे।
रसोई पाक में हुशियार मीठी जिन की बानी हों ॥
हों महिलायें परमविदुषी सकल गृहकार्य में दक्षा।
सुशीला सुन्दरी मितभाषिणी अरु अति सयानी हों ॥
हों यजमानों के बेटे वीर ब्रह्मचारी सभा चातुर।
निपुण गुणवान् विद्यावान् अभ्यासी व ज्ञानी हों ॥
दुधारी गाय हों स्वामी बली हों बैल अति बांके।
हों घोड़े तेज़रौ ऐसे कहीं जिन के न सानी हों ॥

समय पर वृष्टि हो ईश्वर पकें सब अन्न फल सारे।
हो वायु शुद्ध अन्न अनुकूल निर्मल यहां के पानी हों॥
न कोई रोग हो सौ वर्ष तक आनन्द से जीवें।
सुखी रहवें कभी बेवक्त देहों की न हानी हों॥
हों राजा पितृसम रक्षक हमारे धर्म अरु धन के।
कभी राजा व परजा के मनों में ना गिलानी हों॥
दया हो 'राम' की हम पर कि सतमारग में पग रक्खें।
रहें ऋजु अरु कुमति कोई न हृदय में समानी हो॥

गजल ६६

दिखा दे दिलवर ओ दीद अपना,
हो दिल की हासिल मुराद सारी।
फिरता हूँ मुद्दत से मारा मारा,
रहिम की तेरी है इन्तिज़ारी॥
नज़र तुम्हारी फिरे है जिस पर,
फिरेगा उसपर ज़माना एक दम
है आली रुतबा जहां में उसका,
करता है जिसपर तू फज़्ल बारी॥
अदल में तेरे सभी हैं, यकसां,
न कोई अदना न कोई आला।
चले सिफ़ारस गिला न शिकवा,
न हीला हुज्जत न होशियारी॥
लगा हो दिल जिस किसी का तुमसे,
लगे न दिल फिर किसी से उसका।
जो देखले तेरी झलक जहां में,
ता उम्र करता वो, जांनिसारी॥
तुम्हारी फुर्कत में मुद्दतों से,

उठाये सदमें हज़ारों हमने।
हुये जहां में ज़लीलो रुसवा,
हया व हुरमत सभी उतारी॥
हज़ारों भर २ के स्वांग हमने,
बहुरूपियों की तरह दिखाये।
हुई न दिल की मुराद पूरी,
हर लहज़ बढ़ती है बेकरारी॥
कभी नवाज़िश भी होगी हम पर,
कि यूंही दर २ फिरेंगे मारे।
रहेंगे कब तक ख़राब ख़स्ता,
बतादे हम को अय ज़ातबारी॥
न चाहे 'बलदेव' आली रुतबा,
न माल दौलत की आरज़ू है।
फ़कत हो हासिल विसाल तेरा,
हो दिल की पूरी हवस हमारी॥

गज़ल १००

असत्यवादी नास्तिक पूछे है ईश्वर है किधर।
कहता है मानूं ब्रह्म को मैं आंख अपनी देखकर॥
संसार की बहु वस्तु हैं जो दृष्टि में आती नहीं।
देखे बिना माने है सुन यह बात मेरी ध्यानधर॥
कौड़ी नरम ठण्डी गरम, मीठी व खट्टी वस्तु सब।
दुर्गन्ध और प्यारे सुगन्धी है कहां आती नज़र॥
कटुशब्द या भाषणमधुर स्वरताल ध्वनि नादगत।
तृष्णा क्षुधा दुःख और सुख इस आंखसे दीखने पर॥
आकाश का कैसा वरण दिक्काल का है रंग क्या।
मन चित्त बुद्धि आत्मा होते हैं कैसे मित्रवर॥

सुन आठ बतों के सबब सत् वस्तु भी भासे नहीं।
अति दूर वा अति पास हो इन्द्रीका दुख मनहो न थिर॥
हो सूक्ष्म या पड़ जाय पट, ढकले बड़ी शक्ती कोई।
मिलकर हो इक रस ढेर में वह वस्तु नहीं दीखेमगर॥
तिल तेल में घी दूध में हैं, काठ में अग्नी भरी।
सोतों में जल भरपूर है पाओगे खोदोगे जिधर॥
ऐसे ही सब ब्रह्माण्ड में है ब्रह्म व्यापक हर जगह।
साधन यदि अनुकूल हो तो दृष्टि आवे है ईश्वर॥

गजल १०१

प्रत्यक्ष करना चाहे उस ब्रह्म को जो प्रियवर।
साधन तुझे बताऊं सुन, बात मेरी चित्तधर॥
केड़ी नरम जुवस्तु ठण्डी गरम भि खारी।
जानी त्वचा से जाती हर एक वस्तु छू कर॥
कटु शब्द नम्र भाषण स्वर ताल नादगत सम।
इनका प्रत्यक्ष करना कानों के मित्र ऊपर॥
रसना से ज्ञान होता षट्रस का सब यथावत्।
नींबू नमक, करेला, हो मिर्च, हरशक्कर॥
दुर्गन्ध और सुगन्धी का नासिका है कारण।
है रूप ज्ञान प्यारे इन चक्षुओं पै निर्भर॥
तृष्णा क्षुधा को मानुस प्राणों से जान लेता।
दुख शोक हर्ष सुख का प्रत्यक्ष होय मन पर॥
दिक्काल की गति को सूरज हमें जनाता।
घण्टा घड़ी मिनट पल पूरब हो या कि उत्तर॥
है सौम्य आत्मा का प्रत्यक्ष मन से होता।
दर्पण हमें दिखाता सुर्मा व आंख मुख सर॥
होता है आत्मा को परमात्मा का अनुभव।

दर्पण हो स्वच्छ मन का और शुद्ध बुद्धी हो घर ॥
इस ज्ञान को जो सुनकर साधन में मन लगावे ।
कर लेगा 'राम' दर्शन निश्चय वही चतुर नर ॥

(२) उपदेश ज्ञान वैराग

भजन १०२

ईश्वर का जप जाप रे, मन वृथा काहे को जन्म गँवावो
दीनानाथ दयालु स्वामी प्रकट सब जा आपरे ॥
सर्व व्यापक की पूजा कर दूर होवें दुख तापरे ।
कुछ न बने पत्थर पूजन से ईश्वर रखा जिसको थापरे ॥
छोड़ असत को सत ग्रहणकर नष्ट होवें दुख तापरे ।
खुश होकर प्रभु विन्ती सुनले "बेकस" करे विलापरे ॥

गजल १०३

प्रभू के मिल के यश गावें, पिता, सोही हमारा है ।
वही है पूज्य हम सब का, वही सब का सहारा है ॥१॥
न महिमा उसकी का पाया, किसी ने वार पारा है ।
सकल ब्रह्माण्ड को रचकर उसी ने एक धारा है ॥ २ ॥
जो कुछ है, हो चुका, होगा, उसी का सब पसारा है ।
सभी के बस रहा अन्तर सभी में से वह न्यारा है ॥ ३ ॥
वह ज्योतिर्मय ही केवल है तिमिर न अन्धकारा है ।
उसी के दान से सूरज चमकता चन्द्र तारा है ॥ ४ ॥
वही है ज्ञान का सागर उसी में सत्य सारा है ।
ज्ञानी सत्यवादी का वही मित्र पियारा है ॥ ५ ॥
पवित्र शुद्ध है निर्मल वही शुद्धि करन हारा है ।
धर्म्म का वल उसी में है वही यल का भँडारा है ॥ ६ ॥
वह करुणा रूप है स्वामी उसी से ही अधारा है ।

अधम अति पापियों को भी भरोसा उस पे भारा है। ७॥
गँवाया जन्म को निष्फल उसे जिसने विसारा है।
लगा चरणन में उसके जो जन्म उसने सँभारा है॥ ८॥
भुलावें काहे हम उसको जो त्राता हम सभों का है।
भजो निशदिन वही प्यारे कि जिसका अर पसारा है॥९॥

गजल १०४

जपो मन नाम ईश्वर का, वही मुक्ति का दाता है।
वही पालन करे सब का वही सब का संघाता है॥जपो०॥
सिवा इसके नहीं तेरा, हितू कोई और इस जगमें।
न बेटा है न दारा है, न बन्धु है न माता है॥ जपो०॥
करे अभिमान तू धन का न तेरे साथ जावेगा।
न जावे साथ रथ हाथी, धर्म ही साथ जाता है॥जपो०॥
पड़ा क्यों नींदमें ग़ाफ़िल, सहर अब होने वाली है।
संभलकर बाँधलो बिस्तर,अभी वह काल आता है॥जपो०॥

भजन १०५

विश्वपति के ध्यान में, जिसने, लगाई हो लगन।
क्यों न हो उसको शान्ति, क्यों न हो उसका मन मगन॥ १॥
काम क्रोध लोभ मोह, शत्रु हैं सब महावली।
उनके हननके वास्ते, जितना हो तुझ से कर यत्न॥ २।
ऐसा बना स्वभाव को, चित की शान्ति से तू।
पैदा न हो ईर्षा की आंच, दिल में करे कहीं जलन॥ ३।
मित्रता सब से मन में रख, त्याग के वैर भाव को।
छोड़ दे टेढ़ी चाल को, ठीक कर अपना तू चलन॥ ४
जिस से अधिक न है कोई, जिसने रचा है ये जगत।
उसका ही रख तू आश्रय, उसकी ही तू पकड़ शरण॥ ५॥

छोड़ के राग द्वेष को, मन मे तू उस का ध्यान कर।
तुझ पे दयाल होवेंगे, निश्चय है ये परमात्मन् ॥ ६॥
जैसा किसी का हो अमल, वैसाही पाता है वो फल।
दुष्टों को कष्ट मिलता है, शिष्टों का होता दुःख हरन ॥ ७॥
आप दया स्वरूप है, आप ही का है आसरा।
कृपा दृष्टि कीजिये मुझ पे जब हो समय कठिन ॥ ८॥
मन में मेरे हो चांदना, मोक्ष का रस्ता मिले।
मार के मन जो "केवला" इन्द्रियों को करे दमन ॥ ९॥

भजन १०६

टेक—आतमा में गंग वहै क्यों नहीं मन न्हावे।
इन्द्रियों को जीत प्रीति ईश्वर से लावे।
पावें कहां परम धाम जो इत उत धावे ॥ १ ॥
दीनों को दे दान सज्जनों को करके मान।
तजदे अभिमान प्राणी अन्त काल खावे ॥ २ ॥
सत्यका तू कर व्योहार जन्मका तू ले सुधार।
धूर्तता का छोड़ प्यारे पाप क्यों कमावे ॥ ३ ॥
भाई बन्धु मित्र यार बनमें तोहे आवें डार।
छूटि जावे सब परिवार धर्म साथ जावे ॥ ४ ॥
नवलसिंह वार २ ईश्वर ही को तू पुकार।
मनुष्य का शरीर फिर हाथ नहिं आवे ॥ ५ ॥

गजल १०७

प्रभु चरणन में आजा तू वही है तेरा हितकारी।
समय अपना गंवा मत तू, न रोवे अन्तकी बारी ॥१॥
कुटुम्बी और सम्बन्धी, अटारी फूल फुलवाड़ी।
सभी पीछे ही रह जावें हो जब चलने की तैयारी ॥ २॥

यह कोमल देह जिसको तू सजाता रात दिन रहता।
न जाये साथ रह जावे, भस्म का ढेर हो सारा॥ ३॥
यह मिथ्या ज्ञान चतुराई, कि जिससे जगत को छलता।
न आगे काम यह आवे, प्रभु है परम न्यायकारी॥
समझ ले सोच ले सब कुछ, कमाई धर्म की करले।
धर्म्म है आज्ञा ईश्वर की, यही है अन्त सहकारी॥ ५॥
भले पुरुषों की संगत से, आचारों को सुधारो तुम।
ऋषि आप्त की सेवा में, लओ तुम सुखकारी॥ ६॥
दमन सब इन्द्रियां करलो, रहे मन सर्वदा वश में।
माता भैना, पुत्रीवत् सदा देखो हर इक नारी।७॥
द्वेष अरु विरोध से भागो, सभों से मित्रवत् बरतो।
सकल पर कृपा दृष्टि कर बनो सबके तुम उपकारी॥ ८॥
यह अद्भुत सृष्टि में प्रभु की, विचारो देखकर महिमा।
पढ़ो तुम विद्या उसकी वह विद्या है परम प्यारी॥ ९॥
उसी का नाम दिन दिन लो, उसी के ध्यान में रहते।
पुराणों को तजो प्यारे, वह देवेगा तुम्हें तारी॥ १०॥

भजन १०८

प्रभु प्रीतम जिसने विसारा, हाय जन्म अमोल बिगाड़ा।
धन दौलत माल खज़ाना, यह तो अन्त को होवे बिगाना॥
सत् धर्म को नहीं विचारा, भूला फिरता है मुग्ध गँवारा।
झूठे मोह में तन मन दीना, नहीं भजन प्रभु का कीना
पुत्र पौत्र और परिवारा, कोई संग न चलने हारा
भ्रात भाव न प्रीति परस्पर, कपट छल है भरा मन अन्दर।
कुछ भी किया न पर उपकारा, खोटे कर्मों का लिया अजारा
तेरा जोबन और जवानी, ढलनी जावे ज्यों बरफ़ का पानी।
मीठी नींद में पांव पसारा, चिड़िया चुग गई खेत तुमारा॥

धोके बाज़ी के दाम फैलाए, विषय भोग के चैन उड़ाए।
पुण्य दान से रहा है न्यारा, ऐसे पुरुष को हो धिक्कारा॥
जो २ शास्त्र वेद बखाने, मूर्ख उलटाही उसको जाने।
समय खोया है खेल में सारा, सतसंग से कीना किनारा॥
ऐसे जीने पै तू अभिमानी, ढेला रेत का ज्यों बीच पानी।
क्यों न गुण और कर्म सुधारा, मनुष जन्म न हो बारम्बारा॥
तेरे कर्म हैं नाव समाना, जिस में बैठा है तू अनजाना।
गहरी नदिया है दूर किनारा, कोई दम में तू डूबनहारा॥
"गंगाराम" तू जागरे भाई, कुछ कर ले नेक कमाई।
संग जाय नहीं सुत दारा, सत् धर्म ही देगा सहारा॥

भजन १०९

त्यागेगा जो असत्य को सुख वोही पावेगा।
सत्याचरण ही मोक्ष की पदवी दिलावेगा॥ १॥
जितने हैं पाप झूठ है सब का पितामहा।
जो इस का यार होगा, महा दुःख उठावेगा॥ २॥
सीधा नरक पुरी को यहां से सिधारेगा।
ईश्वर की जगह और का जो सिर झुकावेगा॥ ३॥
आवागमन के दुःखों से छूटेगा बस वही।
जगदीश के प्रेम में जो लव लगावेगा॥ ४॥
अन्तःकरण की शुद्धि का भागी बनेगा वह।
सत्याचरण की गंगा में जो जन नहावेगा॥ ५॥
ईश्वर समझ के पूजेगा जड़ मूर्ति को जो।
जड़ रूप अपनी बुद्धि को निश्चय बनावेगा॥ ६॥
बेजा किसी को जो कोई कलपावेगा यहां।
यह याद रहे वह भी कभी कल न पावेगा॥ ७॥
जो नेक काम करना है कर ले वह आज ही।

गुज़रा हुआ न वक़्त कभी हाथ आवेगा ॥ ८ ॥
परलोक को सुधरेगा इस लोक में न जो।
आख़िर वह अपने हाल पै अफ़सोस खावेगा ॥ ९ ।
सम्बन्धी छोड़ देंगे तेरा साथ मरते वक़्त।
'केवल' है एक धर्म ही जो साथ जावेगा ॥ १० ।

भजन ११०

लगी जिनकी जगदीश से हो लगन।
नहीं काम में उनके होता विघन ॥
नहीं कोई होता है उनको कलेश।
जो रखते हैं वेदोक्त अपना चलन ॥
सदा वही पाते हैं प्रतिष्ठता।
बुरे काम से भागते हैं जो जन ॥
किसी से नहीं वैर बुद्धि जिन्हें।
वह रहते हैं हर वक़्त मन में मगन ॥
गये दोनों लोक उसके 'केवल' सुधर।
है जिसने किया इन्द्रियों को दमन ॥

ग़ज़ल १११

टेक—माया के भ्रम बीच भटकत क्यों भूले।

करके कुछ उपकार जन्म को तू ले सुधार।
पक्षपात त्याग, न्याय कीर्ति यश लेले ॥ माया के० ॥
दान, दया धीरज, दम, सज्जनों का करले संग।
कठिन वचन त्याग प्राणी, प्रिय वचन बोले ॥ माया के० ॥
तज के सब राग द्वेष कर पुरुषार्थ और संतोष।
धर्म का यह कोष, मूर्ख पापों को बटोले ॥ माया के० ॥
ईश्वर को सत्य मान, आत्मा में करले ध्यान।

घट २ जो व्यापक वही पाप पुण्य तोले ॥ माया के० ॥
दयानन्द सरस्वती ने सत्य असत्य कर विचार ।
वेदों का कर प्रचार कपट जाल खोले ॥ माया के० ॥
वेदों की यही रीति आपस में करो प्रीति ।
दिन २ सुख होवे झूलो स्वर्ग के झूले ॥ माया के० ॥
नवलसिंह कर ध्यान काया का न कर गुमान ।
आवे या न आवे स्वांस जिस पर तू भूले ॥ माया के० ॥

भजन ११२

दोहा—कर्म धर्म की लूट है, लूटी जाय सो लूट ।
फिर पीछे पछतायगा, जब प्राण जायेंगे छूट ॥
टेक- गफ़लत की नींद सोता हो, काल आ जगावेगा ।
बेमोल यह समय है, फिर कैसे पावेगा ॥
यह ऐश का पलंग जो है, सब छूट जावेगा ॥
जिस दिन ज़िमीं पै बिस्तरा वन में लगावेगा ।
पितु मातु भाई बन्धु कोई पास न आवेगा ॥
सुपने की यह कलोलें हैं, मिथ्या तू कर रहा ।
खुल जावे आंख जब तेरी, अफसोस खावेगा ॥
इस पेट की तू खातिर, करता फिरे है छल बल ।
ये पेट पीठ फेर, मुख नहीं दिखावेगा ॥
दयानन्द सरस्वती ने, सब को जगा दिया ।
सोवेगा वही, जिस को पोप भंग पिलावेगा ॥
है 'नवलसिंह' दुनिया में जागना दिन चार ।
फिर मनुज्य का शरीर तू मुशकिल से पावेगा ॥

भजन ११३

मन परमात्मन् का सुमिर नाम घड़ी २ पल २ छिन २ दिन
दिन श्वास २ में सुमिर नाम ॥

घट २ व्यापक अन्तरयामी, रोम २ में रम रहे स्वामी।
अद्वितीय ब्रह्म परमात्म पूरन है विश्वम्भर वाको नाम॥
नित्य पवित्रसृष्टि का कर्त्ता, दुःख दरिद्र मल मन के हरता।
निर्विकार शुद्ध रूप निरंजन, कर वाको पुनः २ प्रणाम॥
अजरअमर दयालुन्यायकारी, करुणा सिंधु सर्वहितकारी।
मंगल दायक सच्चिदानन्द को भजले रे नर आठो याम॥
अन्न धन सब भोग पदार्थ भक्ति मुक्ति दो अर्थ परमार्थ।
अमीचन्द पूर्ण करता है, सफल मनोर्थ सिद्ध काम॥

भजन ११४

टेक–नेक कमाई कर कुछ प्यारे जो तेरा परलोक सुधारे।
इस दुनिया का ऐसा लेखा, जैसे रात को स्वप्ना देखा।
ज्यों स्वप्ने में दौलत पाई, आंख खुली तो हाथ न आई।
कुटुम्ब कबीला काम न आवे, साथ तेरे एक धर्मही जावे।
सब धन दौलत पड़ा रहेगा, जब तू यहां से कूच करेगा।
ताशाकुछ नहीं सफरहै भारा, क्योंकर होगा तेरागुज़ारा।
अबतक गाफिल रहा तू सोया, वक्त अनमोल अकारथखोया।
टेढ़ी चाल चला तू भाई, पग पग ऊपर ठोकर खाई।
खूब सोच लो अपने मन में, समय गंवायो मूरखपन में।
यदि अबभी नहीं तू यत्न करेगा, तो पछताना तुझे पड़ेगा।
कर सत्संग और विद्या अध्येन, तबतू पावे सुखऔर चैन।
एक प्रभु बिन और न कोई, जिसके सुमिरे मुक्ति होई।
उसी का केवल पकड़ सहारा, क्यों फिरता है मारामारा।

भजन ११५

वेदोक्त चलन अपना मेरे मित्र बनाओ।
जगदीश के तुम ध्यान में मन अपना लगाओ॥१॥

धर्मात्मा जो पुरुष हैं सेवा करो उनकी ।
　　और मूढ़ जनों की कभी संगत में न आओ ॥२॥
मन अपना रखो काबू में और इंद्रियांवश में ।
　　बेहूदा ख्यालात के नज़दीक न जाओ ॥३॥
शुभ कर्मों में तत्पर रहो और धर्म के कर्त्ता ।
　　हैं जितने बुरे काम उन्हें दूर भगाओ ॥४॥
ईश्वरके बिना और की पूजा है बड़ा पाप ।
　　जड़ मूर्ति के आगे कभी सिर न झुकाओ ॥५॥
बिन सत्य के सेवन के, नहीं शुद्ध मन होता ।
　　मल मल के बदन गंगा में गो रोज़ नहाओ ॥६॥
वह काम करो जिसमें न दुख पहुंचे किसी को ।
　　दिन रात अपने आप को, हिंसा से बचाओ ॥७॥
दुनिया के रागद्वेष से होकर के अलैहिदा ।
　　अब उर्फ विश्वनाथ से तुम प्यार बढ़ाओ ॥८॥

भजन ११६

टेक—हृदय में हरि को जान, भजन कर अन्तर ध्यान हो ।

दोहा०—अग्नि वायु और जल थल में, व्यापक एक समान ।
　　सबही लोक उससे प्रकाशित, क्या चंदा क्या भान ॥
　　　　भजन कर० ॥

दोहा—आंख नाक मुख मूंद के, जो नाम निरंजन लेय ।
　　अन्दर के पट तब खुलें, जो बाहर के पट देय ॥
　　　　भजन कर० ॥

दो०—लड़का बगल में ढोल शहर में, क्यों भूला नादान ।
　　बिना शुद्धता अन्तःकरण के, चाहे जित मिट्टी छान ॥
　　　　भजन कर० ॥

दो०—भूला मृगा वन में भटकत, नाभि बीच सुगन्ध ।
इत उत मूर्ख फिरे भ्रमता, पावे कहां आनन्द ॥
भजन कर० ॥
दो०—अपने घरकी सुध बुध नाहीं, पर घर फिरत हैरान ।
मंदिरमें दुख दीपक बिना, ज्यों जीवको दुःख चिनज्ञान॥
भजन कर० ॥
दो०—काम क्रोध और लोभ मोह की जबलग मनमें खान ।
"नगलासिंह" हरि कैसे देखे, भरा कपट अभिमान ॥
भजन कर अन्तर ध्यान हो ॥

भजन ११७

टेक—हरिप्रेम सुधा जिसने है पिया, तिसे औरप्यास रती न रही
टुक दुमति ताप न गात दहे, तिसके मन में अति शांति भई ॥
सत्य उपदेश जो अन्न छके, अराधन भूख तिसे न रही ।
दिन रैन हृदय हरि नाम भजे, अति प्रेम से प्रभु गीत गही ॥
पर उपकारकी माला जिन फेरी, तिन लोभ विकारकभी न सही ।
जिन राम परायण देह करी, धन प्राण सभी सत पंथ दई ॥
सोई निर्मल बुद्धि सदा विचरे, तिस काम औरक्रोध सकेन लई ।
जिन प्रीति करी प्रभु चरनन में, तिनकी महिमा अति ऊंचभई ॥
हरि नाम निरन्तर जो सुमिरे, तिनकी गति मोपै न जाइ कही ।
वैर विरोध करें जग में जो, जिनकी चित वृत्ति सुखी न भई ॥

भजन ११८

टेक—है प्रभु वही सब पर है जिसे बड़ाई ।
है भक्त वही जिन प्रीति प्रभु से लाई ॥

चौक १

है ज्ञानी वह जो वेद की विद्या जाने ।

है ध्यानी वह जिसका चित रहे ठिकाने ॥
है वही कवीश्वर सत्य शब्द लगे गाने ।
है वही श्रोता सत्यासत्य जो छाने ॥
जिन सत से प्रीति कर असत्य से करी जुदाई ॥ है भक्त ॥

चौक २

ज़रदार हुआ ज़र जिसने प्रथम लगाया ।
सरदार हुआ सर जिसने प्रथम झुकाया ॥
नामर्द हुआ जिसने मुरदा को खाया ।
हो दर्द उसे जो दुख नहीं तके पराया ॥
जिसने हिंसा को तजा जिन्दगी पाई ॥ है भक्त० ॥

चौक ३

जो करे उपकार उसका उपकार होता है ।
जो अपस्वार्थमें फँसा वह कुछ खोता है ॥
काटेगा वही जो पहले बीज बोता है ।
जो कल्लर में बोता है बीज खोता है ॥
जो पुरुषार्थ नहीं तजे वह करे कमाई ॥ है भक्त० ॥

चौक ४

जो काम को जीते वही कामनी पावे ।
जो क्रोध को जीते सबको वही हरावे ॥
जो लोभ को जीते सब को वही लुभावे ।
जो मोह को जीते वह मोहा नाहीं जावे ॥
जिन खुदी को जीता उसने पदवी पाई ॥ है भक्त० ॥

चौक ५

जिन जीभ को जीता स्वादको उसने जाना ।

मन जीता जिसने हुआ काम मन माना ॥
जिन आप को जीता जीता सभी ज़माना ।
जिन तुच्छ बुद्धि को तजा वह होगया दाना ॥
अहंकार को तजे तो मिले बड़ाई ॥ है भक्त० ॥

चौक ६

जो परदारा को तजै तो पावे रानी ।
जा झूठ वचन दे छोड़ शुद्ध हो बानी ॥
जो वीर्य की रक्षा करे तो चढ़े जवानी ।
करे सत्यव्यवहार तो रिद्धिमिले मनमानी॥
कहे 'नवलसिंह' बिन विद्या दुर्गति पाई ॥ है भक्त० ॥

ग़ज़ल ११६

याद रख ऐसा समय अनमोल नहिं पावेगा तू ।
दम निकल जावेगा फिर पीछे से पछतावेगा तू ॥

जन्म मानुष्य का यह बारंबार तो मिलता नहीं ।
चूकेगा नादान चौरासी में फिर जावेगा तू ॥

हरि का सुमिरन कीजिये तज के सकल भ्रम जाल को ।
जीवन दिन चार है फिर सर को टकरावेगा तू ॥

दारा सुत भाई बिरादर यह है कौतुक ख़्वाब का ।
खुलगई जब आंख फिर अफसोस को खावेगा तू ॥

दुनिया के बाज़ार में करले तू सौदा धर्म का ।
उठाया बाज़ार फिर पछता के रह जावेगा तू ॥

याद कर "बलदेव" उसको जो पिता संसार का ।
कटजावे कर्मकी फांस फिर दुनियां में क्यों आवेगा तू ॥

भजन १२०

दोहा—माला तेरी काठ की, धागा दई परोय।
मन में घुंडी पाप की, राम भजे क्या होय॥

या विधि ध्यान लगावेरे प्यारे, या विधि ध्यान लगावेरे।
राग द्वेष सब त्यागन करके, प्राण पवन ठहरावेरे।
दृढ़ आसन कर मन की माला, ज्ञान के चक्र घुमावेरे॥
सगुण निर्गुण मे चित ठहराओ तब आनन्द पावेरे।
नाना भौतिक द्रव्य पूज के वृथा जन्म गँवावेरे॥
क्षमा शील सन्तोष दया रख, प्रिय वचन संत गावेरे।
जीते इन्द्रिय दान दम धीर पद वैर को भाव मिटावेरे॥
पत्थर को तू भोग लगावे वह क्या भोजन खावेरे।
अन्धे आगे दीपक बाले वृथा तेल जलावेरे॥
कामातुर के जैसे चित में नारी ही नित भावेरे।
ऐसा प्रेम जब होय प्रभु में तब तो भक्त कहावेरे॥
बिना विचारे पंच महायज्ञ योग भक्त नहीं आवेरे।
नवलसिंह तज काठ की माला वृथा क्यों काल गँवावेरे॥

भजन १२१

टेक-या विधि प्रभु को पाओरे साधो या विधि प्रभुको पाओ।

हृदय की शुद्धि निर्मल बुद्धि ज्ञान की शक्ति बढ़ाओ।
प्रेम और भक्ति में तत्पर हो योग में लीन होजाओ॥
विद्याध्यन में रहो रैन दिन, जन्म को सफल कराओ।
कर सत्संगत छोड़ कुसंगत पाप को दूर हटाओ॥
दृढ़ और शुभ अभ्यास हो, मन चञ्चल ठहराओ।
छोड़ अभिमान समान रहो नित द्वेष न वैर कमाओ।
शुद्ध व्यवहार में देश सुधार में, मन और चित्तलगाओ।

शान्तिस्वभाव से मित्र भावसे सत्की महिमा दिखाओ।
त्याग स्वार्थ कीजे पुरुषार्थ नाहीं किसी को सताओ।
और के सुख में निज सुख मानो परोपकारी सदाओ॥
क्षण भंगुर यह है पिंजरा तुमरा आयु न व्यर्थ गँवाओ।
"गंगाराम" भजो नाम निरंजन भवसागर तर जाओ॥

भजन १२२

टेक-जिस से सब रोग कटे हैं, एक जड़ी हमारे पास है
मूल का नाम ओम् है भाई, गायत्री डण्डी कहलाई।
जप तप टहनी पर छबिछाई, निगम बाग में बास है॥
फल की ना चमक घटै है॥ १॥
नियम धर्म के पात कहाने, सत के फूल खिले लहराते!
प्राणायाम के फल मन भाते, मिट जावे सब त्रास है।
सम्मुख ना पीड़ा डटे है॥ २॥
उलका खरल सफाई तनकी, बुद्धिका रगड़ा मूसली मनकी।
सन्ध्या प्रात समय घोटन की, मूल सजीवन खास है॥
त्रिदोष असाध्य हटे है॥ ३॥
तीनों ताप पास ना आवें, तीनों पाप शीघ्र नश जावें।
घीसाराम छन्द गावें, सब गुणियों का दास है॥
कर्त्ता के नाम रटे है॥ ४॥

भजन १२३

मोक्ष का सम्भव है केवल ज्ञान से,
है यह निश्चित वेद के प्रमाण से॥ १॥
ज्ञानी वह होते है जिन को होवे प्रेम,
विद्या के पढ़ने से विद्या दान से॥ २॥
या विचारें ओ३म् के अर्थों को वो,

या रहें सुनते गुण उसके कान से ॥३॥
धर्म से ही होता है जीवन सफल,
धर्म ही को जानो प्यारा जान से ॥ ४ ॥
मूर्ति में प्राण क्यों कर पड़ सकें,
जड़पना कब जा सके पाषान से ॥ ५ ॥
यज्ञ हवन धर्म और कर्म है रायगां,
मुक्ति मिल जाती हो गर स्नान से ॥६॥
मूर्खों की है बहुत संगत बुरी,
चाहिये सत्संग विद्यावान से ॥ ७ ॥
सत्यवक्ता सत्यकारी जो हैं जन,
रहते हैं पूरित वही धन धान से ॥ ८ ॥
सत्य प्रकाशित रहे मन में मेरे,
चाहता "केवल" हूँ ये भगवान से ॥ ९ ।

भजन १२४

किस सोच विचार में बैठे हो,मन शुद्ध करो भाई एक क्षणमें ॥
जग चिन्ता को दूर करो अब,और त्यागो ध्यान विषय धनको ॥
परित्राणके प्रति सब व्याकुल हो,तुम आकुल हो प्रभु दर्शनको ॥
प्रभु पूजा में अनुराग करो, और प्रस्तुत हो हरि कीर्तन को ॥
भक्ति और प्रेम के फूलों से, भरपूर करो हृदय कानन को ॥
एकान्त सुधारस पान करो, और शान्त करो अपने मन को ॥

भजन १२५

मेरे मन ने मुझ को बहुत ही सताया ।
कुसंगी किया और कुमार्ग चलाया ॥ १ ॥
मुझे झूठी बातों से बहका के इस ने ।
असत काम में वक्त मेरा गँवाया ॥ २ ॥
बढ़ाई रुचि खोटे कर्मों में मेरी ।

दिया मुझको धोखा, भ्रम में फँसाया ॥ ३ ॥
कराई कभी इस ने पत्थर की पूजा।
कभी इस ने पीपल कभी बड़ पुजाया ॥ ४ ॥
कभी मुक्ति पाने अमरनाथ पहुंचा।
पहाड़ों की चोटी के ऊपर फिराया ॥ ५ ॥
कभी वामियों की लगावट से उस ने।
विषय भोग को मोक्ष मार्ग बताया ॥ ६ ॥
नया रोज़ धोखा दिया मुझ को इसने।
बिगाड़ा मेरा काम, अपना बनाया ॥ ७ ॥
कराई कभी लिंग की इस ने पूजा।
कभी देवी की प्रतिमा को पुजाया ॥ ८ ॥
वहां बकरा चढ़वाया कह कर इसी ने।
मुझे जीव हत्या का भागी बनाया ॥ ९ ॥
अविद्या के जंगल में चक्कर दिलाये।
हर एक काम उलटा ही मुझ से कराया ॥ १० ॥
भयानक सुनाईं सदा इस ने बातें।
सदा इसने झूठा मुझे डर दिखाया ॥ ११ ॥
न जाने दिया सीधे रस्ते पे मुझ को।
मुझे विद्वानों में मूर्ख बनाया ॥ १२ ॥
किये इतने झगड़े बहुत खाक छानी।
मगर शान्ति को कहीं भी न पाया ॥ १३ ॥
ग़रज़ इस ने धोखे से रखा भ्रम में।
न करना था जो कुछ वह मुझसे कराया ॥ १४ ॥
न मानूंगा अब तो कभी मन का कहना।
समझ को मेरी इसने बट्टा लगाया ॥ १५ ॥
खुले ज्ञान चक्षु तो फिर हर जगह पर।
जगत स्वामी का मैने प्रकाश पाया ॥ १६ ॥

दादरा १२६

टेक-मन मेरो न माने मनाय हारो रे।
ईश्वर सच्चिदानन्द रूप में, लागत नाहीं,
लगाय हारो रे ॥ मन मेरो० १ ॥
निज हित अनहित सुख और दुख जो,
बूझत नाहीं बुझाय हारो र ॥ मन० २ ॥
कुबुद्धि कुकर्म कुसंग कुपथ ले,
हटत नाहीं हटाय हारो रे ॥ मन० ३ ॥
चंचल चित किशोर ऐसो यह,
ठहरत नाहीं ठहराय हारो रे ॥ मन०४ ॥

भजन १२७

यह मन कब समझेगा बौरा, कब समझेगा बौरा,
यह मन कब समझेगा बौरा।
अमृत सागर को तज मूर्ख, पीवत है जल कौड़ा।
विषय आनन्द की मृग तृष्णा में, फिरत है इत उत दौड़ा ॥
व्यभिचारी मति मानत नाहीं, खावत है विष मौहरा।
अकार उकार मकार फूल की, रस ले तू बन भौंरा ॥
यह मिथ्या घर सांचा जानत, भूल गया निज ठौरा।
"अमीचन्द" वेढव मानत नाहीं मुग्ध गँवार निगौरा ॥

भजन १२८

हुआ ध्यान में ईश्वरके जो मगन उसे कोई क्लेश लगा न रहा
जब ज्ञान की गंगा में न्हाया तो मन में मैल ज़रा न रहा ॥
परमात्मा को जब आत्मा में लिया देख ज्ञान की आंखों से।
प्रकाश हुआ मन में उस के कोई उससे भेद छिपा न रहा ॥

पुरुषार्थ ही इस दुनिया में हर कामना पूरी करता है।
मन माना सुख उसने पाया जो आलसी बन के पड़ा न रहा॥
दुख दायक हैं सब शत्रु है यह विषय हैं जितने दुनिया के।
वही पार हुआ भवसागर से जो जाल में इन के फँसा न रहा
यह वेद विरुद्ध जब मत फैले पत्थर की पूजा जारी हुई।
जब वेद की विद्या लोप हुई तो ज्ञान का पांव जमा न रहा
यहां बड़े २ महाराज हुए बलवान हुए विद्वान् हुए।
पर मौतके पंजेसे 'केवल' कोई रचना में आके रचा न रहा॥

भजन १२६

टेक—सारी आयु बीती जाय, भाइयो अब तो चेतोरे।

दोहा—आए थे एक धाम से, और उतरे एक ही घाट।
हवा लगी संसार की, होगये बारह बाट॥

मात पिता सुत भगनी दारा, कोई न अपना होय।
अंत समय कोई काम न आवै, धर्म ही अपना होय॥
माला तेरी काठ की, धागे लई परोय।
मन में घुंडी पाप की, राम भजे क्या होय॥
माला फेरत जन्म गया, पर गया न मन का फेर।
कर का मनका छोड़ के, मन का मन का फेर॥
माला मो से लड़ पड़ी, तू क्यों फेरत मोहि।
मन की माला फेर जो, ईश्वर मिल जाय तोहि॥
बालापन सब खेल गंवायो, योवन तिरिया साथ।
वृद्ध भया कुछ बन नहिं आवत, कंपत सगरो गात॥

भजन १३०

नर ओंकार का ध्यान धर, जिस ने यह जगत रचाया। टेक
वेद शास्त्र के लिखा मॅझारे, ऋषी मुनी कहते गये सारे। हरे

व्यापक है प्रभु अन्दर बाहरे, नित्य उसी का गान कर।
सुधरे यह तेरी काया ॥ जिसने० १ ॥
अविनाशी प्रभु रक्षा करता, नहीं जन्मता वह मरता हरे।
पत्थर पूजा फिर क्यों करता, पत्थर पड़ गया ज्ञान पर।
ईश्वर का नाम भुलाया ॥ जिसने० २ ॥
मन विषयों से रहित होजावे, ऋषिकहैं यह ध्यान कहावे। हर
मन चञ्चल को वश में लावे, तार ज्यों चढ़ै कमान पर।
त्यों ओं का धनुष बनाया ॥ जिसने० ३ ॥
बाण रूप आत्म कर लीजो, परमात्मा को लक्ष्य करीजो। हरे
लक्ष्य भेद कर सुख में भीजो, आनन्द हो इस आन पर।
यह 'धर्मदेव' को भाया ॥ जिसने० ४ ॥

गजल १३१

काल की आज्ञा में कैसे २ ज़ोरावर चले,
क्या मजाल उस हुकुम की कोई अदूली करसके।
राजे चले राने चले धनवान और निर्धन चले,
कौन अस्थिर रहसके जब काल का चक्र चले।
छोड़ कर सारी हकूमत सिविल के अफसर चले,
सरिशता के मुनशी वा बाबू छोड़कर दफ्तर चले।
सरदार सूबेदार और कप्तान बल मेंजर चले,
करनल चले जनरल चले लफ्टंट चले सरजन चले।
कारतूस और दारू सिक्का पेटियों में भर चले,
पलटन रसाले तोपखाने त्यागकर लश्कर चले।
मुखतार और वुकला बैरिस्टर देखो मुक़दमाहर चले,
झूठकी तक़रीर मंतिक़ इस जगह क्यों कर चले।
वैद्य और हुकमा यहांपर पढ़ के तिब्ब अकबर चले,
नुसखा न पाया मौत का हैरान हो डाक्टर चले।

ज़िमीदार पत्तीदार नंबरदार नंबर पर चले,
अन्त को बेदख़ल हो देखो वह धर्ती धर चले।
तज्जार साहूकार कोठीदार सौदागर चले,
खोटे सौदे में यह आयु अपनी जाया कर चले।
हलचल पड़ी जहां काल की सब काँपते थर २ चले,
आंसू बहाते चल पड़े न ज़ोर चले न ज़र चले।
सूरज चले तारा चले चन्द्र चले नवग्रह चले,
काल की गरदिशमें प्रतिदिन पृथिवीमेहवरपर चले।
कलियुग चले सतयुग चले त्रेता चले द्वापर चले,
राम चले रावण चले 'अमीचन्द' नन्दकुँवर चले।

भजन १३२

क्यों सोया उठ जाग समय चला जाता है भाई।
जिस जीवन को स्थिर माने, है बादल की छाई।
ये संसार असार है सारा, ज्यों सुपना रैनाई॥ १॥
बाल सखा संग झूठे खेल में, बीत गई लड़काई।
विषय सेवा में गई जवानी, वृद्ध अवस्था आई॥ २॥
दुर्दशा होगा आगे बुढ़ापे में, देता हूं तुझे समझाई।
सख़्त वस्तु कोई खा न सकेगा, तोड़ेगा दांत मिठाई॥ ३॥
कान भी बिन ऊंचे शब्दों के, बात न सुनत सुनाई।
हाथ पांव देह कांपेगी सारी, आँख न देखेगी राई॥ ४॥
वात पित्त कफ रोगों की पीड़ा, अति होगी दुखदाई।
निकट वैद कोई बात न पूछे, मांगे न मिलत दवाई॥ ५॥
घर के बाहर वासा मिलेगा, टूटी सी चारपाई।
कपड़े मिले तो कैसे निकम्मे, चीथड़े लेफ दुलाई॥ ६॥
हो परवश पड़ा खटिया पर, रो २ देत दुहाई।
पछताने से अब क्या होवे, बैठा है खेत लुटाई॥ ७॥

कुटुम्ब कहे हुआ बहत्तर वर्ष का, बाबा हुआ सौदाई।
जो माया है प्राणों से प्यारी, पल में होत पराई ॥ ८ ॥
बार २ पूछत सम्बन्धी, दस कुछ धरी धराई।
'अमी' रस पीकर अमृत होजा, काल से होवे रिहाई ॥ ९ ॥

गजल १३३

हर जगह मौजूद है पर वह नज़र आता नहीं।
योग साधन के बिना उसको कोई पाता नहीं ॥
मरने और जीने के बन्धन से बरी वह है सदा।
उसका कोई ज़ौज बेटा और पिता माता नहीं ॥
गान विद्या से अगर कुछ लाभ है मद्दे नज़र।
फिर जगत स्वामी के तू गुणवाद क्यों गाता नहीं ॥
जो जगतकर्ता की मन से आज्ञा है पालता।
कोई भी दुख दर्द उसको शकल दिखलाता नहीं ॥
रास्ती को जिसने छोड़ा कजरवी की इख़्तियार।
मंजिले मक़सूद तक उसका क़दम जाता नहीं ॥
मुस्तहक के हक दबा लेने की आदत जिसने की।
कौन है, जो पेचतावे गम से घबराता नहीं ॥
है समझ जिनको, वह उनको जानते हैं कम समझ।
जो यह कहते हैं कोई कर्मों का फल दाता नहीं ॥
कुछ भी पर उपकार में होती नहीं तुझ से मदद।
हैफ़ अपने दिल में भी तू उर्फ शर्माता नहीं ॥

ग़जल १३४

सीधी है राह प्रेम की इस पर चले चलो।
खदशा करो न दिल में कुछ बेडर चले चलो ॥
मिलते हैं प्रेमकों के इसी राह पै नक़शे पा।

प्रीतम से मिलने वालों इसी पर चले चलो ॥
भटकाओ टेढ़ी राहों में हरगिज न अपना दिल।
रूखा व फीका खाके खुश्क तर चलो चलो ॥
हैं दायें बायें राहें सुनहरी हैं खतरनाक।
देखो न खबर दार इधर उधर चले चलो ॥
खुद गर्ज़ी व खुदी का न कांटा तुम्हें चुभे।
मोज़े अधीनता के पहन कर चले चलो ॥
मंजिल पै पहुँचने का अभी वक्त है बाक़ी।
विश्वासी अब गंवाओ न औसर चले चलो ॥

भजन १३५

शैर—जो करे जैसा ज़रूरी वैसा ही फल पायेगा।
काम करके नर्क के कहो स्वर्ग कैसे जायेगा ॥

दूसरों को दुःख देकर सुख की करता आस है।
बोये पेड़ बबूल तो फिर आम कहां से खायगा ॥

टेक—जो भला और का चाहे, वही नर सुखी कहावैगा।
दीनों के दुख को हरेगा, उस पर नहीं कष्ट पड़ेगा।
जीते जी सुख भरेगा अंत में स्वर्ग जावैगा ॥ १ ॥
अपना जो सुख चाहता है, और को दुख पहुंचाता है।
निश्चय वह दुख पाता है, सुख वह कभी ना पावैगा ॥ २ ॥
नेकी का नेक फल भाई, बुरे कर्मों से दुष्ट कहाई।
इस से करो मित्र भलाई, तुम्हें जग भला बतावेगा ॥ ३ ॥
मुश्किल है मनुष्य तन धरना, लाज़िम है कर्म शुभ करना।
चाहो भवसागर से तरना, साथ एक धर्म जावैगा ॥ ४ ॥
यह रामचंद्र की अर्जी, दो छोड़ मित्र खुदगर्जी।
आगे है तुम्हारी मर्जी, करेगा वैसा ही पावैगा ॥ ५ ॥

भजन १३६

टेक-अब तन धन चित्त लागयके, कुछ विद्या पढ़लो भाई।
विद्या मातु पिता अरु घर है, विद्या सम नहीं कोई हुनर है
विद्या सब धन से बढ़कर है, इस दुनिया में आय के
प्रिय सीखा मन चित लाई ॥ कुछ० १ ॥
विद्या है दौलत की खानी, धन से धर्म धर्म बिन हानी।
बिन विद्या सुख चाहत प्रानी, मोह माहिं भरमाय के।
निज मुक्ति राह भुलाई ॥ कुछ० २ ॥
जब से तुम्हें अविद्या छाई, आपस में नित होत लड़ाई।
नहिं मानै भाई को भाई, झूठा द्रोह बढ़ाय के।
घर घर में फूट मचाई ॥ कुछ० ३ ॥
रामचन्द्र कुल पूज्य तुम्हारे, धर्म वेद के पालन हारे।
वर्ष चतुर्दश वन में गुजारे, सारा । सुख बिसराय के।
निज सिंधु में सेत बँधाई ॥ कुछ० ४ ॥
विद्या ज्ञान दृष्टि फैलावे, असत त्याग सत मार्ग बतावे।
गुण औगुण को ज्ञान करावे, देखहु किन अजमाय के ॥
पूछहु गुनियन पहं जाई ॥ कुछ० ५ ॥
कभी भूमि यह आप हरी थी, विद्वानों से पूर्ण भरी थी।
कभी न इसने आह करी थी, खून के आंसू बहाय के।
भारत जननी बिलखाई ॥ कुछ० ६ ॥
थे पुरुषा गुण गाहक भाई, जिन विद्या की नींव जमाई।
उससे बहुतक काज, बनाई, पूर्व पुस्तकनि गाय के ॥
निज कीर्ति ध्वजा फहराई ॥ कुछ० ७ ॥
गर चाहो अब देश सुधारा जल्द करो विद्या का प्रचारा।
शुभचिंतक प्रिय 'रूप" तुम्हारा, मिल लो प्रेम बढ़ाय के ॥
जो चाहो सुख अधिकाई ॥ कुछ० ८ ॥

ग़ज़ल १३७

अपने उद्देश्य को मैंने भुला रक्खा है।
इन्द्रियों ने मुझे दीवाना बना रक्खा है॥
मेरे मन ने मुझे अत्यन्त सता रक्खा है।
काम क्रोध आदिकी अग्नीमें जला रक्खा है॥
सूरतें बनतीं हैं और मिटतीं हैं कैसी कैसी।
दस्त क़ुदरत ने अजब खेल दिखा रक्खा है॥
ताकि इन में न तिरस्कार मेरा हो जाय।
अपनी कमजोरी को मित्रों से छुपा रक्खा है॥
योग अभ्यास जो हो जाय तो कुछ हो वृद्धी।
आत्मिक बल को बहुत मैंने घटा रक्खा है॥
किससे फरियाद करूं तेरे सिवा ऐ ईश्वर।
मुझ को संसारके विषयों ने रुला रक्खा है।
ताइरे रूह से क्या जाने हुए क्या अपराध।
पंच भौतिक के पिंजरे में फंसा रक्खा है॥
यम नियम आदिका सेवन नहीं करने देतीं।
माद्दी चीजों ने क्या नशा पिला रक्खा है॥
बाअमल बनने नहीं देते ज़रा यह मुझ को।
संस्कारों ने मेरे मुझ को मिटा रक्खा है॥
जा चुके साथी बहुत मेरे सुए मुल्क अदम।
अब फ़िदा अपना भी असबाब बंधा रक्खाहै॥

भजन १३८

टेक-मन तोहि किस विधि कर समझाऊं॥

सोना हो तो सुहाग मगाऊं, बंकनाल रस लाऊं।
ज्ञान शब्द की फूंक चलाऊं, पानी कर पिघलाऊ॥ मन

घोड़ा होय तो लगाम लगाऊं, ऊपर जीन कसाऊं ।
हुए सवार तेरे पर बैठूं, चाबुक देके चलाऊं । मन०
हस्ती होय तो जंजीर मगाऊं, चारों पैर बँधाऊँ ।
हुए महावत तेरे सर बैठू, अंकुश देके चलाऊं ॥ मन०
लोहा होय तो अहरन मगाऊं ऊपर घूनी धमाऊं ।
धौन की धंधोर मचाऊं, जन्त्र तार खिचाऊं । मन०
ज्ञानी होय तो ज्ञान सिखाऊं, सत्य की राह चलाऊं ।
कहत कबीर सुनो भाई साधो, अमरापुर पहुंचाऊं ॥ मन०

भजन १३९

क्यों विसारा, प्रीतम प्यारा प्रान अधारा, क्या विचार मूर्खा ॥
मानुष जन्म अमोलक दीन्हा, कुल सृष्टि में उत्तम कीन्हा ।
विश्व द्वारा मतवारा, होके हारा, जन्म सारा, मूर्खा क्यों० ॥
जल वायु पृथ्वी और अग्नी, जगत पिता न हमको दीनी ।
सुख के कारनदुख निवारन, पालन हारन, कष्ट तारन मूर्खा०
कर्ण पाद जिह्वा और चक्षू, परम पिता ने हा के दयालू ।
तोहि दीने, दान कीने बुद्धि हीने मन मलीने, मूर्खा क्यों० ॥
जन्म सफल करले तू पापी, फेर कठिन है मिलना काशी ।
परम पिता के जग रचता के दुख हर्ता के गुन गाके, मूर्खा ॥

भजन १४०

सुमिरन करले मेरे मना तेरी बीती उमृ हरनाम विना—टेक
हस्ती दन्त विन पत्नी पंख बिन नारी पुरुष विना ।
जैसे पंडित वेद को हीना तैसे ही मन हरनाम विना ॥ १ ॥
देह नैन बिन रैन चन्द्र विन धरती मेघ विना ।
वेश्या का पुत्र पिता कर हीना तैसेही मन हरनाम विना ॥२॥
काम क्रोध मद लोभ को मारो छोड़ो विरोध सन्त जना ।
कह नानक शाह सुनो भाई साधो या जगमें न कोई अपना ॥

भजन १४१

लगजा नाव परली पार तेरी पकड़ ईश्वर का ले तू सहारा
अरब खरब धन जोड़ के धरजा,चाहे भूमिका तू राज करजा
सदा अमर चाहे अमृत्युमरजा, सब कोशिश बेकार तेरी ॥
फिरे फिजूली मारा मारा ॥ १ ॥
जिनको अपना जान रहा तू, जिन का कर अभिमान रहा तू
दे जिन के ऊपर प्राण रहा तू, वोही करदे जला के छार तेरी
जाय निशान मिट सब तुम्हारा ॥ २ ॥
ये जग जान मुसाफिरखाना, जिसे देख हो रहा दिवाना।
निश्चय एक दिन होगा बिगाना, गुजर है दो दिन चार तेरी॥
बजे कूच का नित्य नक्कारा ॥ ३ ॥
एक ईश्वर का विश्वास करतू,और किसी की मत आश करतू
दोनों समय याग अभ्यास करतू, हो चिन्ता स्वीकार तेरी
पद तेजसिंह उच्चारा ॥ ४ ॥

गजल १४२

मन मेरा चंचल प्रभु इसको अचंचल कीजिये।
हे पतित पावन पतित की, यह विनय सुन लीजिये॥
बासना विषयों में रहता है अब यह हर घड़ी।
आप से करता पृथक अब बेगिही सुध लीजिये॥
चाहता आनन्द पर साधन न जाने मोक्ष का।
हे प्रभु अपनाय के बुद्धी विमल कर दीजिये॥
दूर कर दुराचार और सदाचारी मुझको बनाइये।
ऐसी कृपा हे दयामय दास पर कर दीजिये॥
जोड़ कर कर कह रहा है झुन्नी तरी शरण में।
आयु विद्या धर्म धन अब हे कृपालु दीजिये॥

भजन १४३

टेक-धर्म गहौ अब कपट तजो मन, किस गफ़लत ने घेरा है रे।
ऐसा क्यों ग़फ़लत में सोवै, जो जग जन्म बृथाही खोवे।
अन्त समय कर मल मल रोवे, चेतरे होत अंधेरा है रे ॥१॥
जिसको कहते अपना अपना, सो सब जान रैनका सपना।
सत्य वेद ईश्वर कृत जपना, उठ हग खोल सबेर है रे ॥२॥
शुभ कर्मोंमें नित चित दीजै, कभी किसी से द्वेष न कीजै।
बुरी भली सबकी सह लीजै, जो तू चहत निबेरा है रे ॥३॥
ना कुछ मेरा ना कुछ तेरा, जग है चिड़िया रैन बसेरा।
हम सब आये करने फेरा, बाबू छिन का डेरा है रे ॥४॥

भजन १४४

टेक-हरिसे ध्यान लगाओ साधो, हरिसे ध्यान लगाओ रे।
मायिक वस्तु प्रचार जगतमें, मन कितनहू न चलाओरे।
दृढ़ आसन पर बैठ सत्य की, उर उमंग उपजाओरे ॥हरि०
रहि नित साथ भले लोगनके, सुखदा प्रकृति बनाओ।
भौतिक पूजा को अब छोड़ो, मत उपहास कराओरे ॥ हरि०
साधन शील कहाय परस्पर, परमानन्द मनाओरे।
मानव जन्म अमोल तिहारो, विषय विलास मिटाओरे ॥हरि०
जप तप कर सप्रीति सीधेही, भवनिधि से तर जाओरे।
रहो न भूल "कर्ण" निरन्तर, बन विरक्त यश पाओरे ॥हरि०

भजन १४५

टेक-कर धर्म सुधारस पान, अमर कर कीरति को प्यारे।

जो जन धर्मामृत पीते हैं, तिनके सुयश सदा जीते हैं।
संकट सागर को करते हैं, त्याग दम्भ भरे ॥कर० १

पियो मति, मत और टारो,लख चौरासी योनी विसारो।
जीवन के चारों फल पाओ, छोड़ो छल सारे ॥कर० २
मंगल मय वैदिक व्रत धारो,ज्ञान हुताशन में अघ जारो।
सम्पति पाय बनो मत केवल, धन के रखवारे ॥कर० ३
मनको मेल साधु संगत में, रँग जाओ गहरी रंगत में।
करणी "कर्ण" कर्ण की सी कर० दुर्मति के मारे ॥कर० ४

पूर्वी १४६

टेक-तजहु आश सब इष्ट मित्र की हो जाओ प्रभु दासरे।

दीन दयाल दया के सागर, महिमा जासु अपार रे।
अधम उधारक पतितन पावन, द्रवत विनाही प्रयास रे॥ त०
जो अद्वैत अनन्त अनादी, अजर अमर अविकार रे।
वह सब के कर्मन का साक्षी, घट २ जाको निवास रे॥ त०
जाको ज्ञान वेद चारों महँ, सब विद्या को मूल रे।
आदि सृष्टि में सब जीवन हित, जाको भयो प्रकाश रे॥ त०
जाकी शरण सकल अघमर्षण, नाम करत दुखनाश रे।
किशोर काहे नित इत उत भूमें, ताही का कर विश्वासरे॥ त०

ग़ज़ल १४७

कह रहा है आसमां यह सब समा कुछ भी नहीं।
यह चमन धोखे की टट्टी के सिवा कुछ भी नहीं॥ १॥
तोड़ डाले जोड़ सारे बांध कर बन्द कफन।
गोर की बगली में चित है पहलवां कुछ भी नहीं॥ २॥
जिनके महलों में हज़ारों रंग क फानूस थे।
झाड़ उनके क़ब्र पर है और निशां कुछ भी नहीं॥ ३॥
तख्त वालों का पता देते हैं तख्ते गोर के।

खोज लगता है यहां तक यादगार कुछ भी नहीं ॥ ४ ॥
उड़गये तख्ते सुलेमां कट गये परियों के पर।
गर किसी ने चार दिन बांधी हवा कुछ भी नहीं ॥ ५ ॥
कहते हैं दुनियां में होता है हर एक दुख का इलाज।
है मगर दर्दे जुदाई की दवा कुछ भी नहीं ॥ ६ ॥
जिन के डंके की सदा से, गूँजते थे आस्मां।
मकबरों में दम बखुद हैं है निहां कुछ भी नहीं ॥ ७ ॥

भजन १४८

सबै मिल ईश्वर के गुण गाओ ॥ टेक ॥

भ्रातृभाव ते मिलहु परस्पर, प्रीति प्रेम बढ़ाओ।
मन अरु वचन कर्म्म एकहि करि, चहुँदिशि सुख वर्षाओ ॥१॥
द्वेषभाव जब लग नहिं त्यागो, सुख सपने नहिं पावो।
भूले भटके भ्रातन को भी सीधी राह लगावो ॥ २ ॥
काम क्रोध मद लोभ छोड़ि, शुभ अन्तःकरण बनाओ।
धर्म्म अर्थ अरु काम मोक्ष, नय चार पदारथ पाओ ॥ ३ ॥
उन्नति हित अब कसहु कमर, अरु बीती को बिसराओ।
पुरुषा भये प्रतापी तुम्हरे, हा! उनको न लजाओ ॥ ४ ॥
छोटे बड़े सकल जीवन को, भूलहु ते न सताओ।
वैदिक धर्म्म श्रेष्ठता को, भुव मंडल में दरशाओ ॥ ५ ॥
नर तन पाय कर्म्म शुभ करलो, नहिं पीछे पछताओ।
विषय भोग को त्यागि मित्र तुम जीवन मुक्त कहाओ ॥ ६ ॥

भजन १४९

वेदों के ज्ञान से इन्सान का कल्याण समझो।
यह है ईश्वर की बानी, ऋषियों मुनियों ने मानी।
जिन को मूर्ख अज्ञानी, पढ़कर होते विज्ञानी ॥

चारों वेदोंको सब सत्य विद्याओं की कान समझो ॥वेदों० १॥
दुनियां में केवल वेदों को ईश्वरीय ज्ञान पाया।
मुक्ति आनन्द का उन में पूरा सामान पाया॥
वेदों से लोक और परलोक का विज्ञान पाया।
वेदों के मारग चलने से ईश्वर भगवान पाया॥
मानो तुम बात हमारी, जलसे के कुल नर नारी।
वेदों की शिक्षा सारी, सुखदायक मंगल कारी॥
इनको बिसराना अपनी पूरी २ हानि समझो॥ वेदों० २॥
वेदों की शिक्षा से ही भारत ने था दरजा पाया॥
सारी दुनियां में सब का सरताज उस्ताद कहाया॥
हुस्नो कमाल से था सब देशों में ऊंचा पाया।
जो आया गैर मुल्क से शिक्षा की खातिर यहां आया।
पर, जबसे इनको बिसराया, मूर्ख यह देश कहाया।
अपना धन मान गँवाया, मुफलिस बन दुःख उठाया॥
छेदालाल अब भारत, सबमें नीचा और बेज्ञान समझो॥वे०३

ग़ज़ल १५०

नहिं धन ही कमाया न धर्म्म किया,
न इधर के रहे न उधर के हुए।
नहिं भोग किया नहिं जोग लिया,
न इधर के रहे न उधर के हुए॥
लग माया की धुन में सदा ही रहे,
नहीं धर्म अधर्म्म पर ध्यान दिया।
नहिं खाया कभी न किसी को दिया,
न इधर के रहे न उधर के हुए॥
इन्हीं रोगों ने तन को सता डाला,
कहीं चैन मिला हम को न ज़रा।

नहीं मर के ही पाप कटा न जिया,
न इधर के रहे न उधर के हुए ॥

रहे सब से अलग हम 'राम' सदा,
नहिं मित्र बनाया न शत्रु किया।

न जुदा ही रहा न फटा यह हिया,
न इधर के रहे न उधर के हुए ॥

ग़ज़ल १५१

काँटे से भी ख़राब है जिस गुल में बू न हो।
वीराना के मिसाल है जिस दिल में तू न हो॥
गूंगी ज़बाँ हो जिस पै तेरी गुफ़्तगू न हो।
जल जाय दिल वह जिसमें तेरी जुस्तजू न हो॥
जो स्याह दिल सताये किसी बे जबान को।
मालिक के रूबरू वह कभी सुर्ख़रू न हो॥
दुनियां से हाथ धोके करे बेज़बां पै प्यार।
हर हाल में है पाक कभी बेवजू न हो॥
इन्सां है वह जो आपसा जाने जहान को।
तफ़रीक़ जिसके दिल में कभी मैं व तू न हो॥
दुनियां में बस के पाक चलन वह बनाइये।
बरबाद जीव का कभी यारो लहू न हो॥
कुछ करते नेक कि फुर्सत का वक़्त है।
हासिल है आज बात वह कल है कभू न हो॥
खोले हुए हो हाथ जहां से हमारा कूंच।
लिपटी हुई कफ़न में कोई आरजू न हो॥
मख़मूर है शराबे सुलह कुल का जाम पी।
उस 'राम' के हबीब का ख़ाली सुबू न हो॥

गज़ल १५२

पड़े क्यों ख्वाब ग़फ़लत में, समय अनमोल खोते हो।
विमुख है धर्म से प्रभु से, और सुख से हाथ धोते हो॥
जो है फ़र्मान मालिक का, अमल उस पर नहीं क्यों है।
अलामत है यह दोज़ख की, दुखों का बीज बोते हो॥
अदा अपने फ़रायज़ को, नहीं करते हो क्यों अब तक।
ग़ज़ब की नींद से सोते हो, नहीं बेदार होते हो॥
तजो अब कुफ्र को भाई, बनो वेदों के अनुयाई।
मिले तब शान्ति सुखदाई, वृथा क्यों भार ढोते हो॥
करो सद्धर्म का सेवन, समय 'बल्देव' है थोड़ा।
शरण आजाओ ईश्वर के, वृथा क्यों दुःख सहते हो॥

भजन १५३

सांची मान सहेली परसों, पीतम लेवे आवेगो।
अब को छुता नहीं टरेगो, जानो पिया के संग पड़ेगो।
हम सब को तेरे बिछुड़न को दारुण शोक सतावेगो॥ १॥
माता पिता भाई भौजाई, इन से राख सनेह सगाई।
दो दिन हिल मिल काट सखी, फ़िर तोकों कौन पठावेगो॥२॥
चलने की तैयारी करके, तोशा बांध गैल को धरले।
हाल हाल विदा की विरिया, को पकवान बनावेगो॥ ३॥
घर बाहर लो पीहर वारे, रोवन संग चलेंगे सारे।
आगे २ शंकर तेरो, डोला मचकत जावेगो॥ ४॥

दादरा १५४

दम आवे न आवे अजब क्या है।
झूठे झमेलों का मेला लगा यह,

साँचा सा सूझे सबब क्या है ॥ १ ॥
आना बदा है तो जाना पड़ेगा,
ईश्वर का इसमें गज़ब क्या है ॥ २ ॥
विषयों को भोग भलाई को भूले,
हरामी को हरका अदब क्या है ॥ ३ ॥
रोटी से राज़ी नहीं तू शंकर,
बता तेरा पाजी तलब क्या है ॥ ४ ॥

गज़ल १५५

जो यहां आया है उसको, चलना होगा एक दिन।
जब फ़ना ठहरी तो फिर क्या, सौ वर्ष क्या एक दिन ॥
यूं दुल्हन से, कह रही थी, बरसंर मालिन अजल।
खाक कर देगी तेरे, नौशे का सरा एक दिन ॥
खिल खिला लो, चह चहालो, ऐ गुलो! ऐ बुलबुलो!
दम में हंसना, पलमें रोना, तुमको होगा एक दिन ॥
मक़बरों में पैर फैलाये हुये, सोते हैं वह।
था जमीं से आसमां तक, जिनका शोहरा एक दिन ॥

गज़ल १५६

इधर आकर हरेक आदम को होगा फ़िर उधर जाना।
अरे नादान, परदेशी, तैने यहां अपना घर जाना ॥
लगाया दाग नर तन को, वृथा ये ज़िन्दगी खोई।
बड़ा दुश्वार अब तेरा है, भवसागर से तर जाना ॥
शरम बिलकुल नहीं आई, दिया दिल क्रूर कामों में।
भजन भगवान का मूरख, तैने कुछ भी न कर जाना ॥
अकेला जायगा एक दिन, तेरा साथी, नहीं कोई।
नहीं संग यार जायेंगे, नहीं संग में पिसर जाना ॥

किया इक पल न हरि सुमिरन, तैंने ओ 'रूप' अज्ञानी।
अरे शठ ऐसे जीने से, तेरा अच्छा है मर जाना॥

गजल १५७

हम न भोगे भोग भोगों ने हमें भुगता दिया।
तप नहीं तपने दिया, तापों ने हमको तपा दिया॥
हम यही कहते रहे कि व्यतीत करते हैं काल को।
अब हुआ मालूम हम आयूको अपने बिता दिया॥
हम समझते थे हविस दिल की पुरानी पड़ गई।
हाय वह तो जवां हुई बूढ़ा हमीं का बना दिया॥
की गुलामी नफ़्स की अफसोस हमने उम्र भर।
'बलदेव' अपने हबीब को बदमस्त होके भुला दिया॥

गजल १५८

महज़ दुनियां ये धोका है, समझ दिल गर तू है दाना।
अक़ल को काम में लाकर, न कर तू अपना मन माना॥
निकट जब काल आवेगा, तौ तू फिर यहां से जावेगा।
करै क्यों नेह दुनियां से, अबस है तेरा याराना॥
जो करना है तुझे अब कर, न रहने दे तू कुछ फिर को।
वगर्ना फिर करे अफ़सोस, मल २ होगा पछताना॥
अदा अपने फरायज़ कर, रहा है वक़्त अब थोड़ा।
समय अन्मोल मत खोवे, तुझे फिर यहां से है जाना॥
यहां पर आये औरङ्गज़ेब और महमूद वा नादिर।
गये आखिर को कर मलते, तू किस बूते पर इतराना॥
धर्म की जोड़ दौलत को, वही एक साथ जावेगी।
कपट छल झूठ दुराचारों से, बेहतर बाज़ है आना॥
गुज़िश्ता हो चुकी जो कुछ, तू कर अब फ़िक्र आगे की।

जमा कर धर्म की दौलत, न होगा तुझको पछताना ॥
सुखों का मूल है सत् धर्म, केवल एक दुनियां में ।
सरासर सत्य है योगो, ऋषी मुनियों का फ़र्माना ॥
तू जप हर वक़्त ओंकारा, रचा है जिसने संसारा ।
वह है सब जगत् अधारा, अदा कर उसका शुकराना ॥
तुझे लाज़िम है सेवक, सेवा करनी अपने स्वामी की ।
भरम के जाल में फँसकर, हुआ है क्यों तू दीवाना ॥

गज़ल १५६

क्या हेच ज़िन्दगी पै ये शेख़ी दिखाते हो ।
मिस्ले हुबाव जीस्त पै बातें बनाते हो ॥
कोई बचा क़ज़ा से जहां में जो तुम बचो ।
एक दिन अजल के जाल में फँस करके जाते हो ॥
भीषम न हो गये हो जो ताक़त का है ग़रूर ।
क्यों अपने से हक़ीर को साहब सताते हो ॥
फ़ैयाज़ी अपनी देखिये दानी करण नहीं ।
दरियाय फ़ैज़ अपना कहां पर बहाते हो ॥
अस्वपती के रुतबे से अफ़ज़ल न पाचुके ।
फिर दूसरों को देख के क्यों मुंह बनाते हो ॥
लक्ष्मण न हो गये हो जो करके दिखा गये ।
किस हौसिले पै मरते हो दुमसर हिलाते हो ॥
दानी भी तो नहीं हो हरिश्चन्द्र की तरह ।
फिर कौन से सलूक पै अहसां जताते हो ॥
गर्दन फ़राज़ी अहले ख़िरद को है नारवा ।
जो शाख़ पुर समर है निगूं सर ही पाते हो ॥
उपकार में लगाया नहीं अपना वक़्त तक ।
फिर क्यों न फूले जामें में अपने समाते हो ॥

सेवा करो स्वामी की बनो उसके ही 'सेवक'।
व उसकी याद नफ़स को नाहक गँवाते हो॥

प्रयाण-पञ्चक १६०

साथ रही शिशुता जबलों, तबलों शिशु मण्डल में मिल खेले।
जोवन जागत ही सुख भोगन में, मनके सब साधन मेले॥
हाय ज़रा अब आय चढ़ी, रसभंग भया दुख दारुण झेले।
"शंकर" आज समाज बिसार, चले हम हाथ पसार अकेले॥

छोड़ भयानक भोग को, बन में बस फूल फली फल खाते।
कर्म सुधार महाव्रत धार, निशंक समोद समाधि लगाते॥
या विधि 'शंकर' को अपनाय, सनाथ कहाय सदा सुख पाते।
सो शुभ औसर बीत गयो, अब तो हम हाय चले पछताते॥

ढोंग अनेक रचे हमने, गुरु लोगन की मरियाद बिगोई।
या छल के बल की प्रभुता पर, 'शंकर' वेदन की विधि रोई॥
गैल गही कुछ औरन की, सब आयु बिलासिन में बस खोई।
बीत गये दिन जीवन के, अब साथ चले अघ और न कोई॥

दास बने लघु लोगन के, पर सेवक शंकर के न कहाये।
लालच के बस लेख लिखे, कविता कर कूरन के गुण गाये॥
डूबत हैं भवसागर में अब, और के कछु काम न आये।
केवल पाप कमाय चले हम, जीवन के फल चार न पाये॥

पंडित राज बने हम "शंकर" मूढ़न में मिल मार गपोड़े।
भोग बिलास बसे मन में, निगमागम के व्रत बन्धन तोड़े॥
रंक नरेश निशंक ठगे, सब ढंगन के रस रंग निचोड़े।
अन्त भयो अब जीवन को, तन त्याग चले पर पाप न छोड़े॥

द्विजातियों के कर्म वर्णन १६१

(ब्राह्मण के कर्म)

ब्राह्मण वेद पढ़ै रुचि सों, पुनि औरन को सुख पाय पढ़ावैं।
सादर यज्ञ करैं विधि सों, मथुरा यजमानहिं यज्ञ करावैं॥
दान करैं बहु भांतिन सों, यजमानन सों बहु दान लै आवैं।
ये षट ब्राह्मण के कर्त्तव्य, प्रतिग्रह नीच महामनु गावैं॥

(क्षत्रिय के कर्म)

वेद पढ़ै श्रम भाव विहाय, अनन्दित दान करै विधि नाना।
यज्ञ संप्रम करै बहु भांतिन, न्याय समेत प्रजा सनमाना॥
त्यागि विषय विषसो सिगरे,व्यभिचार विचार सुनैनहिं काना
क्षत्रिन के गुण कर्म भले, मथुरा मनुजी यहि भांति बखाना॥

(वैश्य के कर्म)

फिरै सब देश विदेशन में, सब भांतिन सों रुजिगार करैजू।
करै सुख स बहुदान समान, रचै शुचि यज्ञ अनन्द भरैजू।
पढ़ै शुचि सादर वेदन,को, कृषि औ पशु पालन वृत्ति धरैजू॥
भनै मनु व्याज लहै धनको, मथुरा इमि वैश्य सदा अचरैजू

सुभाषितसुधा १६२

प्रिय मित्र सुनो इतना कहना, मिल के सबसे नित ही रहना।
गुरु लोग कहैं न कुमेल गहो, दिन रात सुधीर सचेत रहो॥
यदि फूट रही मन माहिं भरी, मिलके न सुधार सके बिगरी।
तब तो यहजीवन व्यर्थ गया धिक क्यों न गहो सिखपूर्णतया।
कर क्या न सको मिलके करनी,भवसागर बीच पड़ी तरनी॥
यह पार लगे कछु यत्न करो, जगमें अब तो मत दुःख भरो॥
फिर भी बनिये मतिमान महा कितना अब जीवन. शेष रहा।
बदनाम हुए अविचार तजो, गुण कर्म सुधार सुसाज सजो॥
तुम नित्य अपूज्यहिं पूजि रहे, मत धार अनेकन जात बहे।

तब बनें किस भांति कहो, शुभ चाल सनातन क्यों न गहो॥
अपनी अपनी खिचड़ी न पके, अवनी निज भार उतार सके।
पथ लीजिये खोजवही फिरभी, जिसको गहिहार्षित हायँ सभी
सब के उपकार में लग्न रहो, दुख दूर भगे अति मग्न रहो।
फिर दाव मिले न उदार बनो, दिन चार का जीवन शेष गनो॥
निगमागम खूब सुझाय रहे, ऋषि ग्राह्य सुमार्ग लखाय रहे।
तब तो उनके अनुसार चलो, शुभ औसर खोय न हाथ मलो

उपकार-पंचक १६३

प्यारे पर उपकार कर, भली भलाई जान।
सब की उन्नति में मिली, अपनी उन्नति मान॥१॥
तन से सेवा कीजिये, मन से भलो विचार।
धन से या संसार में, करिये पर उपकार॥२॥
वृथा जिये सौ वर्ष लौं, कियो न पर उपकार।
धरणी में धन धर मरो, केवल कुयश पसार॥३॥
ऐसी करनी कर सखा, छल की बानि बिसार।
तेरी कुल कीरति बढ़े, सुख पावे संसार॥४॥
रे शंकर मिट जायंगे, धवल धाम आराम।
पै न मिटैगो कल्पलौं, उपकारी को नाम॥५॥

गजल १६४

ज़ालिमों को न कभी फूलते फलते देखा।
बल्कि दम उनका बुरी तरह निकलते देखा॥
चर्खे सितमगार नहीं बैठने देता मिलकर।
नित नये रंग ज़माने को बदलते देखा॥
जिस शमाने कि जलाये थे पतंगे सदहा।
उसको खुद हमने शबेतार में जलते देखा॥
कल जो गुल सर पे भले लोगों के इतराते थे।

आज पैरों से उन्हें हमने मसलते देखा ॥
हमने सम्भले हुए गिरते तो बहुत देखे हैं।
पर गिरों में से तो विलों ही सम्भलते देखा ॥
हा गज़ब कैद जो औरों को किया करते थे।
बन्दी खाने में उन्हें दाना ही बदलते देखा ॥
देखना कल ठोकरें खाते फिरेंगे उनके सर।
आज नखवत से ज़मी पर जो कदम रखते नहीं ॥

गजल १६५

सताते जो ग़रीबों को उन्हें ईश्वर सतावेगा।
रुलाते जो अनाथों को उन्हें ईश्वर रुलावेगा ॥
भलाई का भला फल है, बुराई का बुरा फल है।
बुराई जो करेगा सो, बुरा फल क्यों न पावेगा ॥
दया दीनों पे कर लीजे, किसी को दुख नहीं दीजे।
तुम्हारी नाव को मालिक किनारे से लगावेगा ॥
करो रक्षा अनाथों की, दो जो कुछ बन सके भाई।
न दौलत में से पैसा भी, तुम्हारे साथ जावेगा ॥
फिरे किस पेठ में भूला, भजन कर 'रूप' ईश्वर का।
अरे नादान फिर यह दम नहीं नर तन में आवेगा ॥

गजल १६६

मत कर अभिमान नर तू, खाक में मिलने को है।
एक दिन तेरी सवारी, खल्क से चलने को है ॥
माल ज़र घर महल जो कुछ है तेरा कुछ भी नहीं।
मिस्ल होली के ये तेरा तन भी तो जलने का है ॥
मित्र नाती पुत्रदारा, यार हैं मतलब के सब।
साथ कोई दे नहीं बस, हर बशर छलने को है ॥

मत वृथा खोवै यह नर तन, बारहा मिलता नहीं।
गर्व करके ना कोई यहां, फूलने फलने को है॥
फिर रहा किस पैंठ में, भूला हुआ ओ 'रूपराम'।
हरि भजे बिना ना तेरा, दुख रंज ग़म टलने को है॥

गजल १६७

दिन गया हुई रात, अब गई रात फिर दिन होयगा।
बस इसी चक्कर में नर तू उम्र सारी खोयगा॥
जिस ने तू पैदा किया उस, ईश को भूला गँवार।
जाग अबभी जाग हा ग़फ़लत तू कब तक सोयगा॥
चन्द दिन की चांदनी, यह ज़िंदगी कुछ भी नहीं।
दाग़ पापों के अरे शठ, फिर बता कब धोयगा॥
हर बशर के साथ में, कीनी सदा तूने बदी।
बीज नेकी का भी कुछ तू बोयगा कि न बोयगा॥
सोच अब भी सोच अब भी, सोच मतवाला न अब।
'रूप' नहीं तो एक दिन तू, शिर पकड़ के रोयगा॥

गजल १६८

तेरा ईश्वर तू ईश्वर का, न कोई और तेरा है।
वृथा किस किस की उल्फत में, तैंने इस दिल को गेरा
त्रिया सुत मित्र और बन्धू ग़रज़ अपनी के हैं साथी।
न कोई काम आवेगा, करे क्यों मेरा मेरा है॥
हमेशा यहां नहीं रहना जरा तो सोच ऐ गाफिल।
ज़रासी ज़िन्दगानी है, कोई दम का बसेरा है॥
बिना जगदीश के तेरा, सहायक है नहीं कोई।
उसी की यादगारी कर, तु समझाया घनेरा है॥
अरे शठ 'रूप' अज्ञानी, तू किस की पैंठ में फिरता।
पकड़ कर सिरको रोवेगा, उठे जिस रोज डेरा है॥

गज़ल १६९

ज़िन्दगी विषयों में अपनी कर रहा क्यों ख़्वार है।
छोड़ कर गुल चुन रहा, नाहक में अब तू ख़ार है॥
साथ आनेका न हर्गिज़ गर गया मौक़ा निकल।
मारता अपने गले पर आप ख़ुद तलवार है॥
हो रहा है रात दिन मश्गूल विषयों में जो यों।
ख़ुद गढ़े में आप गिरने के लिये तैयार है॥
होश में आकर के चलना आगे आंखें खोल कर।
देख कर रखना क़दम आगे तेरे इक गार है॥
मित्र अब भी सोच नहिं पछितायगा पछितायगा।
हाथ में अन्धे तेरे यह मार है यह मार है॥

भजन १७०

टेक—जिस धन पर तुझे अभिमान है, नहीं साथमें जाने वाली।
साथ आया न साथ में जावे, जिस को तू अपना बतलावे।
काल बली जब आन दबावे, जो सब से बलवान है॥
नहीं कोई छुड़ाने वाला॥ नहीं साथ० ॥ १ ॥
जिस दिन बजेगा कूच नक़ारा, पड़ा रहे धन दौलत सारा।
कोई न आकर देवे सहारा, जिन में हुआ गलतान है।
बना फिरता है मतवाला ॥ नहीं साथ में० ॥२॥
बड़े बड़े राजे महराजे, चारों खूट में बजे थे बाजे।
वह भी मौतके होगये खाजे, कोई रहा न शाह सुलतान है॥
चालीस खज़ाने वाला ॥ नहीं साथ में० ॥३॥
जिस धन पर तू भूला भाई, साथ चलेगी न इक पाई
अब भी करले धर्म कमाई, वही बड़ा धनवान है।
सत्य धर्म कमाई वाला ॥ नहीं साथ में० ॥४॥

धर्म बिना धन काम न आवे, साथ तेरे एक धर्म ही जावे।
धर्म ही दुःखों से छुड़ावे, सभा में करे ब्यान है॥
यशवन्त दुहाने वाला॥ नहीं साथ में० ॥५॥

भजन १७१

टेक—जो मनुष्य धर्म को मार दे, वह खुदही मर जाता है।

धर्म की रक्षा करे जो भाई, धर्म भी उसका होवे सहाई॥
पाप ताप से दे छुड़वाई, सारे दुःख निवार दे।
मुक्ति को पहुँचाता है॥ वह खुद ही० ॥१॥

धर्म को जिस प्राणी ने मारा, धर्म ने भी कर लिया किनारा।
रोता फिरे मुसीबत मारा, कोई न उसकी सार ले।
दुखों की मार खाता है॥ वह खुद ही० ॥२॥

आप ने जब तक धर्म बचाया, शेरों तक ने भी भय खाया
जिस दम उसने धर्म गँवाया, खाक है उसे पुकाते।
कीड़ा नहीं भय खाता है वह खुद ही० ॥३॥

इसी तरह जब कोई प्राणी, धर्म की कर देता है हानि।
बन जाती है खाक अज्ञानी, चाहे कोई लाख हजार दे।
जीता ही मर जाता है॥ वह खुद ही० ॥४॥

जो जो रक्षा धर्म की करता, उनका समझो कुछ नहीं मरता।
जिनको याद ज़माना करता धर्म के जान निसार थे।
जो नाम चला जाता है॥ वह खुद ही० ॥५॥

दयानन्द से पर उपकारी, धर्म पर जिसने जान निसारी।
जिसको गावे दुनिया सारी, बदले पर उपकार के।
यशवन्त भी यश गाता है॥ वह खुद ही० ॥६॥

गजल १७२

तू शहन्शाह, मैं दरका गदा, जुज रूह एक तक़दीरें दो।
तू तख़ते नशीं, मैं ख़ाक नशीं, है वतन एक जागीरें दो॥
तू गुले चमन, मैं खारे दश्त, नक्क़ास एक तस्वीरें दो।
तू दस्ती में, मैं जंगल में, है मिलक एक जागीरें दो॥
तू क़लम बन्द, मैं ज़बां बन्द, बन्दिश है एक जंजीरें दो।
तू माले मस्त, मैं ख्याले मस्त, है मर्ज एक तदबीरें दो॥
तू जरे नशीं, मैं जेरे ख़ाक, है असर एक अकसीरें दो।
तू जाहिर में, मैं बातिन में, मज़मून एक तफसीरें दो॥
तू मय में चूर, मैं खुदमें चूर, है ख्वाब एक ताबीरें दो।
तू जहांगीर, मैं जहां दीद, है वतन एक जागीरें दो॥

भजन १७३

दोहा—रे अभिमानी मत करे, औरों का अपकार।
एक दिवस मर जायगा, रीते हाथ पसार॥
टेक—तेरे झूठे हैं सब ठाठ इन पर क्यों घमंड करता है।
भिक्षुक और मेदिनी नाथ, जाते देखे रीते हाथ।
क्या कुछ गया किसी के साथ हा पर तू न ध्यान धरता है॥१॥
उतरी बालकपन की भंग, टूटा तरुणाई का तग।
जमने लगा जराका रंग, तो भी नेक नहीं डरता है॥ तेरे० २॥
होगा अन्तकाल को योग, तन से छूटेगा संयोग।
आकर पूछेंगे सब लोग, अब क्यों अभिमानी मरता है॥ ते०३
अब तो वैर विरोध विसार, करके औरों का उपकार।
प्यारे 'शङ्कर' को उर धार, क्यों नहीं भवसागर तरता है॥ते०

गजल १७४

ऐश के सामान सब एक दिन पड़े रह जायेंगे।

यार मेरी लाश पर रोते खड़े रह जायेंगे ॥ १ ॥
अपने ऊपर ही मैंने यह बात कुछ छेड़ी नहीं।
बादशाहों के भी ये झंडे गड़े रह जायेंगे ॥ २ ॥
जिनकी शोहरत का जहां में शोर है चारों तरफ।
उनके ताजों में भी हा! हीरे जड़े रह जायेंगे ॥ ३ ॥
माल ज़र घर महल कुछ भी साथ जावेगा नहीं।
ताक़ में रक्खे ये सोने के कड़े रह जायेंगे ॥ ४ ॥
हा सितम नर तन को पाके हरि भजन कीना नहीं।
'रूप' के दिल में यही अरमा बड़े रह जायेंगे ॥ ५ ॥

गजल १७५

मतिमन्द हाय तूने नर तन को दाग दीना।
सारी उमर गँवाई हरि का न नाम लीना ॥
निश दिन अचेत सोया हा विष का बीज बोया।
यह खेत था सुधा का समझा न बुद्धी हीनां ॥
खोटा करम न छोड़ा अधरम से मुख न मोड़ा।
हरि नाम रस का प्याला लाज़िम था तुझको पीना ॥
किस तौर तेरा बेड़ा भव सिंधु पार होगा।
कोई दम में काल आया बरबाद वक़्त कीना ॥
अच्छी कुमति कमाई मुतलक़ न लाज आई।
शठरूपराम' जग में धिक्कार तेरा जीना ॥

गजल १७६

मन नहीं जो हाथ में है हाथ में माला तो क्या।
चित की अर्त्तो घुमी ना, माला घुमा डाला तो क्या ॥
हृदय वाणी कर्म का, एक भाव होना चाहिये।
प्रेम प्रतिमा से लगा, माथे को रङ्ग डाला तो क्या ॥
शूली का तो बक़ृग मिश्रो वधिक बध करने को तुम।

यदि हो शुद्धी के विरोधी, बनी गऊशाला तो क्या ॥
जो कि करता प्रेम पूर्वक न्याय न प्रजा के साथ।
धर्म पर क़ायम रहेना, हुये भूपाला तो क्या ॥
मनुष तन पाकर के ज्ञानी, जो कमाई शुभ न की।
तो जहां में पेट पशुओं की तरह पाला तो क्या ॥

भजन १७७

मन तू समय अमूल्य बितायो, तुझे बार २ समझायो।
हृदय कुटिल महाखल कामी, नीच कर्म तोकूं मन भायो ॥
बुद्धि सारी नष्ट करी है, झूठ से चित्त लगायो ॥ म० १ ॥
वेश्या आदि प्रसंग किये हैं देश उजाड़ करायो।
मदिरा मांस में आश लगी है, जुआ व्योपार बनायो ॥ २ ॥
लोभ मोह से अति कीनो, कर्म धर्म बिसराओ।
भारी लालमा धन ही की है मूरख निपट कहायो ॥ मन० ३
कभी नहीं ईश्वर गुण गायो, योगादि को नाम गमायो।
'लक्ष्मण' मन चंचल जानी है अनुदभुत रंग दिखायो ॥ ४ ॥

गजल १७८

जब तलक तू हाथ में, मनका न मनका लायगा।
तब तलक इस काष्ट की, माला से क्या फल पायगा ॥
भूल कर अज को, अजा का आज लो चेरा रहा।
क्या इसी पाखंड से परमातमा मिल जायगा ॥
धर्म का धन छोड़ कर, पूंजी बटोरी पाप की।
क्या इसी करतूत पर, धर्मात्मा कहलायगा ॥
दान दीनों को न देता, नाम का दानी बना।
भोग के भूखे बता यहां, जाय के क्या खायगा ॥
चाह की चिनगी से चहका, चैन फिर चित को कहां।

देख धर कर आग पर, पारा न टुक ठहरायगा ॥
लोभ लीला के लिये, रच रंग शाला राग की।
बोल बहु रङ्गी रंगीले, गीत कब तक गायगा ॥
प्रेम का जल दे रहा, परिवार के आराम को।
फल नहीं देगा किसी दिन फूल कर मुरझायगा ॥
खेल में खोया लड़कन, भोग में योवन गया।
भूल में भागी ज़रा क्या और जीवन पायगा ॥
दूर प्यारे की पुरी है दिन किनारे आ चुका।
चल नहीं तो इस झमेले में पड़ा पछतायगा ॥
कंठ की घरघर सुनेंगे अन्त को घर के खड़े।
उस घड़ी 'शंकर' घिरा घर घेर में घबरायगा ॥

भजन १७६

टेक—अरे मन अब तो चेत अनारी।
धर्म कर्म अब अपना तज के, खूब करीनिज ख्वारी ॥अरे०१॥
गऊ कन्या और अनाथ विधवा रोवें दे हिलकारी ।अरे०२॥
सिहन के गिदरा भये पैदा ऋषियन के व्यभिचारी ॥अरे०३॥
वैदिक धर्म अमूल्य छोड़ कर पापकियो हितकारी ॥अरे०४॥
उठ सेवक अब क्या सोता है बंजर भइ फुलवारी ॥अरे०५॥

भजन १८०

टेक—सदा तुम करते रहो सत् पुरुषों का संग।
सत्य संग की महिमा को जी क्या कोई करे बयान।
सदाचार सत्संग के कारण, होता है कल्यान ॥ सदा० ॥१॥
खोटे पुरुषों की संगत से होती है मति भंग।
दूध से अमृत को भी पीके करदे ज़हर भुजंग ॥ सदा० ॥२॥
सत्पुरुषों का संग करो तुम यह है धर्म का अंग।

गहरे जल में तिर जाता है लोहा काष्ट के संग ॥ सदा० ॥३॥
पानी ढलते ढलते मित्रो घिस आता पापान।
ऋषि संग ने किया वधिक को वाल्मीक गुणवान ॥ सदा०॥४॥
बन २ फिर के स्वामी दयानन्द कीन्हा खूब विचार।
आखिर विरजानन्द की संग से किया देशोद्धार ॥ सदा० ॥५॥
खोटापन हो दूर भलों की संगत में चलने से।
लोहा तक भी स्वर्ण हो जावे पारस के मिलने से ॥सदा०॥६॥
अन्तिम विनती यह 'चन्द्र' की इसे करो स्वीकार।
आर्य्य जनों की संगत से तुम हो जाओगे पार ॥ सदा० ॥७॥

भजन १८१

टेक—रक्षा कीजियो जी मित्रो गिरे हुए भारत की।
जो कुछ किया सो पाया तुमने हो जाओ हुशियार।
तन मन धन को अर्पण करके करलो देश सुधार ॥ २ ॥
सत् पुरुषों से यही प्रार्थना सुनिये देकर ध्यान।
तन मन धन से मिल करके करो धर्म सम्मान ॥ २ ॥
जब से तुमने धर्म छोड़ कर अधर्म लिया धार।
तबही से मित्रो आर्य्यवर्त्त का हो रही मिट्टी ख्वार ॥ ३ ॥
रक्षा करो वीर्य और इलकी मत करो रन्डीबाजी।
बुरे कर्म का दंड मिलेगा पंडित हो या काजी ॥ ४ ॥
रंडीबाजी मदिराबाजी छोड़ो सुलफे बाजी।
बुरे कर्मों से मुखड़ा मोड़ कर बन जाओ मित्र समाजी ॥ ५ ॥
रामचन्द्र की यही प्रार्थना गहो धर्म के रस्ते।
नर से नर नारी से नारी मिल कर करो नमस्ते ॥ ६ ॥

(३) ब्रह्मचर्य्य का महत्व।

भजन १८२

शैर—जब यहां पर वेदवक्ता योगी और विद्वान होंगे।

दूर होंगे दुख सारे-सुख के सब सामान होंगे ॥१॥
सैकड़ों हो जांयगी माता कौशिल्या सी जब यहां।
वीर लाखों राम जैसे देखना पिसरान होंगे ॥ २ ॥
अन्जनी के तुल्य हो जायेंगी भारत देवियां।
राम के फिर भक्त सच्चे देखना हनुमान होंगे ॥ ३ ॥
और द्रोणाचार्य्य के आंय जो गुरुकुल भी खुल।
जिनके शिष्य फिर वीर अर्जुन फ़खरे मैदान होंगे ॥४॥
भीम निकलेंगे तो हाथी बन के भी घबड़ायेंगे।
और पहाड़ों में भी शेरों के जना ओशान होंगे ॥ ५ ॥
ऋषि सिन्धी पन से जब आचार्य्य मिल जायेंगे।
फिर सुदामा मित्र प्रेमी कृष्ण निर अभिमान होंगे ॥६॥
सत्यवादी हरिश्चन्द्र से नजर में आयेंगे।
जिन के यकसां कौल फैल अहदा पैमान होंगे ॥ ७ ॥
दामन कोह में मिलेंगे फिर दधीच से देश भक्त।
हड्डियां उन पुरसें खम की धनुष आलीशान होंगे ॥८॥
होंयगी कुटियां हज़ारों डण्डी व्रजानन्द की।
जिन के शिष्य दयानन्द लाखों धर्म पर कुर्बान होंगे ॥९॥
अहो भारत वासियों आय जमाना जब कि वह।
महर्षि दयानन्द के पूर दिला अरमान होंगे ॥ १० ॥

भजन १८३

टेक—होते बलवान ब्रह्मचारी रहने से।
देखो भीष्म पिता को माई, बाणों की शय्या बनाई।
नहीं छोड़े पर प्रान ॥ ब्र० ॥
जब सूर्य उत्तरायण आया, कौरव पाण्डवों को बुलवाया
किया उपदेश महान् ॥ ब्र० २ ॥

कर्ण भीम से योधा भारी गुरु द्रोण से तपधारी ॥
सुने हों अर्जुन के वान ॥ ब्र० ३ ॥
थे पांचों पांडव भाई, जो वेदों के अनुयायी।
सदाचारी विद्वान् ॥ ब्र० ४ ॥
अब ब्रह्मचर्य आश्रम खोया बल बुद्धी तेज डुबोया।
रहा नहीं कुछ भी ज्ञान ॥ ब्र० ५ ॥
उमरावसिंह चित दीजे, ब्रह्मचर्य की रक्षा कीजे।
तभी होगा सम्भाव ॥ ब्र० ६ ॥

गजल १८४

जब वहां वेदों के आलिम वा अमल इन्सान हों।
मोक्ष आनन्द के तभी मैसर सकल सामानहों ॥ १ ॥
मात पित आचार्य्य तीनों यदि गुणवानहों।
फिर तो बालक उनके हर इल्मो हुनर की कानहों ॥ २ ॥
आर्य्य नेशन को हासिल हो वह पहला सा उरूज।
जब कि ब्रह्मचर्य्य से बच्चे देश के बलवान हों ॥ ३ ॥
हों सदाचारी पवित्र आत्मा पुनः देखना।
वीर लाखों बढ़ के आगे धर्म पर बलिदान हों ॥ ४ ॥
वेद भानू का उजाला मुल्कों मुल्कों में करें।
चीन या जापान तुर्किस्तान इंगलिस्तान हों ॥ ५ ॥
छोड़ देवें मांस का खाना हिदागत वेद पर।
हुजरते इंसान क्यों शामिल सफे हैवान हों ॥ ६ ॥
आये या रब वह ज़माना जब कि छेदालाल यां।
तीर शय्या के हर एक भीष्म की इज्ज़ोशान हों ॥ ७ ॥

गजल १८५

फ़कत् ब्रह्मचर्य्य से प्रकाश भारत के सितारे थे।

जो मर्यादा पुरुष राम और लखन दशरथ के प्यारे थे ॥
थे सोला और चौदह वर्ष आयु के ब्रह्मचारी।
मगर बल तेज़ माना गगन पर चांद तारे थे॥
लगे विध्वंस करने यज्ञ विश्वामित्र का राक्षस।
तो उन वीरों ने वन में जा उन्हें चुन चुन के मारे थे॥
थी प्रजा जिस से नाना कष्ट में उस कंस पापी को।
पकड़ चोटी से कमसिन कृष्ण योद्धा ने पछाड़े थे॥
तुम्हें मालूम है उन बालकों के धार्मिक साहस।
जो पांच और आठसाला गुरु गोविन्द के दुलारे थे॥
हक़ीक़त की हक़ीक़त से सभी नर नारि वाकिफ़ हैं।
कि ग्यारह वर्ष के बालक ने सत पर प्राण वारे थे॥
दयानन्द घर से जब निकले तो आयू बीस साला थी।
धर्म्म प्रचार की खातिर ज़हर पी वह सिधारे थे॥
न क्यों होते यह योधा वीर भारत के रतन जब के।
योग्य माताओं की शुभ कोख में अवतार धारे थे॥
ऐ छेदालाल वह अपने धर्म्म पर शैदा सारे थे।
कभी भी धर्म्म के कामों में हिम्मत को न हारे थे॥

गजल १८६

बढ़ाती ज़िन्दगी को है, मुहब्बत ब्रह्मचर्य्य की।
है क़ायम ज़िन्दगी रखती, हरात ब्रह्मचर्य्य की॥ १॥
उन्हें जी से यह प्यारा है, बने हैं इसके शौदाई।
खुली जिन भाइयों पर है, कि रंगत ब्रह्मचर्य्य की॥ २॥
सताता है उन्हें हैज़ा भी और ताऊन ज़ालिम भी।
नहीं जिनके बदन में है, हरारत ब्रह्मचर्य्य की॥ ३॥
जवाब अपनी बसारत का, वह दे बैठे जवानी में।
नहीं आंखों में थी जिनके, बसारत ब्रह्मचर्य्य की॥ ४॥

तपे कुहना ने आदाब, जवानी के ही आलम में।
उन्हें जिनके बदन में थी, न ताक़त ब्रह्मचर्य की॥ ५॥
उन्हें क्या खाक, जीने का, मिलेगा लुत्फ दुनिया में।
नहीं क़ब्ज़े में है जिनके, रियासत ब्रह्मचर्य का॥ ६॥
रुखे गुलगूं है मुरझाया हुआ क्यों यह जवानी में।
अजी इस में नहीं शामिल है, रंगत ब्रह्मचर्य की॥ ७॥
करेंगे वह हकूमत नफ़स अम्मारा पै दयामय ही।
कि जिनके हाथ में होगी, विलायत ब्रह्मचर्य की॥ ८॥
हकीकत है वही कंगाल है, मुहताज मुफ़लिस हैं।
नहीं है पास जिन लोगों के, दौलत ब्रह्मचर्य की॥ ९॥
उन्हें हाजत है बसमें की न है, मुहताज मेंहदी की।
चढ़ी जिन भाइयों पर है कि रंगत ब्रह्मचर्य की॥१०॥
फ़िदा, होते नहीं यह आर्य है, बिलकुल खबर तेरी।
पसंद आई है अबसे उनको, सूरत ब्रह्मचर्य की॥११॥

भजन १८७

टेक—देखो जी हुई है ब्रह्मचर्य बिन हानि।
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य शूद्र सब, भोगें दुःख महान॥ हुई० ॥
लछमण जती ने इसका धारा, मेघनाथ को रण में संहारा।
डांवांडोल किया गढ़ सारा।
कांप गया है रावण योधा, थे ऐसे बलवान्॥ हुई० १॥
भीष्म पितामह थे ब्रह्मचारी, काल तक हट गया पिछारी।
सेज लगी तारों की प्यारी।
उत्तरायण तक जिन्हों ने देखो, वश में किये प्रान॥हुई०२॥
जिसने ब्रह्मचर्य को पाला, भँवर से बेड़ा आन निकाला।
हर सू बीज धर्म का डाला।
बाल जती ब्रह्मचारी थे वह, दयानन्द विद्वान्॥ हुई० ३॥

तुमने ब्रह्मचर्य्य को हारो, जाता रहा है गौरव सारो।
काला हिन्दू लक़ब तुम्हारा।
उठते बैठते हाथ पांव पर, ऐसे हुये जवान॥ हुई० ४॥
कभी यहां बिमान चले हैं, अब तो कूढ़ दिमाग बने हैं।
रेल देख हैरान हुये हैं।
गुरु से चेले हुये, शोक है तुम्हें नहीं है ध्यान॥ हुई० ५॥
जो अब भी उन्नति को चाहो, बच्चों को ब्रह्मचारी बनाओ।
फिर उनको गुरुकुल में पढ़ाओ।
कहैं 'चन्द्र' अब सुनो महाशय, तब होगा कल्यान। हुई० ६॥

भजन १८८

दोहा—सब आश्रम का मूल है, ब्रह्मचर्य्य सुखदान।
इसको सब नर धारिके, पावैं सुख महान॥
टेक—ब्रह्मचर्य आश्रम पालियो, तब ही सुख हो अधिकाई।
सब आश्रम का यही मूल है, इस का त्यागन बड़ी भूल है।
ब्रह्मचर्य का यही कूल है।
इसको नाबिसराइयो, वह है सब से सुखदाई। तबही० १॥
इसके ही प्रताप से भाई, भीष्म पितामह मृत्यु हराई।
हनूमान ने लंक जराई।
लक्ष्मण शक्ति मारियो पर चोट ज़रा नहिं आई॥ तबही० २॥
इससे बल है अति अधिकाता, तेज पुंज नर मुख होजाता।
व्याधि दुख सब मारि भगाता।
इसके गुण निर्धारियो, तब सभी विपति मिटिजाई॥तबही०३॥
हरिद्वार में गुरुकुल जारी, उसको तुम क्यों दीन्ह बिसारी।
शिक्षा लहैं जहां ब्रह्मचारी।
चन्दा कुछ भिजवाइये, "सागर" हो देश भलाई॥तबही०४॥

ग़ज़ल १८६

वेदों को जब पढ़ेंगे वन करके ब्रह्मचारी।
दुनियां का दुख हरेंगे गुरुकुल के ब्रह्मचारी ॥
तीनों बलों का दाता सब का पिता औ माता।
गुरुकुल से तुमको देगा बल ब्रह्म तेजधारी ॥ १ ॥
तीनो बलों को पाकर वेदों को पढ़ पढ़ाकर।
निकलेंगे गुरुकुलों से जिस दम वो ब्रह्मचारी ॥ २ ॥
आदर्श उनका जीवन दुनियां के हक़ में होगा।
जिसे देखि २ सारे सुधरेंगे नर और नारी ॥ ३ ॥
मन इन्द्रियों पै अपने अधिकार उनको होगा।
दुनियां के वास्ते वो होंगे कल्याण कारी ॥ ४ ॥
हठ पक्षपात उनके नज़दीक भी न होगा।
खुदगर्जी और खुशामद होगी न उनको प्यारी ॥ ५ ॥
ईश्वर है सर्व व्यापक और सर्व अन्तर्यामी।
समझेंगे सर्वथा वो गुरुकुल के ब्रह्मचारी ॥ ६ ॥
मन वाणी और करम से सुपने में निज धरम से।
होंगे न बेख़बर वो गुरुकुल के ब्रह्मचारी ॥ ७ ॥
विषयों को विष समझ कर निकलेंगे उनसे बचकर।
फिर क्या करेगी उनका दुःख रूप दुनियादारी ॥ ८ ॥
छल और फ़रेब करना पर धन से पेट भरना।
उन्हें कब पसन्द होगी रिसवत व चोरी जारी ॥ ९ ॥
दुराचार दुर्व्यसन फिर दुनियां में क्यों रहेगा।
माता बहिन व कन्या सब समझेंगे पर नारी ॥ १० ॥
गर चाहते हो मित्रो सुख शान्ति का ज़माना।
सन्तति को तुम बनाओ गुरुकुल के ब्रह्मचारी ॥ ११ ॥
गुरुकुल है एक पौधा उद्देश महर्षी का।

तन मन औ धन से सींचो बनकर परोपकारी ॥ १२ ॥
तन मन औ धन तुम्हारे हैं नाशवान् सारे ।
कीरत कमा लो इनसे न तो होगी हानि भारी ॥ १३ ॥
एक दिन अवश्य मरना कर जाओ जो है करना ।
न तो आखिरी समय पर अफ़सोस होगा भारी ॥ १४ ॥
लाखों अमीर राजे मरघट में जा विराजे ।
तजकर के जाहो हश्मत रथफील की सवारी ॥ १५ ॥
फिर क्यों हमारे प्यारो धनी सेठ साहूकारी ।
इस धर्मक्षेत्र में अब धरते हो पग पिछारी ॥ १६ ॥
भारत की फैजबख्शी मशहूर है मुल्कों में ।
गुरुकुल के वास्ते क्यों कंजूसी दिल में धारी ॥ १७ ॥
हिम्मत कमर को बांधो बल उस प्रभु से मांगो ।
बलदेव वेद विद्या जिसने यहां प्रचारी ॥ १८ ॥

गजल १६०

गुरुकुल की करके सेवा ऋषिऋण उतार दीजै ।
वेदों को अज़सरेनौ जग में प्रचार कीजै ॥
ऋषियों के अय ! सपूतो राजों के राजपूतो ! ।
वैश्यों के नूरचश्मो ! दिल में विचार कीजै ॥ १ ॥
कैसे तुम्हारे पुरुषा आलिम औ शूरमा थे ।
उनकी थी नेक शुहरत उसे मत बिगार दीजै ॥ २ ॥
वेदों की कुल हक़ीक़त दुनियां में कर दो रोशन ।
ब्रह्मचर्य आश्रम की बुनियाद डार दीजै ॥ ३ ॥
गौतम कणाद जैमिन पातंजली से पण्डित ।
भारत में फिर हों पैदा अब ऐसा कार कीजै ॥ ४ ॥
भारत की इल्मदानी दुनिया में थी बखानी ।
पूंजी जो थी पुरानी उसको सम्हार लीजै ॥ ५ ॥

उन तत्वज्ञानियों का जिसमों में आप के गर।
कुछ है भी खून बाक़ी तो क्यों न कार कीजै ॥ ६ ॥
ग़फ़लत से आंख खोलो हिम्मत कमर की बांधो।
तन मन व धन को अपने गुरुकुल पै वार दीजै ॥ ७ ॥
प्राचीन वेद मत से महरूम हो गये हो।
वेदों की डूबती सी किश्ती को पार कीजै ॥ ८ ॥
बलदेव अपनी हालत नाज़ुक जो हो चुकी है।
ब्रह्मचर्य विद्याबल से उसका सुधार लीजै ॥ ९ ॥

ग़ज़ल १६१

जो चाहो संसार दुखसे छूटे, तो मित्रो जल्दी बनाओ गुरुकुल।
उठी है पापों की मौज भारी, यह किश्ती संसारी डूबी सारी ॥
जो चाहो मल्लाह हों ब्रह्मचारी, तो मित्रो जल्दी बनाओ गुरुकुल।
मनु पतंजलि कणाद, गौतम, वह योधा अर्जुन से भीष्म ॥
जो चाहो तुममें हों फिरसे पैदा, तो मित्रो जल्दी बनाओ गुरुकुल।
है पाप काटन की ये ही छैनी, है देश-उन्नति की यह श्रेणी ॥
जो देशको फिर उठाना चाहो, तो मित्रो मिल के चलाओ गुरुकुल।
ज़रा तो चेतो पे देश-हितैषी ! बिगड़ रही है तुम्हारी सन्तान ॥
जो चाहो सन्तान नेक होवे, तो मित्रो जल्दी बनाओ गुरुकुल।
ये मौक़ा उम्दा मिला है तुमको, पे मित्र इसको न हाथ से दो ॥
प्रेम प्रीति से जल्द मिल कर, बने जो तुमसे पढाओ गुरुकुल।
हैं जितनी दुनियां में दर्शगाहें, नहीं है कोई समान इसके ॥
कहे है सेवक पुकार कर ये, पे मित्रो जल्दी, चलाओ गुरुकुल।

ग़ज़ल १६२

ऋषी तैयार करने को अगर कल है तो गुरुकुल है।
ब्रह्मचारी के आश्रम को अगर बल है तो गुरुकुल है ॥

जिहालत हो गई पैदा अविद्या के अंधेरे से।
अंधेरा दूर करने को मशल गर है तो गुरुकुल है॥
हुआ है धर्म खुदगर्ज़ी से सारा जंग आलूदा।
उसे अब साफ़ करने की जो सीकल है तो गुरुकुल है॥
जगत् उद्धार करने में गंवाई जान तक जिसने।
ऋषि के उस परिश्रम का अगर फल है तो गुरुकुल है॥
अनो मित्रो ये सेवक आप से दावे से कहता है।
जहां में दर्शगाह सब से जो अफ़ज़ल है तो गुरुकुल॥

गजल १६३

अनादिल वेद रूपी के गुलिस्तां ऐसे होते हैं।
गुरुकुल जिसको कहते हैं शुभस्थां ऐसे होते हैं॥
बहार आने को है रुख़सत ख़िज़ां अब होती जाती है।
उजड़ कर फिर जो बसते हैं वह वीरां ऐसे होते हैं॥
किया सरसब्ज़ स्वामीजी ने आकर धर्म का गुलशन।
बाग़वां ऐसे होते हैं निगहवां ऐसे होते हैं॥
यहां से पढ़ के विद्या जब कि निकलेंगे ब्रह्मचारी।
मचैगी धूम दुनियां में पहिलवां ऐसे होते हैं॥
ये पढ़ कर विद्या दीनी और दुनियावी मुकम्मिल हो।
कहेंगे बढ़ के देखो हम को इन्सां ऐसे होते हैं॥
ये निकलेगा जवां स देख कर रोबो जलाल इनका।
जगत् उद्धार करते हैं वह हां ऐसे होते हैं॥
करो तन मन से तुम रक्षा सबही मिलकर गुरुकुल की।
कि तो दुनियां में साबित हो मेहरबां ऐसे होते हैं॥
पढ़ाओ अपनी सन्तां इस में और दो मालो ज़र बेहद।
कि सब कहने लगें बेशक क़दरदां ऐसे होते हैं॥
बनाओ ब्रह्मज्ञानी ब्रह्मचारी खुल गये गुरुकुल।

येही शुभ कर्म उन्नति के सामां ऐसे होते हैं ॥
अगर धर्म उन्नति चाहो तो दो गुरुकुल को तुम सर्वस्व।
बतादो क़ौम को प्यारो कि क़ुरबां ऐसे होते हैं ॥
श्रीस्वामी ने तन मन देके साबित कर दिया सब को।
कि देखो क़ौम की गर्दन पै अहसां ऐसे होते हैं ॥
हुआ गर आप के दिल पर असर कुछ इस गुजारिश का
तो सेवक भी समझ लेगा सखुनदां ऐसे होते हैं ॥

(४) विद्या की महिमा

भजन १६४

दोहा—विद्या जग में गुप्त धन विद्या रतन रसान।
विद्या से आदर मिले विद्या सम नहीं दान ॥
टेक—आलस छोड़ केर-पढ़लो विद्या भारत वासी।
विद्या पढ़ हुए सुजनों का जग में होता मान ॥
नहीं सभा में शोभा पाती बिना पढ़ी संतान ॥ आ० ॥
विद्या पढ़ पंडित बन जाते और गुणी कहलाते।
बिन विद्या के फिर भटकते पशु समान दुख पाते ॥ आ० ॥
विद्या ही से हो सकता है सत्य झूँठ का ज्ञान।
जीवन के चारों फल पाते विद्या से बिन दान ॥ आ० ॥
विद्या रत्न अमोलक जग में ग्रहण करो नर नारी।
सुख सम्पति आनन्द मिलेगा भागे विपदा सारी ॥ आ० ॥
गुरुकुल विद्यालय में मित्रो ! विद्या पढ़ो पढ़ाओ।
निज संतान स्वदेश सुधारो धर्मवीर बनजाओ ॥ आ० ॥
यों "गहलोत" सदा विद्या की मंजुल महिमा गाता।
कल्प-लता सम सब सुखदाता है यह विद्या माता ॥ आ० ॥

भजन १६५

दोहा—जो कोई सीखत नहीं, विद्या चित्त लगाय।
वह नर इस संसारमें, पशु सदृश हो जाय॥

टेक—बिन विद्या के संसार में, नर पशुसा हो जाता है।
बिन विद्या के होय न बुद्धि, मन की होती कर्मा न शुद्धी॥
छाई रहती है निर्बुद्धी।
फंसि अज्ञाना गार में, दिन २ धसता जाता है॥ नरपशु० १॥
बिन विद्या के समझ न आती, मूरखता को नहीं हटाती॥
अन्धकार में रहै फंसाती।
जिस से पठित समाज में, जाने से घबराता है॥ नर पशु०२॥
बिन विद्या न आदर पावै, जीवन सभी व्यर्थ हो जावै॥
करता है जो कुछ मन भावै।
बुद्धिहीन अविचार में, वह बिल्कुल गिर जाता॥ नर पशु०३॥
हे भाई! अब विद्या पढ़ना, इस में जरा देर नहिं करना।
इन वचनों को मन में धरना।
विद्या सीखो प्यार में, 'सागर' यह समझाता है॥ नरपशु०४॥

भजन १६६

टेक—इस विद्या का संसार में है अद्भुत महिमा भाई।
दुनियां में जितने पदार्थ हैं जाने जाते वे यथार्थ हैं।
विद्या के यह शब्दार्थ हैं।
इस को जानो विचार में स्वामी कह गये गुसाईं। अद्भुत० १॥
* शेखसादी का यहाँ वचन है, ईश्वर पावै ना वह जन है।
जिसका विद्या में नहिं मन है।
आखिर वह संसार के, ईश्वर से विमुख होजाई। है अद्भुत०२

* चुशमा अजपयद इल्मबायद गुदाख्त,
कि बे इल्म नतवां खुदारा शिनाख्त।

+ भर्तृहरि कह गये सुनाई, विद्या बुद्धि जिसे नहिं आई।
उस को पशु तुम जानो भाई।
वह नर मृग के तुल्य है, पर देह मनुष्य की पाई। अद्भुत०३॥
विद्या ही के बल से भाई, रेल तार हैं देत दिखाई।
सुन्दर अद्भुत वस्तु बनाई।
जो नित के व्यवहार में, हमको हैं परत लखाई। है अद्भुत०४॥
हमने अपने मन में जाना, बिन विद्या नर पशु समाना।
दुर्लभ अहै ज्ञान का पाना।
× बिना ज्ञान नहीं मुक्तिहै, ऋषि मुनि हैं गये बताई। अद्भुत०५
विद्या से एक छोटासा नर, कर उन्नति पद पाता बढ़कर।
मूर्खता को दूर हटाकर।
'सागर' पाता शांति है कहलग मैं करों बड़ाई। है अद्भुत०६॥

भजन १६७

यह विद्या वेद की जी उत्तम है मातृ भाषा हमारी॥
प्रथम देव नागरी की वर्णमाला में सोला स्वर हैं।
तेतीस व्यंजन मिलाय कर यह उंचास अक्षर हैं। यह० १॥
मथुरा शब्द नागरी में तीन हैं अक्षर भाई।
उर्दू में हुये पांच, मीम, तो है, रे, अलिफ़ बनाई॥ यह० २॥
उर्दू में हुये पांच दुगुन इंगलिश में दें दिखलाई।
एम, यू, डबल, टी आर, ए, लिखा गया। फिर भी तो मुटरा बनाई॥
जो कुछ लिखो पढ़ो जैसा ही नहीं हो सकती भूल।
रामचन्द्र कहें पढ़ो नागरी है यह सब की मूल॥ यह० ४॥

+ येषां न पतो न दानं न सीलं न गुणो न धर्मः ते मृत्यु लोके भुविभार भूता, मनुष्य रूपेण मृगाश्चरन्तिः॥ भर्तृहरि।
× विद्यायां ज्ञानं तस्मात् मुक्तिः

गजल १९८

वद नसीबी से हुई आज ये हालत मेरी।
हाय ! तुम भी नहीं सुनते हो शिकायत मेरी॥
प्यारे बच्चो ! न मुझ हिन्दी का कोई आज रहा
तुम न मेरे हुकुम मेरा न अदालत मेरी॥
हाय वे भी न न रहे हिन्द पै मरने वाले।
फिर पड़ी किसको करे आज विकालत मेरी॥
क्याही सूझी तुम्हें उर्दू से मुहब्बत जोड़ी।
क्या तुम्हें भाती नहीं शक्ला शबाहत मेरी॥

गजल १९९

ऐहिन्द के सपूतो ! क्या है खता हमारी।
जो आज गिर रही हूं आंखों से मैं तुम्हारी॥
मुख चूम चूम मैंने ही बोलना सिखाया।
हा ! वह मेरी मुहब्बत तुम देते हो बिसारी॥
हिन्दी हूं मा तुम्हारी टुक तो नजर उठाओ।
देखो पिता तुम्हारा भी हो रहा भिखारी॥
खाती हूं लात दर दर जीती हूं बेहया हुं।
पर क्या करू जिगर में एक आस है तुम्हारी॥
तुम लाख कैसेही हो खूने जिगर हो अपने।
एक दिन कभी तो बच्चो ! सुध लोगे ही हमारी॥

भजन ८००

हिन्दुओ हा ! शोक हमको लाज तक आती नहीं।
भूल अपनी मानकर भी बुद्धि बल खाती नहीं॥
हो नहीं सकता कि अपने को न तुम हिन्दू कहो।

हिन्द की हालत गिरी या देख कर तुम चुप रहो ॥
देश भी हिन्दोस्तान अपना कहोगे तुम सही।
पर तुम्हारी भाषा क्या हिन्दी कहायगी नही ॥
दूसरों के बल पै चलना सीखते जो आप हैं।
जान कर बच्चों के हित में आप बोते पाप हैं ॥
छोड़ कर हिन्दी सी भाषा दुनियां में सब से सहल।
काम अपना हैं चलाते अन्य भाषाओं के बल ॥
है जमाने में कहीं भी सोचिये ऐसी भी चाल
अजनबी के हाथ में जो सौंपते हो अपना माल ॥
राह सीधी छोड़ कर उलटी जो हम चलने लगे।
हो गया उलटा विधाता काम सब उलटे हुये ॥
कौन है जो देश भाषा का नहीं रखता गुमान।
रूस, अमरीका व योरुप चीन है या है जापान ॥
देश भाषा ही के बल पर आज व मशहूर हैं।
धन व बल जातीयता में सब तरह भरपूर हैं ॥
एक हम है जिनको कांटे सी चुभे हिन्दी गरीब।
क्यों न हों फिर हम जमाने से सबों से बदनसीब ॥
अन्य भाषा ! हिन्द बच्चों को सिपाही चांद में !!
शेर के बच्चे पलें हैं गीदड़ों की मांद में !!!
हाय स्वरथ का बुरा हो ! तूने ही चौपट किया।
तूने ही मत आर्य सन्तानों की सारी हर लिया ॥
हाय ! वह हिन्दी पढ़ो वैसा ही तुम जैसा लिखो ॥
एक दिनमें सीख सकते तुम जिसे चाहो सिखो ॥
हैं लिखे जिसके हमारे वेद औ सारे पुरान।
जिसकी सुन्दरता सरलता का न हो सकता बखान ॥
व्यास वाल्मीकों ने माना जिसको ज्यादा प्रान से।
हा ! वही हिन्दी उठी जाती है हिन्दुस्तान से ॥

और भाषाओं सी यह गुमराह है करती नहीं।
छोड़ सच्चाई बुरा कुछ भाव सिखलाती नहीं॥
गर्भ से ही हिन्द बच्चों के ये रहती संग है।
जान हिन्दी है जो हिन्दुस्तान मेरा अंग है॥

गजल २०१

अहो मातृ भाषे ! दशा देख तेरी।
न होती निराशा कभी दूर मेरी॥
बड़ा कष्ट है ! तू अभी दीन ही है।
सभी भांति से होरही हीन ही है॥
बने राष्ट्र-भाषा तुही योग्य-ऐसी।
नहीं जानता कौन तू श्रेठ जैसी ?
निराधार तो भी अभी तू बनी है।
पड़ी पा रही हाय ! पीड़ा घनी है॥
गुण श्रेठ तेरे सभी जानते हैं।
न तो भी तुझे लोग सम्मानते हैं॥
गुणों को न जो मानते जान के भी।
कहे जांय क्या सभ्य सज्ञान वे भी॥
समुत्थान की मूल है जो हमारी।
वही तू जहा होरही क्षीण भारी॥
यहां ज्ञान विस्तार की है कथा क्या।
कभी दूर होगी हमारी व्यथा क्या ?
रहेगी इसी भांति तू रंक जालौं।
न होगी कभी बुद्धि की वृद्धि तौलौं॥
दशा बीज की शोचनीय जहां है।
फलों की भला कौन आशा वहां है।
न दे जो हम्हैं तू ज़रा भी सहारा।

न हो तो हमारा कभी भी गुज़ारा॥
सभी काम होते हमारे तुझी से।
जनाते मनोभव सारे तुझी से॥
सभी भांति है, तू हमें मोद दायी।
न तेरे बिना है हमारी भलाई॥
महा पूजनीया सदा तू हमारी।
अहो कष्ट! तो भी गई तू बिसारी॥
सभी यातना जो हमारी हरेगी।
भला सर्वदा जो हमारा करेगी॥
वही तू गई है हमीं से बिसारी।
अहो! बुद्धि मारी गई है हमारी॥
न सत्कार तेरा कहीं कीर्ति-कारी।
दशा हाय जाती न तेरी निहारी॥
न तेरा ज़रा भी हमें ध्यान आता।
भला क्या करेगा हमारा विधाता॥
जहां पूज्य का है तिरस्कार होता।
वहां बन्द कल्याण का द्वार होता॥
जहां आत्म कर्त्तव्य पाला न जाता।
वहां क्या कभी सौख्य है पास जाता॥
बना रिक्त साहित्य भाण्डार तेरा।
लुटा सा पड़ा पुस्तकागार तेरा॥
दशा देख तेरी सभी विज्ञ रोते।
नहीं चार छै ग्रन्थ साहित्य होते॥
कहीं तो उपन्यास हैं नाशकारी।
कहीं नायका-भेद की धूम भारी॥
किये हैं कहीं कोक बे-रोक डेरा।
किसी काम का है न साहित्य तेरा॥

नहीं श्रेष्ठ साहित्य होता जहां का।
न उत्कर्ष होता कभी है वहां का॥
सभी जातियों की भलाई बुराई।
गई नित्य साहित्य ही से लगाई॥
पढ़े सभ्य सम्पूर्ण होते जहां हैं।
जवानी जमा खर्च होते जहां हैं॥
बता, कौन तेरा यहां दुःख खोवे।
कहां से तुझे प्राप्त साहित्य होवे॥
बने जो यहां लोग साहित्य-सेवी।
न तेरा जरा वे करें मान देवी॥
धन प्राप्ति के ध्यान में मग्न कोई।
वृथा वाद में हाय ! है लग्न कोई॥
न बोले बिना काम होता हमारा।
सु-भाषा बिना व्यर्थ है काम सारा॥
न होगी अहो ! पुष्ट जो लौं स्वभाषा।
हमारी फलीभूत होगी न आशा॥

भजन २०२

टेक—हिन्दी के सम संसार में है इल्म न दूसर भाई।
अति सुन्दर लिपि सर्व दिखानी, अल्प काल में है आजाती।
सरल सुबोध स्वच्छ सब भांती।
बालक सम दिन चार में, इस को सहजहि पढ़ि जाई टे०
भाषा उर्दू के सम भाई, गड़बड़ और न देत दिखाई।
गाई को तुम पढ़ लो गाई।
और सुनार सितार में, कुछ भेद नहीं दिखराई। टे० १॥
जूतों को पढ़ते हैं किश्ती, और बहिश्ती को है भिश्ती।
कसबी को है पढ़ते कसबी।

कुछ भेद न वार व तार में, भाई को कहँ पढ़ाई ॥ है० ३ ॥
इस प्रकार है गड़बड़ सारा, कहँ कहारा को वे सारा ।
'सागर' मानो कहा हमारा ।
देखो नैन पसार के, हिन्दी को लेव अपनाई ॥ है० ४ ॥

(५) गुरुकुल महिमा ।

गजल २०३

प्रतापी शूरमा बच्चे बनावेगा यही गुरुकुल ।
अभागे सो रहे उनको जगावेगा यही गुरुकुल ॥ १ ॥
हमारे धर्म उद्यम का अविद्या नाश कर्ता है ।
उस फटकार भारत से भगावेगा यही गुरुकुल ॥ २ ॥
मिलेंगे वीर वैर विसार पूरी एकता करके ।
नमूना मेल का सच्चा दिखावेगा यही गुरुकुल ॥ ३ ॥
सुनो, जिस के न होने से भलाई हो नहीं सकती ।
इसी की खोज का बीड़ा उठावेगा यही गुरुकुल ॥ ४ ॥
सुफल की प्राप्ति से जिसके भलाई देश की होगी ।
उसी उद्योग का पौदा लगावेगा यही गुरुकुल ॥ ५ ॥
जहां अज्ञान का है घोर "रामनरेश" अन्धेरा ।
वहां विज्ञान का दीपक जलावेगा यही गुरुकुल ॥ ६ ॥

गजल २०४

ईश्वर में ध्यान धरना गुरुकुल सिखा रहा है ।
सुख शान्ति प्राप्त करना गुरुकुल सिखा रहा है ॥ १ ॥
श्रुति और दर्शनों की विज्ञान वाटिका में ।
आनन्द से विचरना गुरुकुल सिखा रहा है ॥ २ ॥
संसार की भलाई जैसे हो उस तरह के ।
संकल्प से न टरना गुरुकुल सिखा रहा है ॥ ३ ॥

मिलकर "नरेश" लोगों उसको सहायता दो।
सीखो सखा सुधरना गुरुकुल सिखा रहा है॥ ४॥

भजन २०५

होगा उपकार, भारत का गुरुकुल से॥ टेक॥
सब ब्रह्मचर्य व्रतधारी, पढ़ कर विद्या सुखकारी।
करेंगे धर्म-प्रचार॥ भारत०॥१॥
प्रण ठानि न धीर टरेंगे, उन्नति के हेतु करेंगे।
नये नित आविष्कार॥ भारत०॥ २॥
तज कर विरोध सब भाई, बनि वेद धर्म अनुयायी।
मिलेंगे प्रेम पसार॥ भारत०॥ ३॥
भ्रम वाद विवाद छटेंगे, दुख "रामनरेश" घटेंगे।
बढ़ेगी शांति अपार॥ भारत०॥ ४॥

गजल २०६

धर्म्म की तालीम गुरुकुल में दिलाई जायगी।
जो ऋषि आज्ञा है वह पालन कराई जायगी॥ १॥
जिसके कारण देश ये कभी उन्नति का केन्द्र था।
वर्ण आश्रम की वह मर्य्यादा बताई जायगी॥ २॥
पृथिवी से लेकर हो जिससे ज्ञान पूर्ण ब्रह्म लों।
वह परा अपरा वहां विद्या पढ़ाई जायगी॥ ३॥
छिप रहे हैं रत्न लाखों वेद के जिस कोष में।
खोल कर कुंजी वह सब पूंजी बँटाई जायगी॥ ४॥
छन्द और व्याकरण ज्योतिष कल्प और निरुक्त से।
वेद के विज्ञान की महिमा जताई जायगी॥ ५॥
हो रहे हैरान तुम जिस उन्नति को देखकर।
वह कला कौशल वहाँ सारी सिखाई जायगी॥ ६॥

इल्म का घुड़दौड़ जो संसार मे अब हो रही।
सब से आगे वेद की विद्या पढ़ाई जायगी ॥ ७ ॥
भीष्म अर्जुन द्रोण अरु हनुमान से योधा बनें।
धर्म से दृढ़ता युधिष्ठिर की जताई जायगी ॥ ८ ॥
पितृभक्ति राम की लक्ष्मण भरत सा भ्रातृभाव।
दान में शक्ति हरिश्चन्द्र की सिखाई जायगी ॥ ९ ॥
जिस अविद्या से हुई है दुर्गति इस देश की।
वेद के प्रचार से सारी मिटाई जायगी ॥ १० ॥
जिसके बिन भारत तुम्हारा सारा गारत होगया।
ब्रह्मचर्य आश्रम की वह रीती चलाई जायगी ॥ ११ ॥
होगा ये सब कुछ तभी पे प्यारे भ्रातृगण!।
विद्यालय को दान से हिम्मत बँधाई जायगी ॥ १२ ॥
क्योंकि यहां पर देश के वह ब्रह्मचारी पढ़ रहे।
जिनके द्वारा देश की दुर्गति मिटाई जायगी ॥ १३ ॥
है वही दानी जो देवे दान विद्यापात्र को।
श्रेष्ठ पुरुषों की वहां उत्तम कमाई जायगी ॥ १४ ॥
इसका फल होगा वह पढ़कर देश के सेवक बने।
दुन्दुभी दुनिया में वेदों की बजाई जायगी ॥ १५ ॥
होवेगा घर घर में फिर आनन्द पे वासुदेव।
जब कि यहां पै शान्तिः शान्तिः सुनाई जायगी ॥ १६ ॥

भजन २०७

टेक—हमारे देश में जी, कैसे २ बालक जनमे।
सतसंगी ईश्वर विश्वासी ब्रह्मचारी गुणवान।
होता था जिस समय यहां पर वैदिक गर्भाधान ॥
दो वेदी त्रिवेदी लाखों चतुर्वेदी कहलाये।
जिन बच्चों को गोदी लेकर जननी आप पढ़ाये ॥

छोटी उम्र से जिन बच्चों ने धर्म की शिक्षा पाई।
आख़िर तक फिर धर्म न छोड़ा थी ऐसी दृढ़ताई॥
जिसने शिक्षा पाई धर्म की मन में किया विश्वास।
सौतेली मां की आज्ञा से राम गये बनवास॥
कहो भरत की कितनी उम्र थी जिसने छोड़ा राज।
यह कह गद्दी के मालिक हैं रामचन्द्र महराज॥
ध्रुव प्रह्लाद ने मात पिता से बहुतक दुःख उठाये।
ईश्वर आज्ञा पालन करके राज अटल पद पाये॥
कंस राक्षस मार गिराया श्रीकृष्ण भगवान्।
उग्रसेन को गद्दी देकर आप बने प्रधान॥
अपना वैदिक धर्म न छोड़ा सत्य सनातन जान।
ग्यारह वर्ष का बाल हकीक़त देगया अपने प्राण॥
दस और बारह वर्ष के बच्चे थे ऐसे धर्मवीर।
दिवारों में चुने गये दिखलादो ऐसी नज़ीर॥
चन्द्रकवि कह छोटी उम्र थी जिसकी देखो माया।
चौदह वर्ष के थे मूलशंकर जिसने हमें जगाया॥

ग़ज़ल २०८

वोही तो बालक जगत् में शुद्ध विद्या पायेंगे।
मात पितु गुरु तीनों ही जिन के मयस्सर आयेंगे॥
मात पितु के आचरण का अक्स हो उन पै ज़रूर।
छोटे तो पीछे बड़ों के जाते हैं और जायँगे॥
हो यती कौशल्या माता सी नारी इस देश की।
राम जैसे पुत्र फिर लाखों नज़र में आयेंगे॥
हों यदी धर्मात्मा योगी पिता इस देश के।
सैकड़ों गौतम कपिल तुम को यहां मिल जायेंगे॥
होवें द्रोणाचार्य से जो गुरू इस देश के।

देखना अर्जुन से योधा सैकड़ों बन जायँगे ॥
कर लें बच्चे देश के ब्रह्मचर्य का पालन यदा।
एक क्या लाखों दयानन्द धर्म को फैलायेंगे ॥
'चन्द्र' चारों ओर विरजानन्द की कुटियां बनें।
क्यों न हो सतयुग यो क्यों ना साम गायन गायेंगे ॥

गजल २०९

हुये श्रीरामचन्द्र राजा शेर नर हो तौ ऐसा हो।
किया पालन पितु आज्ञा का पुत्र गर हो तौ ऐसा हो ॥
गये वे छोड़ राज और धन, उठाकर रुख वो सिमते वन।
किया मैला न कुछ भी मन, जो साबिर हो तौ ऐसा हो ॥
गये हमराह लक्ष्मण भी, स्हे सदमे सभी वन के।
निभाया भ्रातृ भावों को, विरादर हो तौ ऐसा हो ॥
गई हमराह सीता भी, छुड़ाया उसको रावण से।
जो पत्नी हो तो ऐसी हो, जो शौहर तौ ऐसा हो ॥
न पहचानी गल माला न देखा, जो नजर भर के।
जो भाभी हो तो ऐसी हो, जो देवर हो तौ ऐसा हो ॥
भरत ने राज्य नहीं लीना, दिया जो उन की माता ने।
दिया वापिस जो राम आये, विरादर हो तौ ऐसा हो ॥
हुकूमत राम ने जब की, धर्म से कर प्रजा पालन।
गया फिर राज्य पा लीना, मुक़द्दर हो तौ ऐसा हो ॥
मुक़द्दम कर्म अफजल थे, जो यह बातें हुईं हासिल।
भयंकर राह सब काटी, दिलावर हो तो ऐसा हो ॥

भजन २१०

गुरुकुल से निकल ब्रह्मचारी देश भारत को सुधारेंगे।
जो लोप हुये हैं वेद फेर भारत में प्रचारेंगे ॥ गुरु०

पढ़ विद्या गुरुकुल से आवें, तब सब का भ्रम मिटावें।
सीधा मारग बतलावें, झूठ पाखण्ड विसारेंगे ॥ गुरु०
जो इच्छा है भाई तुम्हारी, करे गुरुकुल पूरन सारी।
इससे ही रक्खो याद कपिल और कणाद निकारेंगे ॥ गुरु०
यह गुरुकुलही का फल था, राम भीष्म में इतना बलथा।
वही होंगे फेर तैयार नजर गुरुकुल पै जो डारेंगे ॥ गुरु०
बिन गुरुकुल के मित्र तुम्हारी, हुई सन्तान मूर्ख अनारी।
नहीं दीखे कोई ब्रह्मचारी, विगड़ी फिर कैसे सुधारेंगे ॥ गुरु०
इस गुरुकुलका नाम मिटा था, नहीं कहीं भी इसका पताथा।
ऋषी आकर फेर डटा था, अविद्या गुरुकुल से टारेंगे ॥गुरु०
मुफ्त तालीम का देनेवाला, गुरुकुल ही देश में आला।
यह स्वामी ने ढग डाला, वेद घर २ पुकारेंगे ॥ गुरु०
हरिदत्त कहे समझाई, गुरुकुल की करो सहाई।
यह दिल में रक्खो याद ऋषी ऋण मिल के उतारेंगे ॥ गुरु०

गजल २११

करो अय दोस्तो हर तौर से इम्दाद गुरुकुल की।
कि जिससे पुख्ता और मजबूत हो बुनियाद गुरुकुलकी ॥
अगर विद्वान् संन्यासी करें निष्काम कुछ सेवा।
कपिल और जैमुनी बन जायें सब औलाद गुरुकुलकी ॥
नजर आता रहे हर वक्त नक्शा कामयाबी का।
नसीब अब देखना हमको न हो उफ्ताद गुरुकुल की ॥
नहीं मिलते हैं अधिकारी, इस तो है कसूर उनका।
खता इस में भला क्या है सिलम ईजाद गुरुकुल की॥
जरर क्या एक का है इस में है नुकसान दुनिया का।
अदू करता है तू क्यों जिन्दगी बर्बाद गुरुकुल की ॥
तेरी तेगे अदावत का हूं मिस्मिल छोड़ दे अब तो।

अरे शफ़क़ाक सुन तुझसे है यह फ़रियाद गुरुकुलकी ॥
करो पिसारन दशरथ थी तरह मशहूर भारत को।
कोई लक्ष्मण हो गुरुकुल का कोई हो राम गुरुकुलका ॥
यहां पर एक दो पातञ्जली जगदीश पैदा कर।
जमाने में होवे प्रसिद्ध मुक्ति धाम कुरुकुल का ॥
हमारे सरपे जब तक साया यह सरकार आली है।
फिदा मिलकर करो तुम सबके सब इम्दाद गुरुकुल की ॥

भजन २१२

अय प्यारे मेरी यक बात ध्यान धरना धरना धरना ॥ टेक ॥
हुआ यज्ञोपवीत तुम्हारा, सब साखी है कुल परिवारा।
है क्या मतलब तुम्हारा, गौर करना करना करना ॥ १ ॥
तीन तागे जो इसमें लगे हैं, ब्रह्मफांस से यक में फंसे हैं।
वह तुमको ये बतला रहे हैं, तीन ऋण हैं भरना भरना ॥ २ ॥
पहिला है पितृऋण प्यारे, जिन तुम हित सहे दुख सारे।
तुम होकर के उनके सहारे, दास बनना बनना बनना ॥ ३ ॥
दूजो है ऋषी ऋण भाई, जिन विद्या है तुमको पढ़ाई।
अरु मुक्ती की राह बताई, सेवा उनकी करना करना ॥ ४ ॥
सतभारत को फैलाई, वेद पढ़ना पढ़ना पढ़ना ॥ ५ ॥
यही यज्ञोपवीत कहावे, तीनों ऋण की याद दिलावे।
मित्र तुम से ये गाय सुनावे, न है कुंजी बँधना बँधना ॥ ६ ॥

भजन २१३

मैं तो जाता हूँ गुरुकुल को लो प्रणाम है मेरा।
ब्रह्मचर्य्य आश्रम धारन करूंगा, सांगोपांग सब वेद पढूंगा।
ऋषी ऋण तारूँ यहीं काम है मेरा ॥ मैं तो०

पच्चीस वर्ष तक वसु पद पाऊं, छत्तिस में मैं रुद्र कहाऊँ।
अड़तालिस में आदित्य नाम है मेरा॥ मैं तो०
ब्रह्मचारी से गृहस्थ बनूंगा, पितृ ऋण को अदा करूंगा।
फिर बन्न में विश्राम है मेरा॥ मैं तो०
वानप्रस्थ से बनूंगा संन्यासी, बन्धन की तोड़ूंगा फांसी।
अन्त में मुक्ती धाम है मेरा॥ मैं तो०
वासुदेव तभी द्विज कहलावो, कर उपनयन गुरुकुल जावो।
यह ही कहन का परिणाम है मेरा॥ मैं तो०

(६) आर्य्यावर्त्त का पूर्व गौरव।

लावनी २१४

शैर–सभ्यगण सुनते है भारत भी कभी मशहूर था।
नीति विद्या धर्म धन इनलव में यह भूरपूर था॥
और सब देशों में भी इसका प्रकाशित नूर था।
था यही शिक्षक भी उनका गर्व उनसे दूर था॥
टेक–इतिहासों में इस की महिमा है भारी।
था चढ़ा यही उन्नति की उच्च अटारी॥

चौक १

क्यों न हो जहां हों व्यास सदृश विज्ञानी।
और गौतम से हों तर्क शास्त्र के वानी॥
हों पदार्थवेत्ता कणाद से लासानी।
और पातंजलि से हों योगीश्वर ध्यानी॥
वहां हों न क्यों विद्या में रत नर नारी। था०॥

चौक २

जहां रामचन्द्र से शूर सत्य व्रत पालक।
हों पूर्ण जितेन्द्री भीष्म सदृश बलधारक।
और धनुर्वेद के द्रोण से हों प्रचारक॥
सम्राट युधिष्ठिर से हों धर्म व्रत धारी। था० ॥

चौक ३

जहां आयुर्वेद के धन्वन्तर से ज्ञाता।
और विश्वकर्म्मा से शिल्प कला निर्माता॥
गान्धर्व वेद में नारद से प्रख्याता।
जिनकी महिमा संसार आज है गाता॥
हुई उनके बिना भारत की कैसी ख्वारी। था० ॥

चौक ४

शिक्षक से इस ने शिष्य की पदवी पाई।
और गुरु होकर अब लघु दे है ये दिखाई॥
विद्या की जहां पर ऐसी थी अधिकाई।
वहां आज अविद्या की बज रही दुहाई॥
था समृद्ध जो वह हुआ है आज भिखारी। था० ॥

चौक ५

भारत के बाद यहां ऐसी अविद्या छाई।
विपरीत बुद्धि जिस ने सब में फैलाई॥
की प्रमाद ने देश में फिर अपनी चढ़ाई।
और द्वेष ने सब को अन्धा दिया बनाई॥
मत भेद अनेक यहां पर होगये जारी। था० ॥

चौक ६

फिर ऐसी द्वेष के वृक्ष की फैली छाया।
नहीं मिल कर रहना पिता पुत्र को भाया॥
यह देख सुअवसर यवन जाति ने पाया।
आकर तुरन्त अपना अधिकार जमाया॥
हुए भारतवासी हिन्दू, वहशी, अनारी। था० ॥

चौक ७

यह दशा देख दयानन्द को करुणा आई।
फिर नगर २ निज देश भक्ति दिखलाई॥
पहिला इसका सब गौरव अहै प्रभुताई।
जतला कर वैदिक धर्म की नेव जमाई॥
कहे "शर्मा" अब हुई आशा पूर्ण हमारी। था० ॥

गजल २१५

ऐ हिन्द ! तू भी था कभी दुनिया का आफ़ताब।
मस्तक रिवाजी फ़लसफ़ा हिन्दसे में लाजवाब॥
हर एक मुल्क तुझ से ही होता था फ़ैज़याब।
सारे जहां का तुझ को ही कहते हैं इंतखाब॥
अलग़रज़ सारे इल्म हुनर तुझ को याद थे।
तेरी बगल में सैकड़ों गौतम कणाद थे॥
रश्क आया आसमान को तेरे कमाल का।
हर एक फ़न में इल्म तेरे जाहो जलाल का॥
हर वक्त सोचने लगा रस्ता ज़वाल का।
नक़्शा जमाया तुझ में ही जंगो जदाल का॥
एक़ताये रोज़गार जो तुझ में मौजूद थे।
कुरुक्षेत्र के जंग ने बरबाद कर दिये॥

जब इस तरह से हर तरफ अंधेर छागया।
दुश्मन भी तेरे हाल पै आंसू बहा गया॥
ईश्वर को तेरे हाल पै कुछ रहम आ गया।
भेजा ऋषि, जो धर्म्म का रस्ता दिखा गया॥
पाते हैं जिन के नाम से रहम और खुशी।
था नाम नामी जिन का दयानन्द सरस्वती॥
आये थे सर्व देश क उपकार के लिये।
रास्ता दिखाने वेद का संसार के लिये॥
दुनिया में चारों वेद का प्रचार के लिये।
हिन्दुस्तान के खास कर उद्धार के लिय॥
क्या क्या न अपने देश पै अहसान कर गये।
आखिर को अपनी जान भी कुरबान कर गये॥
नाव थी अपने धर्म की जब डगमगा रही।
उलटी हवा के जोर से चक्कर में आ रही॥
मल्लाहों की अविद्या से सद में उठा रही।
महफूज़ जाको छोड़ भँवर में थी जा रही॥
चप्पू लगा के वेद का उस को बचा लिया।
विद्या के बल से उसको किनारे लगा दिया॥
जो मुशकिलें थीं धर्म्म की आसान कर गये।
दुनिया में सर्व सुक्ख के सामान कर गये॥
वेदों के मुनकरों को पशेमान कर गये।
मग़रिब के आलिमों को भी हैरान कर गये॥
क्या क्या न अपने देश पै अहसान कर गये।
आखिर को अपनी जान भी कुरबान कर गये॥

गजल २१६

ऐ निरंकार अय निरञ्जन तेरी माया के निसार।

जिससे ज़ाहिर है यहां नैरंगी ये लैलो निहार ॥ १ ॥
आवो गिल में उस के तब्दील और नवहुल की सरिश्त ।
जर्रे २ में है उस के वेसवाती आशकार ॥ २ ॥
कौन है जिसपर न इसका वार दुनिया में चला ।
कौन है जो दाम का इसके न हो गुजरा शिकार ॥ ३ ॥
नाम तक भी उनकी नसलों का नहीं अय जानने ।
ऐसे हो गुजरे हैं दुनिया में बहुत से नामदार ॥ ४ ॥
चर्ख को था रश्क जिनकी शान आली देखकर ।
ऐसे मिट्टी में मिले हैं सैकड़ों वाला तवार ॥ ५ ॥
जब यह इक क़ानून कुदरत है तो फिर अय खाक हिंद ।
गर्दिशे दौरान् का तुझपर किस तरह चलता न वार ॥ ६ ॥
तेरी शान अय आर्यावर्त्त एक मुसतस्ना न थी ।
चश्म जख्मे दहिर का होता न क्यों एक दिन शिकार ॥ ७ ॥
वह बलन्दी और यह पस्ती वह कमाल और यह ज़वाल ।
हर कमाले रा ज़वाले कह गये हैं होशियार ॥ ८ ॥
देखते ही देखते क्या हो गया वाहसता !
रफ़्ता २ यह तनुज्जल तेरी शान् अय फिर्दगार ॥ ९ ॥
वह चमन जो रूह था गुलजार कुदरत का कभी ।
इस से कुछ ऐसी गई आई न फिर मुड़ कर वहार ॥ १० ॥
मरसिया कोई अगर्चे विगड़े शायर का है काम ।
मुस्तहक चार आंसुओं के हैं सलफ के नेकनाम ॥ ११ ॥

गजल २१७

गर सुनायें आज कल हम कुछ भी हाले पास्तां ।
तो यक़ीनन तुम उसे समझो खयाली दास्तां ॥ १ ॥
घट गये हैं आज कुछ हम गर्चे मानिन्दे हिलाल ।

है ज़वाल अपना कमाले वे मिसालों का निशान ॥ २ ॥
नाम वहशी हो गया है गर्व अब इस का लक़ब ।
एक दिन उस्ताद आलिम था यही हिन्दोस्तान ॥ ३ ॥
किस का दिल गुर्दा था जो होता हमारा हम सफ़र ।
कब हमारे पास का था कोई फिर्दे कारवां ॥ ४ ॥
वाक़्यों से है मुबरहन शानो अज़मत आप की ।
क्या बयां की हाजत इसमें है यह आलम पर अयां ॥ ५ ॥
जम गये जिस जा क़दम झंडा भी उस जा गड़ गया ।
थी तकापू से हमारी फ़तह व नुसरत हम इनां ॥ ६ ॥
थी चमक वर्क फ़ना खांडों की अपने बर्क़ को ।
मानते फौलाद हिन्दी का था लोहा कुल जहां ॥ ७ ॥
इल्म था हम में कपिल का और तहव्वर राम का ।
था हमारे इल्मो ताकत से मुसख़्ख़र कुल जहां ॥ ८ ॥
था तो हक़ पै और हिम्मत पर अपनी पतवार ।
लेके चलदेते थे परदेश एक तरकस और कमान ॥ ९ ॥
मुल्कगीरी के एवज़ था मुल्कदारी अपना काम ।
तेग़ अकसर होती थी अपनी हिफ़ाज़त में रवां ॥ १० ॥
मूजदे हैयत तबीयातो रियाजी थे हमीं ।
सब से अव्वल मुमालिकत दारी के बानी थे हमीं ॥ ११ ॥

ग़जल २१८

क्या बतायें तुम को हम क्या २ फ़ज़ीलत हम में थी ।
भीष्म की ताक़त युधिष्ठिर की सदाक़त हम में थी ॥ १ ॥
मानता था अपने तिरसूलों का लोहा एक जहां ।
क्षत्रियों की यह जसारत और जलावत हम में थी ॥ २ ॥
चन्द्र वंशी और सूरज वंशियों के नाम से ।
चर्ख पर लरज़ां थे मोहिरो मह्ये सौलत हम में थी ॥ ३ ॥

कुत्व आमा हम न हिलते थे कभी मैदान से।
ऐसी पामर्दी थी और यह इस्तक़ामत हम में थी ॥ ४ ॥
अपने तो अपने थे ग़ैरों को समझते थे अज़ीज़।
जोश हमदर्दी यहां तक और मुहब्बत हम में थी ॥ ५ ॥
जुहद और परहेजगारी में थे यक़ाये जमां।
आदमी थे पर फ़िरिश्तों की भी ख़िसलत हम में थी ॥ ६ ॥
थे क़वानीन रस्मो अख़लाक़ ज़मां से मुंतख़ब।
मस्लहत और अक्ल पर मबनी शरीअत हम में थी ॥ ७ ॥
यूं तो थी दुनिया की शामिल हम को सारी न्यामतें।
सब से बढ़ के एक इस्तग़ना की दौलत हम में थी ॥ ८ ॥
फ़तह मुल्की की तरफ़ तो यहां तवज्ज हो न थी।
गर्चे तसख़ीर जहां करने की ताक़त हम में थी ॥ ९ ॥
हां हमेशा काम था तस्ख़ीर तालीफ़ कलूब।
इसलिये इस दर्जे रूहानी रियाज़त हम में थी ॥ १० ॥
हिफ्ज़ जानो माल इज्जत राजनीती के नियम।
थे जहां में अव्वलीं तहज़ीब फैलाने को हम ॥ ११ ॥

गजल २१६

थी वह भीष्म की जलवत और हर्बे अर्जुनी।
जिससे कांपे थी ज़मी और चर्ख़ की छाती छनी ॥ १ ॥
हाथ क़ब्ज़े पर न था चौगिर्द था जिसने अदू।
कांपती थी बर्क़ थे तलवार के ऐसे धनी ॥ २ ॥
गुर्ज़ के सदमे दिला देते थे बुनियादे जमीं।
चर्ख़ का दिल छेदती थी अपने भाले की अनी ॥ ३ ॥
शूरवीरी की हमारे ग़ैर भी थे मद्दह ख़्वां।
एक अदना बल था फ़ील-अफ़गनी शेर-अफ़गनी ॥ ४ ॥
राजपूतों का तहव्वर दहर में मशहूर था।

किसको हो सक्ती है भो इस में जाये दमज़नी ॥ ५ ॥
पास इज़्ज़त पास इफ़्फ़त मर्दोज़न में एक था।
कितनी भारतवर्ष में हो गुज़री होंगी पद्मनी ॥ ६ ॥
जौहर इस्तक़लालो हिम्मत का था हम में इसकदर।
कब अधूरी छोड़ते थे बात जो दिल में ठनी ॥ ७ ॥
था हर एक दिल से नुमायां जौहरे सिदक़ो सफा।
दोस्ती में दोस्ती थी दुश्मनी में दुश्मनी ॥ ८ ॥
नूर हक़ से भी मुनव्वर क़ल्ब अहिले क़ौम था।
ज्ञान और गुन की यां फैली हुई थी रोशनी ॥ ९ ॥
थे सबब रंगो दिलाज़ारी न था अपना असूल।
तब मुख़ालिफ़ से बिगड़ी ज्ञान पर जब आबनी ॥ १० ॥
क्या बतायें अहिल आलम तुमको हम क्या चीज़ हैं।
अब तो हम सब से गये गुज़र हैं और नाचीज़ हैं ॥ ११ ॥

गजल २२०

हम ने ही यूनानियों को सब सिखाये थे इलुम।
थीं हमारी फिलसफा और इल्म की आलम में धूम ॥ १ ॥
हिन्द ही में कुछ न था महदूद अपना एतबार।
था हमारा शोहरा हज्ञों क्या अरब क्या मिस्रो रूम ॥ २ ॥
शशजहत में थे हमारे जलवागर षट शास्तर।
रोशनी चारों तरफ वेदों से फैली बिलअमूम ॥ ३ ॥
हैं यह राइज इल्म जितने उनके मूजिद हैं हमीं।
फिलसफ़ा, मंतक, जबाँदानी, रियाज़ी वा नजूम ॥ ४ ॥
आफ़ताबे इल्मो दानिश हिन्द में रख़शाँ था जब।
जिहल की आलम पे छाई थीं घटायें झूम झूम ॥ ५ ॥
हम कड़े रहते थे आपड़नी थी जब हम पर कड़ा।
हम न घबड़ाते थे जब होता मसाइब का हजूम ॥ ६ ॥

सच्ची आज़ादी थी यकसर मुल्क में फैली हुई।
थी गुलामों और कनीज़ों के न बिकने की रसूम ॥ ७ ॥
काहली खाना नशीनी की नहीं थीं आदतें।
जब जरूरत होती कुल दुनिया में हम आते थे घूम ॥ ८ ॥
मुमलकतदारी यहां तहज़ीब से थी हम रदीफ़।
सर झुकाकर इल्म के दौलत क़दम लेतीं थी चूम ॥ ९ ॥
था इल्म के साथ इल्म और इल्म के हमराह अमल।
दोनों दुनिया उसकी थी जिसने लिये अपने कदम ॥ १० ॥
नाम आवर सारे आलम में थे दानायान हिन्द।
याद होगी अय जमाने तुझ को भी वह शान हिन्द ॥ ११ ॥

गजल २२१

शोहरा अपना था फकत क्या एक हिन्दोस्तान में।
धाक थी अपनी बँधी ईरान और तूरान में ॥ १
माहिर हिकमत से हमारी रोशनी आलम में थी।
जिस का एक जर्रा हुआ परतोफगन यूनान में ॥ २
जो बताते हैं हमें खरमन का अपने खोशा चीन्।
हो के मदहोश अपनी हुब्बे कौम के हंजान में ॥ ३
इस ढिठाई से न धोखा दे सकेंगे खलक को।
खोशा चीनी उनकी खुद साबित है हिंदोस्तान में ॥ ४ ॥
हिन्द से यूनान और यूनान से पहुंचा अरब।
कब कहीं से फिलसफा आया था हिन्दोस्तान में ॥ ५ ॥
आज जो हम को बताते हैं हुनर की खूबियां।
कल बुजुर्ग उन के सबक लेते थे हिन्दोस्तान में ॥ ६ ॥
अलगरज यह सच है मूजिद हैं हमीं हर इल्म के।
हम थे उस्तादे जहां इस आलिमे इम्कान में ॥ ५ ॥
गर मसाइल फिलसफा के हिन्द में होते न हल।

कौन रख सक्ता कदम योरुप से इस मैदान में ॥ ८ ॥
कौन हो सक्ता है मुनाकिर वाकई हालात से।
रोशनी मशरिक से फैली है फ़रंगिस्तान में ॥ ९ ॥
बज्म क्या और रज़्म क्या दोनोंमें थे हम बे अदील।
गर कलम में नोश था तो नेश था पैकान में ॥ १० ॥
चर्ख़ अब भी है वही दुनियां वही चर्ख़ो जमी।
गौर से लेकिन जो अब देखा तो बाकी कुछ नहीं ॥ ११ ॥

गजल २२२

अय ज़माने क्या निगाहों में युही थे हम हक़ीर।
एक दिन वह था कि थे हर वस्फ में हम बे नज़ीर ॥ १ ॥
नूर ईमान से तजल्ला था यहां हरएक का दिल।
थे ग़नी एक धर्म की दौलत से सब शाहो फ़कीर ॥ २ ॥
एन दानाई पै मबनी था हमारा अखज़ो तर्क।
कौन से दिन हम हुये थे यूं लकीरों के फ़क़ीर ॥ ३ ॥
वज़ा के पाबन्द थे तो दोस्ती मे जां निसार।
थे तवाज़ा में कमाल तो रास्ती में मिस्ल तीर ॥ ४ ॥
जो निकलता था जबां से अपनी टल सक्ता न था।
हां यह मुम्किन है कभी मिट जाय पत्थर की लकीर ॥ ५ ॥
ज़ात से वाक़िफ़ था वह ही जो कि आगाहे सिफ़ात।
थे वही रोशन दिमाग़ इस जा कि थे रोशन ज़मीर ॥ ६ ॥
दौलते दीन से कोई दौलत न बढ़कर थी पसन्द।
हाथ फैलाये दरे हक़ पर थे सब मीरो फ़कीर ॥ ७ ॥
थी न बख़शिश में हमें अपने पराये की तमीज़।
हम से अक्सर बादशाही ले गये हैं राहगीर ॥ ८ ॥
मंज़िलत बढ़कर हकूमत से थी हिकमत की यहां।
आलिमों को सर झुकाते थे सदा साहिब सरीर ॥ ९ ॥

दामिने दीन पाक था आलुदगी से सर बसर।
थे न हम दामे तअस्सुब और तौहम के असीर ॥१०॥
अपना मज़हब कुल जहां के मज़हबों की जान था।
बल्के दुनिया के मज़ाहिब की वह गोया कान था ॥११॥

गजल २२३

देखकर ख्वाने नुअम क्वाकब अफर जाते थे हम।
तार ज़र पर नग़मये तौहीद को गाते थे हम ॥ १ ॥
थी यह इस्तग़ना कि बस एक जातबारी के सिवा।
कब किसी के सामने यूँ हाथ फैलाते थे हम ॥ २ ॥
था मज़ा सब न्यामतों का हेच इस के सामने।
दाने दुनके जंगलों में से जो चुन लाते थे हम ॥ ३ ॥
थी मईशत की कमी हम को न तोड़ा कूत का।
रेत में भी हाथ डाले से तिला पाते थ हम ॥ ४ ॥
था यह गैरत का हरारा और यह जोश तमकनत।
गिर्द अपने कोई पाता तौ तड़प जाते थे हम ॥ ५ ॥
काम जो लेते थे पूरा उस को करके छोड़ते।
यूं मशक्कत और मेहनत से न कचयाते थे हम ॥ ६ ॥
बालवर करले मुकाबिल पर किया करते थे वार।
सर पै दुश्मन के सदा ललकार कर आते थे हम ॥ ७ ॥
था सरे मू भी न अपने कौल और फ़ेलों में फ़र्क।
दिल में जो होता ज़ुबां पर भी वही लाते थे हम ॥ ८ ॥
झूठ तूफ़ां हम को शेखी मारना आती न थी।
जो ज़ुबां से कहते उसको कर के दिखलाते थे हम ॥ ९ ॥
हम ज़माने भर को देते थे सबक असलाह का।
और गुर देश उन्नती के सब को बतलाते थे हम ॥१०॥

जानते थे रंग ढंग इक एक इस संसार का।
हम पै हर उक़दा खुला था खल्क के असरार का ॥११॥

गजल २२४

इल्मो दानिश से ज़माने में थे नीको नाम हम।
थे न यूं बदनाम हां अय गर्दिशे ऋ़य्याम हम ॥ १ ॥
होके हैरान कह उठोगे क्या वही भारत है यह।
तुम को गिनवायें अगर गुज़रे हुमों के नाम हम ॥ २ ॥
था यह इस्तक़लालो हिम्मत छेड़ दते थे जो काम।
अय अजीज़ो उस में फिर रहते थे कम नाकाम हम ॥ ३ ॥
हर तकल्लुफ़ से मुबर्रा थी हमारी चाल ढाल।
पेशो अशरत से सदा रखत थे तर्के नाम हम ॥ ४ ॥
ढांप देते थे वहीं जोश अखवत से उसे।
ऐब को करते न थे औरों के तश्तअज़बाम हम ॥ ५ ॥
इस लिये दुनिया में कम होती थी नाकामी हमें।
सोच लेते थे हर एक आग़ाज़ में अंजाम हम ॥ ६ ॥
अपना यह ईमां न था फिर करते दुश्मन से दगा।
मान लेते सुलह का एक बार जब पैगाम हम ॥ ७ ॥
दिल भी था मज़बूत अपना दस्तो बाज़ू की तरह।
थे न यूं सुस्त पतकाद और बन्दये अदहाम हम ॥ ८ ॥
था हकूमत गर्चे शख्सीपर जमाअत का था रंग।
आप ही महकूम थे और आप ही हुक्काम हम ॥ ९ ॥
इस क़दर दुर्गत न होती और एसी दुर्दशा।
मानते गर अपने सच्चे धर्म के अहकाम हम ॥ १० ॥
हैं जो मबनी सर बसर मख्लूक के आराम पर।
पाई ग़ैरों ने तरक्की चलके जिन अहकाम पर ॥ ११ ॥

गजल २२५

वार जब करती थी हम पै तेग दोरां सैकड़ों।
तब भी होते जब्त से काटे नुमायां सैकड़ों ॥ १ ॥
इस तरह अपने हवाइज़ में न थे बेदस्तो पा।
मुश्किलें गैरों की हम करते थे आसां सैकड़ों ॥ २ ॥
इस क़दर महिमा निवाजी और थी दारियादिली।
आदमी घरके जो दस खाते तो महिमा सैकड़ों ॥ ३ ॥
रास्ती और पाकबाज़ी के थे यां सब के असूल।
हम ने माना आदमी थे हम में नादां सैकड़ों ॥ ४ ॥
यह तरीका था हमारा औ खुश अखलाकी यह थी।
शाकी एक दो थे हमारे तो सनाख्वान् सैकड़ों ॥ ५ ॥
जो बढ़ा आगे क़दम रण में न पीछे हट सका।
सीने पै खा २ के हम लड़ते थे पैकां सैकड़ों ॥ ६ ॥
चप्पा २ है हमारी फतहमन्दी का गवाह।
हमने मारे थे इन्हीं दस्तों में मैदान सैकड़ों ॥ ७ ॥
राम अर्जुन भीम पृथ्वीराज विक्रम और भोज।
हो गये हैं सैकड़ों इस शान के यां सैकड़ों ॥ ८ ॥
था हमारे नाम सिक्का मुल्क इल्मो फ़ज्ल का।
मिस्र और ईरान से थे तिफ़्ले दबिस्तां सैकड़ों ॥ ६ ॥
हिन्द जिन से था मुनव्वर जैसे अनजुम से फलक।
जीनतो दशतो जबल थे अहिल इर्फ़ान् सैकड़ों ॥ १० ॥
जाय इबरत है यह ऊज ऐसी तरक्की और कमाल।
देखकर अब तुमको याद आती है शाने जुलजलाल ॥११॥

गजल २२६

दर हमेशा रण में रहते थे हमीं हर आईना।
है तहव्वर औरशुजाअत अपनी सब पर आईना ॥ १ ॥

चार आँख रण में करता हमसे थी किसकी मजाल।
रोब अपना सब के था चार आईनों पर आईना ॥ २ ॥
हमसे की जिसने दग़ा फल उसने पाया आख़िरश।
खींचता है अपने बदख्वाहों पै खंजर आईना ॥ ३ ॥
थे सभी हैरान हमारी पाकबाज़ी देख कर।
था सफ़ाई दिल हमारी देख शशदर आईना ॥ ४ ॥
दस्तकारी और सनअत में थे हम चम तेज़ दस्त।
ले गया था हिन्द हाँ से तो सिकन्दर आइना ॥ ५ ॥
साफ़ दिल थे थी न आपस में कदूरत और दुई।
अक्स क्या हो देख लो रख आईने पर आईना ॥ ६ ॥
पाक नफ़सी अपनी हो सकी नहीं साहिब इससे है।
दहिर में मशहूर जब तक पाक मंज़र आईना ॥ ७ ॥
वक्त पर आईना दिखलाते न थे औरों की तरह।
था हमारे सीने में साफ़ी का जौहर आईना ॥ ८ ॥
हमको खुद वीनी खुद आराई से नफ़रत थी ज़िबस।
योताज़न दरियाय हैरानी में था हर आईना ॥ ९ ॥
दिल में होता था जो अपने लव पै आता था वही।
थे न औरों की तरह हम तूतिये हर आईना ॥ १० ॥
इस क़दर अजमल पै हमको ख़ाकसारी फ़ख्र थी।
आईने को कलब की आईने दारी फ़ख्र थी ॥ ११ ॥

गजल २९७

लग गया है मुद्दतों से गर्दें अब इस को गहन।
महिर दीनू था दहिर में अपना कभी परतो फ़गन ॥ १ ॥
था हमारे धर्म का इकनाफ़ आलम में असर।
गुंजेये आफ़ाक थे अपने महा यज्ञ और हवन ॥ २ ॥
सौ स्याने एक मत था फूट आपस में न थी।

यां हम आहंगीये कुदरत की तरह था मुनियन ॥ ३ ॥
बात जो करते थे हम खाली न थी वह लुत्फ़ से ।
सादगी में भी निकलता था हमारी बांकपन ॥ ४ ॥
सर पै जो पड़ती थी आसां या कड़ी सहते थे सब ।
था मगर हर वक़्त दिल से शुक्र रब्बेजुलमनन ॥ ५ ॥
जब किसी अहले वतन पर आंच आती देखते ।
आग में भी कूद पड़ते थे यह था हुब्बे वतन ॥ ६ ॥
पैर थे तो आहनी राय और जबां फौलाद दस्त ।
हम में ऐसे रायजन थे और ऐसे तेगजन ॥ ७ ॥
जिनकी हैबत के असर से शेर जाते थे दहल ।
क्या हुये अफसोस यह शेर अफ़गानाने पीलतन ॥ ८ ॥
शूर वीर और सूर्मा वह अ ग्यों के क्या हुये ।
धर्म के रक्षक थे जो और राक्षसों के बखकन ॥ ९ ॥
क्या हुये वह पहिलवानाने क़वी बालो ज़री ।
जिनकी हैबत से लरज़ता था पड़ा चर्खे कुहन ॥ १० ॥
बाग हिम्मत और शुजअत के वह लाले क्या हुये ।
मुल्क की इज़्ज़त पै वह जां देने वाले क्या हुये ॥ ११ ॥

गजल २२८

क्या सराहें तुझ को ऐ हिन्दोस्ताने नामदार ।
ज़िहन में भी अब नहीं आता जो था तेरा वकार ॥ १ ॥
सर्द क्या था फर्द हर बूटा तेरा ऐ बागे हिन्द ।
हर रविश से तेरी था बागे अरम के दिल में खार ॥ २ ॥
तुझ में वह गुन थे कि हैं अगियार तक मद्दह सरा ।
खाक पाके हिन्द हैं औसाफ़ तेरे बेशुमार ॥ ३ ॥
तेरे आईनो क़वानीं का है यह सारा तुफ़ैल ।
नाम कसरा का जो दुनिया में हुआ निस्फुलनिहार ॥ ४ ॥

एक दिन वह था तेरा लगगा न खाता था कोई।
कर दिया आज इनकलाबे दहिर ने उजड़ा दयार ॥ ५ ॥
येतराफ अहसां का है गर इक़्तज़ा इन्साफ़ का।
तो है तेरा बन्दये अहसां जहां में हर दयार ॥ ६ ॥
गर्चे आज अय आर्य्यावर्त ऐसी दुर्गत है तेरी।
एक दिन दुनिया में था तू मायये हर अफतखार ॥ ७ ॥
रास्तबाज़ी थी तेरी आफाक में जरबुल मसल।
था मुसल्लुम दिल पै गैरों के भी तेरा एतबार ॥ ८ ॥
कुत्ब से ताकुत्व है तेरी बुजुर्गी का सबूत।
क़ाफ़ से ताकाफ़ है आलम तेरा मदहत गुज़ार ॥ ९ ॥
था दरखशां महिर इल्मो फ़ज़्ल तेरी खाक पर।
जब कि था अब्रे जिहालत से जहां तारीको तार ॥ १० ॥
जिक्र औसफे गुजिश्तां गर्चे हलकी बात है।
भूल जायें किस तरह लेकिन कि कल की बात है ॥ ११ ॥

गजल २२९

रंग बदलेगी यहां रफ़्तार दौरां सैकड़ों।
गुल खिलायेगी यहां बादे बहरां सैकड़ों ॥ १ ॥
लाल पैदा मादने कुदरत से करती जायगी।
तावशे खुरशेद बसती अबरो बारां सैकड़ों ॥ २ ॥
अब्र रहमत अपन इक छींटे से करता जायगा।
रश्क गुलज़ार अरम दशतो बयाबां सैकड़ों ॥ ३ ॥
करती जायेगी शिगुफ्ता हर बरस बादे बहार।
अपने इक झोंके से यां उजड़ी गुलिस्ता सैकड़ों ॥ ४ ॥
खासये तबई न बदलेगा अनासर का कभी।
खाक से उठेंगी सूरत हाय पिनहां सैकड़ों ॥ ५ ॥
कब रुकेंगे शगल से मश्शातये कुदरत के हाथ।

ज़द से हस्ती पर चुनी जायेंगी अफशां सैकड़ों ॥ ६ ॥
पेचतावे इश्क़ को दिन रात छोड़ेगा शहूद ।
शाहिद हस्ती के रुख पर जुल्फ पेचाँ सैकड़ों ॥ ७ ॥
हर कहीं उभरते रहेंगे रोज़ पैदा दहिर में ।
हौसला और हिम्मते मर्दाना मैदाँ सैकड़ों ॥ ८ ॥
आयगे दुनिया के दंगल में बड़े खम ठोंकते ।
रश्क सामो रुस्तमो गौदे नरेमान सैकड़ों ॥ ९ ॥
पायेंगे तौलीद वतने मादरे गेती से रोज़ ।
ग़ैरते सुकरातो अफलातून दौराँ सैकड़ों ॥ १० ॥
लेकिन ऐ यक्ताय आलम हिन्द जिन्नत आशियां ।
तेरा सानी ता अबद पैदा न होवेगा यहां ॥ ११ ॥

गजल २३०

हम को पहिचानेगी क्या तू अय सदी उन्वीसवीं ।
अब न वह दिन हैं न वह रातें न वह चर्खे जमीं ॥ १ ॥
जो अनासर पहले थे प्रविष्ट इस ब्रह्माण्ड में ।
शायद अब वह कायनाते दहिर में आमल नहीं ॥ २ ॥
सर बसर बदली हुई है बाग़ आलम की हवा ।
पर हैं रेगे वक्त पर पसमांदा नकशे पा कहीं ॥ ३ ॥
क्या बतायें तुझको किस २ कान के हम लाल हैं ।
क्या नहीं छानी है तूने हिन्द की कुल सर जमीं ॥ ४ ॥
हमको था जिस जौहर अक़्दस से हासिल इमतियाज़ ।
अब तलक पाते हैं हम में उसको सच्चा नुक़्ताचीं ॥ ५ ॥
दान पर उपकार परमेश्वर की भक्ती और दया ।
हम में है थोड़े बहुत मौजूद अब तक हर कहीं ॥ ६ ॥
जो खुशी होती है खिदमत और मदद में गैर की ।
हम समझते हैं उसे खुशियों में अब तक बेहतरीं ॥ ७ ॥
है करामत खस्फ़ अपनी कौम फखरे दीनियत ।

हैं निशाना अहदे पेशीं की जहां में एक हमीं ॥ ८ ॥
धर्म में आया न कुछ हुस्ने अक़ीदत से खलल ।
गरदिशें हम पर न क्या २ कितने नाज़िल कर गईं ॥ ९ ॥
सूरतें आईं न क्या क्या अपने वाद इस्टेज पर ।
लेकिन आज उनमें से बहुतों का पता मिलता नहीं ॥ १० ॥
अव्वलीं मज़हब हो देरीना तरीं मिल्लत हो जो ।
मुस्तहक क्या इक तवज्जह की नहीं वह दोस्ती ॥ ११ ॥

गजल २३१

सच बता अय वक़्त बाजूं अब कहां ले जायगा ।
क्या परे तहतुलसरा के भी कहीं ले जायगा ॥ १ ॥
है तनज्जुल सा तनज्जुल और कर तो हमनशीं ।
इस कदर हाले तबाह देखा न देखा जायगा ॥ २ ॥
नूर ने महिरे तरक्की के किया अपने नऊद ।
फिर न सूरज कोई ऐसा चर्ख पर गहनायगा ॥ ३ ॥
देख यह रूदाद हर आंख अश्क खूं भर लायगी ।
हर कलेजा सदमये हसरत से मुँह को आयगा ॥ ४ ॥
रूये हस्ती से मिटीं अफसोस क्या क्या सूरतें ।
चश्म वा होगा मुरक्क़ा जब यह देखा जायगा ॥ ५ ॥
जर्रे २ से अयां नैरंगीये लैलो निहार ।
मुद्दई जब आंख खोलेगा तो सब खुल जायगा ॥ ६ ॥
है तरक्की से तनज्जुल और तनज्जुल से अरूज ।
यह असूल अहवाल अक़वामे जहां से पायेगा ॥ ७ ॥
अय दिले नादां यह दिलदारी की बातें कब तलक ।
कब तक इस जिक्रे सलफ़ से दिलको तू बहलायगा ॥ ८ ॥
किस तरह छाती पे सिल रखलें करें पत्थर का दिल ।
हम से तो रोना अजीजो वह न रोया जायगा ॥ ९ ॥

क्यों न हम मुर्दों में करलें तुझको शामिल हाय कौम ।
हम से तो यह मरसिया हरगिज़ न गाया जायगा ॥१०॥
बस खमोश ऐ कैफ़ी महज़ुन न कुदरत हक़ को भूल ।
आप रोरो कर अज़ीज़ों के रुलाने से हसूल ॥११॥

गजल २३२

तुम ने हाल अपने बुज़ुर्गों का जो अब तक है सुना ।
कहने वाले का नहीं हरगिज़ यह इससे मुद्दआ ॥ १ ॥
नशये माज़ी में तुम सर शार होकर खींचलो ।
सामने आंखों क कलयुग में वह सतयुग का समा ॥ २ ॥
हम कभी ऐसे थे जिनकी हमसरी मुमकिन नहीं ।
इस ग़रूर और ज़ोम में होना न हरगिज़ मुबतला ॥ ३ ॥
गो यह सच है वक्त रफ्ता हाय फिर आता नहीं ।
काश सुनकर हमको दौरान सलफ़ का माज़रा ॥ ४ ॥
खून में इक ज़ोश आये दिल में इक गैरत समाय
और हम को हिम्मते मर्दाना का हो आसरा ॥ ५ ॥
वह नहीं हैं गर्चे हम पर यादगार उनकी तो हैं ।
नक़्श पा से मंज़िल मक़सद का मिलता है पता ॥ ६ ॥
वह इमारत और क़िला हमने माना अब नहीं ।
खून तो वह ही रगों में है हमारी अज़्दहा ॥ ७ ॥
हो चुका जो कुछ है पहले अब भी नामुमकिन नहीं ।
हाय मायूसी न कर तू इस तरह बेदस्तो पा ॥ ८ ॥
हां अब ऐ उम्मीद तू मुर्दा दिलों में जान डाल ।
दिल बढ़ा हिम्मत बढ़ा और हौसला सब का बढ़ा ॥ ९ ॥
हम अगर में काम हिम्मत और इस्तक़लाल से ।
पायें परमानन्द हो परमात्मा की यह दया । १० ॥
क़ौल है कफ़ी यह एक दाना का कैसा मुस्तनद ।
जो मदद अपना करे हक़ उसकी करता है मदद ॥ ११ ॥

गजल २३३

थे तुझ में ऐसे कामिल हिन्दोस्तान पहले।
दुनिया में तेरी चमका इल्मी निशान पहले॥
आते नहीं नज़र क्यों वह विद्वान् पहले।
थी संस्कृत जिनकी असली जबान पहले॥
रहता था काम जिनको वेद और शास्त्र से।
वह अय फ़लक छिपाये तू कहां नज़र से॥ १॥
तहज़ीब और तमद्दुन जिनका सदा था पेशा।
व्योपार और खेती करते थे जो हमेशा॥
सत् था जो उनका खांडा तो खुल्क उनका तेशा।
था इल्मो फ़न का अपने हर एक शेर बेशा॥
खाते थे देश हित जो दिल में तीर पहले।
हर एक अदा में उनकी था बांकपन हमेशा।
रखते थे गो वह अपना सादा चलन हमेशा॥
अय सर ज़मीं कहां हैं वह शूर वीर पहले॥ २॥
आती थीं उन से बूयें हुब्बे वतन हमेशा।
खुशबू से थे मुअत्तर जिन के चमन हमेशा॥
अय गुल सितान भारत! तेरे कहां हैं वह गुल।
शैदा थे मुल्क सारे जिन पर बरंग बुलबुल॥ ३॥
जिन के मिज़ाज में थी हर दम वफ़ा शआरी।
अपनों से थी मुहब्बत अग़ियार से थी यारी।
करते थे धर्म की जो हर वक़्त पासदारी॥
अफ़सोस वह कहां हैं पहले से ब्रह्मचारी।
वह माहऋषी बता तू गंगा कहां किधर है।
करते थे जो तपस्या बैठे तेरे किनारे॥ ४॥

वैश्यों के वह कहां हैं अब खानदान पहले।
मुलकी तिजारतों का था जिनको ध्यान पहले॥
तूने फ़लक मिटाया उनका निशान पहले।
करते थे जो ब्राह्मण विद्या का दान पहले॥
लेते थे बात पर जो तलवार सूत पहले।
भारत कहां हैं तेरे वह राजपूत पहले। ५॥
देते नहीं दिखाई वह जांनिसार पहले।
था मुल्की खिदमतों का जिन पर मदार पहले॥
जो थे द्विज वर्ण के खिदमत गुजार पहले।
भारत! शूद्रों में जिन का शुमार पहले॥
अब एक भी नहीं है जो थे हज़ार पहले।
आते नज़र हैं पैदल जो थे सवार पहले॥ ६॥
अय बाग़ हिन्द क्यों तू उजड़ा बतादे हमको।
बद वक़्त अपनी बीती कुछ तो सुना दे हमको॥
पहले से वह हितैषी अब तो दिखा दे हमको।
ग़ायब है क्यों नज़र से इसका पता दे हमको॥
तारीख़ देखने से क्या हो सरूर उन की।
पायें न दर्शनों को जब खाक गीर उन की॥ ७॥
खाकर जो रहिम तुझ पर भेजा ऋषी खुदाने।
लाया था साथ अपने जो धर्म के खज़ाने॥
अन्मोल वह वचन जब अपने लगा सुनाने।
जो कौम के गुरू थे इसको लगे सताने॥
प्रचार था जो उसका पर उससे मुंह न मोड़ा।
आखिर को तेरा भारत उस ने भी साथ छोड़ा॥ ८॥
मरकज से गिरगया है अय हिन्द तू बहुत अब।
तेरी भँवर किश्ती निकलेगी देखिये कब॥
भारत के बासियों में फैली हुई है बेढब।

है यह दुआ खलक की हरवक्त तुझ से यारब ॥
भारत के हिन्दुओं का फिर हो दिमाग़ रोशन ।
तौहीद का हो इन के दिल में चिराग रोशन ॥ ६ ॥

लावनी २३४

टेक-आज्ञा में जिनकी जहान था उनके कुल में हमीं तो हैं ।
सात द्वीप नौ खण्ड बीच में जिनका मान था हमीं तो हैं ॥

चौक १

चौदह विद्या जो निधान थे उनके कुल में हमीं तो हैं ।
जिनसे चतुर थे पशु हैवान, अब ऐसी सन्तान हमीं तो हैं ॥
वेदों का माने प्रमाण थे, उनके कुल में हमीं तो हैं ।
बांचे हैं मिथ्या पुराण अब ऐसी सन्तान हमीं तो हैं ॥
सब विद्याओं की जो खान थे, उनके कुल में हमीं तो हैं ।
सात द्वीप नव खण्ड० ॥

चौक २

ब्राह्मण यहां पूरे गुणवान थे, उनके कुल में हमीं तो हैं ।
मूर्ख हुए जाति अभिमान में, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं ।
सब का जो चाहें कल्याण थे उनके कुल में हमीं तो हैं ।
ठगी की धरली दूकान अब, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं ॥
विद्या का करते थे दान जो, उनके कुल में हमीं तो हैं ।
सात द्वीप नव खण्ड० ॥

चौक ३

ऋषि मुनि जहां ज्ञानवान थे, उनके कुल में हमीं तो हैं ।
भंग चरस में हैं ग़लतान अब, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं ॥

जिनका देव सर्व शक्तिमान था, उनके कुल में हमीं तो हैं।
जिनका इष्ट जड़ पाषाण है, अब-ऐसी सन्तान हमीं तो हैं॥
संस्कृत जिनकी ज़बान थी, उनके कुल में हमीं तो हैं।
सात द्वीप नव खण्ड० ॥

चौक ४

आकाश में चलते विमान थे, उनके कुल में हमीं तो हैं।
रेल देख हो गये हैरान अब, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं॥
भीमसेन बाली बलवान थे, उनके कुल में हमीं तो हैं।
घुटनों पर रख उठें हाथ अब, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं॥
कृष्ण रामचन्द्र समान थे, उनके कुल में हमीं तो हैं।
सात द्वीप नव खण्ड० ॥

चौक ५

ब्रह्मचर्य की जिनको बान थी, उनके कुल में हमीं तो हैं।
बल वीर्य खो, नातवां हुए, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं।
लक्ष संहारी जिनके बाण थे, उनके कुल में हमीं तो हैं।
चूहे का नहीं कटे कान अब, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं॥
अंगद सुग्रीव हनुमान थे, उनके कुल में हमीं तो हैं।
सात द्वीप नव खण्ड० ॥

चौक ६

देशोन्नति का था ध्यान जिन्हें, उनके कुल में हमीं तो हैं।
भारत में कर बैठे हान अब, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं॥
प्राणियों पर देते थे प्राण जो, उनके कुल में हमीं तो हैं।
मद्य मांस को करें पान अब, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं॥
गौ आन पर जिनकी जान थी, उनके कुल में हमीं तो हैं।
सात द्वीप नव खण्ड० ॥

चौक ७

आर्य्यवर्त्त जिनका स्थान था, उनके कुल में हमीं तो हैं।
जिनका मुल्क अब हिन्दोस्तान है, ऐसी संतान हमीं तो हैं॥
बड़े बड़े वहां धनवान थे, उनके कुल में हमीं तो हैं।
भोजन बिन हो रहे हैरान अब, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं॥
विद्या में करते स्नान थे, उनके कुल में हमीं तो हैं।
सात द्वीप नव खण्ड० ॥

चौक ८

सत उपदेश करते थे गान जो, उनके कुल हमीं तो हैं।
कोक शब्द का तोड़ें तान अब, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं॥
सत्य असत्य का करने ज्ञान जो, उनके कुल में हमीं तो हैं।
सुनके सत्य जाये बुरामान अब, ऐसी सन्तान हमीं तो हैं॥
नवलसिंह कहे वेद धर्म पर, धरें ध्यान फिर हमीं तो हैं।
सात द्वीप नव खण्ड० ॥

गजल २३५

कुछ भी रही न हममें प्राचीनता हमारी।
शिष्यों ने छीन ली है स्वाधीनता हमारी॥
संसार में सबों से नीचे गिरे हुए हैं।
विख्यात हो रही है अकुलीनता हमारी॥
चिन्ता सदैव धन की दुख दे रुला रही है।
विद्या बहादुरी में है हीनता हमारी॥
आशा 'नरेश' अब तो सुख की रही न कोई।
मानो हमें न छोड़ेगी दीनता हमारी॥

भजन २३६

टेक-भारत को फेर बनाओ जगत् गुरु।

जैसा कभी था यह देश तुम्हारा, देखो मनूजीमें साफ इशारा।
सबने गुरू इसे कहके पुकारा, वैसे ही फिर बन जावो, जगत्० ॥
जगत् गुरू थे पुरुपा तुम्हारे, जितने हैं देश देशान्तर सारे।
वेद धर्म के थे मानन हारे, तुम क्यों शिष्य कहावो, जगत्० ॥
जितनी हुईहैं यह विद्यायें जारी, पहुंची निकलकर वेदोंसे सारी।
आज कहां गई बुद्धि तुम्हारी, रेल देख घबड़ावो, जगत्० ॥
राजा भागीरथ गंगा लाये, नल नील ने सेतु बंधाये।
लंका से पुष्पक विमान में आये, रामचरित पढ़जावो, जगत्० ॥
राजा युधिष्ठर यज्ञ रचाये देश, देशान्तर से राजा बुलाये।
अर्जुन थे अमेरिका में विघाहे, तुम परदेश न जावो, जगत्० ॥
अत्रि ऋषी ने दौरा लगाया, देश देशान्तरों में घूमके आया।
आके देशों का हाल सुनाया, तुम सुनना भी न चाहो, जगत्० ॥
सब देशों के रहने वाले, गेहूं उर्द के थे खाने वाले।
संध्या हवन रचाने वाले, तुम कुछ तो ध्यान लावो, जगत्० ॥
द्रोणाचार्य्य और अर्जुन प्यारे, धनुर्वेद के थे जाननहारे।
आज कहां गये योधा तुम्हारे, तुम निर्बल कहलावो, जगत्० ॥
कहा गये वह ऋषी तुम्हारे, व्यास कपिल और गौतम प्यारे।
न्याय विदान्त के रचने हारे, षटदर्शन पढ़ जावोरे, जगत्० ॥
कहां गई अब सीता सी नारी, नाम सभाओं में जावें पुकारी।
जिनकी कीर्ति दुनिया मे सारी, अब तुम भी पुत्री पढ़ावो, ज०॥
पुरुष तो पढ़ते हैं विद्यायें सारी, नारी विचारी है निपट अनारी।
इससे ही हो रही हानी तुम्हारी, इनको क्यों न पढ़ावो, जगत्०॥
जबतक वेद प्रचार न होगा, ब्रह्मचर्य्य उद्धार न होगा।
तबतक देश सुधार न होगा, फिर कैसे सुख पावो, जगत्० ॥

गुरुकुल में संतान पढ़ावो, फिर से जहां में गुरु पदवी पावो।
वासुदेव यही धर्म कमाओ, फिर तुम ऋषि संतान कहावो,ज०॥

ग़ज़ल २३७

मुहब्बत कुछ नहीं बाक़ी रही भाई की भाई को।
पड़े हैं खाट पर आता नहीं कोई दवाई को॥ १॥
ज़माना क्या हुआ वह, राम लछमण और सीता का।
गवारा कर सके लछमण न भाई की जुदाई को॥ २॥
दुशाले और कड़े मिलते हैं शादी में तो नाई को।
नक़द लेते तवायफ़ भांड मीरासी सगाई को॥ ३॥
हक़ीक़ी भाई जाड़े में ठिठरते एक रज़ाई को।
धर्मपत्नी बिलखती घर में है एक एक पाई को॥ ४॥
मगर ज़र तो है रंडी के लिये दूध और मलाई को।
और है शोक वेभड़ भी नहीं मिलती लुगाई को॥ ५॥
नहीं वह पूछते त्योहार पर दुख़्तर जमाई को।
मगर हां गुलबदन लाते हैं रंडी की दुलाई को॥ ६॥
पिता माता तो हैं मोहताज रत्ती भर मिठाई को।
मजा करती हैं रंडी चैन से लेकर कमाई को॥ ७॥
करो सादिक हवन तुमभी अब अपने घर सफाई को।
करो वह काम प्यार उल्फ़त बढ़े भाई से भाई को॥ ८॥

भजन २३८

टेक-मत करो हसद से प्यार, कि इसने मुल्क जलाया है।
शहर मथुरा महमूद ने लूटा, फिर मुल्क अपने को लौटा।
ब्राह्मणों ने हसद से सोमनाथ बुलवाके लुटाया है॥ मत०
क्या इसकी कहूं मैं कहानी, इस का जला न मांगे पानी।
मुहम्मद गोरी से जयचंद, हसद ने जा मिलवाया है॥ मत०

इसी हसद के कामों को पढ़ कर, रोते हैं कोने में छुपकर।
इस हसद ने ही भारत का बेड़ा ग़र्क कराया है ॥ मत०
अर्जुन और भीम से योधा, भीषम और कर्ण से योधा।
इसी हसद ने सबको इकट्ठा करके क़तल कराया है ॥ मत०
जिस दिल में हो उस को जला दे, यही भाई से भाई छुड़ादे।
इस सहद ने ही तो राम को आखिर वन दिखलाया है ॥ मत०
खुदग़र्ज़ी को तन जानो तुम, इस हसद को रूह मानो तुम।
दोनों लाज़िम मलज़ूम, तजर्वे ने निश्चय कराया है ॥ मत०
भारत का नसीबा फूटा, महाभारत का गोला फूटा।
चन्द पुरुषों से निकली अग्नि ने सब का तन झुलसाया है ॥ मत०
बृजलाल तू कहदे सब से सब सुने कान दे करके।
मत करो हसद से प्यार कि इस ने मुल्क जलाया है ॥ मत०

गजल २३६

हाय किश्ती हिन्द की थी ग़र्क होने के लिये।
था अविद्या का भँवर उस के डुबाने के लिये ॥
आंधी और तूफ़ान खुदग़र्ज़ी का था छाया हुआ।
नाखुदा हैरान थे तदबीर करने के लिये ॥
छा गया था सब पै आलम बेखुदी बेचारगी।
हाय सब मजबूर थे बे मौत मरने के लिये ॥
हो गई एक बार रहमत फिर जो ईश्वर की इधर।
आगये स्वामी दयानन्द पार करने के लिये ॥
वह सनावर शेरदिल फिर लेके बल्ली वेदों की।
लेचला किश्ती को अपनी पार करने के लिये ॥
ले चलो किश्ती को स्वामी जिस तरह बतलागये।
खूब है रस्ता रंगी यह पार करने के लिये ॥

[७] हमारी वर्तमान दशा और उसका कारण।

गजल २४०

दया मय नाम है तेरा, दया कैसी बिसारी है।
ये निर्दयता हृदय अपने में कैसी ईश धारी है॥
हमेशा दीन दुखियों को, बचाया दुःख से तुमने।
भला फिर कौन भारत से, हुई तक़सीर भारी है॥
यहां पर इक तिहाई नर, न जाने पेट का भरना।
तड़फ़ते अन्न बिन निश दिन, अदम की राह जारी है॥
कहीं पर प्लेग खाता है, कहीं हैज़ा चबाता है।
अनेकों रोग हैं फैले, कहीं पर ज्वर तिजारी है॥
हज़ारों बालिका, बालक विधर्मी दाब बैठे हैं।
यतीमों की बुरी हालत, न जाती हा निहारी है॥
हुये हैं मूर्ख नर नारी, अविद्या की अंधियारी है।
समाजिक दोष हैं कितने, अजब हुई हाय ख़्वारी है॥
हज़ारों धेनु मातायें, छुरी से रोज़ कटती हैं।
न हमदर्दी रही कोई, दशा बिगड़ी हमारी है॥
विनय यह बेनीमाधव की, धरो उर में करो करुणा।
बचाओ देश भारत को फ़क़त आशा तुम्हारी है॥

गजल २४१

ओ आफ़ताब तूने देखा है सब ज़माना।
कह दे युधिष्ठिरी की, वह शान खुसरवाना॥ १॥
उज्जैन राजधानी वह नौरत्न का मजमाँ।
विक्रम की सल्तनत के, अहकाम आदि लाना॥ २॥
हाथों में भीम के वह, फिरना गदा का रण में।
अर्जुन से सफ़शिकन की, जंगे बहादुराना॥ ३॥

काशी के मरघटों में, तुझको नज़र था आया ।
दानी हरिश्चन्द्र, खैरात में यगाना ॥ ४ ॥
हैं बैजूबावरे के, कानों में गीत तेरे ।
और तानसैन का है, तूने सुना तराना ॥ ५ ॥
खिड़की में बैठकर वह, गौरी के बोलते ही ।
आवाज़ पर पिथौरा, का मारना निशाना ॥ ६ ॥
जिसको अहालियाने यूरुप, करें है सिजदा ।
कुछ याद है कपिल की, वह वाहिस फ़िलसफ़ाना ॥ ७ ॥
ऐ आफ़ताव तेरे ही, सामने हुई थी ।
वह व्यास जैमिनी की, तसनीफ़ फ़ाज़िलाना ॥ ८ ॥
तेरे ही इल्म में तो, हां थे हुये मुरात्तिव ।
गौतम कणाद के दो, दर्शन मुहक्किकाना ॥ ९ ॥
धनवन्तरी से तूने, आंखें मिलाईं अपनी ।
सुश्रुत चारक का तूने, देखा दवाई खाना ॥१०॥
ओ खुश नसीव वरसों श्रवण किये हैं तूने ।
शंकर से आलिमों के उपदेश आलिमाना ॥११॥
आती रही नजर है, तुझ को अवध के अन्दर ।
लक्ष्मण की राम की वह, हुव्वे विरादराना ॥१२॥
ऐ पाक दिल तू भूला, हरगिज़ नहीं है अब तक ।
अपने पति से सीता, का प्रेम मुख़लिसाना ॥१३॥
परताप की चिता यह, रोकर है तुझसे कहती ।
क्या सहब कर गया है, मेवाड़ का फ़साना ॥१४॥
है लोहे दिल पै तूने, सब वाक़ियात लिक्खे ।
गुज़रा है तेरा सारा, जीवन मवर्रिखाना ॥१५॥
मालूम है यह तुझको, भूगोल पर सरासर ।
क़ब्ज़ा था आर्यों का, अव्वल से मालिकाना ॥१६॥

उस्ताद ये ही अव्वल सब कामों के रहे हैं।
सब देश मानते थे, इन को ही मौदिवाना ॥१७॥
हम काग़ज़ी शहादत, देते हज़ार लाकर।
होता न पुस्तकों पर, गर जुल्म वहशियाना ॥१८॥
हम शानदार अपना, इतिहास पेश करते।
होते अगर न जोरें, वेदाद जाविराना ॥ १९ ॥
तारीख़ आर्य्यावर्त, अब आफ़ताब तू है।
कर फ़ैसला हमारा, निष्पक्ष मुंसिफ़ाना ॥ २० ॥
इल्मो हुनर को हमने, पाला था अपने घर में।
हासिल हुई थी हम को, पदवी मुरब्बियाना ॥ २१ ॥
शागिर्द हैं बताते, अपना हमें मुख़ालिफ़।
तू करदे इस को वातिल, दावा है अहमक़ाना ॥ २२ ॥
मौजूदगी में तेरी अंधेर है यह कैसा।
क्या रास्ती आदमी को, अब होगई रवाना ॥ २३ ॥
भारत की हिस्ट्री को झुटला रहे हैं नाहक़।
बकते हैं झूठ करके, हक़ गोई का बहाना ॥ २४ ॥
तू इब्तदा से अब तक, नाज़िर है हम सबों का।
तू करदे अपनी ज़ाहिर राये मुरब्बियाना ॥ २५ ॥
तेरे सिवा पुराना, रोशन नहीं है कोई।
तकलीफ़ तुझको दी है, यूं वेतकल्लुफ़ाना ॥ २६ ॥
ओ आफ़ताब बतला हम किस लिये मिटे हैं।
तीरे तनज्जुली के, क्यों हो गये निशाना ॥ २७ ॥
दरवाज़े पै जो अपने, सदियों पड़े रहे थे।
हम चूमते हैं जाकर अब उनका आस्ताना ॥ २८ ॥

गजल २४२

ये आर्य्य जाति तेरा, गो है निशान बाक़ी।

लेकिन नहीं है तुझ में बिलकुल भी जान बाक़ी ॥
सब गोस्त पोस्त तेरा अफ़सोस सड़ चुका है।
अब रह गये हैं तुझ में कुछ इस्तख़्वान बाक़ी ॥ १ ॥
सर पेट हाथ टांगे तेरे अलग अलग हैं।
हैरत है किस तरह हैं तुझ में प्राण बाक़ी ॥ २ ॥
मत भेद से हज़ारों फिरक़े अलग अलग हैं।
जिन में नहीं है कुछ भी जुज़ ऐंठ तान बाक़ी ॥ ३ ॥
हर एक दूसरे का बदख़्वाह होरहा है।
दिल में नहीं किसी के कुछ तेरा ध्यान बाक़ी ॥ ४ ॥
ऐ ! हिन्दु क़ौम तेरे बेटों के पास अबतो।
बस रहगई है खाली ज़िल्लत व हानि बाकी ॥ ५ ॥
इसाई खा रहे हैं मुरदा समझ के तुझको।
खालेगा जो बचा है अहले कुरान बाक़ी ॥ ६ ॥
हालत रही जो ऐसी कुछ दिन में देखलेना।
क़ायम नहीं रहेगा तेरा निशान बाक़ी ॥ ७ ॥
जो थे तेरे मुहाफ़िज दुनिया से चल बसे सब।
कोई नहीं है तेरा अब पासबान बाक़ी ॥ ८ ॥
रामोकृष्ण जैसे सच्चे सपूत तेरे।
सब चल बसे रहे हैं हम नीमजां बाकी ॥ ९ ॥
बीरों से गोद खाली तेरी हुई है माता।
कोई नहीं है तुझ में भीष्म समान बाक़ी ॥ १० ॥
बाज़ार धर्मका अब मिसमार होगया है।
ठगियों की रहगई हैं बिलकुल दुकान बाकी ॥ ११ ॥
पंडे पुजारी संडे जितने महन्त साधू।
खाने को रह गये अब तेरा ही दान बाक़ी ॥ १२ ॥
सब लेठ हट्टे कट्टे मौजें उड़ा रहे हैं।
फ़ाकेकशी को लेकिन हैं तान बान बाक़ी ॥ १३ ॥

ऐ क़ौम तेरा रक्षक परमात्मा ही अब है।
या सिर्फ़ राज इङ्गलिश है मेहरबान बाक़ी ॥ १४ ॥
'सालग' से पुत्र तेरे बल हीन और निरधन।
करने को रह गये हैं आहो फ़िग़ान बाकी ॥ १५ ॥

गजल २४३

अय आर्य्यवर्त तुझ में गर वेद ज्ञान होता।
काहे को नाम तेरा हिन्दोस्तान होता ॥
आर्यों से नाम होता फिर क्यों गुलाम हिंदू।
हिंदू के अर्थ का जो तुझ को ज्ञान होता ॥
ईश्वरोक्त वेद पाठन की रीति रहती जारी।
फिर क्यों पुरान होते, फिर क्यों कुरान होता।
वैदिक विरोधी जग में मत चलते क्यों हजारों।
गर वेद की हक़ीक़त का व्याख्यान होता ॥
ब्रह्मचर्य्य साधते गर भारत क नर व नारी।
राममूर्ति का किस्सा क्या आश्चर्य्यवान होता ॥
मुशकिल था क्या उठाना चौंतीस मन का पत्थर।
गर भीमसैन क्षत्री यां नौजवान होता ॥
वायुयान में न पक्का होते यह अहले जर्मन।
विश्वकर्मा का बना जो पुष्पक विमान होता ॥
क्यों सिफ़त पाती इतनी मोटर व रेल गाड़ी।
मौजूद भोज का गर यां वायूयान होता ॥
बिकता भला फिर घी क्यों तीन पाव एक रुपये का।
गायों का नन्द जी सा जो पासवान होता ॥
सम्पत व सुःख हम से करती ही क्यों किनारा।
इकतरफ़ दुर्योधन सा जो न बेईमान होता ॥
लेकिन शुकर है किश्ती भारत कि थामने को।

मल्लाह स्वामी जी का जो ना पयान होता ॥
धंस जाता देश बेशक उदयसिंह ये रसातल ।
सूत्रोशिखा का बिल्कुल नामो निशां न होता ॥

गजल २४४

अय प्यारे मेरे भारत यह क्या है तेरा ॥
देखा नहीं यह जाता, रंजोमलाल तेरा ॥
कुर्बान हर विलायत थी, इल्म और हुनर पर ।
कहां वह उरूज तेरा कहां यह ज़वाल तेरा ॥
आते थे चारसू से यहां इल्म सीखने को ।
गौतम कणाद सा था सब चाल ढाल तेरा ॥
गोदी के अपने बच्चे अब ग़ैर क़ौम पाले ।
बेचैन हूं न क्योंकर कर कर ख़्याल तेरा ॥
भारत हुआ है ग़ारत देखो नज़र उठाकर ।
सोचो हसद को छोड़ो, कहे झुन्नी मित्र तेरा ॥

गजल २४५

हज़ार अफ़सोस भारत की यह हालत ज़ार कैसी है ।
ऋषि मुनियों की सन्तानों की मिट्टी ख़्वार कैसी है ॥
जहां में जितनी क़ौमें हैं तरक्क़ी करती जाती हैं ।
मगर ये क़ौम हिन्दू नींद में सरशार कैसी है ।
तरक्क़ी देख वैदिक धर्म की झुलसे ही जाते हैं ।
खुदा जाने रक़ीबों पर खुदा की मार कैसी है ॥
हमारे धर्म में तो फ़र्ज़ राजा की इताअत है ।
ये अन्धाधुन्ध फिर कैसी ये मारामार कैसी है ॥
न घबराओ न घबराओ तरक्की धर्म की होगी ।
सरों पर साया अफ़गन हिन्द की सरकार कैसी है ।

ज़रा सोचो तो हम तुम एकही मिट्टी से पैदा हैं।
नहीं मालुम फिर आपस में ये तकरार कैसी है॥

गजल २६६

टेक—तुझे अय आर्य्य क़ौम क्या हो गया,
तुझ में जीवन का नामोनिशां ही नहीं।
तेरी अज़मत औ शौकत किधर को गई,
ऐसी ग़ाफ़िल हुई गोया जां ही नहीं॥
तेरे राम और लछमण किधर को गये,
और दशरथ के सदृश पिता न रहे।
वह भरत से भ्राता हाय क्या हुए,
नज़र आती कौशल्या सी मां ही नहीं।
भीम अर्जुन वह भीष्म बहादुर कहां,
कृष्णचन्द्र से योगी दिलावर कहां।
अभिमन्यु से पुत्र रहे न यहां,
क्या कहें कोई होता ब्यां ही नहीं॥
कपिल गौतम और कणाद नहीं,
ऋषि मुनियों की कोई मरयाद नहीं।
तुम उनकी गोया औलाद नहीं,
खून ऋषियों का तुम में रवां ही नहीं॥
महाभारत से ऐसा वीराना हुआ,
भारतवर्ष दुःखों का निशाना हुआ।
धर्म बिलकुल यहां से रवाना हुआ,
कोई वेदों का यां पासबां ही नहीं॥
ऐसा आकर अविद्या ने डेरा किया,
भाई भाइयों में ऐसा बखेड़ा किया।
आर्य्यवंश का बिलकुल नबेड़ा किया,

कोई भारत सा मुल्क वीरां ही नहीं ॥
वेद विद्या का बिलकुल न नाम रहा,
नहीं पढ़ने पढ़ाने का काम रहा।
ब्रह्मचर्य्य का इन्तज़ाम रहा,
नज़र आता कोई नौ जवां ही नहीं ॥

अलग तुम से तुम्हारे ही भाई हुए,
कुछ यवन हो गये कुछ ईसाई हुए।
तब ईश्वर आप सहाई हुये,
जिनका हमसर कोई मेहरबां ही नहीं ॥
ऐसी हालत में भेजा दयानन्द को,
जिसने भारत के तोड़ा सभी फन्द को।
चारों तरफ फैला दिया आनन्द को,
मानों कलयुग का बिलकुल समां ही नहीं ॥
अर्पण आपके स्वामी ने तन मन किया,
अपना जीवन दिया तुमको ज़िन्दा किया।
खातिर आपके विष का प्याला पिया
तुमने माना ज़रा अहसां ही नहीं ॥

जोकि ऋषि ने तुम पर अहसां किया,
और सारे ज़माने ने मान लिया।
मगर हमने यह निश्चय ही जान लिया,
ऋषि ऋण का तुम्हें कुछ गुमां ही नहीं ॥

हाय भाग भारत तेरे हार गये,
स्वामी जल्दी स्वर्ग सिधार गये,
काम बाकी का जिनको संभाल गये,
उनकी निपटी खाने जंगियां नहीं ॥
उनकी याद में क़ायम विद्यालय हुआ,

जिससे देश में बहुत उजाला हुआ।
कौम आर्य्य को जिसने संभाला हुआ,
तुमको उसका जरा भी ध्यां ही नहीं॥
एक कालिज है वह भी अधूरा हुआ,
काम थोड़ा सा वह भी न पूरा हुआ।
जिस से जीवन का तुम में ज़हूरा हुआ,
उसके कोश की पूरी मीज़ां ही नहीं॥
कोई तुमसा तो दानी वा दाता न था,
कोई खाली सवाली जाता न था।
कोई निर्धन वहां नज़र आता न था,
गोया भारत में देखी खिज़ां ही नहीं॥
ऋषि ऋण का तुम्हारे पै दोष हुआ,
कहे यशवन्त तुमको न होश हुआ।
फ़र्ज़ अपने से मैं सुबक दोष हुआ,
यूं न कहना सुनी दास्तां ही नहीं॥

गजल २४७

हाय वैदिक धर्म अब बिलकुल फ़साना होगया।
जिस वजह से धर्म ये अपना बिगाना होगया॥
पोप पाखंडों की लीला हर तरफ फैली है अब।
जिसको देखो पाप करने में सयाना होगया॥
बे हकीकत बातों पर अफ़सोस लाते हैं यक़ीन।
पाप बढ़ते २ अब अज़हल ज़माना होगया॥
इक ज़माने में यहां पर वेदों का प्रकाश था।
अब तो यह तारीफ जुल्मत का खज़ाना होगया॥
यह जमीं भारत की वह है जहां ऋषि करते थे तप।
वेद ध्वनि अब मिट गई भारत वीराना होगया॥
नग़मेख्वां इस बाग़ में थीं वेद रूपा अंदलीब।

बुलबुलें अब उड़गईं बूम आशयाना हो गया ॥
माहमारी कहितसाली घेरे रहती हैं मुदाम ।
कंच थे इफलास में अपना ठिकाना हो गया ॥
अजमतो शां मिट गई अफसोस भारत वर्ष की ।
यक बयक तूफां पुरानिक का निशाना हो गया ॥
अब भी गर ग़ाफिल रहे तो धर्म उन्नति हो चुकी ।
ऋषी मिशन ईजाद कर खुद तो रवाना हो गया ।
अब तो चेतो भाइयों जल्दी करो सोते हो क्या ।
बकते २ कौम का सेवक दीवाना होगया ॥

गजल २४८

फूट का जब से हमारे मुल्क में आना हुआ ।
ऐ रफ़ीको बस उसी दिन से ये वेगाना हुआ ॥
हा सगे भाई को भाई देख नहीं सकते ज़रा ।
देश भारत दोस्तो मुतलक ही दीवाना हुआ ॥
इक ज़माना वह भी था भारत ये जब गुलज़ार था ।
देखियेगा आज यारो हाय बीराना हुआ ॥
हाय भारत हो गया नादान बिलकुल दोस्तो ।
मुल्क जो नादान था हर एक सो दाना हुआ ॥
लूट लीना फूटने ये मुल्क छोड़ो फूट को ।
'रूप' क्या गावे हा रो २ के ग़ज़ल गाता हुआ ॥

भजन २४६

टेक—पापिन फूट ने जी हमको क्या २ दुःख दिखाए ।
गढ़ लंका पर बजा आनकर जभी फूट का डंका ।
मिट्टी में मिलगई तनिक ही में सोने की लंका ॥ पा०
कुरुक्षेत्र का युद्ध भी इस ही फूट का है परिणाम ।

भाई २ में करवा दिया था महाघोर संग्राम ॥ पा० ॥
इस ही ने सुग्रीव सा भाई छोड़ा वन बेपीर ।
इस फूट ने बालि के छेदे जाय हृदय में तीर ॥ पा० ॥
फँसे फूट के फंद में जब शक्तो और प्रताप ।
शक्ति हीन होगए नष्ट हुआ बल औ तेज प्रताप ॥ पा० ॥
पृथीराज जैचंद के उपजी जब हृदय में फूट ।
ग़जनी से महमूद को लाकर करवा ले गई लूट ॥ पा० ॥
ऐसे इस ने किये न जाने कितने अत्याचार ।
भारत का तो हाय कर दिया बंटाढार ॥ पा० ॥
मानो २ अब हूं मित्रो इस पापिन को विसारो ।
इस दुखदाई फूट बेल को जड़ से आज उखारो ॥ पा० ॥

ग़ज़ल २५०

शैर—कभी ऐ दोस्तो भारतवर्ष खुशहाल शदां था ।
जलीलुलक़द्र यकताए असर अल्लामें दौरां था ॥ १ ॥
हरइक इल्मोहुनर में था यह कामिल सानै दौरां था ।
तजल्ली नूर अज़्मत में यह अपने महिरे तावां था ॥ २ ॥
मुहय्या हर तरह जब ऐश ओ इशरत का सामांथा ।
जहां इस महरनूर अफ़रोज़ के आगे शमाशां था ॥ ३ ॥
जहां में था अर्शी मुश्शां हरिक पर यह मेहर्वां था ।
हक़ीक़तमें यह अपना मुल्क वलकुल मुल्कों की जां था॥४॥
अब इसकी देख हालत पहिले के जब ख्याल आते हैं ।
उदू भी इसके हाले ज़ार पर आंसू बहाते हैं ॥ ५ ॥
टेक-भारत में आज कैसा अन्धेर छारहा है ।
इसकी ये देख हालत अफ़सोस आ रहा है ॥ १ ॥
काशी कि जो कभी था इक इल्म का समुन्दर ।
चक्कर भँवर जिहालत में आज खा रहा है ॥ २ ॥

जिस जा थीं कृष्ण ऐसे योगीश्वरों की कुटियाँ।
अफसोस आज वहां पर क्या २ न हो रहा है ॥ ३ ॥
श्रीराम जैसे पुरुषों की जन्म भूमियों में।
रावण का राक्षसी दल हलचल मचा रहा है ॥ ४ ॥
जो था प्रयाग पहिले इक मेल का नमूना।
वह फूट की अपीलें देखो लड़ा रहा है ॥ ५ ॥
यह खानदान मित्रों हरिश्चंद्र का निहारो।
हर बात पै रजस्ट्री अपनी करा रहा है ॥ ६ ॥
थे भीष्म से कभी यां आदित्य ब्रह्मचारी।
व्यभिचार का वह भारत डंका बजा रहा है ॥ ७ ॥
बुध से दयालुचित का सत्संग करने वाला।
मासूमों का वह अब तक भी खूं बहा रहा है ॥ ८ ॥
जिस शिष्य के गुरू हों द्रोण औ वशिष्ठ जैसे।
कैसे वह मूर्खता में अब तक फँसा रहा है ॥ ९ ॥
वैदिक धर्म प्रचारक शंकर से हों जहां पर।
पाखण्ड वाँ दिलों में अब भी समा रहा है ॥ १० ॥
कभी ओ३म् स्वाहा ध्वनि की आवाजें आरही थीं।
घड़ियाल और घंटा अब घनघना रहा है ॥ ११ ॥
लो लेखराम जैसे जिस देश में हों विद्वान्।
वह देश अब भी क़बरों पर शिर झुका रहा है ॥ १२ ॥
किस २ तरह से स्वामी समझा गये हैं तुम को।
तब भी न मित्र तुम को विश्वास आ रहा है ॥ १३ ॥

भजन २५१

टेक—भारत देश का रे, बेड़ा डूबा जाय उबारो।
आरत होकर भारत टेरे इस की सुनो पुकार,
गौ कन्या व अनाथ विवश हैं व्याकुल बज़ार ॥ भा० ॥

प्लेग और भूकंप रात दिन आकर हमें सतावें।
सीन कांगड़े का जब देखें हक धक से रह जावें॥ भा०॥
जिनकी बदौलत पेट को पालें करें दूध दही पान।
उसी पेट को उन पशुओं का कीन्हा कबरुस्तान॥ भा०॥
कन्याओं के गले पै फेरें हा खूं ख्वार कटार।
सात साल की कन्या जिस का साठ का हो भरतार भा०॥
जिस नग्री में बैठी रोवें एक साल की बेवा।
क्यों न डूबे बीच धार मे ऐसे देश का खेवा॥ भा०॥
लाखों ही विधवायें बेकस रोवें प्रातः काल।
अन्न रोक लिया है पृथ्वी ने पड़े काल पर काल॥ भा०॥
यह घर अब लुटता है' अबतो संभलो भाई।
ब्राह्मण क्षत्रियों के बच्चे होते हैं ईसाई॥ भा०॥
भारत माता की आहों से फटने लगी ज़मीन।
तुम्हें सुनाई कुछ नहीं देता बहरे हुये मतिहीन॥ भा०॥
करवट तक भी नहीं लेते हो सोये चादर तान।
तुम से अब बाज़ी हारा है कुम्भकरन बलवान॥ भा०॥
ऋषियों का यदि खून हो बाकी इस तन के दरम्यान।
'चन्द्र' उठो कुछ धर्म संभालो, हो जावे कल्याण॥ भा०॥

भजन २५२

दोहा-खुदगर्ज़ी मे फँस गये, बालक वृद्ध जवान।
समझा २ खप गये, नहीं इन्हें कुछ ध्यान॥
टेक—अपस्वार्थ की भंगिया चढ़ाके हुआ बदमस्त ज़माना है,
खुदग़र्ज़ी में फिरने पैंठे, निज गौरव को खोकर बैठे।
सुख सम्पद पांव समेटे, रहा न कुछ भी ठिकाना है॥ हुआ०
तुम्हें किसने यह सबक पढ़ाया, सदा अपना भला तुमने चाहा,
दीनों को तो खूब सताया, बनाया हाय निशान है॥ हुआ०

भूके मरत अनाथ बिचारे हैं वह भी तो बालक तुम्हारे,
विधवाँ पै गज़ब कर डारे, खून नैनों से बहाना है॥ दुखा०
कहे 'चन्द्र' कि होश सिंभालो, जो गिर गये हैं उनको उठालो,
देश भारत के पे नो निहालो, करो मत कोई बहाना है॥ दुखा०

(८) हिन्दुओं की हीनता

गीतिका २५३

तेजधारी वीर भारतवर्ष सूना कर गये।
पाय जीवन के सुफल संसार-सागर तर गये॥
पोथियाँ सत्कीर्ति ग्रन्थों में धरा पर धर गये।
वंशजों के सर्व आगामी अड़ंग हर गये॥
शोक है उस शान्ति पथ से होगई अचलीनता।
देख लो मित्रो! अभागे हिन्दुओं की हीनता॥
देश जो सब सन्धियों का बड़ा आधार था।
प्रकृति देवी का अनोखा रत्न भाण्डागार था॥
लोक में विख्यात जिसकी श्रेष्ठता का सार था।
सभ्यता की सीख जिस से सीखता संसार था॥
हाय! वह भारत कहाँ है? क्या हुई प्राचीनता। देख०
वेद शास्त्रों की बुराई पातकी करने लगे।
मांस [illegible] शील सदाचार से डरने लगे॥
धर्म का गौरव [illegible] दीन बन [illegible] लगे।
पेट [illegible] बढ़ाने को उदर भरने लगे॥
यों अविद्या छा गई पैदा हुई अधीनता॥ देख०
[illegible] के धर्म कुल [illegible] में [illegible] लगे।
मूढ़ मतवाले [illegible] पंथ में [illegible] लगे।
जो सुधारक थे वही मद [illegible] में [illegible] लगे।

मन्दभागी दुर्दशा की ढाल पै ढलने लगे ॥
बुद्धिविद्या को दवा बैठी जड़त्व, मलीनता ॥ देख०
क्षत्रियों से शूरता तेजस्विता न्यारी हुई।
भीरुता के भोगने की कामना भारी हुई॥
एकता के प्राण लेने की प्रथा प्यारी हुई।
आज रेचक पूर्व की रोचक कथा सारी हुई॥
अंत इसका क्या हुआ? बसछिनगईस्वाधीनता ॥ देख०
शिल्प कौशल सोगया उद्यम अचलहो मरगया।
ज्ञान गौरव जाति को तजकर पराये घर गया॥
रुष्ट होकर द्रव्य सारा देश सूना कर गया।
जीविका जीवनदुखों की भावना से भरगया॥
राक्षसी सी आ घुसी घर २ निगोड़ी दीनता ॥ देख०
दम्भ आलस द्वेष दुर्गुण में फंसे दुख पारहे।
छूत के अन्धेर खाते में पड़े पछता रहे॥
कर्मत्यागी ज्ञान के कोरे गपोड़े गा रहे।
हाय! सब इतिहास ही में नाम पाने जा रहे॥
खोगई है शक्ति, शिक्षा, शीलता, शालीनता ॥ देख०
देश भक्तो! देश के उद्धार में जी जोड़दो।
सर्व सुखमय साधनों की ओर मनको मोड़दो॥
कर्मवीर 'नरेश' अब अज्ञानता को छोड़दो।
अन्य देशों को चलो निस्सार बन्धन तोड़दो॥
सीखलो विज्ञान की अनुकूल अर्वाचीनता ॥ देख०

गजल २५४

हमारे पाप कर्मों ने दिखाया आज यह है दिन।
नहीं कुछ पास विद्या है न बाक़ी हाय कुछ धन है॥ १॥
नज़र नफ़रत से देखें आह! अब द्विज वर्ण सब हमको।

बैरिन 'फूट' आय भारत पै, निज आतंक जमायो।
'मेल एक्यता' सुखदायिनि को, लड़ि २ दूरि भगायो ॥ २ ॥
स्वारथरत लोगन ने हा!धिक! "धर्म जाल" फैलायो।
भोले भाले निज भ्रातन को, ता महँ घेरी फँसायो ॥ ३ ॥
बल बुद्धि विद्या आयु हरण हित 'बाल विवाह' रचायो।
कन्यन ब्याहि २ बूढ़ेन संग, चहुँ दिशि रुदन करायो ॥ ४ ॥
स्वर्ण भूमि जननी सुत भिक्षा, मांगन को मुँहवायो।
काहू को नहिं दोष स्वकृत ही कर्मन को फल पायो ॥ ५ ॥
प्राण देनहित तुम्हहिं दयानन्द, ने निज, प्राण गँवायो।
मृतक समान अचेत रहे तउ 'भिक्षु' बहुत जगायो ॥ ६ ॥

गजल २५७

वेदों का प्रचार जब से देश से जाता रहा।
तब से भारतवर्ष भाइयो, दुख पै दुख सहता रहा ॥ १ ॥
कर दिया गारत महाभारत ने सारे हिंद को।
इस से पहले देश यह आज़ाद कहलाता रहा ॥ २ ॥
था कभी गुलज़ार सारे, देशों में हिन्दोस्तान।
अब हुआ यह ख़ार इस से, गुलसितां जाता रहा ॥ ३ ॥
शिल्प में नामी था मख़ज़न, इल्म का यह मुल्क हिन्द।
हर जगह का शख्स यहां पर सीखने आता रहा ॥ ४ ॥
छोड़कर अपना चलन, ग़ैरों की सीखी चाल सब।
सब की नकलें की इन्होंने, जो यहां आता रहा ॥ ५ ॥
बच्चे लाखों देश के, भूखों से मरते रात दिन।
हो गये मुफ़लिस विचारे, माल धन जाता रहा ॥ ६ ॥
रो रहीं गौयें विचारी, कोई जन सुनता नहीं।
ले छुरी सय्याद भी, इन पर गज़ब ढाता रहा ॥ ७ ॥

स्वामी जी इस देश के, ऊपर निछावर होगये।
पर न सोकर तुम सोकर उठ,प्रेमी भी नित गाता रहा॥ ८॥

गजल २५८

कैसी थी वह शुभ घड़ी जब वेदों का प्रचार था।
हर तरफ़ फूला फला, सरसब्ज़ और गुलज़ार था॥ १।
अबतो गलियों में बनारस की फिरें हैं रंडियां।
नाक थी भारत की काशी विद्या का भंडार था॥ २॥
स्वांग भर २ नाचते हैं हाय मथुरा देश में।
योग की तालीम देता जहां पर कृष्ण मुरार था॥ ३॥
क्यों ना फ़ैज़ाबाद की आंखों से निकलें आंसुवें।
निकला जिसकी गोद से श्रीराम सा औतार था॥ ४॥
हाय इन्द्रप्रस्थ का सारा नज़ारा मिट गया।
अब जो है वीरान देखो जो कभी गुलज़ार था॥ ५॥
पूछलो प्रयाग से क्यों गंगा जमुना मिल गई।
कह देगा वह एक मत था मेल था और प्यार था॥ ६॥
खून करते भाइयों का एक फुट के वास्ते।
राज्य तक से भरत ने बस कर दिया इन्कार था॥ ७॥
पुत्रियों को नाइयों के हाथ हा! बेचें थे कब।
यहां कभी होता स्वयम्वर गुण कर्म अनुसार था॥ ८॥
बनती थीं सीता सुशीला गार्गी लीलावती।
जब यहां पर नारियों को वेद का अधिकार था॥ ६॥
नाम रखते थे यहां गौतम कपिल मनु व्यास से।
कूड़ा छीतर वा वसीट्टू कब हमें स्वीकार था॥ १०॥
चन्द्र, सूनी होगई सारी पहाड़ी खोकरें।
ले उड़ा यह आस्मां सब इन का जो श्रृंगार था॥ ११॥

लावनी २५१

[हमारी आय और उस का ख़र्च]

हिन्दुस्तान की कमाई देखो फ़ी कस ग्यारह पाई है।
उसमें खर्च होता जितना फेहरिस्त उसकी बनाई है॥
दो की टोपी क़मीज़ सवा की नकटाई छै आने को।
पांच का चश्मा पांच आने का कालर टाई लगाने को॥
नहीं आठ से कम लगते हैं वास्कट कोट बनाने को।
कम से कम पतलून चार को गैलिस बारह आने को॥
तीसरे दिन चार आने इनकी लगने लगी धुलाई है॥ हि०१॥
साढ़े सात से कम नहीं लगते वैस्टैंडवाच मँगाने में।
एक रुपये से कम नहीं लगता फैंसी बेंत उठाने में॥
डासन का फुलबूट सात का है मशहूर ज़माने में।
बुरुश और पालिश की शीशी दोनों मिलें नौ आने में॥
प्रोटिस की ज़ुराब की क़ीमत छै आने बतलाई है॥ हिं० २॥
तीस की सेकिन्हैन्ड साईकल यह भी आज कल का फैसन।
एक मील नहीं चल सकते हैं पैदल यह मिस्टर हाण्डियन॥
सवा रुपये का घर में सलीपर रखना पड़ता मजबूरन।
ग़लती हो तो कीजे मुआफ़ बतलाता हूं तख़मीनन॥
एक आना रोज़ाना इन से लेता बुधू नाई है॥ हिं० ३॥
कंघा साबुन तेल सेपटी पिन तुम को गिनवाऊं क्या।
दश आने से कम में उनकी क़ीमत और लगाऊं क्या॥
सिग्रट का किस क़दर ख़र्च है यह तुमको समुझाऊं क्या।
"चन्द्र" कहैं यह ख़र्च थर्ड का फ़स्टक्लास बतलाऊं क्या॥
इस फ़जूल खर्चे ने हा भारत से भीक मँगाई है॥ हिं० ४॥

नोट—जंग से पहले का ये हिसाब है अब तो सब का मूल्य दोगुना तीन गुना है।

विष्णु पाद २६२

टेक—सोच देखिये अपने मन में, अब का शेष हमारा है।
धाम नहीं है धरा नहीं है, धन दौलत भी ज़रा नहीं है॥
धनपति से हम हुये भिखारी, बड़ा विचित्र नज़ारा है॥सो०॥
अपना यही दुःख रोते हो, शान्ति दान्ति दृढ़ता खोते हैं।
पर सुनता है कौन किसी की, घोट लिया दम सारा है॥सो०॥
विद्यासागर पार पधारी, प्रतिमा मस्तक से है न्यारी।
होगा नहीं सुधार यही क्या, हमने चित्त विचारा है॥ सो०॥
औरों की सेवा करते हैं, तब कवि कहीं पेट भरते हैं।
आज़ादी से है न गुज़ारा, विधि ने हमें विसारा है॥ सो०॥

भजन २६३

टेक—आज क्यों चिंतित भारत देश॥
मुख कुम्हलानो अरु मलिन तन बिखरे सिर के केश।
एकटक देखतनेत्र फारजिमहिय विच शोक विशेष॥ आज०॥
भरि २ के श्वांस लेत नहिं कत हूं हँसी लवलेश।
अति विचार में डूब रह्योजिम बादरबीच दिनेश॥ आज०॥
जाके शीश मुकुट मणि सोहत ताको लखि अस वेश।
माधव अचरज ते हिय फाटत हाय रह्यो का शेष॥ आज०॥

भजन २६४

टेक—लुट गया न पूंजी पास है, भारत भूखा मरता है।
जो था नव खंडों में नामी, द्वीप रहे जिस के अनुगामी।
सो सारे देशों का स्वामी, अब औरों का दास है।
देखो कैसा डरता है॥ भा० १॥
बल बिन कौन रखावे घर को, विद्या बट गई इधर उधरको।
सम्पति फांद गई सागर को, कोरा रंक निरास है।

हा पट नहीं भरता है । भा० २ ॥

बीती बातों को रोता है, बार बार व्याकुल होता है।
शोक विसार कहां सोता है, घोर नरक में बास है।
दुर दिन पूरे करता है ॥ भा० ३ ॥

यह बालक जाने था जिसको, सो पागल कहता है इसको।
शंकर समझावें किस किस, क्या अद्भुत उपहास है।
बिन कहे नहीं सरता है ॥ भा० ४ ॥

गजल २६५

घटा छाई है हमदम कौम के सिर पर यह क्यों ग़म की।
बनी है किस लिये यह बेगुनाह तसवीर मातम की ॥
उदासी क्यों बरसती है यह इस के चांद से मुंह पर।
हक़ीकत गर सुनो तो कुछ सुनाऊं चश्म पुरनम की ॥
इसे ना इत्तफाकी ने तुम्हारी मार डाला है।
किये देता है बस ग़ारत तुम्हारी फूट बाहम की ॥
मुहब्बत प्यार हमदर्दी हुई आपस की सब उनका।
इसी के साथ प्रीती क़ौम से भी आप ने कम की ॥
अगर घर में मिले लड़ने का मौक़ा अपने भाई से।
तो हर हिन्दू में आजाती है ताकत भीम अर्जुन की ॥
मगर बाहर यह हालत है, कि थर थर कांपता तन है।
अगर मिट्टी के पुतले ने भी आके हम को दी धमकी ॥
सुनाऊं अलग़रज़ तुम को कहांतक दास्तां ग़म की।
कहां से दर्द दिल रोने को लाऊं आंख शबनम की ॥
नतीजा जो हुआ इसका कलेजा थाम कर सुनलो।
तुम्हारी क़ौम है महमान दुनियां में कोई दम की ॥
किसी का क्या गिला शिकवा, यहसब खूबी है क़िस्मतकी।
तुम्हारी क़ौम कुश्ता है तुम्हारे ही मज़ालम की ॥

नहीं अब भीख तक मिलती है इस जाती के बच्चों को।
सखावत में कब्र पर लात मारी जिसने हातम की॥
तुम्हारी सर्व महरी ने इसे वह ज़ख्म पहुंचाये।
ज़रूरत ज़ख्म से ही मिट गई लो देखो मरहम की॥
मिटादो या बचालो क़ौम की हस्ती के मालिक हो।
तुम्हीं पर आज नज़रें पड़ रहीं हैं एक आलम की॥

ग़ज़ल २६६

हम से भी बुरी होगी न तक़दीर किसी की।
देखी न सुनी ऐसी थी तहकीर किसी की॥
दीवारों में जाते थे चुन कौम के बच्चे।
चलती थी गले पर कभी शमशीर किसी की॥
दाखिल थे कभी हलक़े गुलामी में किसी के।
पहने थे कभी पांव में ज़ंजीर किसी की॥
मिट्टी में मिलाता था हमें आन कर कोई।
बनती थी उसी खाक से अकसीर किसी की॥
जलती थीं चिताओं में कभी देवियां ज़िन्दा।
मक़तल में थी नंगी कभी शमशेर किसी की॥
लुटवाता था महमूद कभी आन कर मन्दिर।
खिचवाता था खाल आके जहांगीर किसी की॥
क्या २ न सहे जाती के बच्चों ने मज़ालिम।
छाती में किसी के था छुरा तीर किसी की॥
मुग़लों के जमाने में हुआ ऐसा भी अकसर।
हम दार पै खींचे गये तक़सीर किसी की॥
मित्र धन्यवाद दो सभी इस राज्य को प्यारो।
जिस के स्वराज्य में नहीं अब चलती किसी की॥

भजन २६७

टेक--अभागे हिन्दोस्तान ! क्या तुम में नहीं जान ?
अपने हाथों सब खोया, घर में बीज पाप का बोया।
पृथ्वी फूट फूट कर रोया।
ग़ज़नी गढ़ा निशान ! हिन्द दुर्स्थान ! अभागे० ॥ १ ॥
हा ! हा ! मन्दिर मूर्ति टूटी, लक्ष्मी मान बधूटी लूटी,
आँख निगोड़ी तब भी न फूटी,
निर्धन हुये निदान, आर्य्य सन्तान ! अभागे० ॥ २ ॥
अकबर ने क्या चाल निकाला, सिंहों को गीदड़ कर पाला।
ससुरा किया किसी को साला।
रजपूतों की शान ! हुई निर्वान ! अभागे० ॥ ३ ॥

ग़ज़ल २६८

कहें क्या हिन्दुओं के दिन दिला कैसे गुज़रते हैं।
मिसाले नीम बिस्मिल है, न जीते हैं न मरते हैं ॥
पड़े गर्दाब में खाते हैं गोते, जां लबों पर हैं।
न तो यह डूबते ही हैं न भवसागर से तरते हैं ॥
यह हिन्दू क़ौम वह रस्सी है, जिसको हर दो जानिब से।
सदा इसलाम ईसाइयत के, दो चूहे कतरते हैं ॥
हमारी बहरे हस्ती में अजब हालत है गूनां गूं।
अगर खाते हैं दस गोते तो दम भर को उभराते हैं ॥
वह बेकस और बद किस्मत हमीं तो हैं ज़माने में।
हरइक उठने की कोशिश पर हां मुंह के बल जो गिरते हैं ॥
उठाये किस तरह कोई मरीज़ नातवानी को।
पकड़ते हैं अगर बाज़ू तो वां शाने उतरती हैं ॥
मुसाफिर' कौम के मोहसन हैं वह जो ज़िंदगी अपनी।
मिसाल शमा महफ़िल के लिये कुर्बान करते हैं ॥

ग़ज़ल २६९

कभी सुलतान जो थे अब हुए नादार बैठे हैं।
जो आक़ा थे बने वह आज ख़िदमतगार बैठे हैं।
नहीं है कांग्रेस उत्सव पर कोई धर्म का लेक्चर।
जिधर देखो उधर ही शाकिये सरकार बैठे हैं॥
कोई एक लफ़्ज भी कहता नहीं है नेक चलनी पर।
यह भारतवर्ष का करने को क्या उपकार बैठे हैं?॥
जो मज़हब छोड़ कर मुल्की तरक्की के हैं गिर्वीदा।
वह बेड़ा ग़र्क करने के लिये मंझधार बैठे हैं॥
वहम विश्वास होने का नहीं वे धर्म के हरगिज़।
समझ लें सोच लें जितने यह खुश गुफ़्तार बैठे हैं॥
सहारे से तेरे पे हिम्मते आली ज़माने में।
ज़लीलो ख़्वार जो थे बन के इज्जतदार बैठे हैं॥
बिना पुरुषार्थ हो सक्ता नहीं है इन को कुछ हासिल।
भरोसे पर जो तेरे तालये बेदार बैठे हैं॥
न पहुँचेगे कभी वह मंजिले मक्सूद तक हरग़िज़।
कि जो राहे सफ़र की सख़्तियों से हार बैठे हैं॥
दराज़ी रास्ते की ऐसे कदमों से न तय होगी।
अभी जो शिकवः सन्ज़े जख़्म नोके ख़ार बैठे हैं॥

ग़ज़ल २७०

टेक—जिया पछतात है रे, मित्रो देख दशा भारत की॥
किसी समय में इस भारत का, आर्य्यवर्त्त था नाम॥
हाय आज कहते इस को, डाकू चोरों का धाम
जुल्म की बात है रे॥ मित्रो० १॥
धन का विद्या का बल का था, यही देश भंडार।
बिलकुल पटपर हुआ आज ये देखो नज़र पसार॥
न कल दिन रात है रे॥ मित्रो० २॥

खोटे कर्म किये जैसे, तैसे फल लीने पाई।
वेद मार्ग को त्याग हाय सब पड़े कुमारग जाई॥
ये मन सकुचात है रे॥ मित्रो० ३॥
'रूपराम' क्या कहैं मित्रवर, बहै नैन जलधार।
आज देश भारत की नैया, पड़ी बीच मंझधार॥
हा! डूबी जात है रे॥ मित्रो० ४॥

भजन २७१

टेक—भारत में विपत बुलाई हा! भारतवासी लोगों ने
तान दुपट्टा ऐसे सोये, कहीं न जावे जैसे सोये।
जागें नहीं यह कैसे सोये, दुख में जान फसाई हा,
इन सुखराशी लोगों ने॥ भा १॥
दया नहीं दीनों पर करते, क़दम रंडियों के घर धरते।
दौलत से उनका घर भरते, सारी बुद्धि गँवाई हा,
करी बदमाशी लोगों ने॥ भा० २॥
जो सब देशों से बढ़कर था धर्म और विद्या का घर था।
कुछ नहीं डर था हाय निडर था, तिस की खूब कराई हा,
हट हट हंसी लोगों ने भारत ०४॥
'रूपराम' कहां तक बतलावे, ग़म से फटा कलेजा जावे।
ईश्वर के गुण कैसे गावै घर घर मूर्ति पुजाई हा,
सत्यानाशी लोगों ने॥ भारत० ४॥

भजन २७२

टेक—मिट्टी में मुल्क मिला दिया, अज्ञानी मतिमन्दों ने।
जिस ने सब को पैदा कीना, उसको भुला चित्त से दीना॥
मारग छोड़ कुमारग लीना।
मियां मदार पुजाया हा! आँखों के अन्धों ने॥ मि० १॥

ऐसे हाय हुये मत हीना, कुछ भी भली बुरी समझीना।
ग़म से फटा जाय है सीना।
हिन्दू नाम धरा क्या हा, आर्यों के फ़र्ज़िंदों ने ॥ मि० २ ॥
सत उपदेश न चित्त में धरते, कुपंथियों की संगत करते।
ज़रा नहीं अधरम से डरते।
अधरम खूब बढ़ाया हा, कर दिये गंदे गंदों ने ॥ मि० ३ ॥
'रूपराम' सुन बात हमारी, जब से छाई अविद्या भारी,
तब से दुख पावें नर नारी।
देश में क़दम जमाया हा-हा पापों के वृन्दों ने ॥ मि० ४ ॥

ग़ज़ल २७३

अय क़ौम देख तो तेरी हालत को क्या हुआ।
हैरत में आइना है कि सूरत को क्या हुआ॥
जब से कमान की तरह कमर सब की झुक गई।
अर्जुन भी पूछता है कि हिम्मत को क्या हुआ॥
मारे जो कोई फूंक तो उड़ जायें अहले हिन्द।
चक्कर में भीमसैन है ताक़त को क्या हुआ॥
हम को ज़लील ख़स्ता व मजबूर देख कर।
प्रताप कह रहा है हमैयत को क्या हुआ॥
जिसने बड़े बड़ों के थे छक्के छुड़ा दिये।
उस शूर वीर क़ौम की हिम्मत को क्या हुआ॥
अफ़लास में फंसे हुये भारत को देख कर।
हैरत में ग़ज़नवी है कि दौलत को क्या हुआ॥
भाई को प्यासा देख कर भाई के खून का।
लछमन पुकारता है मुहब्बत को क्या हुआ॥
इतने बहादुरों को 'फ़लक' खा गई ज़मीन।
हैरान पृथीराज है शुजाअत को क्या हुआ॥

भजन २७४

टेक—कहो क्या घाट हैं जी ! हम उन पहले पुरुषाओं से।
उनने बोला सत्य सदा हम झूठ बोल जीते हैं।
वह करते थे अग्नि होत्र हम हुक्के को पीते हैं॥ कहो० १॥
उन्होंने अपने हाथों से दीनों को दीने दान।
हम अब खेलें जुआ मित्रवर, सुनो खोल कर कान॥ क० २॥
उन्हों ने अपनी सन्तानों को था बलवान बनाया।
हम ने पुत्री पुत्रों को भूतों का डर दिखलाया॥ कहो० ३॥
परमेश्वर से बड़ा इन्हों ने कोई न समझा दूजा।
हमने कीनी देखो हज़ारों कुजातियों की पूजा॥ कहो० ४॥
पहले पुरुषा आर्य्य नाम का करते रहे गरूर।
नाम हमारा चोर उचक्का मुल्कों में मशहूर॥ कहो० ५॥
भारत का रुतबा उनने बढ़ाया हो २ कर दिलशाद।
देख लीजिये हमने भारत करदाना बर्बाद॥ कहो० ६॥
पहले पुरुषाओं ने मारे बलवानों के मान।
हम निर्बल को ऐसा मारें छोड़ें लेकर प्रान॥ कहो० ७॥
पहले पुरुषा बुड्ढे होकर हरि से ध्यान लगाते।
अब के बुड्ढे ब्याह कराते शिर पर मौर बंधाते॥ कहो० ८॥
गऊ अनाथ विधवों को उनने कभी न दुक्ख दिखाया।
देखो तो हमने इनको दुक्खों में खूब फंसाया॥ कहो० ९॥
'रूपराम' कह उनने कीने सदा धर्म के काम।
हम अब जाने नहीं धर्म है किस चिड़िया का नाम॥ कहो१०॥

गजल २७५

छोड़ बैठे जब से हम वेदोक्त करना संस्कार।
सह रहे तब ही से हैं बस रात दिन दुःखों की मार॥

दश में थी जब कि सोलह संस्कारों की प्रथा।
सुख व दौलत में सदा परिपूर्ण था यह सब प्रकार॥
हम भी गौरव के शिखर पर थे बैठे हुये।
जब कि था भारत में वैदिक संस्कारों का प्रचार॥
पतित चारों वर्ण होगये संस्कारों के बिना।
वर्णशंकर होरहे हैं आज आरज ऋषि कुमार॥
धर्म अरू शुभ कर्म छूटे, अरु हुये आचार हीन।
संस्कारों की प्रणाली जब से हमने दी बिसार॥
संस्कारों को भुलाये यह हमारी भूल है।
हो गया सो हो गया अब भी करो मित्रो विचार॥
अपनी अवनति का है कारण संस्कारों का अभाव।
पुनि प्रचारो रीति वैदिक, मित्र यदि चाहो सुधार॥

(९) चेतावनी

दादरा २७६

भारतवासी दशा निज सुधारो रे।
तुम फँस के पापों में बे अर्थ माल जो बैठे।
न सिर्फ माल गया जान को भी रो बैठे॥
वह ज्ञान ईश्वरी वैदिक था उस को खो बैठे।
अजब कमाले परवरदिगार खो बैठे॥
डूबी नैया को फिर से उबारो रे॥ भारत०॥१॥
सैकड़ों फिर्के हुए लाखों बने मत वाले।
सत्य को छोड़ बने पाप-कमाने वाले॥
पोप पाखण्ड दिखा माल उड़ाने वाले॥
नज़र आते नहीं सत् मार्ग दिखाने वाले।
इनकी चालों में मत धन लुटाओ रे॥ भारत०॥२॥

अनाथ लाखों शवो रोज़ भूखे रोते हैं।
और अपनी जान को फांकेकशी में खोते हैं॥
तुम्हारे माल को बदमाश खूब ढोते हैं।
ये मारे भूख के तड़पें और आप सोते हैं॥
भूखे दुखियों की ओर निहारो रे॥ भारत०॥ ३॥
लाखों विधवायें जो बाली उमर में होती हैं।
उम्र भर ग़म में जलें ज़ार ज़ार रोती हैं॥
सैकड़ों गर्भ गिरें बद चलन भी होती हैं।
आबरू कुल की मिटा धर्म अपना खोती हैं॥
अबतो जल्दी विपति इनकी टारोरे॥ भारत०॥४॥
कमसिनी में हुई जिस वक़्त से शादी जारी।
वीर्य कमज़ोर हुआ अक़्ल गई सब मारी॥
रोज़ इफ़लास हुआ देश पै हरसू तारी।
उम्र कम होने लगी और हुये व्यभिचारी॥
ब्रह्मचर्य आश्रम फिर धारो रे॥ भारत०॥ ५॥
हैफ़ रूद हफ़ अविद्या हुई ऐसी प्रबल।
वेद के ज्ञाता जो थे अब हैं वह बिलकुल अजहल॥
फूट आपस में हुई जिस ने मचाई हलचल।
सोचते इतनी नहीं बैठें जो आपस हिलमिल॥
कैसे होगा सुधार तुम्हारो रे॥ भारत०॥ ६॥
देश की होरही हालत है बहुत ज़ार विज़ार।
दुख भुगतते हुये हैं इस को वर्ष पांच हज़ार॥
द्वेष के मर्ज़ में है जान से अपने बेज़ार।
कोई भी इतना नहीं सोचे जो इसका आज़ार॥
देश रोगी की औषधि विचारो रे॥ भारत०॥ ७॥
यह कैसा ख़्वाब है ग़फ़लत को टालिये साहिब।
न बदलो करवटें, धो मुँह को डालिये साहिब॥

यह फैली फूट है इस को निकालिये साहिब ।
दशा बिगड़ती है इसको सभालिये साहिब ॥
करै विनती यह सेवक तुम्हारो रे ॥ भारत० ॥ ८ ।

गजल २७७

नौजवानों तुम कदम उलटे हटाना छोड़दो ।
काम के मैदान में पीछा दिखाना छोड़दो ॥
एस्तादा तुम रहो हर वक्त पर्वत की तरह ।
कपकपाना छोड़दो और डगमगाना छोड़दो ॥
कुर्सियों पर क्यों पड़े रहते हो मित्रो हर घड़ी ।
धर्म का और देश का कितना है वाजिब तुम पै हक ।
अब ज़रूरी फ़र्ज़ को तुम भूल जाना छोड़दो ॥
तर्क करदो हुक्का बाज़ी ताश और शतरंज का ।
वक्त अपना क़ीमती इन में गँवाना छोड़दो ॥
उपनिषद् का पाठ करना तुमको अज़ बस है मुफीद ।
भद्दे नाविल दोस्तो पढ़ना पढ़ाना छोड़दो ॥
मुद्दतें गुज़रीं तसल्लुत तुम पै खुदगर्ज़ों का है ।
अब तो इस मनहूस के क़ाबू में आना छोड़दो ॥
रह चुके मफ़्तूह तुम फ़ातह बनो जज़बात पर ।
अब मुखालिफ ताक़तों से मात खाना छोड़दो ॥
काम आदी दुश्मनों से तुम करो जंगो जदल ।
सामने इन शत्रुओं के सहिम जाना छोड़दो ॥
कोई भी ताकत नहीं दे सक्ती है तुम को शकिस्त ।
तुम हवासों के अगर कबज़े में आना छोड़दो ॥
शूर वीरो ! कुछ भी बाकी गर रही है ज़िन्दगी ।
आगे बदख़्वाहों के तुम आंसू बहाना छोड़दो ॥

कामयाबी के लिये है पारसाई लाज़मी।
जाल में विषयों के मन अपना फँसाना छोड़दो॥
है खड़ी फ़ौजे अदू आओ मुक़ाबिल इसके तुम।
कायरों की तरह से अब जी चुराना छोड़दो॥
डालदो खतरे में अपनी ज़िन्दगी को शौक से।
धर्म की रक्षा में अपना तन बचाना छोड़दो॥
मैं यह कहता हूं कि तुम गर्दन न काटो और की।
यह नहीं कहता कि अपना सर कटाना छोड़दो॥

जान को अपनी फ़नाह करदो पये अस्लाह आम।
दूसरों को गुफ्तगू से भी सताना छोड़दो॥
सिलसिला तसनीफ़ और तालीफ का जारी करो।
हाथ में पकड़ो क़लम खंजर उठाना छोड़दो॥
अय दिलेरो! शर्म और ग़ैरत से तुम कुछ कामलो।
इतना वैदिक मत को वे इज्ज़त करना छोड़दो॥

अहमदी ईसाई से कहदो व आवाज़े बलन्द।
दिल्लगी और मज़हका उसका उड़ाना छोड़दो॥
हो चुका बदनाम ग़फलत से तुम्हारी यह बहुत।
अब तो उस की आबरू तुम को घटाना छोड़दो।
आर्य भ्राताओं में गहरा परस्पर हो प्रेम।
आज से गर बाहमी लड़ना लड़ाना छोड़दो॥

आठ हफ्ते को तो रुख़सत लेके आजाया करो।
सालभर में दो महीना धन कमाना छोड़दो॥
रंडी भड़वों की तो महफ़िल में रहो हरदम शरीक।
आर्य्य साप्ताहिक सभा में हैफ आना, छोड़दो॥
सर्व महिरी से तुम्हारी होचुका नाबूद वह।
हस्ती स्वामी के मिशन की अब मिटाना छोड़दो॥

मालो दौलत को ऋषी उद्देश्य पर करदो फ़िदा।
रोज़ की बद रस्मियों में धन लुटाना छोड़दो॥

ग़ज़ल २७८

छोड़ो न तुम धर्म को चाहे जान तन से निकले।
सच्चा सखुन हो लेकिन शीरीं दहन से निकले॥
ईश्वर कहो वह भाई अफसाना होगये क्या।
माता कौशल्या के वह जो थे वतन से निकले॥
हरवक्त है मौत सिर पर चल लेले तोशा भाई।
भक्ती व नेकी करलो, जितनी कि तन से निकले॥
चुन लो कर्म धर्म के वहारे जवानी में गुल।
नहीं तो खिज़ां में रोती बुलबुल चमन से निकले॥
रक्खा है क्या वहां पर कैसी है बस्ती सोचो।
जितने ऋषि जन निकले सबही वह बन से निकले॥
अच्छे अमल हों जब कि समझे धर्म है क्या शै।
ताऊन हैज़ा क्यों ना फिर तो वतन से निकले॥
अन्धेरा मिटा लो सूरज चमका है सोने वालों।
उठो तायर भी अपने २ मसकन से निकले॥
धन से धर्म करो तुम नहीं तो समझलो आजिज
सिकन्दर के हाथ दोनों खाली कफन से निकले॥

ग़ज़ल २७९

सदाक़त के लिये गर जान जाती है तो जाने दो।
मुसीबत पर मुसीबत सिर पै आती है तो आने दो॥
लगी है आग गफलत की धुआं दरसू है आलस का।
करो कोई उपाय जल्दी, भड़कती को बुझाने दो॥
ज़रूरत कौम की देखो, हुआ इदबार क्यों हाइल।
नहीं फिर वक्त मिलने का, समय को मत टलाने दो॥

सभा आर्य के होने से, नसीवा कौम का जागा।
करो सतसंग हिलमिल कर, धर्म वैदिक सुनाने दो॥
जहालत का समुद्र था, नज़र से दूर साहिल था।
ज़हे किस्मत मिली किश्ती, हमें अब पार जाने दो॥
शिरोमणि जो जबानों को, खजाइन इल्म है जिसमें।
है केवल वेद की विद्या, यही पढ़ने पढ़ाने दो॥
क़दीमी इल्म की ख्वाहिश, अगर कुछ दिल में है बाक़ी।
आचार्य कुल बनाने के लिये जर को लुटाने दो॥
ऋषि मुनियों के जीवन को निगाहे ग़ौर से देखो।
लिखा जो सत्य ग्रन्थों में, वही दिल में समाने दो॥
अगर आर्य बने हो नाम मात्र, तुम मेरे साहिब।
रजिस्टर में सभा के नाम मत अपना लिखाने दो॥
तरक्की धर्म की करना, कठिन है फर्ज़ आला है।
बिना सोचे क़दम मैदान में, हरगिज़ न आने दो॥
स्वार्थ सिद्ध करने को जिन्हें आदत हुई है बंद।
सरासर हसद करते हैं उन्हें बकने बकाने दो॥
डरो नहीं मुशकिलातों से अबस है खौफ़ लोगों का।
बढ़ाकर हौसला बुद्धि को ग़लबा उन पै पाने दो॥
बला से हीलासाज़ों की शिकायत और बदगोइयाँ।
भरोसा ईश पर रख धर्म न दिल को डगमगाने॥

गजल २८०

नहीं जो खार से डरते वही उस गुल को पाते हैं।
मिला मिट्टी में अपने आप को, खिरमन उठाते हैं॥
निशां पाते हैं पहले जो निशां अपना मिटाते हैं।
खुद अपना नाश करके बीज, फिर फल फूल लाते हैं॥
जिन्हें वेदों से प्रीति है, वही साहिब को भाते हैं॥ १ ॥

बुज़ुर्गों की मदद से, वाल भी उपकार करते हैं।
उन्हें अपना मुअय्यन पर, नहीं आफत से डरते हैं॥
जो वह मखदूम बनते हैं, यह दम खिदमत का भरते हैं।
जो वह मखदूम बनते हैं, तो ये भी उन पे मरते हैं॥
नहीं तो किबला अपने घर में सब गंदम ही खाते हैं॥ २॥
मुबारिक हैं वो माई, जो यहां मिलने को आए हैं।
नवाज़िश उन बुज़ुर्गों की, जो यहां तशरीफ़ लाए हैं॥
बुज़ुर्गों क्यों न बख्शें हम पै, आखिर उनके जाए हैं।
किसी ने 'कद छोटा देख भी, वालक भुलवाए हैं॥
जिन्हों के घर में छोटे हैं, बड़े वह ही कहाते हैं॥ ३॥

भजन २८१

सोना छोड़ केरे, अब तो जागो भारतवासी। टेक॥
इस सोने ने सुख सम्पति से, किया देश को सूना।
बना हुआ है बिगड़ेपन का, भारत ठीक नमूना॥ सो०॥
उठो और आलस को त्यागो, अपनी दशा सुधारो।
तेजहीन निर्बल समाज में, फिर नवजीवन डारो॥ सो०॥
अनेकता मतभेद छोड़ अब, जो बनो उद्योगी।
हाय! हाय! आगे हम सबकी, नाना दुर्गति होगी॥ सो०॥
ऐसी चाल चलो सुखदाई, जैसी कविवर लेखें।
जिससे 'रामनरेश' देश का उन्नति के दिन देखें॥ सो०॥

ग़ज़ल २८२

सत्य मारग पै क़दम बेख़ौफ़ धरना चाहिये।
धर्मरक्षा के लिये बेफ़िक्र मरना चाहिये॥
मैं लहूं आनन्द ऐसी भावना हो आप की।
पातकों से तो सदा सर्वत्र डरना चाहिये॥

आपदायें दूर होंगी देश की जिस भांति से।
सीख कर ऐसे सुधारों को सुधरना चाहिये ॥
विज्ञ 'रामनरेश' बन कर वेदकी विज्ञान का।
ब्रह्म विद्यारण्य में बेशक विचरना चाहिये ॥

ग़ज़ल २८३

चित्त को वैदिक व्रतों में जोड़ देना चाहिये।
साधनों की ओर मन को मोड़ देना चाहिये ॥
शान्ति के सम्वाद में संलग्न होना ठीक है।
मूढ़ता से नेह नाता तोड़ देना चाहिये ॥
मुक्त पुरुषों की सभा से जो हटा देगा हमें।
आंख ऐसे पातकों की फोड़ देना चाहिये ॥
मान लो शिक्षा रसीली मित्र 'रामनरेश' की।
धर्म की प्रतिकूलता को छोड़ देना चाहिये ॥

भजन २८४

होगा न सुधार, इस खोटी करनी से।
व्रतपालन से डरते हो, हठ धारि किया करते हो।
अवैदिक धर्म-प्रचार, इस खोटी करनी से ॥
छल से परधन हरते हो, निज पोच उदर भरते हो।
ठगी का जाल पसार, इस खोटी करनी से ॥
नित स्वार्थ-सिंधु तरते हो, सिर पाप भार धरते हो।
मचाकर अत्याचार, इस खोटी करनी से ॥
भ्रम में 'नरेश' परते हो बनि सुयशः शत्रु मरते हो।
अरे कुल-वृक्ष-कुठार, इस खोटी करनी से ॥

ग़ज़ल २८५

कुछ होश लो संभालो हिन्दोस्तान वालो।

बिगड़ी हुई बनालो हिन्दोस्तान वालो ॥
हर्फ़े गलत सा दुनिया में मिट गये हो लोगो ।
लो गौर तो करो तुम अय बेनिशान वालो ॥
वह वक्त था कि तुम से आके सबक़ थे लेते ।
दुनिया के लोग सारे वेदों के ज्ञान वालो ॥
विद्या में हमसरी जो, करता था कौन ऐसा ।
गफ़लत में सो रहे हो तीरो कमान वालो ॥
देखो चमन में बुग़ज़ो खुदगर्ज आया गुलचीं ।
उट्ठो भगाओ इस को ओ गुलसितान वालो ॥
क्योंकर मिलें न तुम को दुनिया के ऐशो अशरत ।
हुब्बे वतन सा जौहर रक्खो जापान वालो ॥
शिक्षा परस्पर प्रीती सीखो जापानियों से ।
लज्जा करो न झूठी अय आन बान वालो ॥
वायदे किये थे तुमने जो २ उन्हें तो सोचो ।
वायदा वफ़ाई करलो अहदो पैमान वालो ॥
आजिज़ तू सबसे कहदे जीवन है चन्द रोज़ा ।
भक्ती व नेकी करलो अहले जहान वालो ॥

भजन २८६

ज़रा तो देखना जी कैसी नाजुक है हालत हमारी-टेक
कभी आर्य्यवर्त देश था सदाचार की खान ।
मद्य मांस व्यभिचार की अब सरे आम खुली हैं दुकान ॥
कभी यहां सीता दमयन्ती थीं पतिव्रता नार ।
प्यारे प्राणपति पै अपना तन मन गई वार ॥
ब्रह्मचारी की व्यभिचारी हुई आज ऋषि सन्तान ।
नाना भांति वीरज को खा रहे हो रहे पशू समान ॥
अय मेरे आर्य्य भाइयों तुम उन ऋषियों की संतान ।

वेद धर्म पर लाखों जिनकी हुई जान कुर्बान ॥
चार पांच जानें तो आप के सामने हुईं कुर्बान।
आप मरे तो हम मुर्दों को दे गये जीवन दान ॥
आर्य समाज का नियम है यह संसार का हो उपकार।
चींटी से लेकर तो हस्ती रइयत और सरकार ॥
हिन्दू यवन ईसाई आदि प्रजा और क्या राज।
सबका गर कोई सच्चा हितैषी है तो आर्य समाज ॥
अपना कर्त्तव्य तब समझेगा किंचित् आर्य समाज।
इसके सच्चे बनें मेम्बर पंचम जार्ज महाराज ॥
लेकिन है इक बात से सबकी आंखों में ये खार।
झूंठ सत्य को पानीचत पै देता साफ़ निखार ॥
इस में चाहे कितना ही विद्वान हो या लेक्चरार।
इसके नियम को तोड़ा जिसने वो होगया फ़रार ॥
अब मेरे आर्य भाइयों बस तुम्हीं हो ज़िम्मेवार।
प्राण जांय पर जांय पर हो वेदों का प्रचार ॥
भजन के असली-सार को समझे वो चातुर प्रवीण।
वो क्या समझे नुक़्ताचीन जो विषयों में लवलीन ॥

कव्वाली २८७

उठ जागरे मुसाफ़िर किस नींद सो रहा है।
जीवन अमूल्य प्यारे क्यों मुफ्त खो रहा है ॥
रहना न यहां पै होगा दुनियां सराय फ़ानी।
फँस कर वहीं में प्यारे क्यों मस्त होरहा है ॥
लेले धर्म का तोशा मत भूल पे दिवाने।
नेकी की खेती करले क्यों पाप बो रहा है ॥
माता पिता व भाई होंगे न कोई साथी।
क्यों मोह रूपी बोझा नाहक में ढो रहा है ॥

किश्ती तेरी पुरानी हिकमत से पार करले।
पदल अथाह जल में क्यों तू डिगा रहा है॥

भजन २८८

शेर–सोता है या शख़्स वह ना आकबत अन्देश है।
है काहिली सब को बुरी क्या शाह क्या दुरवेश है॥

टेक–आलस्य नादान हिन्दुस्तान में तू कैसे आया।
सूरत है भोली भाली, डसने में नागन काली॥
मेहनत पै विप्ता डाली, कर दी है पायमाली।
किया मोहताज तूने घर दर ज़र सारा लुटवाया॥ अ०
पंजे में तेरे जिस को हमने गिरफ़्तार देखा।
सौदाई उस को रुस्वा ज़लील व ख़्वार देखा॥
अब तो टल जा हत्यारे, बिन आई मत ना मारे।
तेरीआमद, क़ायेक़यामत, बहुतेरा तैंने दांव चलाया॥ अ०

ग़ज़ल २८६

कर जावो काम दोस्तो भारत की शां रहे।
दुनिया में तुम रहो न रहो यह निशां रहे॥
तूफां है रात तीर है लहरें हैं जोश पर।
उठ बैठो जिस में किस्ती बचे बादवां रहे॥ १॥
तुम नस्ल के हफ़ीज़ बनो कुछ करतो दिखाओ।
ता नाम लेवा कोई तो ऐ मेहरबां रहे॥ २॥
कैसा ज़माना आया कि तख़्ता पलट गया।
अब वह न गुल न बाग़ वो बाग़बां रहे॥ ३॥
अब ग़ौर करने सोचने का वक़्त है कहां।
ख़ूं भर दो अपना जिस में कि यह नीमजां रहे॥ ४॥

ग़ज़ल २६०

करो परचार दुनिया में ओम् का नाम लेले कर।
बजा दो वेद का डंका ओम् का नाम ले ले कर॥
तुम्हें है आर्यो लाज़िम बनो वेदानुयायी सब।
दिखाओ अमली जीवन को धर्म पर जान देदे कर॥
करोड़ों बाल और बेवा बिलखते फिर रहे जग में।
अनाथों की करो रक्षा इन्हें सामान देदे कर॥
तुम्हारा फ़र्ज़ है प्यारो पढ़े सब देश की नारी।
बढ़ाओ उन की शोभा को उन्हें सन्मान देदे कर॥
उठाओ शुद्धि का बीड़ा करो अब धर्म की रक्षा।
मिलाओ बिछुड़े भाइयों को उन्हें तुम ज्ञान देदे कर॥
सुधारो वर्ण और आश्रम गई जो टूट मर्य्यादा।
बनाओ फिर से द्विज उनको उन्हें विज्ञान देदे कर॥
करो सब जीवों की रक्षा अहिंसा धर्म को धारो।
बचाओ जान औरों की यह अपने प्राण देदे कर॥
इसी सत धर्म की ख़ातिर गये कुरबान हो कितने।
उन्हों की हिष्ट्री देखो ज़रा तुम ध्यान देदे कर॥
भरत और राम से भ्राता कहां हैं कृष्ण से योगी।
पिता भीषम से बलधारी लड़े मैदान देदे कर॥
कहां बलि कर्ण मोरध्वज कहां हरिश्चन्द्र से दानी।
गये कर नाम जो अपना सच्चा दान देदे कर॥
गुरु गोविन्द के बच्चे हक़ीकतराय से बालक।
हुए परलोक के वासी धर्म पर जान देदे कर॥
श्री स्वामी दयानन्द और मुसाफिर वीर ने प्यारो।
किया उद्धार भारत का स्वयम् बलिदान देदे कर॥
तुम्हारा भी तभी वसुदेव जी जीवन सफल होगा।
कथा जब उन्हीं ऋषियों की सुनोगे कान देदे कर॥

गजल २६१

भुलाया धर्म वैदिक को यह मिट जाने की बातें हैं।
न सुध ली बाल विधवा की जी फट जाने की बातें हैं
हमारे देश के बच्चे पलें गैरों की गोदी में।
हम अपनी आंख स देखें यह मर जाने की बातें हैं॥
बिचारी दुख की मारी कुछ जुबां से कह नहीं सकीं।
कसाई मारें गौओं को तरस खाने की बातें हैं॥
तुम्हारे सत्य नियमों का करें हैं गैर जन पालन।
तुम्हें नहीं ध्यान है अब तक यह शर्माने की बातें हैं॥
हटाया वेद आज्ञा से कराई मूर्ती पूजन।
अविद्या छा गई झुन्नी यह बहकाने की बातें हैं॥

गजल २६२

दिल दे दो मेरे दोस्तो भारत सुधार में।
आदत है मछलियों की चढ़ सीधी धार में॥
कुछ बुजदिली का काम नहीं धर्म कार्य में।
कर जाते काम करने वाले हैं हजार में॥
तन मन औ धन लगा दो सब वैदिक प्रचार में।
आने न पावे धब्बा ऋषि के वकार में॥
धन धन है लेखराम ने कर के दिखा दिया।
हम आप भी तो हैं उसी आली तबार में॥
कह डाला जो कुछ आया था झुन्नी विचार में।
आता नहीं था सब्र दिले बेकरार में॥

गजल २६३

वैदिक धर्म पै प्यारो, तुम जां निसार कर दो।

तन मन सभी धर्म पर हां हां निसार करदो।
दुनियां में गर धर्म का प्रचार चाहते हो।
ताज़िन्दगी के सारे सामां निसार कर दो॥
तुम क्या थे हो गये क्या सोचौ तो अपने दिल में।
और अपनी बिहतरी पर निलियां निसार कर दो॥
अज़मत अगर गुज़िश्ता फिर चाहते हो वापिस।
तो ज़िन्दगी की झूठी खुशियां निसार कर दो॥
आपस में मत लड़ो तुम ऋषियों की आवरू पर।
यह खाना जंगियों का मैदां निसार कर दो॥

ग़ज़ल २६४

जान देकर धर्म की उल्फ़त निभाना चाहिये।
धर्म की रक्षा में प्यारो सर कटाना चाहिए॥
हसद कीना बुग्ज़ जिहालत से है फैला हर तरफ़।
इल्म के प्रकाश से इसको मिटाना चाहिये॥
आप की ग़फ़लत से बर्बादिये मुल्क का खौफ़ है।
करके हिम्मत देश को दुख से छुड़ाना चाहिये॥
कमर हिम्मत चुस्त बांधे क़ौम की अस्लाह पर।
क़दम मैदाने मुरव्वत में बढ़ाना चाहिये॥
सोहबते बद से बचाओ मुल्क के अत्फाल को।
हुब्ब क़ौमी का सबक़ इन को पढ़ाना चाहिये॥
माल दुनियां हेच है दुनिया के सारे काम हेच।
आक़बत जिस से बने वह धन कमाना चाहिये॥
गर है पासे मर्दुमी तो हुब्ब दुनियां का ख्याल।
क़ौमी उल्फ़त के नशे में मत भुलाना चाहिये॥
इलतमास आज़ाद की सुनलो अज़ीज़ो दोस्तो।
इल्म वेदों के लिये कालिज बनाना चाहिये॥

भजन २६५

टेक—कहने सुनने का काम नहीं अब करके दिखलाओ।
चाहे कोई क़ौम हो भाई जैनी इस्लामी ईसाई।
करो सब के साथ भलाई, धर्म उन्हें वैदिक सिखलाओ॥ १
मुल्कों मुल्कों में जाओ, जा वैदिक नाद बजाओ।
सत वैदिक धर्म फैलाओ, सच्चे तब आर्य कहलाओ॥ २
जापान और रूस बिचारा, क्या अरब चीन तातारा।
टर्की इटली जगसारा, वेदों की शिक्षा फैलाओ॥ ३
रोते हैं अनाथ बिचारे मरते हैं भूख के मारे।
हाय माता पिता सिधारे, पिता तुम बन के बन जाओ॥ ४
नित रुदन करें हैं बेवा, कोई रहा नहीं सुख देवा।
छुट गई पति की सेवा, उन्हें तुम धीरज बंधवाओ॥ ५
थी दशा हमारी कैसी, लिखी आर्य ग्रन्थों में जैसी।
वही यत्न करो परदेशी, धुरन्धर बन के दिखलाओ॥ ६

भजन २६६

हिन्दू भाइयो करो विचार अपनी बिगड़ी दशा बनालो। छोड़ दो आपस की तकरार, छुट गया लड़ने में घर बार, हो गये तुम पर ग़ैर सवार, उनसे अपना आप बचालो॥ हिन्दू०॥ जिस दिन पढ़ लोगे तुम वेद, खुद ही मिट जावें मत भेद, तुम्हारी जड़ को रहे कुरेद, पहले उन का यत्न बनालो॥ हिन्दू०॥ मिल कर सोचो कोई उपाय, जिस से झगड़ा सब मिट जाय, झंडा ओरेम् का फिर लहराये, ऐसी कुछ तजवीज निकालो॥ हिंदू०॥ हम हैं जुदा न तुम हो ग़ैर, इकोंकी भाइयों में क्या बैर। जो कुछ हुआ होगया

खैर, अब तो हाथ से हाथ मिला लो ॥ हिन्दू० ॥ जो तुम रहो हमारे साथ, किसी की ताक़त नहीं आत। तुम पर डाल सकै जो हाथ, चाहे खुले किवाड़ रखालो। हिन्दू०। जब २ पड़ेगी तुम पर भीड़, हम ही मरेंगे वहां अखीर। अपना कर दे नष्ट शरीर, जिस दिन जी चाहे आज़मालो ॥ हिन्दू० ॥ अब तक भी न हुई पहचान, ऐसे बन गये क्या नादान। कितनी बार हुवे कुरबान, ज़रा पिछला इतिहास निकालो। ॥ हिन्दू० ॥ तुमको कितनी बार संभाला, मुँह से मौत के तुम्हें निकाला। क़रता अर्ज़ दुशाने वाला, अब तो दिल से द्वेष निकालो ॥ हिन्दू० ॥

गजल २६७

किस नींद सो रहे हैं हिंदुस्तान वाले।
　　खंदक में गिर पड़े हैं ऊंचे निशान वाले ॥
राजा तेरे कहां हैं योधा तेरे कहां हैं।
　　दशरथ के राम लछमण बांकी कमान वाले ॥
नाताक़ती पै तेरे आंसू बहा रहे हैं।
　　क्या सरज़मीन वाले, क्या आसमान वाले ॥
मुँह से न बोलते हैं सर से न खेलते हैं।
　　हाकिम के सामने हैं गूंगी ज़बान वाले ॥
नेशन बिगड़ गया है खाना खराबियों से।
　　बरबाद हो चुके हैं यह खानदान वाले ॥
फैशन पर मरमिटे हैं कपड़े विदेश के हैं।
　　मलमल के हाथ रोते ढाके के थान वाले ॥
कैफ़ी जगाओ अबतो ऐसी कहां की नींदें।
　　आवाज़ देरहे हैं देशी दुकान वाले ॥

गज़ल २९८

उठो अब देश के प्रेमी, करो कल्याण भारत का।
लगा दो देश हित सर्वस, बढ़ा दो मान भारत का॥
विसारो फूट आपस की, पसारो देश में एकता।
उबारो देश को दुख से, करो अहसान भारत का।
मुहम्मदी, आर्य जैनी, बुध, सभी हम देश भ्राता हैं॥
मिटाओ द्वेष सब मिल के, लगाओ ध्यान भारत का।
कहो हम देश के सर्वस, हमारी देश सर्वस है।
बढ़ाओ देश की ममता, करो अभिमान भारत का॥
जुजननी जन्म भूमी को अधिक वैकुण्ठ से मानो।
धरो उर देशहित चिन्ता, करो गुण गान भारत का॥
बनो प्रेमी स्वदेशी के, करो निज देश का आदर।
धरो सुख देश टुकड़ा खा, करो जल पान भारत का॥
बढ़ाओ प्रेम भारत से, लगाओ नेम भारत से।
मनाओ क्षेम भारत की, बढ़ाओ ज्ञान भारत का॥
सुखी हम देश के सुख से, दुखी हम देश के दुख से।
हमारा देह भारत हित, हमारा प्राण भारत का॥
न छोड़ो देश की ममता, जो सोचा राम मरते तक।
कसो कटि देश सेवा पर, बढ़ा धन धान्य भारत का॥

गजल २९९

ऐ क़ौम तेरी इज़्ज़त सब ख़ाक अबतो होली।
उठ बैठ होश कर कुछ लाखों बरस तो सोली॥ १॥
अब क्यों भटक रहे हो कांटों के रास्ते में।
एक राह सीधी सच्ची जब कि ऋषि ने खोली॥ २॥
प्रचार के लिये तुम तन मन लगादो अपना।

घर घर अलख जगा, दो कन्धों पै डाल झोली ॥ ३ ॥
बेदों के पढ़ने वाले हों ओ३म् के उपासक।
योगी जती सती हों ऐसी पिलावो गोली ॥ ४ ॥
जब नील कण्ठ जैसे हाथों से जारहे थे।
अफसोस नव हुई ना यह आर्यों की टोली ॥ ५ ॥
आंखो के तारे हैं यह बेकस हुए तो क्या गम।
गोदी में लेलो इन को जल्दी से भर के कौली ॥ ६ ॥
संस्कार वाल 'विधवा का कुछ बुरा नहीं है।
यह बात खूब हमने कांटे पै धर के तोली ॥ ७ ॥
धर्मोन्नति की धुनि में हम मस्त हो रहे हैं।
खेली है जब से आके दयानन्द जी ने होली ॥ ८ ॥
"चन्द्र" प्रण किया जो इस को निभाये जाना।
मरदों की तो हमेशा होती है एक बोली ॥ ९ ॥

गजल ३००

आंख खोलो अब तुम्हें सोते बहुत दिन होगये।
हम को भी इस रंज में रोते बहुत दिन होगये॥
मंज़िले मक़सूद कुछ अपना भी तुम को याद है।
इस क़दर दुनिया में जो तुम तान चादर सोगये ॥ १ ॥
कौन थे क्या होगये कुछ याद है अपनी सिफ़ात।
खोते २ जहां से आखिर आप भी क्या खोगये ॥ २ ॥
ऐसा अवसर सोचलो फिर हाथ लगने का नहीं।
वक़्त पर चूके वो कर अफ़सोस आखिर को गये । ३ ॥
उम्र की किश्ती को ख़तरे से बचा कर खइये।
नाखुदा नादान दुख दरिया में लाखों डुबो गये ॥ ४ ॥
अदल औ इन्साफ़ के अन्दर क़दम रक्खे रहो।
शाह औरंगज़ेब चंगेज़ो जहां से रोगये ॥ ५ ॥

आके दुनियां में जो पर-उपकार कर सकते नहीं।
तुम से खर शूकर भले दुनियां का भार जो ढोगये॥ ६॥
अशर्फुल मखलूक का दावा है हिसमिस आप का।
पेटभर बलदेव गर जुरुओं को लेकर सो गये॥ ७॥

गजल ३०१

शैर—कबतलक सोते रहोगे इस ग़ज़ब की नींद में।
मुद्दतें तो आप को ग़मो रंज खाते होगईं॥
फिर भी कुछ नफ़रत हुई तुम को न उलटी चाल से।
सैकड़ों बरसें तुम्हें सदमे उठाते होगईं॥
टेक—उठो अब तो रंजो ग़म को मुद्दत से खा रहे हो
अपने ही खुद अमल से खंदक़ में जारहे हो॥
अब हूं तो ग़लितयों के करने से बाज़ आओ।
हालत जो अपनी दिन २ नाज़ुक बना रहे हो॥ १॥
पहिली सिफ़ात अपनी इतिहास पढ़ के देखो।
दुनिया के आलिमों में तुम्हीं पेशवा रहे हो॥ २॥
तुम अपने पूर्वजों के पढ़ देखो कारनामे।
उन की थी क्या वसीयत तुम कर भी क्या रहे हो॥ ३॥
क्या उनका कुल धरम था क्या उनका नित करम था।
औसाफ़ उन के सारे तुम क्यों भुला रहे हो॥ ४॥
अपने धर्म से गिर कर चहते हो शान्ति पाना।
मुमकिन नहीं है मित्रो क्यों सर पचा रहे हो॥ ५॥
लाखों तुम्हारे भाई ईसाई औ मुसलमां।
मिलने को तुम से राज़ी जिन्हें कर जुदा रहे हो॥ ६॥
वैदिक धरम की खूबी सब को अयां हुई है।
तुम तंग दिली से उसको घर में छुपा रहे हो॥ ७॥
दुनियां में तुम से दीगर होगा न कोई मूरख।

जो अपनी उन्नती की गर्दन कटा रहे हो ॥ ८ ॥
वैदिक असूल शुद्धी जिसके हो तुम विरुद्धी।
हस्ती जहां से अपनी खुद ही मिटा रहे हो ॥ ९ ॥
क़ानून है ये कुदरत करते हो जिससे नफ़रत।
इस फ़ेल की बदौलत तुम दुख उठा रहे हो ॥ १० ॥
श्रीरामचन्द्र जी ने शिवरीके बर खाये।
जिन्हें पूज्य पुरुष अपना तुम खुद बता रहे हो ॥ ११ ॥
कुबिजा की कृष्ण जी ने दावत कबूल की थी।
तुम जिन के गुण की गाथा दिन रात गा रहे हो ॥ १२ ॥
जो प्रेम से बुलाते उनके यहां न जाते।
वेश्याओं के तो मुह से मुंह मिला रहे हो ॥ १३ ॥
बलदेव के कथन से मित्रो बुरा न मानो।
दुनियां में तुम इसी से ओ हिन्दू कहा रहे हो ॥ १४ ॥

ग़ज़ल ३०२

शैर—आंख खोलो मित्रवर अब वक्त सोने का नहीं।
रोशनी के ज़माने में अन्धेर होने का नहीं॥
वेद सूरज का उदय दुनियां में अब तो हो गया॥
होश में आजाओ अब तक खोगया सो खोगया।
धर्म से मित्रो समाजिक आत्मिक उन्नति करो।
वृटिश शासन में किसी बदमाश का डर मत करो॥

टेक—तुम्हें खूँरुला रही है आपस की छुड़ खानी।
आफ़त बुला रही है तुम पर ये नागहानी॥
विद्या को छोड़ बैठे मुंह सत से मोड़ बैठे।
इन्साफ़ और हक़ पर दिया फेर तुमने पानी॥ १ ॥
गुण कर्म को न देखा कुल जन्म ही पै लेखा।
सदाचार सभ्यता की कर बैठे अब तो हानी॥ २॥

अक्लों पै आप की ये परदा पड़ा है कैसा ।
जो दोस्त दुशमनों की पहिचान कर न जानी ॥ ३ ॥
कर २ के ख़ाना जंगी दुशमन बनाए संगी ।
अब सहते २ तंगी हुई तलफ़ ज़िन्दगानी ॥ ४ ॥
नहीं इल्म की लियाकत तिसपर भी ये हिमाकत ।
दुनियां को नीचे समझा बने आप ज्ञानदानी ॥ ५ ॥
हालन तुम्हारी तंग है नहीं रोटियों का ढंग है ।
आती हैं लम्बी चौड़ी बातें फ़क़त बनानी ॥ ६ ॥
दुराचार दुर्व्यसन में देते हो आग धन में ।
दीनों को दान पुन में मरती तुम्हारी नानी ॥ ७ ॥
वेश्यागमन औ चोरी जुआ शराब खोरी ।
इन में न तुमने समझी कुछ भी धरम की हानी ॥ ८ ॥
गर भाई हो तुम्हारा ग़लती से कोई बेदीन ।
उसे शुद्ध कर लेने में समझी है बेइमानी ॥ ९ ॥
गर धर्म है तुम्हारा पापों का हरने हारा ।
उसको क़बूल करके होता पवित्र प्रानी ॥१० ॥
तो क्यों न एक ईसाई बनता तुम्हारा भाई ।
मिलने से उसके फिर तुम करते हो क्यों गिलानी ॥ ११ ॥
गंगा की धार कहते पतितों की पापहरनी ।
फिर क्यों न शुद्ध होता न्हाकर कोई किरानी ॥ १२ ॥
गणिका औ गीध सदना आजामील से भी अदना ।
तरे हर का नाम लेकर कहते हैं सब पुरानी ॥ १३ ॥
क्या इनसे पतित भारी हैं मुसलमां निसारी ।
जो नहीं पवित्र होते गंगा का पीके पानी ॥ १४ ॥
अपने धर्म पै तुम को विश्वास तक नहीं है ।
इज्जत है कामखां की जमा खर्च है ज़बानी ॥ १५ ॥
धन धर्म खो चुके हो बरबाद हो चुके हो ।

उठो बहुत सो चुके हो ज़रा करके मिहरबानी ॥ १६ ॥
दल दल में फंस रहे हो मरघट में बस रहे हो।
दुनियां को हँस रहे हो बने आप ब्रह्मज्ञानी ॥ १७ ॥
बलदेव ग़फ़लतों में कब तक पड़े रहोगे।
दुनियां में अब रही है कोई दम की जिन्दगानी ॥ १८ ॥

ग़ज़ल ३०३

उठो ऋषि पुत्र होने का जो कुछ अभिमान बाकी है।
अगर गुरु सब के बनने का भी अब अरमान बाक़ी है ॥
पढ़ो वेदों को सांगोपांग और दुनियां में फैलाओ।
ऋषी मुनियों की अज़मत को अभी मैदान बाक़ी है ॥ १ ॥
उठो अब कुछ नहीं बनता फ़क़त घंटा हिलाने से।
सम्भालो पूर्वजों का ज्ञान जो कुछ शान बाक़ी है ॥ २ ॥
तुम्हारे पूर्व पुरुषों में वो नौ गुण कौन ऐसे थे।
कि जिनके नाम से अब तक तुम्हारा मान बाकी है ॥ ३ ॥
फ़ख़र है आपको मित्रो ऋषी सन्तान होने का।
दिलों में आप के उनका अगर कुछ ज्ञान बाक़ी है ॥ ४ ॥
करो तकलीद तुम उनके कर्म गुण चाल ख़िसलत की।
रहे दुनियां में उनका जो कि कुछ सन्मान बाक़ी है ॥ ५ ॥
सदाचारी व सतवादी तपस्वी तत्वज्ञानी थे।
जहां में उनकी शिक्षा से न कोई स्थान बाक़ी है ॥ ६ ॥
न थी विद्या कोई ऐसी कि जिसके वो न आलिम थे।
न उनकी फ़ैज़ बरकत से कोई इंसान बाक़ी है ॥ ७ ॥
तुम्हारी मुफ़्तख़ोरी ने दिखाया आज ये दिन है।
उठो कर्त्तव्य अपने का जो कुछ भी ध्यान बाक़ी है ॥ ८ ॥
तुम्हारे देश की विद्या दिनों दिन खोती जाती है।
कला कौशल गणित वैद्यक न कुछ विज्ञान बाक़ी है ॥ ६ ॥

बहुत कुछ खो गया अपना रहा 'बलदेव' अब क्या है।
उठो अब वृद्ध भारत की ज़रासी बान बाक़ी है॥ १०॥

गज़ल ३०४

किस ओर गिर रहे हो किस धुन में जा रहे हो।
अपनी ये हिन्दुओं क्या हालत बना रहे हो॥
किस कोढ़ ने है घेरा कैसी लगी बिमारी।
न वो छोड़ती न तुम ही उसको छुड़ा रहे हो॥
न तो सोही तुम रहे हो जगते नहीं भी खुलकर।
कहला के आर्य्य, भारत रज में मिला रहे हो॥
फहराती जो पताका ऋषियों की हिम के ऊपर।
क्यों भाग्यहीन उसको नीचे गिरा रहे हो॥
सब त्यागने के साथी भाषा भी छोड़ बैठे।
हा! कौन मुँह लगाकर हिन्दू कहा रहे हो॥
इस बाढ़ में समझलो बह जाओगे सरासर।
भाषा का देश से जो नाता छुड़ा रहे हो॥
अब भी समय बहुत है करलो सुधार अपना।
सिर पर कलंक का क्यों टीका लगा रहे हो॥
चिल्लाते मर गये हम पीछे जगे भी तो क्या।
"माधव" के दिल जले को फिर क्यों जला रहे हो॥

गजल ३०५

देख कर जो विघ्न बाधाओं को घरराते हैं नहीं।
भाग पर रह करके जो पीछे हैं पछताते नहीं॥
काम कितना ही कठिन हो पर जो उकताते नहीं।
भीड़ पड़ने पर भी चंचलता जो दिखलाते नहीं॥
होते हैं यक आन में उनके बुरे दिन भी भले।

सब जगह सब काल में रहते हैं वह फूले फले ॥ १ ॥
आज जो करना है कर देते हैं उसको आजही।
सोचते कहते हैं जो कुछ कर दिखाते हैं वही ॥
मानते जी की हैं सुनते हैं सदा सब की कही।
जो मदद करते हैं अपनी इस जगत में आपही ॥
भूल कर वह दूसरे का मुंह कभी तकते नहीं।
कौन ऐसा काम है जिसको वह कर सकते नहीं ॥ २ ॥
जो कभी अपने समय को यों बिताते हैं नहीं।
काम करने की जगह बातें बनाते हैं नहीं ॥
'आजकल' करते हुये जो दिन गँवाते हैं नहीं।
यत्न करने में कभी जो जी चुराते हैं नहीं ॥
बात है वह कौन जो होता नहीं उनके किये।
वह नमूना आप बन जाते हैं औरों के लिये ॥ ३ ॥
गगन को छूते हुये दुर्गम पहाड़ों के शिखर।
वह घने जंगल जहां रहता है तुम आठौं पहर ॥
गर्जते जल-राशि की उठती हुई ऊंची लहर।
आग की भय दायिनी फैली दिशाओं में लवर ॥
है कँपा सकती कभी जिसके कलेजे को नहीं।
भूल कर भी वह नहीं नाकाम रहता है कहीं ॥ ४ ॥
चिलचिलाती धूप को जो चांदनी देवे बना।
काम पड़ने पर करें जो शेर का भी सामना ॥
हँसते हँसते जो चबा लेते हैं लोहे का चना।
'है कठिन कुछ भी नहीं' जिनके है जी में यह ठना ॥
कोस कितने ही चलें पर वह कभी थकते नहीं।
कौन सी है गांठ जिसको खोल वह सकते नहीं ॥५॥
ठीकरों को वह बना देते हैं सोने की डली।
रेग को करके दिखा देते हैं वह सुन्दर खली ॥

वह बबूलों में लगा देते हैं चम्पे की कली।
काक को भी वह सिखा देते हैं कोकिल-काकली॥
ऊसरों में हैं खिला देते अनूठे वह कमल।
वह लगा देते हैं उकठे काठ में भी फूल फल॥ ६॥
काम को आरम्भ करके यों नहीं जो छोड़ते।
सामना करके नहीं जो भूल कर मुँह मोड़ते॥
जो गगन के फूल बातों से वृथा नहीं तोड़ते।
सम्पदा मन से करोणों का नहीं जो जोड़ते॥
बन गया हीरा उन्हीं के हाथ से है कारबन।
कांच को करके दिखा देते हैं वह उज्जल रतन॥ ७॥
पर्वतों को काट कर सड़कें बना देते हैं वह।
सैकड़ों मरु भूमि में नदियां बहा देते हैं वह॥
अगम जलनिधि-गर्भ में बेड़ा चला देते हैं वह।
जंगलों में भी महा मंगल मचा देते है वह॥
भेद नभ तल का उन्होंने है बहुत बतला दिया।
है उन्हों ने ही निकाला तार की सारी क्रिया॥ ८॥
कार्य्य-थल को वह कभी नहिं पूंछते "वह है कहां"
कर दिखाते हैं असम्भव को वही सम्भव यहां॥
उलझनें आकर उन्हें पड़ती हैं जितनी ही जहां।
वे दिखाते हैं नया उत्साह उतना ही वहां॥
डाल देते हैं विरोधी सैंकड़ों अड़चलें।
वह जगह से काम अपना ठीक करके ही टलें॥ ९॥
जो रुकावट डाल कर होवे कोई पर्वत खड़ा।
तो उसे देते हैं अपनी युक्तियों से वह उड़ा॥
बीच में पड़कर जलधि जो काम देवे गड़बड़ा।
तो बना देंगे उसे वह क्षुद्र पानी का घड़ा॥
बन खँगालेंगे करेंगे व्योम में बाजीगरी

कुछ अजब धुन काम के करने की उन में है भरी ॥ १० ॥
सब तरह से आज जितने देश हैं फूले फले ।
बुद्धि विद्या धन विभव के हैं जहां डेरे डले ॥
वे बनाने से उन्हीं के बन गये इतने भले ।
वे सभी हैं हाथ से ऐसे सपूतों के पले ॥
लोग अब ऐसे समय पाकर जनम लेंगे कभी ।
देश की वो जाति की होगी भलाई भी तभी ॥ ११ ॥

भजन ३०६

दोहा–बैर विवाद मिटाय के, प्रीति करो सब कोय ।
हिल मिल कर सब जन रहो द्वेष भाव को खोय ॥
टेक—आपस का वैर हटाय के, तुम प्रीति करो सब भाई ।
फूट द्रोहको देश निकारो ईर्षा का कर दो मुँह कारो ॥
डाह रूप दुर्जन को मारो ।
लोभ का नाम मिटाय के, अरु वैरको दव जराई ॥ तुम० । १ ॥
आपस की फूटहि से प्यारे, यवन आनि घर घुसे हमारे ।
जितने किये उपद्रव सारे ।
सारा देश दबाय के, बनि गये थे भारत राई ॥ तुम० । २ ॥
फूट बीज जयचंद ने बोया, हिन्दू बल भारत से खोया ।
हाथ राज्य अपन से धोया ॥
मारा गया अखीर में, इतिहास में पढ़ लो भाई । तुम० । ३ ।
रावण था लंका का साईं, सब प्रकार बल में अधिकाई ।
जब भाई से करी लड़ाई ।
फूटने अवसर दिखायके, उसको था दिया मराई । तुम० । ४ ।
कौरव ने जब द्वेष बढ़ाया, कृष्ण विदुर ने अति समझाया ।
पर वह माना नहीं मनाया ।
अहंकार में आय के, ठानी तब कठिन लड़ाई ॥ तुम० । ५ ॥

अन्त नतीजा था यह आया, उन सबको हो गया सफ़ाया।
कोटिन वीरों को कटवाया।
वीर विहीन बनायकर, भारत को छोड़ा भाई ॥ तुम० । ६ ॥
इसी फूटने की है यह माया, हमने गौरव सकल गँवाया।
पर तो भी कुछ होश न आया।
रहे सोते चादर तानके, अरु घोर अविद्या छाई । तुम० । ७ ।
तृण को तुम अब देखो भाई, तुच्छ पदार्थ देत दिखाई।
पर जब उनको देव मिलाई।
रस्सी लेव बनाय के, तब हाथी लागि बँधि जाई । तुम० । ८ ।
हे भाई अब इसको त्यागो, बहुत दूर इससे तुम भागो।
अब तो यार नींद से जागो॥
"सागर" कहै समझाय कै, क्यों ध्यान न देते भाई । तुम० ९ ।

गजल ३०७

किश्ती भँवर में आई है अब इत्तफ़ाक़ की ।
और चल रही बाद मुखालिफ़ निफ़ाक़ की ॥
दिल एक है न क़ौम की है अब ज़बान एक।
लहज़ा है अब न एक न तर्ज़ बयान एक।
मजहब है अब न एक, न मिल्लत की शान एक।
झंडे जुदा २ हैं, कहां अब निशान एक॥
पेज़ा हैं आह ! क़ौम के बाहम जुदा जुदा।
दिल-दिल से अब जुदा है, जिगर से जिगर जुदा॥
फ़िर्के में तेरे क़ौम, यह झगड़े जो दीन के हैं।
पाले हुये यह साप, तेरे आस्तीन में हैं।
यह आग है घरों में, लगाई हुई तेरी।
यह खाक है वतन में, लगाई हुई तेरी॥
कांटे जो थे निफ़ाक़ के, बोने वह बो चुकी।

उठ बैठे आह ! दहिर में अब ख़्वार हो चुकी ॥
उठ अब तो सोके कौम कि सदियों तो सो चुकी।
अब तो संभल कि शान बुजुर्गी की खो चुकी॥

दादरा ३०८

टेक-कौमी किश्ती किनारे लगाले चलो।
कुछ तो दुनियां को करके दिखाते चलो।
शैर—तुम पारसी ईसाई न मुसलो पठान हो।
जैनी यहूदी बौद्ध न अहिले कुरान हो॥
तुम आर्यों की नस्ल हो, ऋषियों की जान हो।
आलम के तुम चिराग़ हो भारत की शान हो॥
भारत माता को दुख से छुड़ाये चलो॥ कौ० १॥
शैर—तुम दुश्मन अविद्या हो विद्या की कान हो।
वेदों के सर ज़मीं पै, तुम्हीं पासबान हो॥
हां एक बुजुर्ग क़ौम के तुम उस्तख़्वान हो।
तुम दहर में लिये हुये कौमी निशान हो॥
जाती माता को धैर्य बंधाये चलो॥ कौ० २॥
शैर—गौतम कपिल का खून तुम्हारे बदन में है।
रामो लखनकी खाक अयोध्या के वन में है।
भारत में आर्य्य क़ौम यह अपने वतन में है॥
गोया चमन की मालिका बुलबुल चमन में है।
गुलो बुलबुल को बाहम मिलाते चलो॥ कौ० ३॥
शैर—यूं आर्यों की कलब हर इक मर्दो ज़न में है।
गोया यमन का लाल अभी तक यमन में है॥
ज़िन्दा तुम्हारी क़ौम है गर्चे क़फ़न में है।
अर्जुन से क्षत्रियों का लहू इस के तन में है॥
इसे ज़िन्दों में शामिल कराते चलो॥ कौ० ४॥

शैर—आया है जो यहां उसे चलना ज़रूर है।
गो लाख वह किसी के, सर पर ग़रूर है॥
ख्वाब जाह हश्मत की, मये गुलगूं में चूर है।
लेकिन ठिकाना सब का चिता ही ज़रूर है॥
इसलिये सेवा ही करते कराते चलो॥ कौ० ५॥

गजल ३०६

ग़फ़लत की नींद त्यागो अब तो हुआ सवेरा।
कामों में लग गये सब तुम्हें काहिली ने घेरा॥ १॥
निर्बुद्धि थे जो सब में वह हो रहे हैं आलिम।
अरु छा रहा जहां में उन का ही यश घनेरा॥ २॥
कौशल कला में पूरे विज्ञान में हैं कामिल।
जिनकी ही खूबियों का चहुं ओर है बसेरा॥ ३॥
हैं न्याय में जो कामिल अरु शास्त्र के जो ज्ञाता।
सब काम हैं वह भाई उद्योग राज केरा॥ ४॥
तुम जो रहोगे सोते तो बस समझ लो मन में।
कुछ दिन में यहां से होगा उन्नति का कूच डेरा
सोचो ज़रा विचारो कैसे थे पूर्व पुरुषे।
एक वक्त में था जिनका सारा जहान चेरा॥ ६॥
गर नींद में जो रहते मोने तुम्हारे माफ़िक।
संसार में दिखाता घनघोर सा अंधेरा॥ ७॥
हे भाइयो! उठो अब बांधो कमर को कसकर।
करो मन लगाकर पारुषे इस में करो न देरा॥ ८॥
देखो तो देश की अब हालत है कैसी बदतर।
अज्ञान का है आता एक घोर सा दरेरा॥ ९॥
मेरे वचन को मानो अरु धर्म पथ पै आवै।
मुद्दत से कह रहा है "सागर" निनायें केरा॥ १०॥

गज़ल ३१०

बहुत सो लिये यार पहलू बदलना।
सँभलना चाहो तो शिताबी संभलना॥
जो इस तौर ग़ाफ़िल तुम पड़े रहोगे।
तो बेशक पड़े दोनों हाथों को मलना।
अरे भाइयो तुम कुपन्थों को छोड़ो।
है लाज़िम तुम्हें वेद मारग पै चलना॥
हुआ जाता है हाय भारत बियाबां।
शबो रोज़ पड़ती है इस दिलको कलना॥
भजो रूप हरि को तभी मुक्ति पावो।
है वर्ना कठिन रंग ग़म दुःख टलना॥

दादरा ३११

टेक—सोनें वाले न जागें जगाय हारे।
शैर—इन को खिलादी पापियों ने बहुत सी अफ़ीम।
हा होश में आते नहीं लाचार हैं हकीम॥
दवा खाते नहीं हम खिलाय हारे॥ सो० १॥
शैर—असली धर्म को छोड़ कर पकड़े बुरे करम।
पत्थर अक़ल पै पड़ गये आती नहीं शरम॥
अच्छी शिक्षा न सुनते सुनाय हारे॥ सो० २॥
शैर—सदमों की तेग़ विधवों की गर्दन में मारते।
जीवों का अपने दिल में रहम न बिचारते॥
ये है करनी बुरी हम बताय हारे॥ सो० ३॥
शैर—पे 'रूपराम' जाग अब कब का तू सो रहा।
ये बेश क़ीमत वक़्त हा बर्बाद हो रहा॥
नहीं समझै है तू समझाय हारे॥ सो० ४॥

१० धर्म वीर।

गजल ३१२

जो वैदिक धर्म पर सरवस्व अपना वार बैठे हैं।
खुशी से ज़िबह होने के लिये तैयार बैठे हैं॥
नहीं खाते किसी का खौफ़ मिस्ले लेखराम अब भी।
दिये गर्दन वह ज़ेरे खंजरे खूंख़ार बैठे हैं॥
नहीं पर्वाह किसी ने दे दिया गर क़त्ल का फ़तवा।
मुकाबिल क़ातिलों के भी वह बे हथियार बैठे हैं॥
हटा सक्ती नहीं है उनको दुनिया की कोई ताक़त।
नहीं खटका है गर दुश्मन लिये तलवार बैठे हैं॥
इन्हें पर्वाह नहीं है घात में इनके अदूगर है।
अखव्वत के नशे में ऐसे कुछ सरशार बैठे हैं॥
किसी के मुस्लह ने धर्म का कुछ हो नहीं सक्ता।
वही मिट जायेंगे जो दर्पये आज़ार बैठे हैं॥
सभा में आर्यों की देख लो एक ज्ञान की चर्चा है।
फ़क़त बुह्तान है उन पर कि वह ग़द्दार बैठे हैं॥
नहीं महदूद इन्सान तक है उन की कोशिशें पैहम।
वह करने को प्रानी मात्र का उद्धार बैठे हैं॥

ग़ज़ल ३१३

धर्म की भेंट जो इन्सान अपनी जान करते हैं।
अबद तक ज़िन्दगी के वास्ते सामान करते हैं॥
नहीं है शय कोई ऐसी कि जो बाइस खौफ़ हो इनको।
धर्म के वास्ते जो कश्मकश इन्सान करते हैं॥
मुबारिक ज़िन्दगी इनकी, जो होकर धर्म पर कुर्बान।

दमे आखिर तलक, एक र स्ती का ध्यान करते हैं॥
वह बेशक ज़िन्दये जावेद कहलाते हैं दुनियां में।
जो मुर्दा क़ालिबों में फिर से पैदा जान करते हैं॥
ज़माने को दिखा दे कौम अब तू आज मौक़ा है।
धर्म वीरों का हम तो इस तरह सन्मान करते हैं॥
'मुसाफ़र' ने दिखाया है धर्म प्रचार की ख़ातिर।
धर्म पर किस तरह कुर्बान अपनी जान करते हैं॥

ग़ज़ल ३१४

लेख लिखने में कसर की थी नहीं जिसने ज़रा।
शुद्धता से ईश का था ध्यान जिसके चित भरा॥
वीरवर! उस पान्थ का स्मरण चित में लाइये।
वह महाधर्मज्ञ था यह सोच कर सुख पाइये॥
श्राह्य था उसको यही सद्धर्म का विस्तार हो।
लोक से सारे अवैदिक जाल का परिहार हो॥
एक जगदाधार से नर नारियों का प्रेम हो।
मूर्त्ति पूजा त्यागने का चित्त से दृढ़ नेम हो॥
वेद को तजि और कोई ग्रन्थ ही इलहाम क्या?
बाइबिल कुरआन का लेना भला है नाम क्या?
डांट थी उसकी यही गुमराहियों के गोल को।
जानता था वेद के वह सर्व सुखप्रद मोल को॥
सामने पड़ता न था उस मर्द के कोई कभी।
सर्वथा उसके मुकाविल मौन थे गीदड़ सभी॥
था यही उद्देश्य उन का वेद की महिमा बढ़े।
आर्य्य सन्तति फेर उन्नति के शिखर पर जा चढ़े॥
वह द्विजेश्वर आत्मा से धीर, वीर, सुशान्त था।
आत्मदर्शी-शुद्धता प्रिय-निष्कपट निर्भ्रान्त था॥

कुफ़ तोड़ा था उसी ने ज़ोर से इसलाम का।
आज तक है ज़िक्र उस के इस तरह के काम का ॥
"लेखराम" प्रसिद्ध उसका शक्ति-शाली नाम था।
धर्म की चर्चा चला, मिलता उसे आराम था ॥
वह हुआ क़ुर्बान प्यारे समाजिक नाम पर।
मित्र ! अब तो दीजिये उसके मिशन की पूर्ति कर ॥

ग़ज़ल ३१५

क्या अलम हैं सर पै गर रक्खी हुई तलवार है।
कम वह हो सक्ता नहीं सत् धर्म से जो प्यार है ॥
ज़िबह होना फ़ख्र् है उस वीर पंडित की तरह।
पेट में जिनके घुसी पैनी छुरी तलवार है ॥
ज़िन्दा चुनवाये गये दो पुत्र थे गोविन्द के।
क़िलये सर हिन्द की शाहिद खड़ी दीवार है ॥
पहिन कर वह चूड़ियां और बन के दुलहन घर रहैं।
मौत का ख़तरा है जिनको और ख़ौफे दार है ॥

ग़ज़ल ३१६

धर्म पर जो हैं फ़िदा मरने से वह डरते नहीं।
लोग कहते हैं मर गये, दर असल वह मरते नहीं ॥
लाख दुःख देवे ज़माना होवे दुश्मन, - बे शुमार
एक कदम पीछे न हटते धर्म से जिनको प्यार ॥
न खुशी जीने की उन को मौत का खतरा नहीं।
आंसुओं का आंखों से गिरना कभी कतरा नहीं ॥
उन्नति में धर्म की गर सीस धड़ से हो जुदा।
खुश क़िसमती हैं समझते ऐसे मरने को सदा ॥
आज़मा लो हर तरह से डगमगायेंगे नहीं।

धर्म वैदिक पर कभी धब्बा लगायेंगे नहीं ॥
इम्तहां के वक्त जो साबित क़दम रहता नहीं ।
दुनियां में धर्मात्मा उसको कोई कहता नहीं ॥
बतमीज़ी का कि जब तूफ़ान था आया हुआ ।
और बादल द्वेष का था हर तरफ़ छाया हुआ ॥
काला काला ही अंधेरे में नज़र आता था जब ।
अब मेरे सारे समाजिक खुद गर्ज़ कहते थे सब ॥
जब सचाई का हवा ने सब तूफ़ा मिटा दिया ।
और बादल द्वेष का भी टुकड़े करके उड़ा दिया ॥
मिट गया अंधेरा सारा हर सू उजाला हुआ ।
चुग़लखोरों का जहां में खूब मुंह काला हुआ ॥
प्रचार वेदों का करेंगे जान में गर जान है ।
वेदों के हम हैं मुक़ल्लिद यह हमारा बयान है ॥
पोलिटीकल मामलों से हमको कुछ मतलब नहीं ।
शुरू से कहते रहे हैं यह नहीं कि अब नहीं ॥
धर्म के मार्ग पर अकसर कष्ट भी होते ही हैं ।
धमकियों से जो धर्म खोते हैं वह रोते भी हैं ॥
सबको दे रखी आज़ादी मज़हबी मैदान में ।
खूबिये क़िस्मत से है वह राज हिन्दोस्तान में ॥
ऐसे उत्तम राज में भी अगर हम सोते रहे ।
ये कहो कि फिर तो हम सारी उमर रोते रहे ॥
धर्म वैदिक देश में हर तरफ़ फैलायेंगे हम ।
यह हमारा दावा है करके भी दिखलायेंगे हम ॥
अब जहालत का ज़माना मुल्क से जाता रहा ।
दुश्मनों के बीच भी यशवन्त सिंह गाता रहा ॥

ग़ज़ल ३१७

—धर्म न छोड़ो भाइयो, चाहे सर तक देव कटाई

वेदों में जो लिखा दिखाई पक्षपात नहीं जहा लखाई।
आठ प्रमाणों से ठहराई॥
उसकोही उर धारियो, तुमको हम दिया बताई॥ चहे सर० १॥
अन्य वस्तु सब चहे हटाओ धर्म एक पर नहीं गँवावो।
इसके गये नहीं फिर पावो॥
यदि तुम सब संसार में उसको फिर ढूंढो जाई। चहे सर० २॥
हरिश्चन्द्र ने बिपति उठाई, शिव दधीच ने जान गँवाई।
तेग बहादुर सीस कटाई॥
पर नहीं इसको छांड़ियो, शाबाश तुम्हें है भाई। चहे सर० ३॥
फ़तेहसिंह ज़ोरावर भाई, मणि सिंह और हक़ीकतराई।
सबज़, सुबेग ने जान गँवाई॥
तारासिंह हि मारियां, पर हाय न दीन्ह सुनाई। चाहे सर० ४
जिस दिन मानुष मर जाता है कोई संग नहीं जाता है।
धर्म एक ही से नाता है॥
इसको नाहिं गँवाइयो, "सागर" कहता समझाई। चाहे सर० ५

भजन ३१८

टेक—निज नाम जगत में कर गये, वे धर्म वीर व्रतधारी।
धनि २ हरिश्चन्द्र सतधारी, कहां तक कीरति कहूं तुम्हारी॥
तुमने सही मुसीबत भारी, भंगी को जल भर गये॥
हा बिके सहित सुत नारी॥ निज० १॥
धन्य २ दशरथ जी तुमको, तजा न बिल्कुल सत्य धर्म को।
याद तुम्हारी आती हमको, प्रान देह सों टर गये,
पर सत्य बात नहीं टारी॥ निज० २॥
धन्य २ मोरध्वज राया, बैठे तुम्हूं धर्म की छाया।
गुण न तुम्हारा जाता गाया, सुत शिर आरी धर गये,
हा देह कुँवर की फारी॥ निज० ३॥

रूपराम या धर्म के कारन, बड़े कष्ट सहे महाराजा।
तुम भी करो धर्म का पालन, धर्म के कारन मर गये,
श्री दयानन्द ब्रह्मचारी॥ निज० ४॥

भजन ३१६

सोरठा—सुनहु मित्र दे ध्यान, सत मत कबहूँ त्यागिया।
धर्म न सत्य समान, और कोई संसार में॥

सवैया।

सत्य समान न धर्म कोई जग, ध्यान लगाय सुनो नर ज्ञानी।
सत्य के कारण जाय भरो, हरिश्चन्द्र नरेशने नीच को पानी॥
सत्य गह्यो दशरत्थ महीप ने, प्रान तजे पै तजी नहिं बानी।
'रूप' कहे सत त्यागो मती, नर या जगमें कितनी ज़िन्दगानी॥
टेक—सत मत छोड़ियो रे, जब तक प्राण रहें या तन में।
अति दुःख पाये हरीचंदने, पर नहीं सत्य बिसारा।
सुन के उनकी कथा, जिगर होता है पारा पारा॥ १॥
बिके एक ब्राह्मण के घर में, रानी राज कुमार।
सत्य के कारण आप हो गये भंगी के तावेदार॥ २॥
सत्य न छोड़ा दशरथ ज़ीने, बन भेजे रघुबीर।
अति व्याकुल हो पुत्र बिरह में, दीना त्याग शरीर॥ ३॥
'रूपराम' शठ सत मति तजियो, कहूं तोइ समझाई।
सत्य रूप बल्ली के बल सों, नाव पार हो जाई॥ ४॥

भजन ३२०

टेक—धर्म मत हरना रे,
धर्म के ऊपर तन मन धन सब वारना रे।
माया हुआ ये तुमको मारे, रक्षित रक्षा करता सारे।

ऋषि मुनियों की शिक्षा, मन में धरनारे॥ धर्म० १॥
हरिश्चन्द्र ने धर्म न हारा, राज पाट तज दीना सारा।
बिपत समूह का उसके, कोई पार नारे॥ धर्म० २॥
तेग बहादुर ने सर दीना, धर्म का किन्तु त्याग न कीना।
अपने पूर्वजों की ओर, निहारनारे॥ धर्म मत० ३॥
श्रीगोविन्द के राज दुलारे, चने हुये भीतों में पुकारे।
मरजाना मंजूर, धर्म नहीं हारनारे॥ धर्म० ४॥
शीश हकीकत ने कटवाया निर्भय होकर धर्म बचाया।
पद्मावती के सत् पर, दृष्टी डारनारे॥ धर्म० ५॥
स्वामी दयानन्द ने विष खाया लेखराम ने पेट फड़ाया।
'रौनक' धर्म हेत सब, कष्ट सहारनारे॥ धर्म० ६॥

गजल ३२१

मुबारिक है जो दुनियां के लिये दुनियामें आता है।
मिसाले शमा महिफ़िल के लिये जो सर कटाता है॥
शहीदों में बहुत अफ़ां व आला रुतबा पाता है।
धर्म पर वह जो मिटके आप अपना खूं बहाता है॥
वह अबदी जिन्दगी इस आलमें फ़ानी में पाता है।
मिसाले तुख़म जो हस्तीको अपनी खुद गलाता है॥
अदब से रोबरू खुर्शेद उस के सर झुकाता है।
जो बनकर सुबह सादिक सोते आलम को जगाता है॥
है बेहूदा जो मिट्टी माहे कामिल पर उड़ाता है।
वह पागल है दिया दिन में जो सूरज को दिखाता है॥
धर्म इन्सान को इन्सान से उल्फत सिखाता है।
धर्म के नाम पर बुज़दिल है जो खंजर चलाता है॥
वही सरअत से खुर्शेदे सदाकत चढ़ता आता है।
वह दीवाना है जो अब शमा काफ़ूरी जलाता है॥

वही दुनिया में आखिर बाद मुर्दनि नाम पाता है।
मिसाले लेखराम अपनी जो हस्ती को मिटाता है॥

भजन ३२२

उसका पता नहीं संसार में,जिन धर्म से किया किनारा ॥टेक।
एक धर्म ही अमर बनावे, कल्पों तक सुकीर्ति फैलावे।
कुल का भी तो नाम बढ़ावे, बहै नहीं भवधार में॥
हमने यह ठीक विचारा। जिन धर्म० १॥

गुरुगोबिन्द सिंह लासानी, तारूसिंह हक़ीकत ज्ञानी।
श्रीप्रताप जैसे बलवानी, हुये आर्य परिवार में॥
जिन मान महत्व प्रचारा॥ जिन धर्म० २॥

अवधेश्वर श्रीरामकहाये, अबतक जियें चरितमुनिगाये।
भरत स्वयं नीके पद पाये, यश है धर्म प्रचार में॥
सद्ग्रन्थों में निरधारा॥ जिन धर्म० ३॥

जो तुमको जीवित रहनाहै, परमधाम का सुखलहना है।
जो न पाप नद में बहना है, तो प्रिय धर्मोद्धार में॥
देदा तन मन धन सारा॥ जिन धर्म० ४॥

जितना पापी पाप बढ़ाते, उतने ही नीचे गिर जाते।
रघुनन्दन नहिं उठने पाते, आता यही विचार में॥
फिर क्यों है धर्म विसारा॥ जिन धर्म० ५॥

भजन ३२३

दोहा—सत्रासौ नब्बे विदित, साल विक्रमी पाय।
क्षत्री कुल भूषण भयो, जन्म हक़ीकतराय॥
सोरठा—धन्य बागमल वंश, धन्य मात कौराल कर।
रावी तट कर हंस, जहां भयो बलिदान तुम॥

चौपाई

प्रथम नागरी बोध करायो। पुनि निजकर्म धर्म सिखलायो॥
जब सुत साल ग्यारहवीं आई। हाफ़िज़ गृह फ़ारसी पढ़ाई॥
यवन बालकन संग संवादा। लग्यो एक दिन होन विवादा॥
सुन गुरु राम कृष्ण उपहासा। हृदय हक़ीक़त भयो उदासा॥
धर्म क्रोध चितकर यह बानी। भाषण करियं असत्य कुरानी॥

दोहा-अकस्मात मुल्ला अभी, मकतब में पग दीन।
यवन बालकन मज़हबी, पक्ष प्रकट बहु कीन॥

टेक-धन धन्य हक़ीक़तराय को, सर दिया न धर्म बिसारा॥

जिस वक़्त सुनी मुल्ला ने शिकायत सबकी।
एक साथ जिगर में आग तास्सुब भभकी॥
काज़ी के सामने कही बात मकतब की।
बदज़ात हक़ीक़त बदी करे मज़हब की॥
सुन कर काज़ी ने बानी, कहा जुर्म ये है लासानी।
ले आओ करो निगरानी, कुल हो तहकीक मुआनी॥
जब पकड़े सिपाह लेचली, व हर हर गली, पड़ी खल बली, खबर हुई मा बाप को, है बेटा क़ैद तुम्हारा॥ सरदिया० १॥

क़ाज़ी ने बुला मौलवी कहा अब भाई।
काफ़िर को सज़ा क्या कुरान ने बतलाई॥
देखो तो शरअ कानून हदीस मंगाई।
क्या जिलावतन जुर्माना कैद रिहाई॥
जब पढ़ा कौल रब्बानी, वहां साफ़ लिखी कुर्बानी।
या माने दीन कुरानी, यह राय सभों ने ठानी॥
फिर स्यालकोट दरबार, थे सुबेदार, गये सब हार, हकीकतराय को, कह दिया फ़ैसला सारा॥ सर० २॥

फिर अमीर बेग ने हुक्म तुरत फर्माया।

काज़ी को सरे इजलास वहां बुलवाया ॥
होती है इस तरह गारत सभी रियाया ।
काज़ीने रद इस सवाल को बतलाया ॥
क्या राय ग़लत चलता है, कानून हक बदलता है।
शाहों से भी न टलताहै, यह मुजरिम अहिलखता है ॥
जो हुक्म शरअ से लिया, वह हमने किया, दखल नहीं दिया। किसी की राय को क्या इसमें दोष हमारा ॥ सर० ३
क़ाज़ी का सुन मातो कौशल हवाला।
गिर पड़ी कहारो हाय हक़ीकत लाला ॥
थोड़ी सी उमर में क्या कुछ देखा भाला।
अय लाल ! तुझे क्या इसी रोजको पाला ॥
सुख कारण बेल लगाई, फल तक नहीं खाने पाई।
सींचा था जान भलाई, अब लुट गई हाय कमाई ॥
मैं धरूं कौन विध धीर, हकीकत वीर करो तदवीर, शेर ने गाय को पकड़ा न होय छुटकारा ॥ सर० ४ ॥
धर धीर हकीकत ऐसे समझाता है।
यह धर्म तत्र क्या मात हाथ आता है ॥
जीवन-चरित्र ऋषि मुनी यह बतलाता है।
यह धन्य धर्म पर प्राण जो गंवता है ॥
मैंने क्या अपराध कमाया, जो प्याला मौत पिलाया।
इतिहास गुरू समझाया; लड़कों संग शीश कटाया ॥
मां कोख तुम्हारी पाय, हक़ीक़त राय, न धर्म गँवाय, करो न उपाय को। दो प्राण दान एक बारा ॥ सर० ५ ॥
जान अमीर क़ाज़ी की कामयाबी को।
भेजा मुलज़िम लाहौर की नवाबी को ॥
समझा नवाब इस जुर्म बेहिसाबी का।
पहचान गया सब मज़हबी खराबी को ॥

मां की सुन आहोज़ारी, हुए दयावान दर्बारी।
कुछ देख नज़र रुकारी, काज़ी ने शकल बिगाड़ी॥
की बहुत सख़्त तकरीर, बना तदबीर, दिखाय नज़ीर, शरअ की राय को। कह दिया मुफ़स्सिल सारा॥ सर० ६॥

मज़बूर खां बहादुर ने यह फर्माया।
सुनतेहो हकीकत क्या यह शरअमें आया॥
हो ज़ाओ मुसलमां कुरान में यह आया।
दूसरा दण्ड कानून कत्ल बतलाया॥
हागी आबरू तुम्हारी, सब हों मौजूद सवारी।
सुख मिले बहिश्त बहारी, हम करेंगे ताबेदारी॥
कर कुरान को मंजूर, मिलेंगी हूर, बहिश्त जरूर, रहे गिलमाय को। हर हुक्म क़बूल तुम्हारा॥ सर० ७॥

यूं कहे हकीक़त धर्म नहीं खोने का।
अपयश निज कुल में कभी नहीं बोने का॥
धन माल आबरू हूर किला सोने का।
गर मिले मुझे तो भी न तुर्क होने का॥
पी जहिर कौन सुख पावे, धन से क्या काल न खावे।
यह जगत् काम नहीं आवे, एक धर्म साथही जावे॥
नहीं तजूं सरकार, धर्म कर सार, कहूं हरबार, मैं लोभ बलाय को। छूटे नहीं धर्म हमारा॥ सर० ८॥

उस रोज़ खानबहादुर ने कहा जाने को।
तारीख कल है हुक्म के सुनाने को॥
कौशल से कहा जा तू समझाने को।
माने न हक़ीकत मेरे बतलाने को॥
रो कहे हकीकत माई, पाऊं पर शीश झुकाई।
इकलौता अन्त सहाई, कीजो सरकार रिहाई॥
नवाब कहे फिलफौर, चले नहीं ज़ोर, शरअ की ओर,

जुबान हिलाय को। काफिर वह जाय पुकारा ॥ सर० ९ ॥

थी खबर न लालन पालन तुझे करूंगी।
बलिदान हकीकतराय भेंट देदूंगी॥
होजाओ मुसल्मां बेटा साथ रहूंगी।
गर रही ज़िन्दगी कभी देख तो लूंगी॥

क्या वह दिन पूत भुलाया, सूपे पर तुम्हें सुलाया।
हाय दूध याद नहीं आया, जो समझे नहीं समझाया॥
बेटा तू कहना मान, क़बूल कुरान, बचेंगे प्रान, तुझे समझाय को अब बेटा कोह बिचारा॥ सर० १० ॥

मंजूर मुझे है मात हुक्म मरने का।
त्यागन कदापि पर धर्म नहीं करने का॥
जल जाय माल धन नाम नहीं जलने का।
खटिया पर पड़ के क्या सवाब मरने का॥

हो खुश दिल आज्ञा दीजो, मेरी माता नमस्ते लीजो।
प्रिय बन्धु सबर जल पीजो, अपराध क्षमा मम कीजो॥
नहीं किया वंश बदनाम, बुरा कुछ काम, भजो प्रभु नाम, मात घबड़ाय को। कर दो एक साथ इशारा॥ सर० ११ ॥

एक तरफ़ शहरवालों का दुखी दिल होना।
दूसरी तरफ़ कौशल वागमल रोना॥
सिखलाया दुख से खान पान सुख सोना।
अब बिछा सामने मेरे मृत्यु बिछौना॥

जब हुक्म अखीर सुनाया, जल्लाद तेग ले आया।
कर मल नवाब पछताया, आंखों से नीर गिराया॥
ले मान दीन इसलाम, न आवे काम, जिद यह खाम, है शीश चलाय को। नाहक तू जावे मारा॥ सर० १२ ॥

नारी का सोच नहीं मात पिता का आया।
कह वाह गुरू की फ़तह शीश कटवाया॥

मिल गई लाश जिस वक्त जिस्म मुर्झाया।
रावी तट पर आकर भस्मान्त कराया॥
मित्रो यह धर्म कहानी, कवि "बाबूराम" बखानी।
देखो तारीख पुरानी, मज़हब तलवार कुरानी॥
वैदिक सच्ची तहरीर, कुरानी पीर करो तदबीर, सभी कलमाय को। है यह ही नॉटिस हमारा॥ सर० १३॥

ग़ज़ल ३२४

मुसलमान होने को अय क़िबला मैं तैयार नहीं।
आप की नजर है यह सर ज़रा इनकार नहीं॥ १॥
शर्म गोभी जो किसी पाप के बदल मरता।
धर्म के वास्ते जां देने में कुछ आर नहीं॥ २॥
मत अज़ाबों से डराओ मुझे डरना क्या है।
दूध क्षत्रानी का पीना यहां बेकार नहीं॥ ३॥
समझे क्या बैठे हैं बुज़दिल मुझे मेरे दुश्मन।
मुझ में सत्ता है जिसे वार नहीं पार नहीं॥ ४॥
मां का दुख वीवी का रँडापा जो सुनाते हो मुझे।
बस करो सुन जो लिया इनका क्या कर्त्तार नहीं॥ ५॥
तुम जिसे मांगते हो दुनिया के सुख के बदले।
मुझको वह त्याग के जाना भी ना दरकार नहीं॥ ६॥
धर्म ईश्वर की अमानत है वह बेचूं क्योंकर।
धर्म के बदले में दुनिया का खरीदार नहीं॥ ७॥
धर्म और जगत के सुख दुख होते हैं अक्सर साथी।
फूल पाओगे कहां, साथ जहां खार नहीं॥ ८॥
आत्मा मरती नहीं जिस्म का चाहा मारो।
लोहे की, आग की, पानी की यहां मार नहीं॥ ९॥
काट सकते हो तो बाहर का हकीकत काटो।

काटती असल हकीकत को, ये तलवार नहीं ॥ १० ॥

गजल ३२५

डराता मौत से क्या है अमर है आतमा मेरी।
नहीं कुछ कारगर होने की इस पर तेग़ यह तेरी ॥ १ ॥
इसे छेदे इसे काटे कहां यह तीर की ताकत।
इसे बांधे इसे जकड़े कहां ज़ंजीर की ताक़त ॥ २ ॥
गला सक्ता नहीं इसको सुन अय बेदादगर! पानी।
जला सक्ती नहीं है आग की भी शोलय अफ़शानी ॥ ३ ॥
अजल का खौफ़ है इसको न है कुछ मर्ग का धड़का।
डरा सक्ता नहीं हरगिज़ इसे बिजली का भी कड़का ॥४॥
धरम पर मर मिटूंगा मैं धर्म ही मुझको प्यारा है।
यही हमदर्द है मेरा यही मेरा सहारा है ॥ ५ ॥
धर्म पर कर गये गुरु तेग़ अपनी जान को कुर्बान।
हुआ सरसब्ज़ जिन के खून से यह बाग़ हिन्दुस्तान ॥६॥
धर्म के वास्ते गोविन्द ने खुद जान तक वारी।
सहे दुख हर तरह के और मुसीबत झेल की भारी ॥७॥
गुरू गोविन्द जी के लाड़ले बेटों ने सर वारा।
चुने ईंटों में व निर धर्म की लेकिन न जी हारा ॥ ८ ॥
धर्म के वास्ते पहलाद ने थी अफ़तें झेलीं।
बलायें सैकड़ों सर पर हजारों आफतें झेलीं ॥ ९ ॥
धर्म के वास्ते पूरन ने कटवाये थे दस्तो पा।
ध्रुव ने भी धर्म के वास्ते बन में किया डेरा ॥ १० ॥
हरिश्चन्द्र ने छोड़ा था धर्म की धुनि में राज अपना।
हवाले विश्वामित्र के किया था तख़्तो ताज अपना ॥११॥
लिया बनवास प्यारे राम जी ने धर्म की खातिर।
धर्म के वास्ते दशरथ ने दी जान तक आखिर ॥१२॥

दिखा दूँगा कि इन वीरों का एक औलाद हूँ मैं भी।
धर्म पर जान देने के लिये दिलशाद हूं मै भी ॥१३॥
तक़ाजे ख़ौफ से अपने अकीदे को न छोड़ूंगा।
मरूंगा जान देदूंगा धर्म से मुँह न मोडूंगा ॥१४॥
सुनो अय हाज़री! तुम भी धर्म पर जान दे देना।
ग़मोरंजो अलम सर पर जो आजायें वह ले लेना ॥१५॥
पिता जी दीजिये रुख़सत मुझे चोला बदलने की।
इजाज़त मांगती है आत्मा बाहर निकलने की ॥१६॥
न करना ग़म मेरे मरने का माता चैन से रहना।
भजन ईश्वर का करना याद में मेरी न दुख सहना ॥१७॥
तमन्ना ज़िन्दगी की है न कुछ जिन्नत के लेने की।
जो ख्वाहिश है तो बस अपने धर्म पर जान देने की ॥१८॥
कर अय जल्लाद जल्दी जो तेरे दिल में समाई है।
चला खंजर उड़ा सर देर से गरदन झुकाई है ॥१९॥

कव्वाली ३२६

धर्म पै जान दी स्वामी ने उल्फत हो तो ऐसी हो।
करो सत्य धर्म का पालन नसीहत हो तो ऐसी हो ॥१॥
पिता के हुक्म से श्रीराम जी जंगल को जाते हैं।
इजाज़त मां भी देती है सआदत हो तो ऐसी हो ॥२॥
चले जब राम जी बन को बना साथी बिरादर भी।
न छोड़ा साथ लक्ष्मण ने मुहब्बत हो तो ऐसी हो ॥३॥
गुरु गोविन्दसिंह जी के दुलारे धर्म के प्यारे।
चुने दीवार में ज़िन्दा शहादत हो तो ऐसी हो ॥४॥
न हर्फ आने दिया पद्मावती ने धर्म के ऊपर।
बनी है खाक की ढेरी जो हिम्मत हो तो ऐसी हो ॥५॥
ज़रा देखो हरिश्चन्द्र को दिया सर्वस्व है अपना।

सचाई से न मुँह मोड़ा सिदाक़त हो तो ऐसी हो ॥ ६ ॥
यह शादां राज अंगरेज़ी बड़ा मुंसिफ़ दयालु है ।
प्रभू सारे जहां में गर हुकूमत हो तो ऐसी हो ॥ ७ ॥

(११) महर्षि दयानन्द जी की दया

ग़ज़ल ३२७

उठो अब नींद ग़फ़लत से करो कुछ आप भी हिम्मत ।
दयानन्द देश हितैषी की ज़रा तुम देख लो हिम्मत ॥ १ ॥
जब आया तपवनों से वह, क्या थी देश की हालत ।
क्या इस वक़्त है, उस की ज़रा तुम देख लो हिम्मत ॥ २ ॥
यथार्थ ज्ञान के पुस्तक सभी थे लोप, फिर उन का ।
किया प्रचार है उस की ज़रा तुम देखलो हिम्मत ॥ ३ ॥
विचारें वेद अब सज्जन, पुराणों से हुई नफ़रत ।
भगाया झूठ को, उस की ज़रा तुम देख लो हिम्मत ॥ ४ ॥
न मक्का है न गिरजा अब, गई है पोल खुल सब की ।
किये असमर्थ हैं, उस की ज़रा तुम देखलो हिम्मत ॥ ५ ॥
जो शीघ्रबोध का मत था, किया है छिन्न भिन्न उसको ।
पराजय धूर्त से, उसकी ज़रा तुम देखलो हिम्मत ॥ ६ ॥
लड़कपन का विवाह है गिर गया, शादी बलूग़त से ।
बढ़ा बल वीर्य है, उसकी ज़रा तुम देखलो हिम्मत ॥ ७ ॥
निरर्थक श्राद्ध और तीर्थ दिखाया सत्य अर्थों का ।
मिटाया कपट है, उसकी ज़रा तुम देखलो हिम्मत ॥ ८ ॥
लताड़ा मूर्ति पूजन को, तथा अवतार में निश्चय ।
पुजाया ब्रह्म है, उसकी, ज़रा तुम देखलो हिम्मत ॥ ९ ॥
पढ़ाना कन्याओं का, दिखाया वेद से उसने ।
जताया न्याय है, उसकी ज़रा तुम देख लो हिम्मत ॥ १० ॥

बताया संस्कारों को ऋषि प्रणीत ग्रन्थों से।
छुड़ाया जाल से, उसकी जरा तुम देखलो हिम्मत ॥११॥
ब्राह्मण कर्म ही से हैं, समझाया सत्य के बल से।
बचाया पोपों से, उसकी ज़रा तुम देख लो हिम्मत ॥१२॥

भजन ३२८

टेक-उदय भयो है भानु भारत में, उदय भया है भानु।
छिप गयो तिमिर धरनि के नीचे, नष्ट भयो अज्ञान।
नगर २ और ग्राम ग्राम में घर घर सभा समाज॥
घोर निद्रा से जाग उठे प्रिय भ्रातृगण विद्वान।
यवन देश गई यावनी भाषा, मातृभाषाको लागी आशा।
अब सत्कार करेगी मेरा, आर्यों की सन्तान॥
देशभक्त और देश हितैषी, रसिक पुरुष मतिमान।
देश उन्नत और मधुर मनोहर, देते हैं व्याख्यान॥
स्त्री शिक्षा फिर होवन लागी, भारत भूमि तू बड़भागी॥
कन्या विधवा भई तेरी सधवा, पा आदर सन्मान।
शिल्प विद्या भलिभांति विचारो, ले उपदेश हृदयमें धारो॥
कला कौशल आदि रचो सुन्दर, नव यात्रा के यान॥
वेद उपवेदों की पढ़ो विद्या, जिससे नाशे सकल अविद्या।
सांच झूठ का निर्णय करलो, छोड़ हठ अभिमान॥
धार्मिक शील सुशिक्षित पंडित, अमीचन्द चतुरसुजान।
मिथ्या त्याग करें सतभाषण, छोड़ लाभ और हान।

भजन ३२९

टेक—अगर देश हितैषी हमें न जगाता,
तो देश उन्नति किसे ध्यान आता। अगर० ॥
अविद्या की निद्रा में सोता था भारत,

परोपकारी फिरता था घर २ जगाता। अगर० ॥ १ ॥
तपस्वी प्रतापी वो भारत का भानु,
न होता प्रकट कैसे अन्धेर जाता। अगर० ॥ २ ॥
होते किरानी कुरानी बहुत से,
यदि वेद रीति पुनर न चलाता। अगर० ॥ ३ ॥
गौ की विपद देख विधवा का दुखड़ा,
वह कहता था हा देव हा हा विधाता। अगर० ॥ ४ ॥
प्रतिष्ठित न होती कभी मातृ भाषा,
जो संस्कृत की फिर रुचि न बढ़ाता। अगर० ॥ ५ ॥
महा था कठिन वेदों का भाष्य करना,
अहो उनकी बुद्धि अहो उनकी ज्ञाता। अगर० ॥ ६ ॥
किसकी थी सामर्थ्य किसकी थी शक्ति,
जो ऐसे समय में समाज बनाता। अगर० ॥ ७ ॥
आज्ञा थी उनको सर्व शक्तिमान की,
वह अतएव आया था भस्मी रमाता। अगर० ॥ ८ ॥
स्वदेश और सजाती की थी किसको भक्ति,
छठी संख्या का जो नियम न लिखाता। अगर० ॥ ९ ॥
हवन में न पड़ती सुगन्धित सामग्री,
तो वायु यह कैसे सुगन्धित उड़ाता। अगर० ॥ १० ॥
इकट्ठ न होते जो विद्वान इतने,
हमें घर में आ कौन लैक्चर सुनाता। अगर० ॥ ११ ॥
भला कैसे होती यह फूलों की वर्षा,
कहो कैसे आती यह उत्सव की प्राता। अगर० ॥१२॥
परिव्राजकाचार्य स्वामी दयानन्द,
पधारा है परलोक डंके बजाता। अगर० ॥ १३ ॥
अमीरस न पीता कवीश्वर कदाचित,
न सत्संग करता न हरिगुण को गाता। अगर० ॥१४॥

शुभागमन हो. उत्तम समय है महाशय,
नमस्ते नमस्ते करें आर्य भ्राता । अगर० ॥ १५ ॥

गजल ३३०

टेक—आर्यभूमि में समाजिक कल्प वृक्ष लगा गये ।
उचित वक्ता सत्यवादी, सत्य धर्म बता गये ॥
होगये थे लोप चारों वेद हा इस देश से ।
कर के देशाटन महाशय, फिर उन्हें फैला गये ॥१॥
देश हितैषी वह महर्षि, दयानन्द सरस्वती ।
अपने शुभ उद्योग से, वह मोक्ष पद को पागये ॥ २ ॥
न्याय युक्ति है टपकती, उन के सत सत्यार्थ से।
भूल न जइयो कदापि, जो तुम्हें समझा गये ॥ ५ ॥
आज जो उत्सव हुआ, यह उनकाही उपकार है ।
दूर २ से आर्य्य गण मिल इस नगर में आगये ॥४॥
सैकड़ों विद्वान कविजन, उनकी स्तुति लिख चुके ।
तुझ से पायक कितने अमीचन्द, श्रेष्ठभजन सुनागये ॥५॥

भजन ३३१

भारत दुखिआरीसे 'दया' पुकारी 'आनन्द' की वारी आती है
खुश हो प्यारी एक ब्रह्मचारी, को प्रेम दुलारी लाती है ।
बादे वहारी फूली सारी, "साम" का बुलबुल गाती है ॥
आनन्द दाता ने अपनी दया कर,भेजा दयानन्द वेदोंका माहर।
मतों की घटा,सब दीनी हटा, सबसे वह डटा, मुतलक न हटा॥
सब तिमिर मिटा,अन्धकार घटा,तब श्रुतकी बजा,ओंकाररटा।

गजल ३३२

धर्म की डुबती नैया को बचाने वाले।

वेद बल्ली से किनारे पे लगाने वाले ॥ १ ॥
ख़्वाब ग़फ़लत में जो सोते थे पड़े गहरी नींद ।
खैंच के कान उन्हें होश में लाने वाले ॥ २ ॥
मनु और व्यासजी के उनको सुनकर इतिहास ।
'प्यारे उठ बैठो' यह कह कह के जगाने वाले ॥ ३ ॥
नास्तिक कहते जो थे, कोई नहीं मूजिदे खल्क ।
बहस से नाक चने इनको चबाने वाले ॥ ४ ॥
श्राद्ध तर्पण की कथा झूठ सुनाकर जो लोग ।
मुरदों के नाम का तर माल थे खाने वाले ॥ ५ ॥
स्वर्ग और नरक के जो आप बने थे मालिक ।
दान पुण्य अपने से सुख उनका जताने वाले ॥ ६ ॥
गंगा और यमुना के स्नान से मुक्ति बतला ।
दुश्मनों को जो थे अपने पे हंसाने वाले ॥ ७ ॥
राम और कृष्णजी को चोर व छलिया कहकर ।
स्वांग भर भर जो थे इलज़ाम लगाने वाले ॥ ८ ॥
ऐसे सब लोगों की बस अबला फ़रेबी जतला ।
ताकते इल्मी से मुँह उनका फिराने वाले ॥ ९ ॥
क्यों न यह कलमां जबां 'शाद' से निकले हरदम ।
आफरीं 'पोप' लकब इनका बताने वाले ॥ १० ॥
धर्म के वास्ते क्या क्या न मुसीबत झेली ।
मरहबा तुझ को राहे रास्त दिखाने वाले ॥ ११ ॥
झूठी गप्प पोपों की सुन कर जो हुये थे गुमराह ।
सत्य वेदों की कथा इन को सुनाने वाले ॥ १२ ॥
दीनो मज़हब में नहीं जिनको तअल्लुक कुछ था ।
संस्कार अज़ सरे नौ उन का कराने वाले ॥ १३ ॥
धर्म और कर्म से जो लोग कि नावाक़िफ़ थे ।
प्राणायाम और हवन इन को सिखाने वाले ॥ १४ ॥

बुतों के सामने जो शिर को नवाते थे मुदाम।
शब्द खुश ओ३म् का एक उन को पढ़ाने वाले १५ ॥
दस्ते वहशते में जो फिरते थे भटकते तनहा।
प्रीति से आप गले उनको लगाने वाले ॥ १६ ॥
ख्वेशो अक़रबा अपने जो थे मुद्दत से जुदा।
प्यार कर उन को, उन्हें उन से मिलाने वाले॥ १७ ॥
नंगो नामुस को जो लोग कि खो बैठे थे।
ग़ैरतो हिम्मत का उन्हें जोश दिलाने वाले। १८ ॥
बेवा औरात, जो रो २ के उमर काटती थीं।
मुज़दह-जाँबखश 'नियोग' उनको सुनाने वाले ॥ १९॥
शादियों मर्ग में जारी थीं रसमतें फ़ज़ूल।
महरबा नामोनिशां इन का मिटाने वाले ॥२० ॥
धन्य हो धन्य महाराज दयानन्द स्वामी।
जगत उपकार में जां अपनी गँवाने वाले ॥ २१ ॥

भजन ३३३

टेक—स्वामी दयानन्द जगाया है हम को।
पशुवत् थे इन्सां बनाया है हम को ॥
ऋषि था मुनि था महा पुरुष था वह।
धर्मवाद जिसने बताया है हम को ॥
भुलाया था हम ने तरीक़ा इबादत।
नये सिर से गोया सिखाया है हम को ॥
फ़ज़ीलत बुज़ुर्गी से थे बे खबर हम।
बखूबी वो सब कुछ दिखाया है हम को ॥
थी मायूस और सुस्त यह कौम भारी।
इन्हों ने ही धीरज बँधाया है हम को ॥
बदिल इन के मशकूर कैसे ना होवें।

नजः के वृक्ष आ बचाया है हम को ॥
था अज्ञान और मन खुश्क हो रहा था ॥
सत्य उपदेश अमृत पिलाया है हम को ॥
न जाने थे खैरात, खोते थे ज़र को ।
देवें दान किस को, जताया है हमको ॥
फँसे जाल पाखंड में हम थे सारे ।
महा पुरुष ने आ छुड़ाया है हम को ॥
न नित्य कर्म सन्ध्या को करता था कोई ।
सुबः शाम करना सिखाया है हम को ॥
परस्पर द्वेष और था बैर जारी ।
किया दूर बाहम मिलाया है हम को ॥
हर जा पे आर्य समाजें हों क़ायम ।
ये आनन्द उन्होंने दिखाया है हम को ॥
शबोरोज मस्त और गाफ़िल हुए हम ।
गिरे थे पकड़ कर उठाया है हमको ॥
सिनाख्वान क्यों कर न हो धर्म उसका ।
असत से हटा, सतपर लगाया है हमको ।

भजन ३३४

टेक—हमें बिसराय कहां गयो दयानन्द, अब तो जिया घबरायरे ।
घोर अविद्या की नींद में सोवत हमें जगाय ॥ कहां० ॥
सब कुपथ पाखण्ड खण्डन करो सुपथ लखाय ॥ कहां० ॥
गूढ़ गम्भीर आशय वेदों के, हमें दर्शाय ॥ कहां० ॥
'किशोर' को सब पाखंड से छुड़ाय, के आर्य बनाय ॥ कहां ॥०

भजन ३३५

टेक-हुये भारत के भानु प्यारे, अन्धेरा दूर हुआ सारे ।

दो०—धन्य भाग इस देश के, आये स्वामी महाराज।
दया कीनी देश पर, सभी सम्भारे काज।
बिगड़ी हालत को सुधार दिया, झूठे अब फिरते मारे२।
हुए भारत के० ॥ १ ॥

दो०-वेद शास्त्र की रीति को, घर २ दिया चलाय।
झूठी बातें देश की, सब को दिया हटाय॥
जन्म सब काही सुधार दिया, पाप सब जड़ से उंठा मारे।
हुए भारत के० ॥ २ ॥

दो०-गौ विधवा के दुःख को, सब दिया हटाय।
मन अपने में सोचिया, कीना पश्चात्ताप॥
विद्या पढ़ दुःख सब टार दिया, दिखाये इस ने वेद चारे।
हुये भारत के० ॥ ३ ॥

दो०-उसने देखी देश में, वेद धर्म की हानि।
ऐसी हालत देखकर, तन मन कर दिया दान॥
मुरदा हालत से उभार दिया, किया प्रचार फिरके सारे।
हुये भारत के० ॥ ४ ॥

दो०-जितने शत्रु वेद के, सब दिया गिराय।
जो जो आया सामने, सब को दिया हिराय॥
वेद विद्या का सहारा लिया, झूठे सब सामने आ हारे।
हुए भारत के० ॥ ५ ॥

दो०-क़ाज़ी मुल्ला मोलवी, जो जो पढ़ें कुरान।
बांधे जोगी पंडिता, जो जो बांचे पुराण॥
सभी को उसने पछाड़ दिया, ताव नहीं सकें उसकी लारे।
हुये भारत के० ॥ ६ ॥

दो०-वैदिक धर्म प्रचार में, सब को दिया जगाय।
कर्म धर्म पुरुषार्थ पर, सब को दिया लगाय॥

ऋषि ने वेद शब्द पुकार दिया, अबतो उठ कुछ करलो प्यारे
हुये भारत के० ॥ ७ ॥

दो०-'अहं ब्रह्म' और 'तत्व मसि' सब कल्पित हैं ज्ञान।
वेदों में मिला नहीं, इन का कुछ प्रमाण ॥
दूध पानी को नितार दिया, अब काहे ब्रह्म बना प्यारे।
हुये भारत के० ॥ ८ ॥

भजन ३३६

अतुलित योगी ज्ञानागार, थे श्रीदयानन्द संन्यासी ॥
अविचल ब्रह्मचर्य व्रतधार, देखा विद्या का दरबार।
छोड़ चला सारा परिवार, तोड़ी महा मोह की फांसी ॥ अतु०
निर्भय पकड़ तर्क तलवार, किया गपाड़ों का संहार।
सहते हुए मार फटकार, कुछ भी उसे न हुई उदासी ॥ अतु०
अक्षय ज्ञान प्रकाश पसार, दिया महा भ्रम तम का टार।
जीवन के पाये फल चार, वनकर ब्रह्मानन्द विलासी ॥ अतु०
करके वैदिक-धर्म प्रचार, गया प्रतापी स्वर्ग सिधार।
रामनरेश पुकार पुकार, कहा कि सुधरो भारतवासी ॥ अतु०

गजल ३३७

हमको महर्षि स्वामी गुरुदेव ने जगाया।
विज्ञान दान देकर सच्चा सुखी बनाया ॥
जिस भ्रष्ट भावना में हम थे अचेत सोये।
उसको बड़ा हमारा बैरी बता हटाया ॥
सुधरो तथा सुधारो संसार को सपूतो।
ऐसी उदार शिक्षा करके दया सिखाया ॥
आनन्द में मिलाया दुःख दोष दूर भागे।
सीधा "नरेश" मारग कैवल्य का दिखाया ॥

भजन ३३८

दानी दयानन्द से वीर ने, हमको सुखदान दिया है ॥
दया और आनन्द पसार, जिसने सच्चा किया सुधार।
जिसके लेखों का बल धार, फिरसे वैदिक धर्म जिया है॥
रच करके सत्यार्थ प्रकाश, किया अविद्या तमका नाश।
तोड़ा घोर पाप का पांश, उन्नति को अपनाय लिया है॥
लोगो बाद विवाद विसार, करो सदा जगका उपकार।
बनो आर्यकुल वीर उदार, सबको यूं उपदेश किया है॥
मेरे छूट गये सब क्लेश, जाना मंगल मूल महेश।
उसकी शिक्षा रामनरेश, हमने अमृत जान पिया है॥

गजल ३३९

अन्त दुखदाई सुखों के भोग से मुंह मोड़कर।
वीर हो, परतन्त्रता के बन्धनों को तोड़कर।
चल पड़े घर से अकेले मोह माया छोड़कर।
ब्रह्मचारी बन गये विज्ञान में जी जोड़ कर।
हो गये आधार विद्या के बड़े परिवार के।
श्री दयानन्दर्षि थे सच्चे सखा संसार के॥
ज्ञान-गौरवयुक्त विरजानन्द से विद्या पढ़े।
सत्य शिक्षा नीरधर के रत्न हो करके कढ़े।
दम्भ दल पै खण्डनों की ले महा सेना चढ़े।
तर्क की तलवार ले मैदान में आगे बढ़े।
चित्त में कर्त्तार का पूरा भरोसा धार के।
श्री दयानन्दर्षि थे सच्चे सखा संसार के॥
लेख निर्मूलक मतों पै वज्र से पड़ने लगे।
सत्य के नाराच मिथ्यावाद पै झड़ने लगे।
स्वार्थियों की छेदि छाती शूल से गड़ने लगे।

शप्प के दल दुर्दशा की दाढ़ में अड़ने लगे।
आ सके आगे न कोई युक्तियों की मार के।
श्री दयानन्दर्षि थे सच्चे सखा संसार के॥
पातकी पाखण्ड का खोटा खिलौना खोगया।
नाश की जननी अविद्या का अखाड़ा सोगया।
वंचकों का सर्व साधन डूब मरने को गया।
अभ्युदय इस देश भारत का दुबारा होगया।
मर मिटे पुतले पिशाची घोर अत्याचार के।
श्री दयानन्दर्षि थे सच्चे सखा संसार के॥
वेद का सिद्धान्त सच्चा ध्यान में धरते रहे।
धर्म का उपदेश सारे देश में करते रहे॥
भूल से भटके विरोधी से नहीं डरते रहे।
शान्त संन्यासी बने अज्ञानता हरते रहे।
मेल का मेला लगाया फूट को फटकार के।
श्री दयानन्दर्षि थे सच्चे सखा संसार के॥
बौद्ध जैनी वामियों की मूल शाखा हिल गई।
पोल मनमौजी पुराणों की कली सी खिलगई।
धूल में महिमा कुग्रन्थों की, यकायक मिलगई।
छाल छलकी छून के तन से निरस हो छिलगई।
चौंक चूके पादरी मुल्ला मियां सब हार के।
श्री दयानन्दर्षि थे सच्चे सखा संसार के॥
बीज वैदिक धर्म का ज्ञानी गुणी बोने लगे।
देश के उद्धार में सब अग्रसर होने लगे।
स्वारथी जीवन दुराशा में फँसे खोने लगे।
आलसी अन्धेर खाते में पड़े रोने लगे।
अधर्मी जागे, घटे व्यौहार भ्रष्टाचार के।

श्री दयानन्दर्षि थे सच्चे सखा संसार के॥
हा ! दिवाली के दिवस संसार सूना कर गये।
दिव्य कीरति को धरोहर सी धरा पर धरगये।
भावना सद्धर्म की सब के हृदय में भर गये।
पौरुषी संसार सागर को सहज में तरगये।
सभ्य "रामनरेश" थे वे मुक्ति के दरबार के।
श्री दयानन्दर्षि थे सच्चे सखा संसार के॥

गजल ३४०

आर्यों में आर्य धर्म का प्रचार कर गये।
ईश्वर में ध्यान धरके दयानन्द तर गये॥
पालन किया अखण्ड बाल-ब्रह्मचर्य का।
गौरव धरा पै धीर धरोहर सी धर गये॥
दिखला दिया प्रकाश वेद का समाज में।
अज्ञान अन्धकार दुराचार हर गये॥
गाते फिरे "नरेश" ब्रह्मगीत देश में।
भारत को शुद्ध ज्ञान के सांचे में भर गये॥

गजल ३४१

कैसे सुधार होता स्वामी जी जो न आते।
कैसे प्रचण्ड सारे पाखण्ड छूट जाते॥
दम्भी कथक्कड़ों की चालाकियों के मारे।
कैसे सचेत होकर वेदों के मन्त्र गाते॥
जो चाहता पढूं मैं सुखमूल ब्रह्म विद्या।
कैसे प्रपंच पोथा करि पाठ पार पाते॥
कैसे 'नरेश' उस के उपकार भूल जाऊँ।
जिसकी दया से प्राणी आनन्द में समाते॥

दादरा ३४२

शेर—यह कल की बात है था इक ऋषि यहां आया।
पलट दी जिसने ज़माने की एक तरह काया॥
वह राहे मौत से बाज़ू पकड़ निकाल गया।
पड़े थे जान बलब जान हम में डाल गया॥
वह बेदे मुक़द्दस दिखा गया हम को।
पड़े थे ख़्वाब में बे सुध जगा गया हमको॥
टेक—हमें आकर जगाया दयानन्द ने।
गुल था चिराग़ इल्मो अमल कल की बात है।
यह भी ख़बर न थी हमें दिन है कि रात है॥
ख़्वाबे ग़फ़लत मिटाया दयानन्द ने॥ हमें॥
था ज़हर पर यक़ीन कि आबे हयात है।
समझे थे राहे कुफ़्र को राहे निजात है॥
सीधा रास्ता बताया दयानन्द ने॥ हमें॥
पानी को पानी आग को बस आग कह दिया।
खोटे खरे को जांच के बे लाग कह दिया॥
हक़ व बातिल सुझाया दयानन्द ने॥ हमें॥
बे जान सब खुदा किये गरदन मरोड़ के।
वह भी तो अब रहे नहीं तैंतिस करोड़ के॥
सारा पाखण्ड हटाया दयानन्द ने॥ हमें॥
नामो निशान शिर्क का बिलकुल मिटा दिया।
तौहीद का जहान में डंका बजा दिया॥
वैदिक मत को फैलाया दयानन्द ने॥ हमें॥
आये हँसी जो कोई कानून यह पढ़े।
कोई करे गुनाह तो सूली कोई चढ़े॥
झूठा निश्चय मिटाया दयानन्द ने॥ हमें॥

होंगे शफाह हशर में पैगम्बरो इमाम।
यह एतक़ाद भी है सरासर ख्याल खाम॥
देखो सब को समझाया दयानन्द ने॥ हमें॥
जो आया उन के पास मुसल्मानो ईसाई।
उपदेश से हो फैज़याब चारों रखाई।
गौ रक्षक बनाया दयानन्द ने॥ हमें॥
बे खौफ़ो बे खतर है दयानन्द का मिशन॥
बेखार रह गुज़र है दयानन्द का मिशन॥
राहते गुलशन खिलाया दयानन्द ने॥ हमें॥
तकमील इस मिशन की करो यार मिल पड़ो।
पं. छेदालाल कर नमस्ते बाहम मिल पड़ो॥
करो कर जो दिखाया दयानन्द ने। हमें॥

दादरा ३४३

शेर-वैदिक धर्म की नैय्या मँझधार में पड़ी थी।
और डूबने में बाकी कोई घंटा या घड़ी थी॥
उमड़ा हुआ भयानक तूफान था बला का।
मेह की लगी झड़ी थी काली घटा चढ़ी थी॥
लेकिन पवित्र भूमि गुजरात की तरफ से।
एक मल्लाह रूपी आत्मा इस ओर चल पड़ी थी॥
लगता पता न कुछ भी गर वह न पहुँच पाता।
अहो! हमपै उस प्रभू की कृपा बहुत बड़ी थी॥
देकर सहारा नैय्या इस पवित्र आत्मा ने।
आकर बचाई वरनः मुसीबतें बड़ी कड़ी थीं॥
पं छेदालाल वीर वह उपकार कर गया।
संसार की हटा गया मुशकिल जो कुछ अड़ी थी॥
टेक—देखो कैसा ऋषी ने उपकार किया है।
अन्धेर का जहान में जिस दिन शबाब था।

सच पूछिये तो धर्म का खाना खराब था।
ऐसे नाजुक समय में सुधार किया है॥ दे०
करता न था कमर कोई सच्ची तलाश पर।
फाहा नमक का था जिगरे पाश पाश पर।
उसने सत्य पर ही प्राण को निसार किया है॥ दे०
जो रास्ते खराब थे उन सब को छोड़ के।
सत्य की रिवाज उसने दिया कुफ्र तोड़ के।
सत्य के तप से संसार का उद्धार किया है॥ दे०
मुशकिल जो था वह काम दयानन्द कर गया।
वेदों का फैज आम दयानन्द कर गया।
उजड़ा बाग धर्म फिर गुलज़ार किया है॥ दे०
क्या है खुदा के यां भी यहां कासा इंतजाम।
कर जाय वक्त परजे सिफ़ारिश किसी की काम।
झूठे निश्चय ने बहुतों को ख्वार किया है॥ दे०
बेलाग राहबर है दयानन्द का मिशन।
नायाब मोतिबर है दयानन्द का मिशन।
सज्जन पुरुषों ने इसको अख़्तयार किया है॥ दे०
मामूर रास्ती से हैं जिस के दसों असूल।
न मानें छेदालाल तो है शर्मनाक भूल।
इन पै चलना ही हमनें स्वीकार किया है॥ दे०

गजल ३४४

बेहोशों को होश तो वह स्वामी प्यारा दे गया।
कैसे नाजुक वक्त में हमको सहारा दे गया॥
धर्म की किश्ती भँवर में डूबने पर थी तुली।
आ गया स्वामी अचानक जो उभारा दे गया॥
वेद रूपी रत्न हमने खो दिये थे मित्रवर।
ढूढ़कर कीचड़ से हमको फिर दुबारा दे गया॥

ब्रह्मचर्य के बिना निर्बल बनी थी आत्मा।
ढूंढ़कर गुरुकुल का वह नुसखा हज़ारा देगया॥
योग साधन के बिना परमात्मा मिलता नहीं।
सब मतवालों को वह काफ़ी इशारा होगया॥
जिन यतीमों के लिये कोई जगह भी थी नहीं।
खोलकर उनको अनाथालय का द्वारा देगया॥
दुख भरी बिधवायें जो विष खा रही थीं रात दिन।
करके कृपा उन पे वह अमृत की धारा देगया॥
पंथों की अग्नी में जल कर होगये थे अन्ध जो।
है ममीरा उन को भारत का सितारा देगया॥
मुसल्मां ईसाई जैनी और पुराणी सब को वह।
महक वैदिक धर्म की वह खुश गवारा दे गया॥
बढ़ रहे थे जेहल रूपी बृक्ष कांटेदार जो।
काटने को उनके सत युक्ति का आरा दे गया॥
हो न जाये लाल गुम कोई भी मिसले नीलकंठ।
क़ौमी रत्नों को सभा का चौकीदारा दे गया॥
शर्मा हो उपकार वर्णन महर्षि का हमसे क्या।
देश हित के वास्ते सर्वस्व प्यारा दे गया॥

क़व्वाली २४५

क्या २ ऋषि दयानन्द अहसान कर गया है।
सब मुशकिलें हमारी आसान कर गया है॥
वेदों की खूबियों को रोशन किया ऋषि ने।
मग़रिब के आलिमों को हैरान कर गया है॥
अविद्या के क़िले को विद्या के बल से ढाया।
गुरुकुल बनें यहां पर एलान कर गया है॥
पतितों की भी सनातन शुद्धि बताई हमको।

क़ायम रहूँ जहां में सामान कर गया हूं ॥
शादां नहीं है मुमकिन महिमा आप की वर्णन ।
दिलोजान आह तुम पर कुर्बान कर गया है ॥

भजन थियेटर ३४६

ब्रह्मचारी दयानन्द आये, स्वामी धन धन २ जग में कहाये ।
पढ़कर पुराण सुन कर कुरान अंजील छान, सब असत जान, पा वेद ज्ञान, सत माने । भूले भारतवासी जागो, लुट गये लाल गौहर । उठ वैदिक मशाल, और जल्द जाल, सब कुछ अपना ले सम्भाल, चोरों को घर से दे निकाल, जो अन्धाधुन्ध मचाये ॥ ब्रह्मचारी० ॥ १ ॥
कर दिये आनन्द, जब धर्म डंड, दे सब घमंड और अंड वंड, तोड़े पाखण्ड के बन्धन । ईसाई हिन्दू व मुसलमां रह गये शशदर के शशदर । वो धर्म युद्ध का शूरवीर, हिम्मत थी जिसकी बेनज़ीर, गो थे लकीर के सब फ़क़ीर, पर आखिर पलटा खाय ॥ ब्रह्मचारी० २ ॥
वह सुन सफात, नहीं दे निजात सब खुराफ़ात, और झूठी बात, हुई मात बिन ईश्वर के । मत पूजो क्या संग असवद क्या जल पत्थर । जिन्हें अविद्या रूप रोग, पाषाण को लगवाते हैं भोग, वो हंसी करें विद्वान लोग, क्या टुन २ टाल बजाये ॥ ब्रह्मचारी० ३ ॥
अब यज्ञ हवन, हरी भजन की लगी लगन, जो हुए मगन अपना तन मन, कर सब अर्पण । आर्यगण उपदेश धर्म का देते हैं, फिर नगर २ । उपदेशों की अमृत वर्षा, दीनों की होती है रक्षा, सत विद्या और सत की शिक्षा गुरुकुल आन खुलाय ॥ ब्रह्मचारी दया० ४ ॥

राजगीत ३४७

दोहा-दुर्गा शंकर की दया, अब आनन्द अपार।
देखो भारत का हुआ, उदय दूसरी बार॥
टेक-ब्रह्मचारी ब्रह्म विद्या का विशद विश्राम था।
धर्मधारी धीरयोगी सर्व सद् गुण धाम था॥
कर्मवीरों में प्रतापी पर निरा निष्काम था।
श्रीदयानन्द ऋषी स्वामी सिद्ध जिसका नाम था।
बीज वेदों के उसी का पुण्य पौरुष बो गया।
देखना लोगों दोबारा भारतोदय होगया॥ १॥
सत्यवादी वीर था जो वाचनिक संग्राम का।
साहसी पाया किसी को भी न जिसके कामका॥
प्राणेद प्रेमी बना जो प्रेमके परिणाम का।
क्या दया आनन्द धारी धीर था वह नाम का॥
ध्येय सच्छिद्धा सुधा से धर्म का मुख धोगया।
देखलो लोगो दोबारा भारतोदय होगया॥ २॥
साधु भक्तों में सुयागी संयमी बढ़ने लगे।
सभ्यता की सीढ़ियों पर सूरमा चढ़ने लगे॥
वेद मन्त्रों को विवेकी प्रेम से पढ़ने लगे।
वंचकों की छातियों पर शूल से गढ़ने लगे॥
भारती जागी अविद्या का कुलाहल सो गया।
देखलो लोगों दोबारा भारतोदय होगया॥ ३॥
कामना विज्ञान वादी मुक्ति की करने लगे।
ध्यान द्वारा धारणा में ध्येय को धरने लगे॥
आलसी पापी प्रमादी पाप से डरने लगे।
अंध विश्वासी सचाई भूल में मरने लगे॥
धूल मिथ्या की उड़ादी दंभ दाहक रोगया।

देखलो लोगो दोबारा भारतोदय होगया ॥४॥

तर्क झंझा के झकोले झाड़के चलने लगे।
युक्तियों की आग चेती जालियां जलने लगे॥
पुण्य के पौधे फबीले फूलने फलने लगे।
हाथ हत्यारे हठीले मादकी मलने लगे॥
खेल देखे चेतना के जड़ खिलौना होगया।
देखलो लोगों दोबारा भारतोदय होगया ॥५॥

तामसी थोथे मतों की मोहमाया मिटगई।
ईंट की पोली पहाड़ी पहाड़ियों से फटगई॥
छून छुव्या की अछूती नाक लम्बी कटगई।
लालची पाखंडियों की पेट पूजा घटगई॥
ऊत भूतों का बखेड़ा डूब मरने को गया।
देखलो लोगों दोबारा भारतोदय होगया ॥६॥

राज सत्ता की महत्ता धन्य मंगल मूल है।
दण्ड भी कांटा नहीं है न्याय तरु का फूल है॥
भावना प्यारी प्रजा के धर्म के अनुकूल है।
जो बना वैरी विरोधी हाय उसकी भूल है॥
क्या किया जो दुष्टता का भार आकर धोगया।
देखलो लोगों दोबारा भारतोदय होगया ॥ ७ ॥

सत्य के साथी विवेकी मृत्यु को तरजायेंगे।
ज्ञान गीता गाय भूलों का भला कर जायेंगे॥
अंध विज्ञानी अंधेरे में पड़े मरजायेंगे।
आप डूबेंगे अविद्या देश में भर जायेंगे॥
शंकर आनन्दी वही है जान शिवको जो गया।
देखलो लोगों दोबारा भारतोदय होगया ॥ ८ ॥

गज़ल ३४८

ऋषी के उपकार।

ऋषी ने किये हैं जो उपकार हम पर।
उरिन भारती इस से होवेंगे क्यों कर ॥
पड़े सोते थे ख़्वाब ग़फ़लत में सारे।
जगाया ऋषीवर ने ही उन का आकर ॥
अविद्या का छाया था हरसू अन्धेरा।
चमत्कार विद्या का फैलाया घर घर ॥
जो शूद्रों पै ज़ोरों सितम जा बजा था।
किया दूर प्रेम और प्रीती सिखाकर ॥
बहाती थीं खूने जिगर बाल विधवा।
हटाया दुख उसका पुनर व्याह करके ॥
मिटाया यतीमों का दुख दर्द सारा।
सभी जाति को उनका रक्षक बना कर ॥
बने जड़ थे जड़ पूजा कर करके सब ही।
किया सब को चैतन्य ईश्वर पुजा कर ॥
डरा करते थे ऊत भूतों से हम सब।
किये दूर भय भ्रम भूठे उड़ा कर ॥
फंसे ग्रह में नव ग्रहों के थे बेढब।
दिये काट सब फंद संशय मिटा कर ॥
फलित के फलों का जो था ख़ौफ़ भूठा।
उड़ाया सभी सच्ची ज्योतिष बताकर ॥
स्याने दिवाने थे ठग ठग के खाते।
कपट की भरी भूंठी बातें बना कर ॥
करी बन्द सब इन की दूकानदारी।
गृहस्थों को ठग विद्या इनकी दिखाकर ॥
मचाते थे जो लूट पंडे पुजारी।

शिवाले में मन्दिर में और तीर्थों पर ॥
हमें झूठे वैकुंठ का लाभ देकर।
हमें झूठी मुक्ति का लालच दिखा कर ॥
वह की बन्द खोटे खरे कर्म फल को।
अटल और अमिट हमको निश्चय करा कर ॥
चढ़ाई हमारी रुचा शुभ कर्म में।
बुरे कामों से दिल हमारा हटा कर ॥
सिखाया हमें करना सन्ध्या उपासन।
जगत स्वामी का सच्चा पूजक बनाकर ॥
बताई हमें वायु और जल की शुद्धी।
हवन यज्ञ के फ़ायदे सब जताकर ॥
बढ़ाई क़दर मातृ भाषा की दिल में।
स्वाध्याय के लाभ सारे बताकर ॥
अतिथियों का सत्कार करना सिखाया।
हमें उनके गुन कर्म सारे सुझा कर ॥
बलि वैश्वदेव यज्ञ की महिमा बताई।
सभी जीवों पर प्रेम प्रीती बढ़ाकर ॥
सिखाई हमें ज़िन्दे पित्रों की सेवा।
कनागत मरों का अकारथ बताकर ॥
दिखाया हमें दान का सच्चा रस्ता।
अनधिकारी अधिकारी के गुण सुझाकर ॥
थे हम नाम तक वेद अक़दस का भूले।
पुराणों को थे वेद समझे सरासर ॥
हुआ करते थे इन की शिक्षा पै नादिम।
झुका लेते थे शर्म के मारे हम सर ॥
मुसल्मां और ईसाइयों की बनी थी।
उड़ाते थे वह दिल्लगी खूब हम पर ॥

पुरानों की बातों में आना के गफ़लत ।
किरानी कुरानी भी होते थे अकसर ॥
बुजुर्गों का अपना धर्म छोड़ते थे ।
बहुत से मसीअह व गिर्जा में आकर ॥
गरज़ डूबने को थी नैय्या धर्म की ।
बचाने को जिस वक्त आये-ऋषीवर ॥
दिखाया हमें वेदों का सीधा रस्ता ।
बने आर्य जाती के गुरु सच्चे रहबर ॥
हमें वेदों की सच्ची महिमा बताई ।
सिखाया हमें करना अभिमान उन पर ॥
बताया कि दुनिया की सब पुस्तकों में ।
यही हैं सब से आला व बरतर ॥
किताबों में दुनिया की सब से पुरानी ।
इन्हें मानते हैं जहां के सखुन वर ॥
किया इसने साबित अटल युक्तियों से ॥
इन्हें सबसे अफ़ज़ल इन्हें सब से बेहतर ॥
जो कहते हैं यह गीत हैं बहशियों के ।
गड़रियों की तुकबन्दियाँ हैं सरासर ॥
वह जाहिल हैं समझे नहीं इनकी अज़मत ।
नहीं जानते एक वेदों का अक्षर ॥
यह सर-चश्मये इल्म वहिदानियत हैं ।
यह रूहानियत का है मम्बा ज़मी पर ॥
है आलम में जो इल्म सादिक नुमायां ।
है वेदों से ही इबतदा इसकी यकसर ॥
यह भंडार हैं इल्म के और हुनर के ।
फ़लक पर हैं विद्या के यह शाह खावर ॥
जहां की धर्म पुस्तकों में कोई भी ।

नहीं ज्ञान विद्या में हैं इन की हमसर ॥
भरी हैं हर एक में ही किस्सा कहानी ।
पुरानों के किस्सों की मानन्द यकसर ॥
कुरान और तौरेत बाइबिल में क़िस्से ।
नहीं है पुरानों के किस्सों से बेहतर ॥
भरी है बहुत लग़वियत इन में ऐसी ।
मुख़ालिफ़ है जो इल्मों दानिश की यकसर ॥
नहीं हैं जो क़ानून कुदरत के मुआफ़िक ।
नहीं अक्ल कर सकी है जिसको बावर ॥
नहीं शाने इलहाम के है यह शायां ।
कि पुर इस में हों ऐसी बातें सरासर ॥
नहीं हैं यह इलहाम कहाने लायक़ ।
यह हो सक्ता हरगिज़ नहीं ज्ञान ईश्वर ॥
फ़क़त ईश्वरी ज्ञान हैं वेद अक़दस ।
हुये जो आग़ाज़े आलम में ज़ाहिर ॥
जो है इनके मुआफ़िक से है इल्म सादिक़ ।
मुनाफ़िक़ जो है इन से है कज़ब यकसर ॥
ऋषी ने जो ललकार कर अपना दावा ।
किया सारे उलमाय आलम पे ज़ाहिर ॥
मची खलबली सी मज़ाहिब में हरसू ।
हुये मौलवी पादरी सब ही मुज़तर ॥
बहिस के लिये बढ़ के मैदान में आये ।
ऋषी ने भी दिखलाये फिर अपने जौहर ।
अटल युक्तियों से किया सब पै साबित ।
कि वेदों की तालीम है सब से बेहतर ॥
यह है लग़वियत से मुबर्रा व पाक ।
अटल इनके सिद्धान्त हैं सब सरासर ॥

नहीं एक भी बात इन में है ऐसी ।
कि जो इल्म और अक्ल से होवे बाहिर ॥
है क़ानून कुदरत के बिलकुल मुवाफ़िक़ ।
मुताबिक़ है ईश्वर नियम के बराबर ॥
हुये खुश सभी सुन के इनकी हक़ायक़ ।
अमन्ना सदक़ना किया सब ने आखिर ॥
गये मान इनको लियाक़त मुख़ालिफ़ ।
समझने लगे पूज्य वेदों का माहिर ॥
सदाक़त ने अपना असर यह दिखाया ।
कि झंडा गड़ा धर्म का हर जगह पर ॥
लगे शुद्ध होने निसारा व मोमिन ।
तहेदिल से ईमान वेदों पै लाकर ॥
हुआ नाज़ फिर उन बुज़ुर्गों पै हमको ।
हुआ करते नादिम थे हम जिन पै अकसर ॥
मिला हमको इतिहास अपना पुराना ।
खुले अपने पुरुषाओं के हम पै जौहर ॥
वर्ण आश्रम की हुई दिल में अज़मत ।
बढ़ी क़द्र कर्मों की जन्मों की घटकर ॥
पुराने ऋषी मुनियों की दिल में इज्ज़त ।
हुई अज़सरे नौ नमूदार आकर ॥
हुये राम और कृष्ण आदर्श अपने ।
हुआ इनपै फिर हमको नाज़ और तफ़ाख़ुर ॥
बढ़ा प्रेम देश और जाती का दिल में ।
ऋषी वर की शिक्षा से होकर बहरवर ॥
कहां तक गिने जायें उपकार इनके ।
ज़बाने क़लम होगई अब तो क़ासिर ॥
ज़रा आर्यजन ! अपने दिल में तो सोचो ।

उरिन उनके उपकार से होंगे क्योंकर ॥
जिन्हों ने है जाने अज़ीज़ अपनी खोई।
तुम्हारे लिये और तुम्हारी ही खातिर ॥
लगे जो रहे सेवा में आप की ही।
रहे जो तुम्हारे विहीख्वाह उमर भर ॥
बने हो जो तुम नाम लेवा ऋषी के।
रखो काम तुम उनका जारी बराबर ॥
मिटादो निशां दिल से बुग़ज़ो हसद का।
बनो एक सब प्रेम प्रीती बढ़ाकर ॥
ऋषी के मिशन को दो फैला जहां में।
करो वेद प्रचार जाकर के घर घर ॥
मसायब से हरगिज़ न मुँह अपना मोड़ो।
दिलोजां से हो जाओ कुर्बां धर्म पर ॥
युधिष्ठिर हरिश्चन्द्र से सत्यवादी।
बनो भीम अर्जुन कर्ण से बहादुर ॥
सती सीता और द्रोपदी सी बनाओ।
तुम अपनी सुताओं को विद्या पढ़ाकर ॥
उरिन तबही होगे ऋषी ऋण से मित्रो।
सुनो सोबो विनती मेरी दिल लगाकर ॥
करो मिलके विनती यह नारायन आओ।
प्रभु दो हमें शक्ति और बल दया कर ॥
लगन यह रहे हर घड़ी अपने मन में।
उरिन हों ऋषी ऋण से हम जल्द क्योंकर ॥
इसी यत्न में अपना तन मन लगायें
इसी धुन में धन माल कर दें निछावर ॥

दया कीजिये हे दयासिन्धु भगवन।
कृपा करके हम सब को दीजे यही वर ॥
(शान्ती नारायन रायज़ादा मेरठ)

मुसद्दस ३४९

मूर्त्ति पूजा का धन्यवाद ।

बुरा हाल तेरा है अय बुतपरस्ती ।
कि मिलने को है खाक में तेरी हस्ती ॥
बलन्दी से रुख होगया सूये पस्ती ॥
नहूसत है गा तेरे मुँह पर बरस्ती ॥
नहीं क़ाबिले क़द्र फ़र्मान तेरा ।
मगर मानता हूँ मैं पहसान तेरा ॥ १ ॥

बहुत दिन से अहकाम तेरे हैं रद्दी ।
न क़बज़े में बाक़ी है जागीर जद्दी ॥
तहत्तुक ने क़रदी तेरी शान भद्दी ।
गया हाथ से राज और राज गद्दी ॥
न सच्ची थी तौकीर रहती वह कबतक ।
यह शहना जो उतरा हुआ नाम मर्दक ॥ २ ॥

कहां हैं वह अब रोब फ़र्मा गुज़ारी ।
कि महकूम भारत की भूमी थी सारी ॥
बस अब रहगई इतनी जागीर दारी ।
कहीं एक खेत और कहीं एक क्यारी ॥
निशाने परास्तिश फ़क़त इस क़दर है ।
सफेदी सी कुछ दानये माश पर है ॥ ३ ॥

मुसाफ़िर के रस्ते में एक खार थी तू ।
इबादत की गर्दन पै तलवार थी तू ॥
हमेशा नक़ाबे रुखे यार थी तू ।
तू दर्शन में पर्दे की दीवार थी तू ॥

तेरे लाखों ऐबों से अब दूर हूं मैं।
फ़कत एक खूबी का मशकूर हूं मैं ॥ ४ ॥
सुन अय बुत परस्ती! अगर तू न होती।
तो मिलता न हमको वह अन्मोल मोती † ॥
चमक जिसकी थी जैसे सूरज की जोती।
न यूं मादिरे शिर्क भी जान खोती ॥
शिवाले में जाता न जो मूलशंकर * ।
ठहिरते न यूं संगे माज़ूल शंकर ॥ ५ ॥
न होता अगर व्रत शिवरात्री का।
न होती जो मन्दिर में शिवलिंग पूजा ॥
न पूजा में फल फूल चढ़ता चढ़ावा।
निकलता न वह चाट चखने को चूहा ॥
किया जिसने सावित सरेलिंग चढ़कर।
खुदा को खुदा और पत्थर को पत्थर ॥ ६ ॥
किया उसने झूठा चढ़ावा वह सारा।
दिया ताव मूछों पै और यह पुकारा ॥
करे तो कोई बाल बेका हमारा।
महादेव सुनते रहे दम न मारा ॥
यक़ीं था मगर मूलशंकर के दिल में।
कि ज़िन्दा न जायेगा चूहा यह बिल में ॥ ७ ॥
अभी लेके त्रिशूल निकलेंगे शंकर।
फटा चाहती है यह पिंडी मुक़र्रिर ॥
जटा गंगधारी पिशाचों के अफ़सर।
इसे आज रखदेंगे निश्चय कुचल कर ॥
सज़ा देंगे गुस्ताख को बात क्या है।

---

† महर्षि स्वामी दयानन्द जी सरस्वती। * स्वामी जी का पहला नाम।

यह चूहा है चूहे की औक़ात क्या है ॥ ८ ॥
मगर देर तक जब कि निकला न कोई।
महादेव ने कुछ न की चारा जोई ॥
खमोशी ने अफ़सोस सब बात खोई।
कसीदे सरासर हुये यावा गोई ॥
उठी मूलशंकर के दिल में यह शंका।
बनी कैसे मिट्टी यह सोने की लंका ॥ ९ ॥
जो है भूः भुवः स्वः तप. नाम वाला।
तपः शब्द का भी दिवाला निकाला ॥
गजब है कि यूं कान में तेल डाला।
कहां खो दिया दण्ड देने का आला ॥
महादेव पर पड़ गई ओस क्योंकर ?
यह बुत बनके बैठे हैं अफसोस ! क्योंकर ॥१०॥
डरा एक चूहा भी जिन से न घर में।
बिठायेंगा क्या रोब वह विश्व भर में ॥
मैं सुनता था शक्ती महा ईश्वर में।
मगर शून्य है यह तो मेरी नज़र में ॥
फ़कत एक पत्थर तराशा हुआ है।
जो अज्ञानियों को तमाशा हुआ है ॥ ११ ॥
महादेव देवों में भी जो महा है।
यह हरगिज नहीं है कोई दूसरा है ॥
कोई उसपे गालिब हो ताकत ही क्या है।
जो परमात्मा है वह सब से बड़ा है ॥
वह क्या एक चूहे से मगलूब होता।
उसी को जो मैं पूजता खूब होता ॥ १२ ॥
मुबारिक हुआ इन ख्यालों का आना।
मुबारिक वह शब थी मुबारिक जमाना ॥
मुबारिक हुआ वह चढ़ावा चढ़ाना।

मुशारिक हुआ उसको चूहे का खाना ॥
हुआ बुलबुले दिल नवा संज वहदत ।
खुला बस घड़ी से दरे गंज वहदत ॥ १३ ॥
तबीयत वहीं मूलशंकर की बदली ।
मिटा कुफ्र बस दिलसे यह शर्त बदली ॥
कुल्हाड़ी पये नख्ल अनवार बदली ।
हुई सर बसर शिर्क की दौर बदली ॥
जो सूरज ने सूरत निकाली घटा से ।
बढ़ा मांहरे तौहीद काली घटा से ॥ १४ ॥
पड़ा था जो एक कोयालों का जखीरा ।
निकल आया उस में से अनमोल हीरा ॥
समय ने पहाड़ों के टुकड़ों को चीरा ।
तो हाथ आगया बेश क़ीमत ममीरा ॥
मिला हमको जुलमात से आबे हैवां ।
मिला उस की हर बात से आबे हैवां ॥ १५ ॥
न मंजूर की जब बुतों की गुलामी ।
रही फिर न कुछ मूलशंकर में खामी ॥
बने वह महर्षि दयानन्द स्वामी ।
तरफ़दार हक़ के सदाकत के हामी ॥
किया चश्मये फ़ैज़ जारी जिन्हों ने ।
मुसीबत में सुनली हमारी जिन्हों ने ॥ १६ ॥
नये सर से भारत में हलचल मचा दी ।
अविद्या की विद्या ने हस्ती मिटा दी ॥
जहां सामने आये वादी विवादी ।
वहीं मुँह पै मुहरे खमोशी लगादी ॥
गज़ब धाक बैठी सर अंजुमन थी ।
न कुछ मुशरिकों की मजाले सखुन थी ॥ १७ ॥

जो गिरते थे उनको ऋषी ने सँभाला।
पड़े थे जो गारों में उनको निकाला॥
"यथेमामवाचम्" का देके हवाला।
किया शूद्रों को भी अदना से आला॥
मसावात का हक़ दिया मर्दो जन को।
निकम्मा न समझा किसी उज़ब तन को॥ १८॥
मज़ाहिब हैं जितने भी हिन्दोस्तान में।
पड़े बेखबर थे यह ख्वाबे गिरां में॥
मगर था यह जादू ऋषी के बयाँ में।
खड़े होगये कान सब के जहां में॥
उड़ी भाप से जब कि हांडी की छिपनी।
तो हर एक को पड़ गई अपनी अपनी॥ १९॥
लगे कहने तौहीद के थे जो दुश्मन।
करो वेद से बुतपरस्ती का खण्डन॥
किया 'तस्य प्रतिमा न अस्ति' का वर्णन।
किसी को रहा फिर न कुछ याबे गुफ्तन॥
खिजालत से सर दर गरेबां थे सारे।
न आँखें मिलाते थे गैरत के मारे॥ २०॥
बिलखती थी आफ़त जदा बाल विधवा।
न था दर्दे खामोश का कोई चारा॥
सितम है सितम उम्र भर का रंडापा।
न हो तो कहां तक न हो भ्रूणहत्या॥
न मां कोई बन सकती थी मारे डर।
कि जंगल में फिरते थे टुकड़े जिगर॥ २१॥
वह औलाद थी याकि जंजाल मां का।
नदामत से था रंग चेहरे का फीका॥
जिन आंखोंमें पिनहां था रोना किसी का।

उन आंखों पै पहुंचा है दामन ऋषी का ॥
हुआ जो है अबग्रम फरामोश बेवा।
बची सौ गुनाहों से निर्दोष बेवा॥ २२ ॥
किया तय अहम से अहम मरहलों को।
सिखाया यह बेताब से पागलों को॥
न बचपन की शादी है ज़ेबा भलों को।
निचोड़ो कुचल कर न कच्चे फलों को॥
जो है बीज कच्चा उगेगा न पौधा।
यह सौदा है पूरे खिसारे का सौदा॥ २३ ॥
हुई थी यह एक वहिशते खाम हम को।
सबब क्या कि खौफ़े अंजाम हम को॥
ब्राह्मण समझते हैं जब आम हम को।
तो फिर नेक कर्मों से क्या काम हमको॥
बड़ा नाज़ था बाप दादा के कुल पर।
ज़माना है गर्दाब में हम हैं पुल पर॥ २४ ॥
मगर यह दयानन्द ने भेद खोला।
नहीं जन्म से कुछ ब्राह्मण का चोला॥
सखुन है यह वेदों के कांटे में तौला।
अमल से है छोटा बड़ा या मझोला॥
अनेक बवक़्ते विलादत कहां था।
न बच्चों में कुछ शूद्रता का निशां था॥ २५ ॥
यहां तक थे हम होशियारे जमाना।
कि मिलवाते रहते थे मुर्दों को खाना॥
बने पेट थे या बड़ा डाकखाना।
किये पारसल अकसर उन से रवाना॥
ज़रा देखिये डाकियों का कलेजा।
जमीं का पुलन्दा फ़लक पर भी भेजा॥ २६ ॥
रसीद आज तक भी किसी की न आई।

वह शय पाने वालों ने पाई न पाई ॥
बहुत खो चुके जब की अपनी कमाई ।
ऋषी ने बताया कि है यह ठगाई ॥
गया पारसल यह तसल्ली है झूठी ।
लुटेरों ने वह डाक रस्ते में लूटी ॥ २७ ॥
न था ख़ौफ़ हम को गुनाह के अमल में ।
समझते थे मैल सा है बग़ल में ॥
लगालेंगे ग़ोता जो गंगा के जल में ।
तो हो जायेंगे दूर सब पाप पल में ॥
ऋषी ने कहा वक़्त ज़र यूं न खोना ।
कि मुम्किन नहीं जीव को जल से धोना ॥२८॥
हज़ारों किये ऐसे उपदेश हम को ।
सताये न जिस से कोई क्लेश हम को ॥
नई ज़िन्दगी दी कमो वेश हम को ।
कहा यह बना कर निको केश हम को ॥
निराकार निर्लेप परमात्मा है ।
खुदा को मुजस्सिम समझना खता है ॥२९॥
बनायें जो बुत उसका बेसूद है वह ।
यह महदूद और ग़ैर महदूद है वह ॥
कहे कोई बुत को कि माबूद है वह ।
तो काफ़िर है मुशरिक है मर्दूद है वह ॥
जो सूरत बनाई हुई है हमारी ।
उसे कब सज़ावार है किरदारी ॥ ३० ॥
न बेताब था बुत-परस्ती पै मायल ।
न थी बात मशकूर होने के क़ाबिल ॥
मगर एक अदा पर फ़िदा होगया दिल ।
हुआ जिससे मिन्नत कशे रम्ज़ बातिल ॥

मुनासिब न था आज खामोश होना।
बुराई है एहसाँ फरामोश होना ॥१३॥
(पं० नारायणप्रसाद जी बेताब)

ग़ज़ल ३५०

ऋषी से मेरा गिला।

क्या खूब इधर आप तो परलोक सिधारे।
बैकुंठ के लेने लगे दिलचस्प नज़ारे ॥
और छोड़ गये हमको यहां किनके सहारे।
क्या उनके जो खुद उठ न सकें हाथ पसारे॥
क्या वादे यही थे ज़रा इन्साफ़ से कहना।
इन्साफ़ से भी और दिले साफ़ से कहना ॥
गर प्यार बढ़ाया था निभाया उसे होता।
जिस रागके स्वर छोड़े थे गाया उसे होता ॥
बैकुंठ में था मान किया धाम तुम्हारा।
आखिर यहांपर भी था कुछ काम तुम्हारा॥
बेवाओं के दुखड़े के लिये हमहीं थे बाक़ी।
क्या बज़्मे यतीमां के लिये हमहीं थे साक़ी ॥
यह स्त्री-शिक्षा था भला अपनाही हिस्सा।
क्या और न था हमको चुकाना कोई किस्सा॥
था फ़िक्र मुआश हमको शबो रोज़ सताता।
दम नाक में था फाकों के मारे सदा आता ॥
क्या कम थे हमारे लिये हर रोज़ के धंधे।
डाले जो नये सर से नये रंग के फंदे ॥
तुमने तो हक़ीक़त में वही बात की पूरी।
करने को तो की करके मगर रक्खी अधूरी ॥
जो आप के पीछे बने हैं क़ौम के मुखिया।

कुछ सुनतेनहीं रोके भी गो कहती है दुखिया ॥
हो बात ज़रा सी तो बिगड़ जाते है दम में ।
और ऐसे उखड़तेहैं कि हैं ताल न सम में ॥
यह लड़ते झगड़ते हैं तो आती है निदामत ।
और ऐसी निदामत कि निदामत बनिदामत॥
दाना है वही जो कि बिगड़ती को बनाले ।
आक़िल है वही जो किसी रूठ को मनाले ॥
अलक़िस्सा गये आप तो,सब रंग वह बदला ।
ओ चांदसा चेहरा था हुआ धुन्धले गँदला ॥
माना तेरी बैकुन्ठ में कुछ होगी ज़रूरत ।
जिस के लिये बंदे न मिली रहनेकी मोहलत ॥
मुझ को तेरी सौगध जो यह राज़ बताता ।
तो एक घड़ी के लिये भी जाने न पाता ॥
मैं तुझ से भी पेहले दरे कर्तार पै जाता ।
फिरदेखता वहकिस तरह कुछरहिम न खता॥
यह बीनती करता तुम्हीं मालिक हो जहांके ।
खलाक़ यहां के हो महाफ़िज़ हो वहां के ॥
क्या कहते इसी को हैं तेरी बन्दा नवाज़ी ।
पड़ती हो कहीं हार कहीं बाज़ी पै बाज़ी ॥
बैकुंठ तो पहले हां से बैकुंठ बनी है ।
आलम है हमारा कि जहां रोज़ कमी है ॥
मुश्किल था, मैं अब उनको यह क़िस्सा सुनाता ।
फ़र्याद मेरी सुन के उन्हें रहिम न आता ॥
अच्छा हुआ जो हो चुका क्या शिकवये माज़ी।
यह मसल है मोहसन कि रहो माज़ी पै राज़ी ॥

(महा० अमरनाथ जी मोहसन)

गजल ३५१

शैर--सद शुक्र उस ऋषी का हमें जो जगा गया।
गफ़लत का सामने से है पर्दा उठा गया॥
मर तो चुके ही थे वले बाक़ी था कोई दम।
आबे हयात वह तबीब हमको पिला गया॥
भारत की ज़ईफ़ी का किया हर तरह इलाज।
वह ज़ोफ़े दिल की मर्ज़ को बिलकुल मिटा गया॥
हम बारे अहसां उसके से क्योंकर हों सुबुक दोश।
जो बारे अहिसां अपने से हम को दबा गया॥
क्योंकर न गायें गुण भला उसके बताओ मित्र।
सहत हमारी के लिये खुद ज़हर खा गया॥

टेक--दुनियां में जब अविद्या अँधेर छा रहा था।
वेदों के सूर्य्य का नहीं कुछ भी पता रहा था॥
मत और मतान्तरों का छाया हुआ था बादल।
बेहद तड़फ़ २ कर वह कड़कड़ा रहा था॥
दुष्कर्मों की हवा यूं ज़ोरों पै चल रही थी।
जिसकी वजह से हर इक बस खाक खा रहा था॥
वैर और विरोधरूपा बिजली तड़फ़ रही थी।
हरसू अधर्म कौंधा जब चमचमा रहा था॥
कहीं पर भी नाम तक को जिसदम न रोशनी थी।
ब्रज में हां इक सितारा पर जगमगा रहा था॥
उस की ही रोशनी में यारो महर्षि आकर।
भारत के गाफ़िलों को वह ही जगा रहा था॥
फिर रोशनी की ख़ातिर करदी समाजें क़ायम।
यों बिजलि ही की लम्पें स्वामी जला रहा था॥
इस खौफ़नाक-मौके पर उसकी ही थी हिम्मत

खातिर तुम्हारी अपनी जो जां खपा रहा था ॥
सद शुक्र मित्र उसका जिसने हमें बचाया।
तूफ़ां में फँसना वर्ना बाक़ी ही क्या रहा था ॥

ग़ज़ल ३५२

जिस दम बहिरे जिहालत सैलाब आ रहा था।
वैदिक धरम का बेड़ा बस डगमगा रहा था ॥ १ ॥
यह बादबाने किश्ती वेदों का जो तना था।
तूफ़ाने क़हरे उसकी धज्जी उड़ा रहा था ॥ २ ॥
जब धर्म शास्त्र बल्ली हाथों से छुट गई थी।
दुख टक्करों से टक्कर टकरा के खारहा था ॥ ३ ॥
बेकार हिकमतें थीं हैरान नाख़ुदा था।
दरिया जिहल में बेड़ा जब डूब जा रहा था ॥ ४ ॥
आता नहीं नज़र था बस दम कोई किनारा।
दरियाये रंजो ग़म में दिल ग़ोते खा रहा था ॥ ५ ॥
जब डूबने में अपने कोई ही दम था बाक़ी।
तेज़ी से तैरता इक मल्लाह आ रहा था ॥ ६ ॥
मित्रो वही महर्षी जिस को कहें दयानन्द।
घबराना मत यह कह २ तस्कीं दिला रहा था ॥ ७ ॥
लेकर के फिर उसी दम सत्शास्त्ररूपी बल्ली।
किश्ती को बस किनारे स्वामी लगा रहा था ॥ ८ ॥
थी ख़ौफ़नाक मौके पर मित्र किस की जुर्रत।
उसी की ही थी यह हिम्मत हमको बचा रहा था ॥ ९ ॥

ग़ज़ल ३५३

ख़्वाबे ग़फ़लत से जगाया है ऋषी ने आन कर।
सागरे अमृत पिलाया है ऋषी ने आन कर ॥

छागई थी मुर्दनी हा ! सारे भारतवर्ष पर।
फिर इसे ज़िन्दा बनाया है ऋषी ने आन कर॥
होगया था खून ठण्डा जो ऋषी सन्तान का।
जोश फिर खूं में दिलाया है ऋषी ने आन कर॥
वेद विद्या छिप गई थी कोई भी रक्षक न था।
ज़हर का प्याला पिया पर आह तक मुंह से न की॥
शान्ती का राज़ पाया है ऋषी ने आन कर॥
कर सकें क्योंकर वयां अहसान उस स्वामी के हम।
फैज़ का दरिया बहाया है ऋषी ने आन कर॥

ग़ज़ल ३५४

बाग़वां बन के दयानन्द जो न आजाता।
गुलशने हिन्द कहां धूप से मुर्झा जाता॥
ख्वाब ग़फ़लत से अगर हमको जगाता न ऋषी।
सांप इसलाम ईसाईयत का हमें डस जाता॥
हम ही मिट जाते ज़माने से मिसाले उनका।
अपनी ग़फ़लत से हरीफ़ों का भला क्या जाता॥
मिस्ल अन्धों के अन्धेरे में भटकते फिरते।
रास्ता हक़ का अगर हमको न दिखला जाता॥
आज चुप यूं यह भला बैठते कैसे दुश्मन।
नीचा गर इनको दयानन्द न दिखला जाता॥
लूट ले जाते अंधेरे में खज़ाना दुश्मन।
सोतों का हाथ पकड़ कर न जो बिठला जाता॥
खून से इस को ऋषि ने जो न सींचा होता।
धर्म का वृक्ष उसी वक़्त यह कुम्हला जाता॥
जान गर मिस्ल हक़ीक़त तू मुसाफ़िर देता।
मौत में ज़िन्दगी का तुझ को मज़ा आजाता॥

गजल ३५५

कि जब अहिसान हम उस महऋषी का याद करते हैं।
तो बस उसका तहे दिल से वही धनिवाद करते हैं॥
कभी जो देखते थे हम कोही गैरों की नज़रों से।
वह देखो आज जानो माल से इमदाद करते हैं॥
कभी जिनको कि अपनी बात तक सुनने से नफ़रत थी।
हमारी आज हर इक बात पर वह स्वाद करते है॥
लगा करके गले वर्षों के बिछुड़े भाइयों को हम।
लो देखो अपना फिर वीराना घर आबाद करते है॥
न हम को इल्म हासिल करने की बिलकुल इजाज़त थी।
तरक्क़ी धर्म की हो करके अब आज़ाद करते हैं॥
हुआ था एक भाई का जो दुशमन दूसरा भाई।
वही आपस में देखो रब्त और इत्तहाद करते हैं॥
कभी ग़लती से थे जो दुशमने जां उस महर्षी के।
वही अब मित्र रोते हैं ऋषी की याद करते हैं॥

हमारा पश्चात्ताप।

गजल ३५६

कहना स्वामी का बजा था मुझे मालूम न था।
हिन्दुओं में भी दग़ा था मुझे मालूम न था॥
अपनी ग़लती पै परेशान पशेमान हुआ।
उसने सब कुछ भी कहा था मुझे मालूम न था॥
अपना बिन पैसे का ठगियों ने बनाया था गुलाम।
उनके फंदे में फंसा था मुझे मालूम न था॥
आह अफ़सोस कि खुदग़र्ज़ों के बहकाने से।

वैर उस ऋषी से किया था मुझे मालूम न था ॥
दुश्मने जान समझता था कभी मैं उसको।
वह तो ग़मख़्वार मेरा था मुझे मालूम न था ॥
हाय यह ख़्याल न था ख़्वाब तलक में मुझको।
काटता अपना गला था मुझे मालूम न था ॥
बात ऋषि की मुझे लगती थी ज़हर सी उस दम।
मित्र वह देता दवा था मुझे मालूम न था ॥

गजल ३५७

कहां है ऋषिवर दया का सागर जो लाख मुर्दे जिला गया है।
तलाश करके वह वेद अमृत हमें भिषग्वर पिला गया है॥
बिछड़ गये थे करोड़ भाई बने मुसलमान और ईसाई।
थी हम ने उनकी खबर भुलाई उन्हें वह हमसे मिला गया है॥
क़बर व भूतों को पूजते थे मसान मरघट को सेवते थे।
उजाड़ बेहड़ में घूमते थे चमन वह वैदिक खिला गया है॥
हुये थे बामी भ्रष्ट कामी उड़ाते मद औ कबाब दिन भर।
छुड़ाके हमसे अभक्ष्य भोजन वह घृतगोरस खिला गया है॥
छिनी थी स्त्री व शूद्रदल से अमोल हीरों की चार थैली।
बिना पक्ष के वकील बनके वह वेद पूंजी दिला गया है॥
मिसाल वहशी के काटते थे हुये परस्पर बड़े विरोधी।
छुड़ाके उनमतों की वहशत वह सबको सबसे मिला गया है॥
कमाल नाज़ां था अपने मत पर समझते वैदिक धर्मको झूठा।
दी खोल क़लई असत् मतों की ज़मींमें शेखी मिला गया है॥
डरे थे पंडित हमारे जिन से हमेश दबते रहे बिचारे।
उड़ाके उनके मतोंकी धज्जी दिलों को उनके हिला गया है॥
व सौंप हमको समाज मन्दिर बनाके उनका हमें मुहाफ़िज़।
शरीर कुटिया को रामदाके अमर महल में बिला गया है॥

भजन ३५८

जाऊं २ रे ब्रह्मचारी तुम पर वारना जी।
भूत पिशाच जोगिनी चक्कर, पूजत हैं नर नारी घर २।
तुमने युक्ति विचारी, वेद प्रचारना जी॥ जाऊं २ रे०॥
धर्म हीन थे नर और नारी, बने हुए थे सब व्यभिचारी।
तुम ने उन्हें सिखाया, धर्म का पालना जी॥ २ रे०॥
लोक लोकान्तर देशदेशान्तर, मत मतान्तर द्वीप द्वीपान्तर।
तुम से कोई न जीता, सबही हारता जी॥ जाऊं २ रे०॥
धर्म के मंड से अधर्म के खंड से, तप अखंड से तेज प्रचंड से।
देशका तिमिरमिटाया, ओ३म् प्रकाशना जी॥ जाऊं २ रे०॥
शास्त्रार्थ से धर्म का मंडन, प्रबल युक्ति से अधर्म का खंडन।
था यह नियम तुम्हारा, देश सुधारनाजी॥ जाऊं २ रे०॥
सेवक की यह विनय है प्यारो, अंधकार को जल्दी टारो।
ऋषि मिशन से सीखो, नीति विचारनाजी॥ जाऊं २ रे०॥

भजन ३५९

इस सोते हुये भारत को, ऋषी ने आन जगाया है।
हमें ऋषीने इंसान बनाया, धर्म भक्ति का मंत्र सिखाया।
और अधर्म से सब को बचाया, धर्म का मार्ग बताया है॥
वेद विद्या जो सबछुट गई थी, मातृ भाषाभी सब उठगई थी।
शुभ करनी भी सब मिट गई थी, अब उन पर ध्यान दिलाया है॥
दीन दुखिया अनाथ विचारे, धर्म खोते थे भूखों के मारे।
हम सोते थे पांव पसारे, ऋषी ने छाती से लगाया है॥
जन्म ही से वर्ण को थे माने, नहीं आश्रमी को थे पहिचाने।
और अपने हुवे थे बिगाने, ऋषीने फिरसे मिलायाहै॥
पहिले थे यहां बहुत आचारी, ब्रह्मज्ञानी थे और ब्रह्मचारी।

अब फिर हों वह ही सदाचारी, इसीसे गुरुकुल बनायाहै
नाना पंथों के बादल हटाये, कैसे उत्तम समाज बनाये।
और वेदों के भाष्य रचाये; ओ३म् प्रकाश दिखाया है॥
बिगड़ी दशा हमारी सुधारी, अब चेत तू सेवक अनारी।
दयानिधिकी दयाथी ये भारी, समय जो अब हाथआयाहै॥

महर्षि पर निन्दा का प्रभाव।

दृश्य—काशी नगर के एक वाटिका में श्री स्वामी दयानन्द सरस्वती का बैठे हुये मुखालिफ़ मज़हबके विद्वानोंके साथ धर्म चर्चा करते हुये नज़र आना—गाना

गजल ३६०

महर्षि।

अजर अमर निर्लेप निरंजन निर्विकार करतारा रे।
सारे जग का करता धर्ता उसका पकड़ सहारा रे॥

नवीन वेदांती।

झूठी दुनिया हम सब झूठे मात पिता सुत दारा रे।

महर्षि

गर तुम झूठे सारे तो फिर झूठा कथन तुम्हारा रे॥

मूर्तिपूजक।

लेती उचित शरण राम की जो सच्चा औतारा रे॥

महर्षि।

निराकार निष्पाप असीमा कैसे हो साकारा रे।

ईसाई।

इब्न खुदा की शरण में आकर पापों से छुटकारा रे।

महर्षि।

पिता हमें मिल जावे सीधा निष्फल पूत सहारा रे॥

मुसल्मान।

मुस्लिम को फ़र्दौस में जाकर हूर मिले महपारा रे।

महर्षि।

मैं हूं मुक्ती का अभिलाषी हूर नहीं दरकारा रे॥

सारे।

स्वामी कैसे जीव भला फिर पावे मुक्ती द्वारा रे।

महर्षि

शरण में आये दास हरी का जो दुख मेटनहारा रे॥

गजल ३६१

बाजार से एक आर्य का आना।

आर्य—प्रणाम करके।

तुम्हें बदनाम भगवान यह सारे बाज़ार करते हैं।

महर्षि।

मुझे मशहूर करते हैं बहुत उपकार करते हैं॥

आ०-चढ़ाकर एक गधेपर आदमी मुंह कर दिया काला
पुकारें नाम से भगवन् के अत्याचार करते हैं।
म०-मुनव्वर चांद सा मुखड़ा, तो है असली दयानन्द का।।
वह मसनूई दयानन्दों की मिट्टी ख़्वार करते हैं।।
आ०-उठा पत्थर वह मारें रूस्याह पर और कहते हैं।
यह देखो किस तरह स्वामी का हम सत्कार करते हैं।।
म०-यही पत्थर था उनका इष्ट जो वह फेंकते हैं अब।
वह गोया एक तरह से इष्ट का तिरस्कार करते हैं।,
आ०-वह देते सैकड़ों ही गालियां हैं शोक भगवन् को।
वह दुर्वचनों की भगवत् नाम पर बौछार करते हैं।।
म०-जो दुर्वचनों का होगा ख़ातमा शुभ वचन सीखेंगे।
इन्हें हम आप शिक्षा के लिये तैयार करते हैं।।
आ०-तुम्हें वह नीच जाती से बताकर तालिया पीटें।
तुम्हारी जात से नफ़रत का वह इज़हार करते हैं।।
म०-ब्राह्मण जन्म से मैं था मुझे वह नीच कहते हैं।
जन्म से नीच हैं सारे यह खुद प्रचार करते हैं।।
आ०-तुम्हारे ज़ोर का, शक्ति का वह ख़ाका उड़ाते हैं।
जो देकर सांड से तशबीह बहुत धिक्कार करते हैं।।
म०-हरी का शुक्र है सारे मेरी शक्ति के हैं क़ाइल।
जता ब्रह्मचर्य की अज़मत जगत् उपकार करते हैं।।
आ०-ज़ुबां की आपकी नश्तर कहें छोटे बड़े भगवन्।
बड़े ही क्रोध से वह लानतो फटकार करते हैं।।
म०-जो कहते हैं "बुरा है डाक्टर" नश्तर चुभाने पर।
वह उसकी दयालता का बाद में इकरार करते हैं।।
आ०-ग़रज़ भगवान् की निन्दा मूढ़ हर प्रकार करते हैं।।
म०-यह उनकी है दया वह दास का उद्धार करते हैं।।

भुलाने पंथ का शंका महर्षी ने मिटाया है ॥
नहीं बलिदान बकरों का न होवे कत्ल गौवों की ।
अहिंसा धर्म का डंका महर्षी ने सुनाया है ॥
मज़हबी वेद के दुश्मन निशाचर दुष्ट बसते थे ॥
धरम अग्नी से वह लंका महर्षी ने जलाया है ॥
देख कर 'चन्द्र' का बुधिबल न आये सामने कोई ॥
सरे आलम में अहतंका महर्षी ने मचाया है ॥

गजल ३६४

दोहा—दयानन्द सच्चा हुआ, देश हितैषी वीर ।
विद्या के मैदान में देख पड़ा रण धीर ॥
टेक—दयानन्द देश हितकारी ऋषीवर हो तो ऐसा हो ।
जितेन्द्री धर्म आचारी ऋषीवर हो तो ऐसा हो ॥
दिखाया धर्म का रस्ता, बना कर भाष्य वेदों का ।
हटाया भर्म भारत का, प्रचार हो तो ऐसा हो ॥
खुलाये धर्म विद्यालय मिटाये मूर्ति देवालय ।
बनाये खूब अनाथालय सुभावर हो तो ऐसा हो ॥
दिखाया ढंग कुरानों का, धुलाया रंग पुरानों का ।
मिटाया मत नदानों का गुणावर हो तो ऐसा हो ॥
कृषी व्यापार समझाया चन्द्रिका करके गौ रक्षा ।
जन्म भर देश हित गाया, निछावर हो तो ऐसा हो ॥

गजल ३६५

सब पै महर्षि जी का उपकार हो चुका है ।
सच्चे गुणावरों में स्वीकार हो चुका है ॥
विद्या पढ़े खुशी से हिल मिल के ब्रह्मचारी ।
आनन्द रूप गुरुकुल तैयार हो चुका है ॥

विद्या अनाथ आश्रम गो रक्षणीय शाला।
जिनका प्रबन्ध कर्ता दरबार हो चुका है॥
व्यापार हो स्वदेशी अटकाव कुछ नहीं है।
जिसका सहाय दाता सरकार हो चुका है॥
हम चन्द्रिका कहां तक गिनकर बता सकेंगे।
जिसके गुणों से वाक़िफ़ संसार हो चुका है॥

ग़ज़ल ३६६

मया दयानन्द जी तुम्हारी, हमारे दिल में समा रही है।
मया तुम्हारी दया तुम्हारी, हमारे दिल में समा रही है॥
हमारे क्लेशों के नाश कारण, किया था जब तुमने अस्त्र धारण।
बने थ दुश्मन हमीं अकारण, वो भूल तन मन जला रही है॥
बहुत से अब भी है द्वेष धारी, सभी तरह के अनर्थ कारी।
उन्हें भी सेना, मतार्य्यधारी, कसे कमर तमतमा रही है॥
जो क्रोध तुम पै करेंगे नाहक़, अनर्थ सर पर धरेंगे नाहक़।
वे कोपऽनल में जरेंगे नाहक़, जो विश्व में झमझमा रही है॥
न देश सेवा से अब टरेंगे, न हट के पीछे क़दम धरेंगे।
न दिल में कुछ चन्द्रिका डरेंगे, जो मोक्ष डंका बजा रही है॥

ग़ज़ल ३६७

सारे भारतवर्ष में ऋषि, आपका उपकार है।
आप की महती कृपा का, आर्य्यकुल आधार है॥
दीन बालक पंगु अंधे, गायें विधवायें अनाथ।
आप के कर्त्तव्य से, इनका भी घर गुलज़ार है॥
पढ़ रहे कन्या व बालक, धार के व्रत ब्रह्मचर्य्य।
हो रहा वैदिक सनातन, धर्म का सत्कार है॥
मद्य सेवन जीव हिंसा, द्यूत चोरी आदि दोष।

दूर कर तुम ने कराया, सत्य का संचार है ॥
चन्द्रिका क्या २ गिनावें, आप का कर्त्तव्य फल ।
एक स्वर से देश भर में, धन्य धन्य पुकार है ॥

ऋषी दयानन्द के जीवन का एक दृश्य ।

"कमंडल हाथ में ले छोड़ दी भूमी उदयपुर की"

ग़ज़ल ३६८

कहा कर जोड़ कर शाहे उदयपुर ने ऋषीवर से ।
गुरू जी आप की है नज़् गद्दी मेरे मंदिर की ॥
है लाखों का मुनाफ़ा साथ इस गद्दी के ऐ भगवन !
ये गद्दी सर ज़मीं पर कान है गोया जवाहर की ॥
खुशी से ज़िन्दगी के दिन गुज़ारो बैठ कर इस जा ।
कमी कुछ रह नहीं सकती यहां पर माल और ज़र की ॥
मुख़ालिफ़ आप की दुनिया है सारी, आप हैं तनहां ।
मुझे डर है न कर बैठे मुख़ालिफ़ बात कुछ शर की ॥
ज़हे क़िस्मत कि आप आये, मुझे उपदेश देने को ।
मुझे थी जुस्तजू मुद्दत से, स्वामिन् एक रहबर की ॥
मेरा परिवार ख़िदमत में रहेगा, आप की भगवान ।
मैं खुद हर वक़्त दरबानी करूंगा आप के दर की ॥
बहुत पापों में डूबा है बहुत मुद्दत का बिगड़ा है ।
सुधारो अब कृपा कर के, प्रभु हालत मेरे घर की ॥
फ़क़त एक मूर्ती पूजा का, खंडन छोड़ना होगा ।
न पूजें आप खुद बेशक कभी मूरत को पत्थर की ॥

महर्षी का उत्तर ।

यह सुन कर बात राजा की, ऋषी ने हँस के फ़र्माया ।

तेरी ख़्वाहिश करूं पूरी या मर्ज़ी अपने ईश्वर की।
मेरे जीवन का मक़सद गुमराहों को राह पै लाना है।
मुझे इज़हारे हक़ के काम में परवाह नहीं सर की॥
रहे हक़ पर जो सर चलते हुए तन से जुदा होगा।
मेरी गर्दन रहेगी मुद्दतों ममनून खंजर की॥
जिन्होंने ज़िन्दगी के कर लिया उद्देश्य को पूरा।
नहीं फिर मौत उन के वास्ते वस्तू कोई डरकी॥
क़दम एक इन्च हट सक्ता नहीं राहे सदाक़त से।
अगर मिलती हो मुझ को सलतनत भी कुल सिकन्दरकी॥
तेरी गद्दी ही क्या गद्दी है जिस पर धर्म को छोड़ूं।
न छोड़ूं सत्य, मिलती हो अगर गद्दी भी इन्दर की॥
किसी दुनियां के कुत्ते हि को पालो ज़र के टुकड़ों पर।
न बांधो हम ग़रीबों को मगर ज़ंजीर से ज़र की॥
मैं अपने दिल के उस मन्दिर का मुद्दत से पुजारी हूं।
कि जिस मन्दिर से आती है, सदा दिन रात हर हर की॥
मैं उस दर का गदा हूं, जो रिज़्क़ हर घर को देता है।
गदाई हो नहीं सक्ती है राजन् मुझ से दर दर की॥
मेरा मालिक वह मालिक है, जो शाहों का शहंशाह है।
मैं ख़िद्मत छोड़ कर उसकी; करूं कैसे तेरे घर की॥
वही मालिक वही ख़ालिक, वही पालक जहां का है।
हकूमत है उस ही ख़ालिक की, लहरों पर समुन्दर की॥
"मैं चुप कैसे रहूं ऐसे प्रभू को, छोड़ कर राजन्!
परस्तिश कर रही जब दुनिया ईंट पत्थर की॥"
बग़ल में कह के यह आसन दबाया, बस ऋषीवर ने।
कमण्डल हाथ में ले छोड़ दी भूमी उदयपुर की॥
हुआ जब आशकारा आत्मिक बल का नज़ारा यूं।—
तो क़दमों पर ऋषी के झुक गई गर्दन 'मुसाफ़िर' की॥

(१२) रामायण से अमूल्य शिक्षायें

भजन ३६६

टेक—शिक्षा दे रही जी हमको रामायण अति प्यारी।

एक समय में एक पुरुष ने व्याहीं ज्यादा नारीं।
वृद्धावस्था में दशरथ की इसने बात बिगारी॥ शि०१॥

राज छोड़ वन गये, रामने पितु आज्ञा शिर धारी।
अब तो पिता के लिये पुत्रजन चाहते हैं गिरफ़्तारी॥ शि०२॥

राज महल के सब सुक्खों पर इकदम ठोकर मारी।
वन में गई थी संग पती के, सीता पतिव्रता नारी॥ शि०३॥

बिपति समय में संग राम के की लक्ष्मण तैयारी।
अबतो पीवें खून भ्रात का रहे मुकद्मे जारी॥ शि०४॥

राज तलक की गेंद बनाकर खेलन लगे खिलारी।
इधर राम उस तरफ़ भरत दोनों ने ठोकर मारी॥ शि०५॥

चरण पादुका धरीं शीश पर यह ही बात विचारी।
साधू बनकर रहा भरत नहीं बना राज्य अधिकारी॥ शि०६॥

राम लषन ने सूर्पनखा को क्या कहकर ललकारा।
अब जहां चिकनी मिट्टी देखें फिसल जांय व्यभिचारी॥शि०७॥

लक्ष्मण सीस झुकाता था कह सीता को महतारी।
हाय आज कल तो भावी को कहते आधी नारी॥ शि०८॥

था पंडित विद्वान वह रावण जाने दुनियां सारी।
मद्य मांस पर त्रिया हरण से राक्षस हुआ था भारी॥शि०९॥

तन मन से रहा सेवा करता हनूमान बलधारी।
अब तो मुंह पर करें खुशामद पीछे देते गारी॥ शि० १०॥

लालच और तलवार से डरकर सिया न हिम्मत हारी।
थोड़े भय से धर्म गंवावें हाय आजकल नारी॥ शि०११॥

भक्त विभीषणने भाई की संगत बुरी बिसारी।
अच्छी संगत में तुम जाओ कहै ये चन्द्र पुकारी ॥ शि० १२ ॥

वार्त्ता।

प्रिय पाठक गण ! जिस समय महारानी केकई को यह पता लगा कि कल श्री रामचन्द्र जी को राज तिलक होगा तब दुष्टा मंथरा के बहकाने से केकई ने महाराजा दशरथ जी से इस प्रकार दो वर मांगे,

चौपाई।

सुनहु प्राण पति भावत जीका। देहु एक वर भरतही टीका ॥
दूसर वर मांगों कर जोरी। करौ मनोरथ पूरण मोरी ॥
तापस वेष विशेष उदासी। चौदह वर्ष राम बनवासी ॥

यह सुन महाराज दशरथ बड़े दुखित होकर यूं कहते हैं किः—

ग़ज़ल ३७० (अ)

हाय पापिन तेरी हठ की कोई तदबीर नहीं।
मौत कहलाती है तुझ से तेरी तक़सीर नहीं ॥
जी में आता है निकल जाऊं कहीं को लेकिन।
है गुनाहों की कोई मोम की ज़ंजीर नहीं ॥ १ ॥
ख़्वाहिश तख़्त न दिल में है भरत को हसरत।
बे वजह ज़िद का सबब जुज़ मेरी तक़दीर नहीं ॥ २ ॥
होगा एक उम्र मुझे रोना तुझे उम्र भर को दाग़।
फूटे मुंह से ज़रा कहदे जने बेपीर नहीं ॥ ३ ॥
हठ जो ठानी है अगर फिर भी वही है मंज़ूर।
कर मगर मुझ से कभी होना बग़लगीर नहीं ॥ ४ ॥
भरत कहीं आते होंगे सब्र दिला सब्र दिला।
अय जिगर ठहर गरेबांको अभी चीर नहीं ॥ ५ ॥

गिरते बेहोश जो दशरथ को 'दया' ने देखा।
छुटा हाथों से क़लम ताक़ते तहरीर नहीं ॥ ६ ॥

महाराजा दशरथ के प्रातः ठीक समय पर सभा में न पहुंचने पर और सुमन्त के समाचार देने पर श्री रामचन्द्र जी स्वयं राज भवन में पहुंचे और वहांपर महाराजा दशरथ को शोकातुर अवस्था में देख कर महाराणी केकई से इस प्रकार पूछते हैं।

गजल ३७० (ब)

बता माता पिता की आज क्या सूरत बनी गम की।
है कैसी बेकरारी टूटती हरकत है क्यों दमकी ॥ बता०॥
जो हाले दर्द हो मालूम गर्मा ढूंढ कर लाऊं।
फ़लक को तोड़डालूं खाकछानूं जाके आलमकी ॥ बता०॥

केकई का उत्तर

मुझे वरदान दो देने कहे थे उन में हुज्जत है।
येही है मुख़्तसिर किस्सा वजह येही है मातम की ॥
जो चाहा अपना दिलमांगा दिया पहिले तो हंस २ कर।
बदलना चाहते हैं दे के मर जाने की अब धमकी ॥
उधर कुछ क़ौल अपने का इधर कुछ पास तेरा है।
करें इक़रार कुछ ज़ियादह तबीयत हो अगर कम की ॥
जो मुमकिन हो तो सर आंखों पै लेलो हुक्म राजा का।
वगरना जाने क्या हालत हो रो २ चश्म पुरनम की ॥
दया रघुनाथ हो सागर तहम्मुल हो तो सुन भी ले।
जिगर में तीर सी लगती है अपने बात ज़ालिम की ॥

श्री राम चन्द्र जी का उत्तर।

चौपाई।

सुन जननी सोही सुत बड़ भागी। जो पितु मात वचन अनुरागी॥
तनय मात पितु पोषन हारा। दुर्लभ जननी यह संसारा॥
भरत प्राणप्रिय पावहिंराजू। विधिसब विधिमोहिं संमुख आजू॥

ग़ज़ल ३७१

राम तो माता पिता दोनों का तावेदार है।
मेरे जानो तन माताजी तुम्हें अखत्यार हैं॥ राम०॥
बेच लो मुझ को सरे बाज़ार माताजी अभी।
मैं हूं तावेदार मुझ को कुछ नहीं इन्कार है॥ राम०॥
वन को जानसे अगर करता हूं जो इन्कार मैं।
तो यह जग जीवन मेरा माता मुझे धिक्कार है॥ राम०॥
पुत्र माता और पिता दोनों की आज्ञा में है जो।
प्राण छुटते स्वर्ग पदवी ही उसे तैयार है॥ राम०॥
जाऊंगा माता न बिन जाये रहूं वन को मैं अब।
ऐ गिरन्दा रुकना मेरा यहां अती दुशवार है॥ राम०॥

——:०:——

इतना कहकर श्रीरामचन्द्र जी माता कौशिल्या के समीप पहुंचकर बनजाने की आज्ञा मांगते हैं।

गजल ३७२

करजोर कहूं श्रीमात सुनों मुझेराज पिताजीने वनको दिया।
केरराज अवधका भ्राताभरत मैंने इसकोही स्वीकार किया॥
करूं चौदह वर्ष तप वनमें रहूं वहा धूपऔर शीत सभीमें सहूं।
मत शोक करो श्रीमात कहूं तभी होवे सफल मेरा जन्मलिया॥
ऋषि सेवा करूं मही भारहरूं और आज्ञा पिताजी कीशीशधरूं।

फिर आके दर्श तुम्हारे करूं ए मात केकई खूब किया ॥ कर० ॥
मत शोक करो चित धीर्य धरो मुझे आज्ञा दो बन जाने की
शुभलग्न यह अवसर जायटला यूं कहकर शीश झुकाय दिया॥

श्री रामचन्द्र जी का बन जाना सुनकर सीता जी कहती हैं।

चौपाई।

चलन चहत बनजीवन नाथा। कवन सुकृत सन होहि साथा
कि तनुप्राण कि केवल प्राणा। विधि कर्तव कुछ जात न जाना

भजन ३७२

चाहे लाख कहो नहिं मानूं पती मैं तो बन को
चलूंगी संग पिया।
घर बार से मोहिं कुछ काम नहीं,
यही दिल में नाथ विचार लिया ॥ चाहे०
जहां नाथ तुम्हारा दर्शन है वहीं सुख का समुद निरन्तर है।
तुम्हीं से दासी का ध्यान लगा चित चरणन नाथ
लगाय लिया ॥ चाहे० ॥
पति प्रेम में मगन रहे त्रिया, येही धर्म सनातन है स्वामी
तन, मन, धन से सेवा करके सुख मानूं भरतार जिया
सुख धन ऐश आराम है सब. तुम बिन तुच्छ समान हैं यह।
दुख सुख में तुम्हारी साथी रहूं, यों बन चलना स्वीकार
किया ॥ चाहे० ॥
जो कठिन बनों के रस्ते हैं मुझे फूलों से कोमल स्वामी।
श्रीजानकी नाथ कृपा करिये, वर मांग रही बहुबार सिया।
॥ चाहे० ॥

श्रीरामचंद्र जी का उत्तर ।

गजल ३७४

सुनो प्यारी कहूँ तुम से भला न चलना है वहां पर ।
पयादे चलना होवेगा व जगना होयगा निश भर ॥ सुनो ॥
बएवज पुष्प शैया के रहोगी लेट धरणी पर ।
मिलेंग कन्द फल भोजन सहोगी दुख ये क्योंकर ॥ सुनो ॥
रहो सुख से यहां प्यारी सहोना दुख वहां चलकर ।
सुनो प्यारी कहूँ तुम से भलाना चलना है वहां पर ॥

चौपाई

सुनमृदु वचन मनोहर पियके । लोचन नलिन भरेजल ासि यके

सीता जी का पुनः प्रार्थना करना ।

दोहा—प्राणनाथ करुणायतन सुन्दर सुखद सुजान ।
तुम बिन रघुकुल कुमुद बिधु, सुरपुर नर्क समान ॥

चौपाई ।

नाथ सकलसुखसाथ तुम्हारे । शरदबिमल बिधुवदननिहारे ॥
मात पिता भगनी सुतभाई । प्रिय परिवार सुहृद समुदाई ॥
सास ससुर गुरुसुजनसुहाई । सुनि सुशील सुन्दर सुखदाई ॥
जहां लग नाथ नेहअरुनाते । पति बिन सब तरणी ते ताते ॥
तन धन धामधरणि पुरराजू । पतिविहीन सबशोक समाजू ॥
जिय बिनदेह नदीबिन वारी । वैसेहि नाथ पुरुष बिन नारी ॥

गजल ३७५

बन को जायंगे अगर छोड़ के भरतार मुझे ।

ज़िन्दगी होगी मेरी जान का आज़ार मुझे ॥ १ ॥
तू न हो पास तो जन्नत भी है दोज़ख मुझ को।
खाने दौड़ेंगी अवध की दरो दीवार मुझे ॥ २ ॥
दौलतो जाहो हशम सल्तनतो इज़्ज़ो फ़रोग़।
गुलशने हस्ती में बेगुल हैं यह सब खार मुझे ॥
मर्दो ज़न के लिये विधना ने बनाया ज़ेवर।
बिन तेरे तन पै हैं भूषण भी गरां बार मुझे ॥ ४ ॥
मंज़िले आसान करेगा तेरा दीदार मुझे ॥ ५ ॥
शयन धरती का बसन छाल का फल मूल आहार।
साथ में तेरे भुला देंगे यह घरबार मुझे ॥ ६ ॥
सिंहनी सिंह के हो साथ तो दहशत कैसी।
कौन खालेगा तेरे होते सितमगार मुझे ॥ ७ ॥
गर ये समझो कि रहें प्राण यह अवध बीते तलक
छोड़ कर जाइये राज़ी हूं मैं दिलदार मुझे ॥ ८ ॥
दीजिये हुक्म मगर सोच के यह याद रहे।
जुज़ तेरी एक दया कुछ नहीं दरकार मुझे ॥ ९ ॥

भजन ३७६

शेर-श्रीराम बन के चलने को तैयार जब हुए।
रानीने सिर को क़दमों में रख ये वचन कहे ॥
आज्ञा से अपने बापकी अब आप बन चले।
माता पिता का हुक्म सो मां बाप की मुझे ॥
माता पिता के हुक्म से मुंह कैसे मोड़ लूं।
पतिव्रत धर्म अपना भला कैसे छोड़ दूं ॥
बनवास राह बाट में साथी रहूंगी मैं।
चलने के वक्त राह के कांटे चुनूंगी मैं ॥

पहले खिला के आप को पीछे मैं खाऊंगी।
जिस दम थकोगे पैर तुम्हारे दबाऊंगी॥
दोहा—जब सीताजी वन चलन, होगई तुरत तैयार।
रामचन्द्र समझाय के, कहत बारम्बार॥
टेक-दुलारी जनक की जाई, हठ छोड़ चलो मत वनको।
तुम हो जनककी राजदुलारी, रंग महल की रहने हारी॥
इस अंग कोमल पर दुख भारी, कैसे सहा जाई,
दुख लखा नहीं एक छिन को॥ १॥
वन का जंगल खारदार है, जिसकी तीक्ष्ण तेज़ धार है,
लगते हो जाय पार वार है, है अति दुःखदाई,
करे चुभते ही बेकल तन को॥ २॥
शेर आदि पशुओंका डरहै, इसीसे वहां रहना दुस्तर है,
सुख नहीं सर्व दुखों का घर है, हो व्याकुलताई,
करो कैसे स्थिर मन को॥ ३॥
जो प्यारी बनको जाओगी, वहां जाकर पछताओगी,
तेजसिंह कहे दुःख पाओगी, जिसकी यह कविताई,
तज इस आनन्द अमन को॥ ४॥

दादरा ३७७

सिया दुख वन में उठाना होगा,
प्यारी मत जाओ पछताना होगा—टेक।
राज पाट भूषण और बस्तर सब कुछ तुम्हें गवाना होगा-१
कठिन भूमि में कोमल पैरों बिना सवारी जाना होगा-२
वृक्ष तले धरणी पर सोना वन तृण पत्र बिछाना होगा-३
वल्कल वस्त्र अंग रक्षा हित, कन्द मूल फल खाना होगा-४
हाथ कमंडल बगल मृगछाला तन में राख लगाना होगा-५

हरदत्त कहे बोली यों-सीता जो कुछ होना बिताना होगा-६
(आगे सीताजी क्या कहती है और उनकी हालत क्या है)

भजन ३७८

ख्याल ।

सुने पती के वचन सोच सीता के हुआ मन में भारी ।
कल से वेकल हुई, हुई बेहोश नीर नैनों जारी ॥
फिर लिया धर के धीर कलेजा पीर पकड़के उच्चारी ।
पिया वियोग सम दुःख नहीं दूजा ऐसे कहे प्राणप्यारी ॥
टेक-मोहिं सुरपुर नरक समान है, बिन पती के तावेदारी
मात पिता सुत भगिनी भ्रात सुखदाई ।
गुरु सासु ससुर बिन पतीके सब दुःखदाई ॥
हैं जहां तलक जग मांहि रिश्ते और नाते ।
मुझे बिना पती के दर्श तरणि से ताते ॥
सब राज पाट परिवारा, बिन पती लगे नहीं प्यारा ।
हैं भोग रोग, संसारा, बिन पिय दुःख देने हारा ॥
बिन पती जीव नहीं रहे, सिया यों कहे, अंग सब दहे ।
अंग में रहना मुश्किल प्राणहैं, यों कह रही जनक दुलारी१॥
है बिना जीव ज्यों देह नदी बिन वारी ।
बस ऐसे ही समझो बिना पतीके नारी ॥
है यही हमारा धर्म्म, धर्म्म नहीं दूजा ।
है इसमें ही कल्याण करूं पति पूजा ॥
नहीं पतिव्रत धर्म्म विसारूं, लाखों विपता सिर धारूं ।
यही पतिव्रत धर्म्म हमारा, हम मानें हुक्म तुम्हारा ॥
रे पतिव्रत धर्म विसार, दुखी वही नार, सुखोंका सार ।
मिलेगा उनको आज जहान में, जो हैं पतिव्रता नारी २॥
अब पती ! मुझे जंगल ही रंग महल है ।
जहां प्राणनाथ प्यारे की मुझे टहल है ॥

भोजन हैं उत्तम मुझे कन्द मूलों के।
वो कांटे मुझ को समान हैं फूलों के॥
मैं तुम्हार दर्श की प्यासी, हूं चरण कमल की दासी।
सब खिदमत बजालाऊंगी, हरदम सुख पहुँचाऊंगी॥
कह रही रोरो के सिया, सुनो मोरे पिया लरजता हिया।
आपके बेइन्तहा अहसान हैं, करो न अर्ध अंग को न्यारी ३॥
जो प्राण जांय तो शरीर रहता नहीं।
जो शरीर जाता रहै कहां परछाहीं॥
हम हैं शरीर और आप हैं प्राण हमारे।
तुम शरीर मैं परछाहीं साथ तुम्हारे॥
तुम कैसे अलग करोगे, करो अलग तो दुःख भरोगे।
जो मैं न्यारी हो जाऊंगी, बच सकूं न मर जाऊंगी॥
रो रो सीता कहरही, चरण गह रही, दृगन बह रही।
तेजासिंह जलधार बे परमान है, झर २ के गिरियां जारी ॥४॥

दादरा ३७६

घर बैठो न बनको चलो तुम सिया।
रखा पलंग से पैर न नीचे उतार कर॥
बन में कहीं पै बैठ ही जाओगी हारकर।
पछिताओगी दिल में न कहना किया॥ घर०
जंगलमें सब तरहकी मुसीबत उठाओगी।
कहो कंकरों की राहमें तुम कैसे जाओगी।
दुख होगा जो पांव का छाला छिया॥ घर०
खाने को फल मिलेंगे सो वह कभी २।
खाने पड़ेंगे खट्टे व मीठे तुम्हें सभी।
नहीं जावेगा तुम से वह पानी पिया॥ घर०
पत्ते बिछाकर भूमि पर सोया न जावेगा।

डरोगी बन में शेरों से रोया न जावेगा ॥
रैन होगी अन्धेरी न होगा दिया ॥ घर०

दादरा ३८०

मत हम को अयोध्या में छोड़ो पिया ॥
जो कुछ कहा है नाथ ज़रा फिर बिचारिये ।
मेरी मुसीबतों को न दिल में निहारिये ॥
मेरा बांधे न धीरज ज़रा भी जिया ॥ मत०
कहते हैं वद यह ही धर्म स्त्री का है ।
हर दम पती की सेवा कर्म स्त्री का है ॥
कैसे घर में बताओ रहे फिर सिया ॥ मत०
खानेको क्याकहूं मुझे चरणोंकी प्रीतहै ।
मैं यां न रहूंगी मेरा चलनाही ठीक है ॥
मैंने निश्चय यह दिल में है धारण किया ॥ मत०
अपने पिता की आप गर आज्ञा निभाओगे ।
तो सीता को भी अपनेही अनुकूल पाओगे॥
मेरी माता ने यह हाथ तुम को दिया ॥ मत०

भजन ३८१

टेक-पतिव्रत धर्म को जी, पालन किया नार सीता ने ।
दीनी आज्ञा रामचन्द्र को बन की महतारी ने ।
उसी समय पति संग चली नहीं छोड़ा धर्म नारी ने॥पति०
देर न करी चली पति के संग सीता पतिव्रता नारी ।
चौदह वर्ष पती संग नंगे पैरों फिरी बिचारी ॥ पति०
बन में मिला दुष्ट एक रावण उसने जिसे चुराया ।
विपिन मार्गके बीच नारि सीताको त्रास दिखाया ॥पति०
पतीव्रता थी नारि सयानी पतिव्रत धर्म न छोड़ा ।

मरना तक मंजूर किया नहीं धर्मसे मुखड़ा मोड़ा ॥ पति०
आज पतिव्रत धर्म का देखो रहा न कुछ भी ख़्याल ।
रामचन्द्र कह चलो हमेशा सीता की सी चाल ॥ पति०

राम और सीता का बन जाना सुनकर लक्ष्मण की बेकरारी और बन जाने पर विचार ।

चौपाई ।

समाचार जब लक्ष्मण पाये । व्याकुल बिलख वदन उठ धाये ॥
कहि न सकत कछु चितवत ठाढ़े । मीन दीन जनु जलते काढ़े ॥
मो कह कहा कहब रघुनाथा । रखि हैं भवन कि लैहैं साथा ॥

ग़ज़ल ३८२

जीमें बन जाने की पर थामे जिगर बैठे हैं ।
साथ बन जाने को लक्ष्मण बांधे कमर बैठे हैं ॥ १ ॥
डर से कुछ कहते नहीं हैं न जवाब अपना नहीं ।
चश्मे पुर आब से बसीते गुहर बैठे हैं ॥ २ ॥
मुज़तरिब दिल है जिगर पाश है चहरा मलाल ।
टकटकी बांधी है चरणों पै नज़र बैठे हैं ॥ ३ ॥
अए सिपाह ग़मो आन्दोह शुजाअत तेरी ।
अज़माने को लक्ष्मण सीना सिपर बैठे हैं ॥ ४ ॥
थे अजब चैन शबो रोज़ पै मालूम न था ।
हिज्र देने को तनो शामो सहर बैठे हैं ॥ ५ ॥
दम भरा करते थे यारी का हमारे अफ़आल ।
हैं कहीं देखो तो किस जा हैं किधर बैठे हैं ॥ ६ ॥
प्राण बन जायें रहै तन यह अवध सुनने को ।
राम हैं बन में लखन चैन से घर बैठे हैं ॥ ७ ॥

किश्तिये दिल है भँवर बहरे मुहब्बत में फँसी।
तुन्द है बाद मुख़ालिफ़ है मगर बैठे हैं ॥ ८ ॥
हो दया नूरे मुहब्बत का नज़ारा, क्योंकर।
ठहरे क्या आंख, मिले मेहरो कमर बैठ हैं ॥ ९ ॥

ग़ज़ल ३८३

क़सम खाई है मैंने बस तुम्हारे साथ जाने की।
हटा सकती नहीं मुझको कोई ताक़त ज़माने की ॥ व
मुबारिक हो भरत को राजधानी इस अजोध्या की।
यहां तो धुन लगी है अब नई बस्ती बसाने की ॥ क़० ॥
दिया वह राज ईश्वर ने नहीं सीमा कोई जिसकी।
हकूमत हाथ आई आज क़िस्मत से ज़माने की ॥ क़० ॥
हमारी राजधानी में खलल कोई न आयेगा।
न आयेगी कभी नौबत किसी का दिल दुखाने की ॥ क़० ॥
पखेरू जंगलों के राम की प्रजा कहलायेगी।
पड़ेगी कान में आवाज़ हर दम चहचहाने की ॥ क़० ॥
श्री रघुवीर की सेवा मिले तो और क्या चाहिये।
नहीं दिल में हविस बिलकुल रही राजा कहलाने की ॥ क़० ॥
अगर हो कष्ट भी बन में मुझे परवा नहीं मुतलक़।
मगर ताक़त नहीं सदमा जुदाई का उठाने की ॥ क़० ॥
तुम्हारे साथ है मैंने यहां पर अन्न जल छोड़ा।
क़सम है आप के बिन जो शकल देखूं टोहाने की ॥ क़० ॥

ग़ज़ल ३८४

कहते लखन हे रघुवर, जो आप बन को जाते।
छोड़े हो मुझको किस पर, नैनों से जल बहाते ॥ कहते० ॥
कहें राम रहो अवध में करना पिता की सेवा।

क्यों साथ मेरे चलकर, वन की विपत उठाते ॥ कहते० ॥
लक्षमण कहैं हे स्वामी, कुछ वश नहीं है मेरा ।
रहना न मुझको यहां पर, जी मेरा क्यों दुखाते ॥ कहते० ॥
कहा राम ने चलो तुम, माता से पूछ आओ ।
खुश होके जा महल में, माता को सर झुकाते ॥ कहते० ॥
सुन करके बोली माता, तन मन से करना सेवा ।
क्या है अवध तुम्हारा, जो राम वन को जाते ॥ कहते० ॥

श्रीरामचन्द्र लक्षमण और सीताजी के बन चले जाने पर महाराज दशरथ जी इन के शोक में प्राण छोड़ देते हैं, पश्चात् खबर पहुँचने पर भरत जी का भाई सहित ननसाल से लौटना और समाचारों को सुन कर ऐसा कहना ।

ग़ज़ल ३८५

कुछ तो बतला दे दिला, यह आहो ज़ारी किस लिये ।
खैर तो है क्या हुआ यह बेक़रारी किस लिये ॥
सोचते आते भरत और आते ही ऐसा सुना ।
सा मर दशरथ अजल का तीर कारी किस लिये ॥ २ ॥
सुनते ही व्याकुल हुये रोके लगे कहने कि हा !
तात तात हे तात मेरी सुधि बिसारी किस लिये ॥ ३ ॥
हे पिता चलते समय दर्शन न कर पाया तेरे ।
राम को सौंपा न की कुछ इन्तिज़ारी किस लिये ॥ ४ ॥
हाय पापिन केकई हा नाश कुल का कर दिया ।
काट जड़ को सींचे पत्ते, हत्यारी किस लिये ॥ ५ ॥
राम लक्षमण भाई हों, दशरथ से हों जिस के पिता ।
उसकी विधिना केकई सी हो महतारी किस लिये ॥ ६ ॥
मात कौशल्या तुही बतला पिता जी हैं कहां ।
भेजे वन रामो लखन सीता हमारी किस लिये ॥ ७ ॥

जीने मरने का सबक़ दशरथ से कोई सीखले।
घर से बाहर हो दया फिर हन्तिज़ारी किस लिये ॥ ८ ॥

भजन ३८६

भरत ननहारे से आये, अवध में मंगल नहीं पाये।
बन्द कचहरी क्यों पड़ी, क्यों नहीं पहिरेदार ॥
झंडा है नीचे गिरा, अशगुन है यह अपार।
भरत जी मनमें घबराये अवध में ॥ १ ॥
सुरपुर बासी अवध के क्यों हैं हाल बेहाल।
घंटे की धुन नहीं सुनी नहीं बाजत घड़याल ॥
शोक में नर नारी पाये ॥ भरत ननहारे से आये० ॥ २ ॥
वहीं मुख दिखला बालकर आई केकई मात ॥
किया प्रणाम कहा खुश, रहा करो राज तुम तात।
इसी लिये मैंने बुलवाय ॥ भरत ननहारे से आये० ॥ ३ ॥
बोले भरत जी क्या कहे बता कहां पितु मात।
कहां भावी मेरी जानकी कहां हैं श्री रघुनाथ ॥
दर्श नहीं लक्ष्मण के पाये ॥ भरत ननहारे से आये० ॥ ४ ॥
राम लखन बनको गये, तजे रावने प्राण।
दो बर मेरे चाहिये थे, सो कीने प्रमाण ॥
इसी लिये बन को भिजवाये ॥ भरत ननहारे से आये० ॥ ५ ॥
सुन कर ऐसे बचन को, भरत गिरे गश खाय।
हा ! तूने ये क्या किया, मुझको मारा हाय ॥
मात क्या तूने गज़ब ढाये ॥ भरत ननहारे से आये ॥ ६ ॥

ग़ज़ल ३८७

भरत पूँछे विकल हो कर यह तूने क्या किया माई।
कहां हैं दीन प्रति पालक राम लक्ष्मण से मम भाई ॥ भरत० ॥

राम को भेज कर बन को खुशी क्योंकर हुई मन को।
सदा से राम प्यारे थे यह मति कहां से तुझे आई ॥ भरत० ॥
कलंकित कर दिया मुझको जगत में क्या मिला तुझको।
धन्य है भ्रात लछमण को कर सेवा जो चितलाई ॥ भरत० ॥
तू पापिन नागिनी काली पिता के मारने वाली।
लगाया दाग़ रघुकुल को ज़रा भी शर्म नहीं आई ॥ भरत० ॥
अयोध्या रोती है सारी करूंगा वन की मैं त्यारी।
यही चित में बसी अब है कि जाकर देखूं रघुराई ॥ भरत० ॥

चौपाई।

पेड़ काट तत्रपल्लव सींचा। मीन जीयत हितवारि उलीचा ॥
धीरज धर उर लेहु बलासा। पे पापिन तू भई कुलनाशा ॥
जो अस कुमति रही उर तोही। जनमत काहे न मारेहु मोही ॥
वर मांगत मन भई न पीड़ा। जरी न जीभ मुख पड़ेहु न कीड़ा ॥

ग़ज़ल ३८८

अय मात मेरी तूने यह क्या किया।
श्रीराम को जो बनबास दिया ॥
तूने राज के कारण कुकाज किया।
हर हाल में मुझको परायज किया ॥ अय मात० ॥
सिया राम लखन जी गये हैं किधर।
सूने मंदिर देख फटे है जिगर ॥
ज़रा यह तो बतादे गये कहां विदर।
कर याद उमड़ता मेरा हिया ॥
तूने बैठ बिठाये विध्वंस किया।
रघुवंश को सारा नष्ट किया ॥
मुझे वाली उमर में निरास किया।

धिक्कार अवध में मेरा जिया ॥ पे० ॥
बिन किये दर्श नहीं जीने का।
गहां पानी तक नहीं पीने का ॥
जभी हाय मिटे मेरे सीने का।
मिले दर्शन लक्ष्मण राम सिया ॥ पे० ॥
बन जाते समय तो मिले थे तुझे।
वह मार्ग बतादे ज़रा अब मुझे ॥
मेरे दिल की तपत तो जबी ही बुझे।
रिषिराम यह मन में विचार लिया। पे०॥

महात्मा भरत चक्रवर्ती राज को माता के तथा नगर निवासियों के कहने पर भी स्वीकार नहीं करते हैं और कहते हैं:—

चौपाई।

यद्यपि यह समझत हूं नीके। तदपि होत परितोष न जीके ॥
दोहा—पितु सुर पुर सियराम बन, देन चहत मोहि राज।
इहिते जानों मोर हित, कै आपन बड़ काज ॥

चौपाई।

हित हमार सियपति सेवकाई। सो हरि लीन्ह मात कुटिलाई ॥
कहौं सांच सुनि सब पति यहू। चाहिये धर्म शील नरनाहू ॥
डर न मोहि जग कहहु कि पोचू। परलोकहु कर नाहिन सोचू॥
एकै बड़ उर दुसह दवारी। मोहि लग भये सिया राम दुखारी ॥
मोहि समान को पाप निवासी। जेहि लगि सीय राम बनवासी ॥

दोहा

आपनि दारुण दीनता, सबहिं कह्यो समुझाय।
देखे बिनु रघुबीर पद, जिय की जरनि न जाय ॥

चौपाई

एकहि आंक इहै मन माहीं । प्रातःकाल चलिहौं प्रभुपाहीं ॥
यद्यपिमैं अनभल अपराधी । मोहिंकारन भई सकल उपाधी ॥
तदपिशरणसन्मुखमोहिं देखी । छमसवकरहहिं कृपाविशेषी ॥

महात्मा भरत जी अनेक प्रकार के कष्ट सहते हुये वन में पहुँचते हैं और श्री रामचन्द्र जी से मिलते हैं ।

गजल ३८६

भरत से मिले राम वन में, खुसी हुई दोनों के मन में ॥
भुजा पकड़ दोनों मिले डाल गले में हाथ ।
ऐसे लिप्त हुये प्रेम में जैसे पुत्र से मात ॥
नीर छाया है नयनन में ॥ भरत० ॥
श्रीरामचन्द्र ने भरत को छाती लिया लगाय ।
सब से पहले पूछते, हैं कुशल केकई माय ॥
मगन हो कर अपने मन में ॥ भरत० ॥
हाथ जोड़ कर कहैं भरत जी, कहूं अवध क्या हाल ।
मात रोय व्याकुल भई, पिता का होगया काल ॥
काग पड़ते हैं महलन में ॥ भरत० ॥
दशा सुनी सब अवध की, दुखी बहुत हुए राम ।
पिता गये बैकुण्ठ जो, आप संभालो काम ॥
बंधाया धीर सभी तन में ॥ भरत० ॥
सुने बचन जब भरत ने लागा कापन गात ।
चरणों में सिर धर दिया जोड़ के दोनों हाथ ॥
मुझे सुख आप के दरशन में ॥ भरत० ॥

वार्ता

पाठक गण ! वन से श्रीरामचन्द्र तथा लक्ष्मण जी की अनुपस्थित में जब रावण सीता जी को लेगया था तब सीता जी रास्ते २ अपने आभूषणों को इस निमित्त से फैंकती गई थीं कि रामचन्द्र जी को हमारे जाने का रास्ता मालूम होता जावे ।

उन आभूषणों को वन वासियों ने श्रीरामचन्द्र जी को उस समय दिये जब कि वे सीता के वियोग में व्याकुल हुये उसकी खोज में वन में घूम रहे थे । आभूषणों को लेकर श्रीरामचन्द्र जी ने लक्षमण जी को दिये और कहा, कि

गज़ल ३६० (अ)

दोहा—भाई लक्षमण देख तू, करके ज़रा ध्यान ।
ज़ेवर यह मुझको मिले, कर इनकी पहचान ॥

टेक—भाई लक्षमण ज़रा तूही पहिचान कर ।
कि यह सीता का गहना भी है या नहीं ॥
देखले भालले खूब अच्छी तरह ।
कभी उसने यह पहिना भी है या नहीं ॥
जितने ज़ेवर रतन और जड़ाऊ जड़े ।
हार माला क्यो बिन्दी औ झुमुनू कड़े ॥
जो यह सारे तुम्हारे अगाड़ी पड़े ।
इसके माथे का बेना भी है या नहीं ॥
देखते हो मगर फिरभी ख़ामोश हो ।
कौनसी बात का करते अफसोस हो ॥
किस तरह से भला मुझ को संतोष हो ।
हाल मेरे से कहना भी है या नहीं ॥

मुझ को ज़ेवर जटायु भगत ने दिये।
और कहा जाता था रावण उस को लिये॥
ताने सीता ने उस को यहां तक दिये।
कि तेरे माता बहिन भी है या नहीं॥
मेरे होश हवास ठिकाने नहीं।
इस लिये मैंने ज़ेवर पहचाने नहीं॥
और जौहरी अयोध्या से आते नहीं,
कुछ जवाब इस का देना भी है या नहीं॥
अगर तहक़ीक़ रावण ने ऐसा किया,
नाम उसका ज़मानेसे दूंगा मिटा॥
कहो लछमण तुम्हारा इरादा है क्या,
इन्तक़ाम उससे लेना भी है या नहीं॥
छुप जाये अगर छिपना हो उसको कहीं,
सीस काटूंगा पापी का जाके वहीं॥
मुझे यशवन्त सिंह यह भी पर्वाह नहीं,
कि मेरे साथ सैना भी है या नहीं॥

गजल ३६० (ब)

(लक्ष्मण जी का श्रीरामचन्द्र जी से जवाब)

दोहा—झूठी मैं कैसे कहूं तुम से अय मम भ्रात।
मेरी तो कुछ समझ में ना आई यह बात॥
टेक—भाई पहिचान इनकी मैं कैसे करूं।
कुछ समझ में मेरी बात आई नहीं॥
जिसे पहिचान सकता चखूबी।
मुझे इन में जेवर वह देता दिखाई नहीं॥
यह जो सर और गले के हैं ज़ेवर पड़े।

और चिहरे के भूषण हैं सारे धरे ॥
इनकी पहिचान मुशकिल है मेरे लिये।
अक़ल मेरी की यां तक रसाई नहीं ॥
क्योंकि मैंने उमर भर में अपनी कभी।
माता सीता के चिहरे को देखा नहीं ॥
जिस वक्त वह कभी मेरे सन्मुख हुई।
मैंने ऊपर नज़र तक उठाई नहीं ॥
कोई पांव का ज़ेवर हो उस के अगर।
लूंगा पहचान फ़ौरन से भी पेशतर ॥
भला चिहरे औ गर्दन का तो क्या ज़िकर
आज तक उनकी देखी कलाई नहीं ॥
जब प्रातः ही उठ कर के आता था मैं।
सीस चरणों में उनके झुकाता था मैं ॥
उस समय गहना वह देख पाता था मैं।
कुछ जताता तुम्हें पारसाई नहीं ॥
अगर रावण ने है फ़ैल ऐसा किया।
फिर यहां देर किस बात की है भला।
बस समझ लो कि मौत उसकी पहुंची है आ।
उसने सोची भलाई बुराई नहीं ॥
ख़ाक में सीस जब तक न उसका मिले।
उसे धिक्कार है जो यहां चैन ले ॥
बाण लक्ष्मण के यशवन्त सिंह जब चले।
सीस रावण का देगा दिखाई नहीं ॥

वार्ता ।

पाठक गण ! रावण ने अपना आगा पीछा कुछ न देख कर महारानी सीता को ले जाकर अपनी अशोक वाटिकामें

उतार दिया और अपनी समस्त रानियां तथा बहुत सी कुटनियों को आज्ञा दी कि वह जिस प्रकार से भी बने सीता को मेरी रानी बनने पर उद्यत करें, और आप भी बार बार जाता और तरह २ के लालच दिखलाता और पोटता फुसलाता है परन्तु जब उसकी कोई भी कोशिश कारगर न हो सकी तब तरह २ की धमकियां दिखलाता है और नंगी तलवार लेकर कहता है कि:—

गजल ३६१

दोहा—सीता अब भी मानले हठ यह तेरी फ़जूल।
अब तू मेरी क़ैद से छुट के जाये न भूल॥
टेक—अरी सीता तू अब भी कहा मान ले।
अपनी हठ से कभी बाज़ आऊं नहीं॥
मैंने देखा है तुझ सी बहुत सी चतुर।
तेरे रोने की खातर में लाऊं नहीं॥
किन फ़कीरों के पीछे तू मरती फिरे।
बन के पटरानी तू ऐश क्यों न करे॥
रामचन्द्र जो सौ बार जन्मे मरे।
तो भी सूरत मैं तेरी दिखाऊं नहीं॥ अरी सीता०॥
रामचन्द्र जो कुछ होता लायक़ अगर।
राज करता ही न अपने घर बैठ कर।
क्यों जलावतन हो डोलता दर बदर।
उस गदागर का मैं खौफ खाऊं नहीं॥ अरी सीता०॥
तेरे ख़ातिर रमाई थी सिर में भसम।
छोड़ कर लोक लाज और कुल की रसम॥
मुझे तेरीकसम तेरे सिर की कसम।
तुझे रानी जो अपनी बनाऊं नहीं॥ अरी सीता०॥

वरना टुकड़े बना दूंगा तलवार से।
सिर कटेगा तेरा एक ही वार से॥
बाज़ आ जा तू अब भी इस इसरार से।
राम के पास मैं भी पोंहचाऊं नहीं॥ अरी सीता० ॥
मेरी ताकत तुझे सारी मालुम है।
कुल ज़माने में जिसकी पड़ी धूम है॥
रामचन्द्र अभी कल का मासूम है।
ऐसे बच्चों को तो मैं पढ़ाऊं नहीं॥ अरी सीता० ॥
मैंने जितनी भी तेरी खुशामद करी।
और तू उलटा सिर पर ही चढ़ती गई॥
बस समझले क़ज़ा तेरे सिर पर खड़ी।
तेरे मारे बिना यहां से जाऊं नहीं॥ अरी सीता० ॥
जा नहीं सकती ज़िन्दा तू यहां से कहीं।
अब बनेगी चिता तरी आखिर यहीं॥
नाम यशवन्त सिंह मेरा रावण नहीं।
जो मैं सीता की गर्दन उड़ाऊं नहीं॥ अरी सीता० ॥

सती सीता का दुष्ट रावण को जवाब।

गजल ३६२

दोहा—रावण क्यों बक २ कर गंदी करे ज़बान।
कामी कपटी कायरे बुज़दिल बेईमान॥

टेक—रावण हटजा मेरे सामने से ज़रा।
मुझ को सूरत तू अपनी दिखावे मती॥
तेरी सुनली हैं बातें नरम और गर्म।
मेरे दिल को तू ज़ियादा दुखाये मती॥

अब तो आंखों में सूरत बसी राम की।
मैं रवादार तक न तेरे नाम की॥
मुझको परवाह नहीं दुःख वा आराम की।
यहां लालच के फंदे फैलावे मती॥ रावण हट०॥
मुझे ताने वा तिश्ने सुनाता है क्या।
मौत का भय मुझे तू दिखाता है क्या॥
लेकर तलवार चढ़ चढ़ के आता है क्या।
मौत अपनी को नाहक़ बुलावे मती। रावण हट०॥
जो तुझे अपने बल का बंधा है भरम।
तो स्वयम्बर से भागा था क्यों नोकदम॥
डूब मर चुल्लु पानी में ओ बेशरम।
ज़रा शर्खी के चिल्ला चढ़ावे मती॥ रावण हट०॥
तेरी लंका जो जड़ से उखाड़ी नहीं।
तो मैं सीता जनक की दुलारी नहीं॥
खाली जायगी यह आह ज़ारी नहीं।
नाम अपना जहां से मिटाओ मती॥ रावण हट०॥
क्यों सताता है आकर मुझे हर घड़ी।
मैंने सुनली जो बकवास तूने करी॥
तेरी जल जाय ज़ालिम ज़ुबां विष भरी।
बे हियाई के फ़िक़रे सुनावे मती॥ रावण हट०॥
चल निकल दूर हो मेरे आगे से हट।
वरना दूंगी अभी तेरी काया पलट॥
ओ अधर्मी ओ पापी बेईमान शठ।
हाथ मेरे जिस्म से लगावे मती॥ रावण हट०॥
जिस घड़ी राम ने की चढ़ाई इधर,
राख कर देंगे लंका तेरी फूंक कर॥
तेरा गलियों में रुलता फिरेगा यह सिर।

सिर तरफ़ आसमां के उठावे मतो। रावण हट० ॥
अपने दिल में तु यह निश्चय ही जान ले।
राम पहुँचे लड़ाई का सामान ले ॥
अब भी यशवन्त सिंह का कहा मान लें।
शेर सोये हुये को जगावे मतो ॥ रावण हट० ॥

गजल ३६३

(पतिव्रता महारानी सीताजी के मुँहतोड़ उत्तर लंकापति रावण को अशोक वाटिका में)

अरे मूढ़ धमकी न दे मुझे, मुझे तेरी धमकी की डर नहीं।
न क़ज़ाका ख़ौफ़ दिला अबस,मुझे इसका ख़ौफ़ ख़तर नहीं१॥

मैं हूं आत्मा, मैं हुं आत्मा, न है मेरा आदि, न खात्मा।
नहीं नाश मुझको हूं बाबक़ा,मुझे मरने जीने का डर नहीं॥२॥
मुझे क्या खड्ग है दिखा रहा, मुझे काहे को है डरा रहा।
मुझे मारने की खड्ग नहीं, मुझ काटने की तबर नहीं ॥३॥

तेरा लाख महल मकान हो, तेरा लाख क़सर ईवान हो।
तेरा मुल्क सोनकी कान हो,यह मुझे वो मिट्टीका घर नहीं॥४॥
नहीं लुत्फ़ शौकतो जाह में, जो न राम की हूं पनाह में।
है कसम मेरी निगाह में, बिन राम कोई बशर नहीं ॥५॥

तेरे दिल में पाप ने राह की, जो पर स्त्री पै निगाह की।
तुझे सूझी ऐसी गुनाह की,कोई पाप जिससे बदतर नहीं॥६॥
श्री राम माहेर जंग हैं, लिये साथ तीरो तुफंग हैं।
वो है शेर नर, वो पलंग हैं; तुझे बेवकूफ़ ख़बर नहीं ॥ ७ ॥

न लपटाका तुझ पै अताब हो, दिलोजां पै मुफ़्त अज़ाब हो।
तेरी आक़बत न ख़राब हो,यही डरहै और कोई डर नहीं॥८॥

तुझे फ़ख शौकते जाह है, तुझे नाज़ फ़ौजे सिपाह है।
तेरे दिल में कपट की डाह है, तुझे फ़िक्र रोज़ हशर नहीं॥६॥
अरे देखो तेरी बहादुरी, है चुरा के लाया पर स्त्री।
तुझे मूढ़ आतीहै शरम भी, कि हया का दिलमें गुज़र नहीं१०
तेरे जुल्म और जफ़ाकारी, से है कुल जहान में खलबली।
तेरे दस्त जौहरके हाथसे, है वह कान आंख जो तर नहीं११॥
तुझे फल सितम का चखाऊंगा, तुझे खून खून रुलाऊंगा।
तुझे जीते जी यह दिखाऊंगा,तेरा ताज क्या तेरासर नहीं॰१२॥
अरे मूढ़ पासे हयात कर, न मुझे सताने की घात कर।
ज़रा होशो हवाससे बातकर, जो तू पहुँचा मौतकेघर नहीं१३॥
श्री रामचन्द्र के बाण से, खड्ग और तेज़ कृपाण से।
तेरी क्या मजाल जो बच सके,कि क़ज़ा को इनसे मजर नहीं१४॥

गज़ल ३६४

अरे रावण तू धमकी दिखाता किसे,
तुझ मरन का खौफ़ खतर ही नहीं।
मुझे मारेगा क्या अपनी खैर मना,
तुझे होनी की अपनी खबर ही नहीं।
तू जो सोने की लंका का मान करे,
मेरे आगे यह मिट्टी का घर भी नहीं।
मेरे मन को सुमेरु हिलेगा नहीं,
मेरे मन में किसी का डर ही नहीं॥
आवें इन्द्र नरेन्द्र जो मिलके सभी,
क्या मजाल जो शील को मेरे हरें।
तेरी हस्ती है क्या सिवा राम पिया,
मेरी नज़रों में कोई बशर ही नहीं॥
तू ने सहस्र अठारह जो रानी वरीं,

तुझे इतने पर आया सबर ही नहीं।
पर त्रिया पै जो तूने ध्यान दिया,
क्या नरक का तुझ को खतर ही नहीं॥
मेरी चाह जो थी तेरे दिल में बसी,
क्यों न जीत स्वयम्वर तू लाया मुझे।
वह था कौन शहर मुझे दे तू बता,
जहां स्वयम्वर की पहुँची खबरही नहीं॥
जो हुआ सो हुआ अब भी मान कहा,
मुझे राम पै जल्दी से दे तू पहुँचा।
कहे सीता वगर्ना तू देखेगा क्या,
चंद रोज़ में अब तेरा सरही नहीं॥

गज़ल ३९५

जब से रावण मैं रामकी चेरी बनी, तब से आत्मा मेरी अमर होगई। किसको मारेगा करके बता तो जुलुम, ऐसे जीने से मैं बेखतर होगई॥ १॥ मेरी राम के चरणों में प्रीति बसी, चाहे जुल्म तशद्दुद कितना दिखा। किसको मारेगा काटेगा करके जुलम मैं तो तन से परे बस अजर होगई॥२॥ मेरी आंखें जो दिलमें हों तेरे बसी, ला छुरी मैं निकाल के देदूं अभी। मेरी अस्मत पर जो हो नज़र गर तेरी, मिलके राम को यह बखतर होगई॥ ज़बरदस्ती पर दिल जो आमादह हुआ, तो मैं कहती हूं सुनरे अरे बेअकल। छुयें राम के हाथ या तेरा सिथल, तेरी बात मेरे -सर बसर होगई॥ ४॥ तेरा सोने का रंग व जड़ाऊ-पलंग तेरे, हीरों के भूषण रंगो विरंग। बिना राम मुझे खावे सिरले पलंग, पैदा राम की मेरे एक लहर होगई॥ ५॥ मेरी उलफ़त में अब तू जो अन्धा हुआ, स्वयम्वर में बतला तू था कहां गया। चुल्लू पानीमें जा

डूब ओ बेहया तब यह ताक़त थी तेरी किधर को गई ॥ ६ ॥ खैर जो चाहता है अपना भला, मुझ राम से जाकर जल्दी मिला। बर्ना सोने की लंका दें ख़ाक मिला, मेरे हृदय में बस यह ख़बर होगई ॥ ७ ॥ बिपत कहानी तू राम पै जा, सारी खुदही "धर्मवीर" दीजो सुना। मुझे रावण के पंजे से लेवें छुड़ा, मेरी आत्मा दुखों का घर होगई ॥ ८ ॥

वार्ता।

पाठक गण ! आपने रामायण कालके बालकों के चरित्रों को तो पढ़ ही लिया है अब तनिक वर्तमान समय के बालकों की भी करतूतों को पढ़ लीजिये।

भजन ३६६

टेक—भारत देश में रे अब तो ऐसे बालक जन्में।
तजीं सकल मर्याद पुरानी, नवीन कौतुक धारे।
तोड़ ईश्वरी नियम हाय अधरम के करत प्रचारे ॥ भा० १ ॥
मात पिता का कहा न मानें करते हैं मनमानी।
सेवा करना रहा अलहदा घूंट न देते पानी ॥ भा० २ ॥
सत्संगति से करें किनारा, कुसंग चित धारें।
निज नारी को छोड़ अधरमी, रंडी से सिर मारें ॥ भा० ३ ॥
ब्रह्मचर्य्य की सार न जानें, करें चित्त व्यभिचार।
रात गिनें ना दिन पहचानें, ऐसी करें भरमार ॥ भा० ४ ॥
हरि चर्चा और शुभ शिक्षा से, करते शीघ्र किनारा।
नाच स्वांग और बद बातों में घंटों समय गुजारा ॥ भा० ५ ॥
अपनी जान की कुशल मनात, खाते पूत पराये।
अजा हिरनकी तो क्या गिनती, स्यार न बचने पाये ॥ भा ६॥
ज़रा ज़रा सी अब बातों पर देते धर्म गमाय।
चोर ज्वार और कपटी छलिया बोलें झूठ अघाय ॥ भा ७ ॥

नक़ल देखि गैरों की करते बनते जण्टलमैन।
कोट बूट पतलून पहन कर डालें घड़ी और चैन ॥ भा० ८ ॥
धर्म पुस्तकें त्याग पढ़त हैं क़िस्से और कहानी।
अपने धर्म की निज हाथों से करते हैं नित हानी ॥ भा० ६ ॥
अपनों को कर रहे बिरान नहीं प्रेम आपस में।
भाई का दुःख देखे भाई तर्स न लावें दिल में ॥ भा० १० ॥
कहां तक भीकें इन बच्चों को उलटा हुआ ज़माना।
एक एक को खाये जाते हैं हानि हानि तीर निशाना ॥भा०११॥
यही देश में ढंग हमें प्रत्यक्ष दिखाते भाई।
वह ही प्रिय वर अल्प बुद्धि से सबको दिये सुनाई ॥भा०१२॥
ऐसे हो रहे आचरण कैसे होय सुधार।
पर यह मुश्किल बात क्या है लगे रहो ललकार ॥ भा० १३ ॥
याद करें जब उन बच्चों की हाय धड़कती छाती।
छेदालाल नहीं कोई जगमें तेरा संग सँगाती ॥ भा० १४ ॥

(१३) वेद विरुद्ध मत खंडन।

भजन ३६७

दोहा—सत्य विद्या जो वेद है, वह दई पोप भुलाय।
मिथ्या पुराण प्रकट कर, सब दिये लोग बहकाय ॥
टेक—भ्रम २ भूला यह संसारा। भ्रम २ भूला० ॥
चार वेद का भेद न जाने, लिये फिरे है पुराण अठारह ॥
जो पालन करे वाको नहिं, जाने, पत्थर से कहेकर निस्तारा।
सन्ध्या उपासना कुछ नहीं जानें, घंटा भांझ करें झनकारा ॥
मन का मैल एक नहीं छूटा, गंगा न्हाये बारम्बारा।
काम क्रोध मद लोभ भरे है, खान पान में धर्म बिचारा ॥
जीवित पिता की बात नहीं पूछे, मरे हुए का रचा भण्डारा।

रोग नाश औषध नहीं खावें, मन्त्र जन्त्र यतन विचारा।
पुरुषार्थ का ज्ञान भुलाया, प्रारब्ध पर करें गुज़ारा।
श्रेष्ठ सभा में एक न आवे, नाच कूद में जाए घर सारा॥
बिन वर देखे कन्या ब्याहें, रंडी जाचन कुटुम्ब सिधारा।
सम दृष्टि नहीं पण्डित बजते, पोप जाल परजा पर डारा॥
जीव ब्रह्म में भेद न राखा, अहंब्रह्म का शब्द पुकारा।
"नवलसिंह" जो सत्य त्यागदे, उस जीवन परहै धिक्कारा॥

भजन ३६८

अब तो त्याग निद्रा को मूरख, बहुत रहा तू सोया।
कभी नहीं परमेश्वर सुमिरा, समय अकारथ खोया॥१॥
सदा रहा पत्थर पूजा में, उनको मल मल धोया।
बुद्धि को अपन आप अविद्या, सगर बीच डुबोया॥२॥
पत्थरों को स्नान कराया, दिन में दीप जलाया।
यह तो सोच मनमें तू मूरख, फल अबतक क्या पाया॥३॥
विषय भोग में फँसा रहा वृथा जन्म गँवाया।
समझ गई तेरी खोई कैसे, क्या मूरखपन छाया॥४॥
गंगा में वह मल २ न्हाया, मनका मैल न छूटा।
वन के परोहित वहां ठगों ने दोनों हाथ से लूटा॥५॥
राधाकृष्ण कहकर मुख से, दिन भर फेरी माला।
छाई अविद्या हृदय में और दूर हुआ उजियाला॥६॥
पींठां काटा जगन्नाथ गया जूठा भात भी खाया।
इतना कष्ट उठाने पर भी, ज्ञान निकट नहीं आया॥७॥
प्रकृति से उत्पन्न हुआ, जो उसका पूजनहारा।
अंधकार में फसना है, यह है सिद्धान्त हमारा॥८॥
परमेश्वर के बिना नहीं यहां, पूजा योग्य है कोई।
केवल उसी का सुमिरन करतू, जिससे मुक्ति होई॥९॥

लावनी ३६६

शेर—टूटते आते हैं बन्धन झूठ और पाखण्ड के।
टट गया है भार खुलगये भाग भारत खण्ड के॥
टेक—सत्य विद्या तज वेद, झूठ पाखंड को गावें क्या मतलब।
उलटे मारग में चलकर हम दुःख उठावें क्या मतलब॥

चौक १

निराकार चेतन की हम जड़ मूर्ति बनावें क्या मतलब।
अनन्त और सर्वज्ञ का हम एक घर में बिठावें क्या मतलब॥
शुद्ध पवित्र जिसका पद है, फिर उसे नहलावें क्या मतलब।
भूख प्यास से रहित जो है उसे भोग लगावें क्या मतलब॥
जिसके नहीं शरीर उसको, हम वस्त्र पहनावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चल कर हम दुःख उठावें० ॥

चौक २

बिन बोले जो सुने, उसे हम कूक सुनावें क्या मतलब।
जिसके अनहद बाजे हैं हम गाल बजावें क्या मतलब॥
फूल पत्र में रमा जो उस पर पुष्प चढ़ावें क्या मतलब।
जो सब को प्रकाश करे, उसे दीप दिखावें क्या मतलब॥
जड़ पदार्थों की संगत में जड़ हो जावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चलकर हम दुःख उठाव०॥

चौक ३

जो है मुक्त स्वभाव उसका हम जन्म बतावें क्या मतलब।
जो है सब का पिता, किसी का पुत्र बनावें क्या मतलब॥
जो है बेअन्त उसको हम हद ठहरावें क्या मतलब।
करके क़ैद एक मंदिर में हम कुफल लगावें क्या मतलब॥
जो है सबका रचता, उसे रचना में लावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चल कर हम दुःख उठावें० ॥

चौक ४

जो मस्तक में रहे उसे, हम सीस नवावें क्या मतलब।
जो हाथों में बसे, उसे हम हाथ बँधावें क्या मतलब॥
जिह्वा में जो रहे, फिर हम ज़बान हिलावें क्या मतलब।
मन में रहे उसे मान फिर मन को डिगावें क्या मतलब॥
नैनों में जोरहे, फिर हम निगाह चलावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चल कर हम दुःख उठावें॥

चौक ५

दशवें द्वार का भेद न जाने, द्वारका जावें क्या मतलब॥
हरि छुपा है हरिदे में, फिर देह दगावें क्या मतलब॥
जगन्नाथ सारे जग में, फिर उड़िया धावें क्या मतलब।
सारे जगत की जूंठ खाय के, भ्रष्ट कहावें क्या मतलब॥
जहां पर होय क्लेश हमें, हम वहां पर जावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चल कर हम दुःख उठावें० ॥

चौक ६

माता पिता को घर में, छोड़कर इतउत जावें क्या मतलब॥
अन्तःकरण हो शुद्ध फिर हम गंगा न्हावें क्या मतलब॥
सत्य व्रत को छोड़ के, फिर अन्न न खावें क्या मतलब।
इन्द्रियां नहीं दमन करें, फिर वन में जावें क्या मतलब॥
तीन ताप से तपे सदा, फिर तपिये कहावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चल कर हम, दुःख उठावें० ॥

चौक ७

पीर और पैगम्बर पर, हम ईमान लावें क्या मतलब।

लाशरीक पहले कहकर, फिर शिरक बढ़ावें क्या मतलब ॥
बुतपरस्ती छोड़ कर हम, काब जावें क्या मतलब ।
पूर्व में क्या नहीं, सीस पश्चिम को नवावें क्या मतलब ॥
दिन को रोजा राखें रात भर फिर हम खावें क्या मतलब ।
उलटे मार्ग में चल कर हम, दुःख उठावें० ॥

चौक ८

सार रस की जड़ काट, छिलके को खावें क्या मतलब ।
दूध दही तज मक्खन को, फिर हाड़ चबावें क्या मतलब ॥
होकर जा निर्दयी किसी पर, छुरी चलावें क्या मतलब ।
करनी भरनी पड़े एक दिन, गला कटावें क्या मतलब ॥
मनी हैज़ का खाके खून, मूत्र से घृणावें क्या मतलब ।
उलटे मार्ग में चलकर हम, दुःख उठावें० ॥

चौक ९

जीते मात पिता को भोजन बिन तरसावें क्या मतलब ।
मरे हुए के सुख के हेतु, पिण्ड भरावें क्या मतलब ॥
अपने पति की आज्ञा तोड़ें, सती कहावें क्या मतलब ।
अपनी नार को जो दुःख दे, वह पति कहलावें क्या मतलब ।
पर नारी से भोग करें, वह जाति कहावें क्या मतलब ।
उलटे मार्ग में चल कर हम, दुःख उठावें० ॥

चौक १०

बाली उमर में ब्याह करा के, बल वीर्य घटावें क्या मतलब ।
बाली कन्या ब्याह के फिर, उसे रांड बिठावें क्या मतलब ॥
ब्याह काज में धन खो कर कंगाल कहावें क्या मतलब ।
जग ज्योंनार के बीच, वेश्या भांड नचावें क्या मतलब ॥

धन दौलत घर बार लुटा कर, मजा न पावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चल कर हम दुःख उठावें० ॥

चौक ११

पर दारा से प्रीति लगा, दिल दाग़ लगावें क्या मतलब।
लाज शरम को छोड़ जिगर में, आग लगावें क्या मतलब॥
औरों के सुख सम्पति को, हम देख हिरसावें क्या मतलब।
सबर और सन्तोष छोड़, मन को तरसावें क्या मतलब॥
इधर उधर गलियों में दिन भर, मन भटकावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चल कर हम, दुःख उठावें० ॥

चौक १२

राम कृष्ण का स्वांग बनाकर, भीख मंगावें क्या मतलब।
लीला रास में, सीता और राधा को नचावें क्या मतलब॥
भरी सभा में नाच कूद ताड़ी पटकावें क्या मतलब।
ललता और विशाखा बन, आंखें मटकावें क्या मतलब॥
श्रीकृष्ण को चोर जार कह नहीं शरमावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चलकर हम, दुःख उठावें० ॥

चौक १३

साहूकार चोरों के संग में, धन को लुटावें क्या मतलब।
ठग्गों की बातों में आकर, हम जान गँवावें क्या मतलब॥
मूरख की संगत में सज्जन, धोखा खावें क्या मतलब।
जो न आप से रुके, उसे फिर आप बुलावें क्या मतलब॥
पोपों की सोहबत में पण्डित, मान घटावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चलकर हम, दुःख उठावें० ॥

चौक १४

बिना परीक्षा किये किसी से, प्रीति लगावें क्या मतलब।
बढ़ा के पहले प्रेम मित्र से, फिर जो घटावें क्या मतलब॥
पहले छाती ठोक के हम, फिर पुश्त दिखावें क्या मतलब।
धर के क़दम आगे तो युद्ध में, फिर हटजावें क्या मतलब॥
मूर्ख पहले ब्रह्म बने, फिर मांग के खावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चलकर हम, दुःख उठावें० ॥

चौक १५

एकताई नहीं करें फिर वह दुःख उठावें क्या मतलब।
एक एक से जलें फिर हम सुख को लुभावें क्या मतलब॥
विद्या को नहीं पढ़ें, फिर हम विप्र कहावें क्या मतलब।
पुरुषार्थ को छोड़ पेट फिर भर कर खावें क्या मतलब॥
कर्म धर्म दें छोड़, ब्राह्मण पदवी पावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चलकर हम दुःख उठावें० ॥

चौक १६

दयानन्द ने जगा दिये जो फिर हम सोवें क्या मतलब।
दिया आनन्द दुःख भगा दिये, फिर अब हम रोवें क्या मतलब॥
चार वेद सत्य के सागर में, मन नहीं धोवें क्या मतलब।
सत्य वचन यह सुना दिया, अब थूक बिलोवें क्या मतलब॥
'नवलसिंह' कहे बे मतलब हम, झूठ गावें क्या मतलब।
उलटे मार्ग में चल कर हम, दुःख उठावें० ॥

लावनी ४००

शेर—मुक्ति के साधन मिले सब वेद के दर्मियान में।
सुन कथा तू वेद की क्यों भ्रमता अभिमान में॥

टेक–नहिं बाइबिल औरेत अंजील, नहीं कुराण पुराण अठारहमें।
नहीं मुक्ति विन ज्ञान, ज्ञान मिलता है वेद विचारे में॥

चौक १

नहीं मंदिर मसजिद मक्के में, नहीं गिरजा ठाकुरद्वारे में।
नहीं शंख नहीं घंटे में, नहीं हू हू बांग पुकारे में॥
नहीं धरती नहिं आकाश में, नहिं सूरज चन्द्र तारे में।
नहिं गंगा नहिं यमुना में, नहिं सरजू सिन्धु किनारे में।
तिलक छाप नहीं कंठा में, नहिं गेरुए वस्त्र धारे में।

नहीं मुक्ति० ॥

चौक २

जगन्नाथ के नहीं भात में, नहीं जूठ के खाने में।
नहिं काशी में नहीं प्रयाग में, नहीं त्रिवेणी न्हाने में॥
नहिं गोकुल नहिं मथुरा में, नहिं नन्दगांव बरसाने में।
नहीं द्वारका नहिं रामेश्वर, बद्रीनाथ के जाने में॥
नहिं चलने में नहिं फिरने में, नहिं थके नहिं हारे में।

नहीं मुक्ति० ॥

चौक ३

नहिं खाने में नहिं पीने में, नहीं छके नहीं भूखे में।
नहीं पुलाव नहिं जरदे में, नहिं सूखे में नहिं रूखे में॥
नहीं भंग धतूरे में, और नाहीं चरस के फूंके में।
नाहिं अफीम में नहीं मदक में, नहिं तम्बाकू हुक्के में॥
नहीं मद्य में नहीं मांस में, नाहिं जीव के मारे में।

नहीं मुक्ति० ॥

चौक ४

नहिं कुछ नीची धोती में, और नहिं कुछ खुले तम्बाने में।
नहिं गोटे की पगड़ी में, नहिं टोपी में इमामे में॥
नहिं मिरजई में, नहिं कोट में, नहिं कुरते, नहिं जामे में।
नहिं ऊनी नहिं सूती में, नहिं नीले पीले बाने में॥
नहिं तह में, नहिं तहमद में, नहिं कुछ गाती के मारे में।
नहीं मुक्ति० ॥

चौक ५

नहिं झुंडत नहिं मुंडत में, नहिं पटे केश बढ़ाने में।
नहिं कुछ नीची दाढ़ी में, और नहिं कुछ मूंछ चढ़ानेमें॥
नहिं कुछ देह सुखाने में, नहिं इन्द्रिय के कटवाने में।
नहीं रेशमी अचले में नहिं लम्बी लट लटकाने में॥
नहिं खाक बदन पै लगाने में,नहिं कान में मुदरा डारे में।
नहीं मुक्ति० ॥

चौक ६

नहिं वज़ू में नहिं कुल्ला में, नहिं न्हाने में नहिं धोने में।
नहिं कुछ सीस नवाने में, नहिं ऊंधा सीधा होने में॥
नहिं ग़ज़ल नहिं मरसइये में, नहिं गाने नहिं रोने में।
नहिं लीला नहिं नाटकमें, नहिं मिथ्या धन के खोने में॥
नहीं राम की किट २ में, नहिं ईसामसी सहारे में।
नहीं मुक्ति० ॥

चौक ७

नहिं इंगलिश नहिं पशतो में, नहिं अरबी हिन्दुस्तानीमें।

नहिं क़ौम नहिं फ़िरक में, नहिं राजे में नहिं रानी में ॥
नहिं पीर नहिं पैग़म्बर में, नाहिं झूठे अभिमानी में ।
नहिं आदम में नहिं हव्वामें,नाहिं किस्से नहिं कहानी में ॥
नहिं मूरत नहिं सूरत में, नाहिं गोरे में नहिं काले में ।
नहीं मुक्ति० ॥

चौक ८

नहिं कोहनूर के सुरम में, नहिं राली में नहिं चंदन में ।
नहिं विशाना के कटने में नहिं मस्तक के मण्डल में ॥
नहिं दांत की मेखों में कुछ, नहिं हाथ के कंगन में
वेश्याओं के नहिं रूह में, नहिं झूठे पाखण्डन में ॥
नहिं गाल की गुल २ में कुछ, नहिं हक २ के नारे में ।
नहीं मुक्ति० ॥

चौक ९

नहिं आसन में नहिं धासन में, नहिं ठगों की गठरी में ।
नहिं टाल की टुन २ में कुछ,नहिं नरमदा की पथरी में ॥
नहिं पीपल नहिं तुलसी में कुछ, नाहिं बेलकी पत्री में ।
नहिं गुलाब नहिं गेंदे में कुछ, नहिं फूल की पंखरी में ॥
नहिं पीतल नहिं तांबे में, नहिं सोने रूपे पारे में ।
नहीं मुक्ति० ॥

चौक १०

नहिं किसी तेहवार वारमें, नहिं घड़ी नाहिं पलछिन में ।
नहिं आज कल परसों में, नहिं रात में नहिं दिन में ॥
नहिं शाम में नहिं सुबह में,आखिर में नहिं अव्वल में ।
नहिंपरले और क़यामतमें कुछ, कियाममें नहिं हलचल में॥

नहिं गर्भ में नाहिं दुनिया में, नाहिं परलोक सुधारे में ।
नहीं मुक्ति० ॥

चौक ११

नहिं कलगी में नहिं तुर्रे में, नहिं अनघड़ में नहिं बाने में।
नहिं कुछ तिलक लगानेमे और नाहिं कुछ सभा रिझानेमें॥
नहिं नाक में नहिं छाप में, और नहिं ख्याल के गाने में।
नहिं कुछ ताल तंमूरे में, और नाहिं कुछ चंग बजाने में॥
'नवलसिंह' नहिं नजम नसर में, है कुछ दशमें द्वारे में।
नहीं मुक्ति बिन ज्ञान, ज्ञान मिलता है वेद विचारे में॥

भजन ४०१

बिना ज्ञान जीव कोई मुक्ति नहीं पावे।
चाहे धार माला चाहे मृगछाला।
चाहे तिलक छाप चाहे भस्म तू रमावे॥ बिना० १॥
चाहे रचके मन्दिर मठ, पत्थरों की लावे ठठ।
चाहे जड़ पदार्थों को सीस नित्य तू निवावे॥ बिना० २॥
चाहे बचा गाल चाहे संख और बजा घड़ियाल।
चाहे ढफ चाहे डोरू झांझ तू बजावे॥ बिना० ३॥
चाहे फिर तू गया प्रयाग, काशी में प्राण त्याग।
चाहे गंगा यमुना, चाहे सागर में नहावे॥ बिना० ॥
द्वारका और रामेश्वर, बद्रीनाथ परबत पर।
चाहे जगन्नाथ में, तू भ्रष्ट भात खावे॥ बिना० ५॥
चाहे जटा सीस बढ़ा, गोहर में चाहे कान फड़ा।
चाहे यह पाखण्ड रूप लाख तू बनावे॥ बिना० ६॥
ज्ञानियों का करले संग, पोपों का तजदे संग।
'नवलसिंह' मुक्ति का साधन तब आवे॥ बिना० ७॥

गजल ४०२

सनातन शब्द का लेकर, अजब हिकमत चलाई है।
नया फ़ैशन नई लीला, नये ढंग की कमाई है॥ १॥
हमें आशा थी सुधारेंगे, सुधारेंगे यह क़ौम अपनी।
मगर अफ़सोस खुदग़र्ज़ों ने उलटी कर दिखाई है॥२॥
अविद्या और कबीह रसमें, हटाने में नहीं कोशिश।
वही रोना वही दुखड़ा, मिले लड्डू मिठाई॥ ३॥
धर्म प्रचार करने के, बहाने से लगे फिरने।
पुराणों की कथा मिथ्या, हर एक जा पै सुनाई है॥ ४॥
हज़ारों मर्दों और इनके इस धोखे में आ २ कर।
वृथा ज़र को लुटाते हैं, करें फिर जग हँसाई है॥ ५॥
निकालें गालियां दिल खोलकर आर्य्य समाजों को।
दयानन्द जैसे महापुरुषों की, करी निन्दा बुराई है॥६॥
पुकारें नाम वेदों का, न जाना इसके अर्थों को।
प्रभु है लोहे का पत्थर का, मेरी यह दुहाई है॥ ७।
जो एक रस है व्यापक है, बनाई जिसने सब सृष्टि।
रिहयाश इसकी प्रतिमा में, गंगाजल में,बताई है॥ ८॥
करो पूजा ब्राह्मण की, बिना देखे लियाक़त के।
नहीं मालूम किस इलहाम से, ये खबर पाई है॥ ९॥
है उनसे बहस करने को रह आमादा आर्य्य गण।
समय को टालें होली में, यही उनकी सचाई है॥१०॥
ऋषि मुनियों पस मांदो, रहोगे कब तलक सोते।
सचाई झूठ के निर्णय से, बुद्धि क्यों हटाई है॥११॥
'गंगाराम' इलतजा करता है, तो भी जाल का फंदा।
बहुत कुछ मूर्खों से, क़ौम में ज़िल्लत उठाई है॥१२॥

गजल ४०३

टेक—वेद तज पोपों ने पुराण बनाए।
राम कृष्ण श्रेष्ठ पुरुषों को, मिथ्या दोष लगाए।
चोर जार इनका बतलाकर, बहुतै लोग हँसाए।
वेद तज पोपों ने० १ ॥
धर्म मोक्ष और काम पदार्थ, अपने हाथ बनाए।
स्वर्ग नर्क का ठेका ले लिया, लोग लूट सब खाए।
वेद तज पोपों ने० २।
काशी प्रयाग गया के उलटे पोप ने अर्थ सुनाए।
सुमिरन दर्शन और स्नान से मुक्ति के पन्थ बताए।
वेद तज पोपों ने० ३ ॥
जीते मात पिता पितरों को भोजन बिन तरसाए।
मरे हुओं के सुख के हेतु, फल्गू पिंड भराए।
वेद तज पोपों ने० ४ ॥
जिनकी देखी जड़ बुद्धि पूरी, उनको भक्त ठहराए।
मति के हीने गांठ के पूरे, वो इनके मन भाए।
वेद तज पोपों ने० ५।
वीर्य से वर्ण दिया चलाए, आश्रम धर्म कर्म डुबाए।
ईश्वर से वेमुख हो सबको अपने चरण पुजाए।
वेद तज पोपों ने० ६ ॥
भारत की दुर्दशा देख कर, दयानंद वेद सुनाए।
देश २ और नगर २ फिर सब के भ्रम मिटाए।
वेद तज पोपों ने० ७ ॥
आर्य के दल चहुं दिशि छाए, पोप बहुत घबराए।
झूठी मूठी जग में खुल गई, मले हाथ पछताए ॥
वेद तज पोपों ने० ८ ॥

'नवलसिंह' ने बीच सभा के पोप चरित सुनाए।
दुष्टों के मन शोक हुआ है, देख सज्जन जन हर्षाए।
वेद तज पोपों ने० ६॥

भजन ४०४

टेक-भाई मत वृथा उमर गँवाओ रे।
देवी देवता फिरे पूजता, उन क्या रक्खा रे।
जो चाहो परलोक सुधारो, गुण ईश्वर के गाओ रे॥ १॥
पत्थर ईंट को सीस नवाकर, मत मन को भटकाओ रे।
एक ईश्वर की हो सरणागत, इधर उधर मत जाओ रे॥२॥
अपना कारज आप बिगारा, तुझ को हो गया क्या रे।
समझाये भी नहीं समझता, क्यों अनजान बना है रे॥३॥
बगला भगत बहुत जन फिरते, अपस्वार्थ के मारे।
क्यों उनकी तू बात मानकर, बुद्धि हीन बनता है रे॥४॥
राग द्वेष से होकर न्यारा, गुण ईश्वर के गाओ रे।
सब झगड़ों को छोड़ के 'केवल' हरि से प्रीति लगाओ रे ५

ग़ज़ल ४०५

जड़ को तू माथा नवाना छोड़ दे,
पत्थरों से सिर भिड़ाना छोड़ दे।
बैठ तनहाई में इक चित ध्यान कर,
क़ाबा और काशी का जाना छोड़ दे।
होवेगी तकलीफ कुल दो चार दिन,
ज़ात पर तकिया लगाना छोड़ दे।
सामने रब्ब है अय दिल बिलयकी,
वसवसे से आजमाना छोड़ दे।
जान जावे पर न छोड़ो धर्म को,
गरचे तुझ को सब ज़माना छोड़ दे।

'खालिसा' इकनात रब्ब की ठीक जान,
और ज़ाते बेशुमाना छोड़ दे।

लावनी ४०६

यह भाव प्रमाणों से विचार में आया।
श्री वेद व्यास ने नहीं पुराण बनाया॥
कृष्ण द्वैपायन व्यास सुविद्याधर थे।
ब्रह्मज्ञानी वेदज्ञ महर्षि प्रवर थे॥
वेदान्त शास्त्र के कर्त्ता नय-नागर थे।
मेधावी शुद्ध विचार रत्न सागर थे॥
उन में क्यों पौराणिक पाखण्ड समाया॥ श्री० १॥
जिस को अच्छा लगता था वैर बढ़ाना।
जिस को भाता था धर्म-प्रदीप बुझाना॥
जिसको अभीष्ट था सत्य प्रताप घटाना।
जिसको पसन्द था दाम्भिक दृश्य दिखाना॥
उसने पुराण की रचना कर सुख पाया॥ श्री० २॥
जिसमें अधर्म बनि विहरै छैल छबीला।
जिस में न हुआ पापों का रंग धवीला॥
जिस में केवल है दुराचार की लीला।
जिस में बन गया महान्धकार चमकीला॥
ऋषियों ने ऐसा ग्रन्थ लिखा न लिखाया। श्री० ३॥
अट्ठारह ग्रन्थ पुराणों के पढ़ डारो।
हो पक्षपात से हीन प्रवीन विचारो॥
सब में सब के मतनिन्दक लेख निहारो।
यद्यपि सब से प्रतिकूल वेद हैं चारो॥
आपस का ऐसा भेद उन्हें क्यों भाया॥ श्री० ४॥
जो रहे धीर धर्मज्ञ मनीषी ज्ञानी।

पुरुषार्थ-प्राप्त नर-देव साहसी रानी ॥
जिनकी थी लोक प्रसिद्ध उदार कहानी ।
उनके सिर हाय कलंक ध्वजा फहरानी ।
देखो पुराण ने क्या अनर्थ उपजाया ॥ श्री० ५ ॥
भगवान ब्रह्म अवतार लिया करते हैं ।
कुछ लीला करने हेत देह धरते हैं ॥
अन्याय कपट दुष्कर्म से न डरते हैं ।
छल बल से भक्तों का क्लेश हरते हैं ।
है नहीं व्यास-कृत ग्रन्थों में यह गाया ॥ श्री० ६ ॥
रति किया चन्द्र ने नारी से गुरुवर की ।
मोहनी देख द्रुत दौड़ हुई शंकर की ॥
मल खाते हैं हारे धर शरीर शूकर की ।
निर्लज्ज विधाता ने बेटी अपनाया ॥ श्री० ७ ॥
श्री कृष्ण महा विद्वान तेजधारी थे ।
पुरुषोत्तम प्रतिभावन्त परोपकारी थे ॥
भट योगेश्वर थे प्रजा-शोक-हारी थे ।
उनको पुराणमें लिखा कि व्यभिचारी थे ॥
झूठा लम्पट बटमार लबार बताया ॥ श्री० ८ ॥
सारे पुराण में ऐसा भरा गपोड़ा ।
जिसने कि सृष्टिका नियम सहजमें तोड़ा ॥
अश्विनी देख कर सूर्य बन गया घोड़ा ।
ऐसी गप्पों का कहां मिलेगा जोड़ा ॥
अश्विनीकुमार उसी घोड़ी से जाया ॥ श्री० ९ ॥
चण्डाल शूद्र गणिका भिल्लिन हत्यारे ।
पापी पाखण्डी डोम अधर्मी सारे ॥
ले नाम सहज में ये वैकुण्ठ सिधारे ।

योगीजन हुए न मुक्त योग करि हारे ॥
यह सब है मायावी की फूहर माया । श्री १० ॥
देते पौराणिक मुक्ति देह दगवाना ।
औ तिलक लगा कण्ठी से कण्ठ बँधाना ॥
कर पाप करोड़ों निरे नाम गुण गाना ।
पी लेना पाय पखार कि तुलसी खाना ॥
वेदांत योगने समझो क्या समझाया ॥ श्री० ११ ॥
मरते ही देकर गाय तरा वैतरणी ।
देखो यम का दरबार कथा यों बरणी ॥
फिर सुनो वृषभ अहि गज शूकर की करणी ।
ये निराधार है खड़े धारि सिर धरणी ॥
यह किसी कुबुद्धि कथकड़ की भूमछाया ॥ श्री० १२ ॥
जो लोग जीव-हिंसा क गुण गाते हैं ।
मन्त्रों से पशु को मार मांस खाते हैं ॥
वे महाशक्ति के दास कहे जाते हैं ।
फिर अनायास वैकुण्ठ वास पाते हैं ॥
यह जाल किसी हिंसक ने है फैलाया ॥ श्री० १३ ॥
श्री बुद्धदेव की आई जहां कथा है ।
सो भूतक्रिया का हुआ प्रयोग वहां है ॥
इस से ऐसा सच्चा प्रमाण मिलता है ।
बेशक पुराण उन के पश्चात् बना है ॥
इस गाथा ने भी ठीक ठीक ठहराया ॥ श्री० १४ ॥
इस तम्बाकू का अमेरिका से आना ।
इतिहासज्ञों ने यवन-राज्य में माना ॥
फिर क्यों न कहैं है नहीं पुराण पुराना ।
यदि उस में है इसका वृत्तान्त बखाना ॥
है किसी कुमति ने यह विषवृक्ष लगाया ॥ श्री० १५ ॥

हठ पक्षपात जड़ता से नाता तोड़ो।
अविवेक भ्रान्ति आग्रह कुकल्पना छोड़ो॥
चित को विज्ञानमयी विद्या में जोड़ो।
निगमागम का भ्रमनाशक सार निचोड़ो॥
बस 'रामनरेश' मिटै कुतर्क की काया॥ श्री० १६॥

लावनी ४०७

जो मची हुई भारत भर में हलचल है।
यह पौराणिक मत के प्रचार का फल है॥
जिससे जग का उपकार नहीं होता है।
जिससे क्षय अष्टाचार नहीं होता है॥
जिससे सद्धर्म-प्रकार नहीं होता है।
जिससे परलोक-सुधार नहीं होता है॥
ऐसे ग्रन्थों का हुआ प्रतार प्रबल है॥ यह० १॥
जिस ने अक्षर का रूप नहीं पहिचाना।
जिस ने वैदिक शास्त्रों के नाम न जाना॥
घर घर से भिक्षा मांग पेट भर खाना।
जिस ने अपना यह दैनिक कर्म बखाना॥
इनका दल कहलाता अब मुनि-मण्डल है॥ यह० २॥
जिनको था समुचित विषय-विमुख बनजाना॥
बन बीच अकेले शान्त समाधि लगाना।
दल कन्दमूल फल फूल फली रस खाना॥
कैवल्य-प्राप्ति के लिये विवेक बढ़ाना।
सो साधु वषधारी चलवाते हल हैं॥ यह० ३॥
चुन कर कोई शिवदास निरन्तर डोलैं।
उनके विरुद्ध वैष्णव जमाति ध्वनि बोलैं॥
कुछ शक्ति शाक्त को भक्तितुला पर तोलैं।

शठ वामधर्म विपरीत सदा मुख खोलें ॥
हो गये मतों के अंधकूप दलदल हैं। यह० ४ ॥

धरि हाथ चीमटा फक्कड़ कहलाते हैं।
मादक विष अर्क धतूर भांग खाते हैं ॥
भरि चिलम चरस की निधड़क पी जाते हैं।
दिनरात नशे में मतवाले माते हैं ॥
बन गये बहुत उन्मत्त और पागल हैं। यह० ५ ॥

धूनी में फूक दिये जड़ लक्कड़ कंडे।
पूरे बक ध्यानी बने गाड़कर झंडे ॥
दिखलाय दम्भ भर दिये द्रव्य से हंडे।
मोटे महन्त होगये स्वार्थी संडे।
पर दीन बिचारे खाने बिना बिकल हैं। यह० ६ ॥

इस बाल व्याह ने अधोमार्ग दिखलाया।
बल तेज शूरता पुण्य प्रताप घटाया ॥
विधवा दल ने अति हाहाकार मचाया।
दुर्दशा पूर्ण हो गई देश की काया ॥
रह गया न धन विद्या न कलाकौशल है। यह० ७ ॥

जो पौराणिक मत को अभीष्ट यह होता।
नहीं रुके सनातन वेद-धर्म का सोता ॥
तो क्यों भारत आज दुखी हो रोता।
कवि 'रामनरेश' अखंड ख्याति क्यों खोता ॥
अब तो सुख सारे हुए आंख ओझल है। यह० ८ ॥

गज़ल ४०८

पुराणों ने अजन्मे ब्रह्म का औतार माना है।
पड़ा जो जीव बन्धन में उसे कर्त्तार माना है ॥

कहीं तो गीत गाया है कि सो नर देहधारी है।
कहीं मछली कहीं बाराह सा आकार माना है॥
कहीं वंचक बनाने को निराली तान छोड़ी है।
सुलाकर क्षीर सागर में कहीं बेकार माना है॥
भरी बेजोड़ 'रामनरेश' नादानी पुराणों में।
कि सत्ताहीन गप्पों को गले का हारमाना है।

ग़ज़ल ४०९

पहाड़ों से कटा करके शिला गढ़ते गढ़ाते हो।
न जाने कौन से गुण पै उसे ईश्वर बताते हो॥
बुरा है या कि अच्छा है नहीं वह जान सकती है।
किसे खाना खिलाते हो किसे पानी पिलाते हो॥
विचारो आज लों आई नहीं चैतन्यता उस में।
किवाड़े बन्दकर किसको सुलाते हो जगाते हो॥
लगाते भोग 'रामनरेश' जिसको वह न भूखा है।
निकम्मे हो, बहाने से, पराया माल खाते हो॥

भजन ४१०

पौराणिकों से प्रार्थना।

कवित्त।

पाहन की पूतरी से कीजिये विवाह वीर, गर्भ से उसी के पुत्र पुत्री उपजाइय। अथवा पसारि पंख उड़िये अकाश बीच, मीन मुख भीतर पसीना टपकाइये।। अश्विनी के पेट से निकालिये हकीम वैद्य, देश में 'नरेश' नरगणना बढ़ाइये। ऐसी चाल चालये विचार के पुरानी प्रथा, तब तो स्वधर्म के सनातनी कहाइये॥

टेक—बांचो न पुराण, प्यारे भारतवासी।
हैं वेद ब्रह्मकृत चारों, उनका सिद्धान्त विचारो।
वहां होगा कल्याण, प्यारे भारतवासी॥
लहि सत्य सुमार्ग सिधारो, अपना कर्त्तव्य सुधारो।
सदा गहि शब्द प्रमाण, प्यारे भारतवासी॥
वर वैदिक धर्म प्रचारो, प्रतिमा में ध्यान न धारो।
अचेतन है पाषाण, प्यारे भारवासी॥
भ्रम 'रामनरेश' विसारो, अज्ञान निशाचर मारो।
धरो कर ज्ञान-कृपाण, प्यारे भारतवासी॥

भजन ४११

दुखदा भ्रम भूलों ने हाय, सारे सुख का नाश किया।
जो था निराकार करतार, सारी वसुधा का भरतार॥
उसका मान मूढ़ अवतार, जड़नापन अपनाय लिया है॥ दु०
भूले वेदों के उपदेश, घर में किये पुराण प्रवेश।
भोगे भांति भांति के क्लेश, छल ने फूट पसार दिया है॥ दु०
ऐसा घेर लिया अज्ञान, हिन्दू बने आर्य सन्तान।
जिनके हुए पूज्य पाषाण, भूत चुड़ैल मदार मियां है॥ दु०
'रामनरेश' ऐक्य के यन्त्र, टूटे, मेर मेल के मन्त्र।
वन बैठे पूरे परतन्त्र, अवनति ने ज्यों अमृत पिया है॥ दु०

भजन ४१२

भारी भ्रम भूलोंने हाय, सबको दुख का देश दिखाया।
योगी व्रतधारी ऋषिराय, उन्नति की विधि गये छिपाय॥
उसमें व्यर्थ विरोध बढ़ाय, सबने कुफल भयानक पाया॥भा०॥
सत शास्त्रों का ज्ञान विहाय, नित २ नूतन पन्थ चलाय।
मनमाने मतवाद मचाय, वैर विरोध दम्भ अपनाया॥भा०॥

पृथिवी के मानव समुदाय, सीखे जहां सभ्यता आय।
सो भारत अब ज्ञान गंवाय, है बन गया पतित की काया ॥भा०॥
बेढब बाल विवाह रचाय, हिन्दूपन को लिया बचाय।
निर्भय वारांगना नचाय, साहस बल पुरुषार्थ नशाया ॥भा०॥
विधवापन की अति दुखदाय, गई घटा भारत पै छाय।
बहु व्यभिचार वारि बरसाय, गर्भपात का विटप उगाया॥भा०॥
मदन देवकी ठोकर खाय, बुड्ढे हंसे सुहागिनि पाय।
तुरत मरे बाबा मुंह बाय, घर आते ही राड बनाया ॥भा०॥
निपट निरक्षर विप्र कहाय, निगमागमका पाठ भुलाया।
टका सिद्धि का करें उपाय, ठगई का भ्रमजाल बिछाया ॥भा०॥
मियां मदार मसान पुजाय, योगिनि भद्रा से डरपाय।
ग्रहगण का गुण अवगुण गाय, सबको इसमें घेरि फंसाया ।भा०
ज्ञान गपोड़े गूढ़ सुनाय, भोले लोगों को बहकाय।
जड़की पूजा में अरुझाय, जड़ मति होजाना समझाया ॥भा०॥
कोई कभी विदेश न जाय, धन बल विद्या नहीं कमाय।
छुआ छूत की छेक बताय, भरि २ अन्धकूप में ताया ॥भा०॥
क्षत्रिय छूकर शस्त्र नहाय, गुप्त गुप्त धन धरे धंसाय।
दास दासपन दिये भगाय, मन मौजों में अड़ अटकाया ॥भा०॥
घरनी को विद्या न पढ़ाय, घर घर घनी फूट फैलाय।
भाई से भाई अलगाय, अवनति का प्रण रोपि जगाया ॥भा०॥
वंचकजन तन राख रमाय, बन महन्त बक ध्यान जमाय।
छलिया स्वार्थ-समुद्र समाय, चेले चेलों को फुसलाया ॥भा०॥
गये वणिज व्योपार विलाय, सम्पति गई विदेश सिधाय।
कंगाली घुस पड़ी बलाय, चिथड़े टुकड़े को तरसाया ॥भा०॥
आलस दुराचार अघ धाय, धन चिन्ता की आग जलाय।
जन २ को उसमें झुलसाय, दुखदे पागल कर प्रकटाया ॥भा०॥
परम पिता को शीश नवाय, उठो स्वधर्म ध्वजा फहराय।

रामनरेश समाज सजाय, करो सुधार अमोध अमाया ।भ०॥

भजन ४१३

टेक–मुर्दे का भूत नहीं नाम है, फिर क्यों दशहत खाते हो।
काल तीन का वही ज्ञान है, भूत भविष्यत वर्तमान है।
सोचो इसे धर करके ध्यान है, ख्याल करने का मुकाम है॥
पूजने किसे जाते हो॥ मुर्दे० १॥
जब कोई कहीं जीव मरता है, कर्मानुकूल देह धरता है।
फिर तो बता किससे डरता है, कहां पर किस का धाम है॥
दहशत से मरे जाते हो॥ मुर्दे० २॥
नहीं कहीं सैयद नहीं पीर है, नहीं कहीं मुहम्दा वीर है।
मर गये उनका हुआ अखीर है, नहीं कहीं हड्डी चाम है॥
फिर किसको पुजवाते हो॥ मुर्दे० ३॥
नहीं गया में वास करे है, न भूत बन कर स्वांस भरे है।
नहीं पिण्ड की आस करे है, सब ठगने का काम है॥
च्यून तुम नाहक फिकवाते हो॥ मुर्दे० ४॥
नहीं कोई भूत प्रेत है भाई करे चतुर अपनी चतुराई।
रामचन्द्र रहे गाय सुनाई, यह सोचन का काम है॥
तुम क्यों न ध्यान लाते हो॥ मुर्दे० ५॥

भजन ४१४

निराकार सरकार में करते बहुत विचार।
वास्तव में निराकार है नहीं कोई आकार॥
परमेश्वर सब का एक है क्यों आपस में लड़ते हो॥ टेक॥
है वही रामकृष्ण वही अल्ला, जैसे पंडित तैसे ही मुल्ला।
सोचो साफ़ क्या खुल्लम खुल्ला, करना चहिये ज्ञान है॥
जो लिखा नहीं पढ़ते हो॥ १॥

हिन्दू और मुसलमां भाई, सांचो ईश्वर की प्रभुताई।
क्यों अपनी करते चतुराई, मजहबों की झूंठी टेक है॥
खुदगर्ज़ी में मरते हो॥ २॥
मुसलमान मसजिद को मानें, हिन्दू मंदिर में प्रभु जानें।
अपनी अपनी सब ही तानें, यह सब बैकाने की बैक है॥
तुम किस गम में पड़ते हो॥ ३॥
वह सर्व व्यापक सर्वाधार है, निर्विकार और निराकार है।
न्यायकारी और गुणागार है, अतन्न पुरुष वह नेक है॥
शर्मा क्या दोष धरते हो॥ ४॥

भजन ४१५

ला०-हिन्दू और मुसलमां भाई अब सदा सुनना चाहिये।
ईश्वर के ऊपर हरगिज़ कभी तुम्हें झगड़ना नाहिं चाहिये॥
निराकार नहीं आकार जिसका साकार नाहिं कहना चाहिये।
कहूं भजन द्वारा सब अर्थ सुनो शांति चित रहना चाहिये॥
टेक-गौर कर देखना जी, नहीं ईश्वर मंदिर मसजिद में।
मुसलमानों की मसजिद देखो, हिन्दुओं के मंदिर सारे।
मुल्ला दाढ़ि पुजारी दूर, लम्बे तिलकन वारे॥ गौ०
मुल्ला जी की लम्बी दाढ़ी, पुजारी के लम्बे केश।
यकदा अर्थ हुआ दोनों का है ठगन का भेष॥ गौ०॥
बड़े ज़ोर से पुकारें हाफिज़ सुन खुदा का बंदा।
ऐसेही पोप घड़ियाल बजावें डालें लूट का फंदा॥ गौ०
होवें ताज़िये सालाना में इधर करें जन्म आठें।
मुसलमान तारीख मनावें पोप बनावें आठें॥ गौ०
बकराईद मुसलमानों की बकरे मारे जावें।
इधर की भी दुर्गा में मिस्रो भैंस नक' कट जावें॥ गौ०
मुसलमान की कुर्बानी का हिन्दू करें बखेया।

आप नहीं कुछ चिन्ता करते पूजे देव जखैया ॥ गौ०
जब कोई काम ज़रूरी होवे क़सम खुदा की खावें।
हिन्दू भाई बिना स्वार्थ के गंगा जली उठावें ॥ गौ०
मक्का मथुरा और मदीना काशी में पता लगाया।
रामचन्द्र कहैं साफ़ करो दिल घट में ईश्वर पाया ॥ गौ०

गज़ल ४१६

कवित्त।

ध्यान धरके मित्र ज़रा दिल में तो विचार करो,
सत्य और असत्य का तो निर्णय कर लीजिये।
सूर्य और चन्द्र का किसी पै आना असम्भव है,
उदय नित होते सो आकाश से लखि लीजिये ॥
अगर एक मनुष्य पर सवार हों नवग्रह देव,
बचना दुशवार यह निश्चय समझ लीजिये।
कहै रामचन्द्र तुम्हें सुनाकर के ताज़ी छंद,
पृथक पृथक हाल इन का जान लीजिये ॥

टेक-धोखे से तुम्हें बहकाय के, कैसा पाखण्ड लगाया।
प्रथम लखो इनकी चतुराई, लो इन से पंचांग दिखाई ॥
कहते दशा सूर्य की आई, राहू केतु मिलाय के।
चौथा शनि देव बताया ॥ धोखे० १ ॥
सूर्य का दान धेनु बतलावे, राहू को बकरी मंगवावे।
भैंसे पर शनि देव चढ़ावें, इतने दान बताय के।
धन माल का नाश कराया ॥ ध.खे० २ ।
जैसा कहैं वैसा हम करते, खुद कहैं नाम देवों का धरते।
लेटर बक्स यह अपना भरते, मरते तक समझाय के।
गौ दान शीघ्र करवाया ॥ धोखे० ॥
मरजाने पर गरुड़ को खोले, पता स्वर्ग का प्रोहित बोले।

भूखे पित्र तुम्हारे डोलें, ऐसा वचन सुनाय के।
जब कर्म कांड रचवाया ॥ धोखे० ४ ॥
चाहे वृद्ध मरा चाहे वारो, करो त्रियोदशा धर्म तुम्हारो
बूरो दही बड़ो ही प्यारो, भरके पेट अघाय के।
कहैं रायता खूब बनाया ॥ धोखे० ५ ॥
अगर अधिक भोजन कर आवें, ऊपर से पानी पी जावें।
फिर मुख भर यह वचन सुनावें, पेट पै हाथ फिराय के।
आज माल दुष्ट का खाया ॥ धोखे० ६ ॥
करो गौर देखो सब भाई, यह पंडित जी की पंडिताई।
रामचन्द्र यूं कहैं सुनाई, भजन भाव में गाय के।
सब मित्रों को समझाया ॥ धोखे० ७ ॥

लावनी ४१७

टेक-मची भारत में कैसी धूम, चलीं सब उलटी राह रसूम।
लगे सब पूजन पत्थर को, झुकावें भूतों पर सर को
कहैं ऋषि मुनि जादूगर को, लुटाते हैं नाहक ज़र को।
दोहा-हाय २ संसार की, कैसी बदली रीति।
धर्म छोड़ करने लगे, पापानों से प्रीति ॥
जिहालत का होगया हजूम। मची भारत० १ ॥
बिसारी वेदों की बानी, चलाईं रस्में मन मानी।
देश की करी निपट हानी, समाई ऐसी नादानी।
दोहा-स्वर्ग शर्मता था भला, जिस भारत को देख।
सो अब हालत क्या कहैं, मोना कर दई रेख।
घन गये तमी अकल के बूर। मची भारत० २ ॥
जिसे जो दिल पसन्द आया, वही सफा मां ठहराया।
वही झूठा कथकर गाया, खूब लोगों को बहकाय

दोहा-बड़े २ पुनि सुजन भी, ओछी संगत पाय।
पोपों की सिख मान के, दीना धर्म गमाय ॥
असलियत ज़रा न की मालूम। मची भारत० ॥
हुआ जब दयानन्द अवतार, देख जग का उलटा व्यवहार।
चलाये धर्म वेद अनुसार, जगत में किया महा उपकार।
दोहा-झूठा झगड़ा रहा था, बाबू जग में छाय।
स्वामी ने उस नींद से, सब को दिया जगाय ॥
धन्य धनि दयानन्द मरहूम। मची भारत० ४ ॥

लावनी ४१८

टेक-हाय खुद कर २ बेजा काम, किया ऋषि मुनियों को बदनाम
बनाये झूठे सकल पुरान, बाइबिल व इंजील कुरान।
ज़रा भी किया न दिल में ज्ञान, मिटाये असली नाम निशान।
दोहा-कर कर झूठी शायरी, खूब मचाई धूम।
तब वेदों के मुख़्तलिफ़, उलटी चली रसूम ॥
तजे पहले शुभ कर्म तमाम ॥ हाय० १ ॥
कृष्ण जो थे पूरे योगी, बतावें उन्हें काम रोगी।
कुगति इन पोपों की होगी, बनेंगे महानरक भोगी ॥
दोहा-पोपदेव ने भागवत्, कथा बनाय बनाय।
नीति शास्त्रों में वृथा, दीना कपट मिलाय ॥
व्यास पर लगा दिया इलज़ाम ॥ हाय० २ ॥
किये पाषाणों के शृंगार, खूब पुजवाय दे ललकार।
पुस्तकें रची उसी अनुसार, इसी विधि किया कपट व्यवहार ॥
दोहा-ईश नाम से भी कहीं, बना लिये कुछ ग्रन्थ।
निज स्वारथ के कारने, चला दिये मत पंथ ॥
बता कर ईश्वर का पैग़ाम ॥ हाय० ३ ॥
मित्र जो तुम होगे कुलवान, भजो जगदीश तजो अज्ञान।

जाल थां पर देउ न ध्यान, मुफ्त में मत होना हैरान ॥
दोहा—अच्छी अच्छी पुस्तकें, पढ़ते रहो हमेश ।
सावू सन्ध्या बन्दना, गायत्री उपदेश ॥
करो नित हवन सुबह वो शाम ॥ हाय० ४ ॥

गजल ४१६

रहना २ रे हुशियार यार पोपों के फंदे से ।
सावन में जो घोड़ी वियावे, धन धन उन के भाग ।
पोप खोल खूंटे से बांधे, इस विधि होना राग ।
ऊपर होते हैं सवार ॥ यार० ॥
माघ मास में भैंसी जो बियावे, फूट गई तक़दीर ।
खोल के देवई है जोशी को, खेहो कहां से खीर ।
जाके बांधी विराने द्वार ॥ यार० ॥
सुअरी बच्चे देती है जो उसे न लेता कोय ।
धन्य कहिये धनकी हिम्मतको यही अचंभा मोय ॥
फिरती संग बच्चों की लार ॥ यार० ॥
सोते सोते मुद्दत बीती, किस गफलत में सोये ।
फंसे पुरानों की शिक्षा में, वैदिक धर्म बिछोये ॥
अबतो लीजो पलक उघार ॥ यार० ॥
घीसाराम भटीपुर वासी, समझावे कर जोड़ ।
वेद भाष्य को समझो प्यारे, उलटे मारग छोड़ ॥
तुम से कहता तावेदार ॥ यार० ॥

गजल ४२०

कहीं उपदेश वेदों का जो कोई भी सुनाता है ।
तो कहते हैं ये बेहूदा वही बातें बनाता है ॥
कोई पागल कोई सौड़ी कोई कहता दिवाना है ।

कोई कहता है ऐ ग़ाफ़िल बके क्या जाहिलाना है ॥
कोई कहता ये चालाकी है बाक़ी सब बहाना है ।
अरे भाई ज़रा देखो ये क्या उलटा ज़माना है ॥
कि नेकी हाथ करने में बदी का नाम आता है ।
कहीं उपदेश वेदों का जो कोई भी सुनाता है ॥ १ ॥
बड़ा अफ़सोस होता है देख कर हाल शैतानी ।
मुबर्रा वेद अक़दस को दिलों से करदिया फ़ानी ॥
भुलाकर धर्म की बातें चलाई रस्म मनमानी ।
कि जिसको आज सुनर कर निहायत है परेशानी ॥
सरासर रंजग़म हरदम कलेजे में समाता है ।
कहीं उपदेश वेदों का जो कोई भी सुनाता है ॥ २ ॥
न धोका देनेवालोंकी तरफ़ ऐ आकिलो जाओ ।
कि छोड़ो सब तरफ़दारी नज़र बस ग़ौर परलाओ ॥
ज़रा सोचो ज़रा समझो ज़रा इन्साफ़ पर आओ ।
हक़ीक़तमें जो सच्चाहो करम दिलशाद फ़रमाओ ॥
कि जिसका है समर अच्छा वही तरजीह पाता है ।
कहीं उपदेश वेदों का जो कोई भी सुनाता है ॥ ३ ॥
खिदमतें मुल्क की करना यही बस काम है मेरा ।
छुटा कर हर बुराई को खुशी अंजाम है मेरा ॥
मनीपुर सूरजा रहना यही पयाम है मेरा ।
कि साहब जैन्ती परशाद वर्मा नाम है मेरा ॥
नमस्ते लो सभी बाबू अदबसे सिर झुकाता है ।
कहीं उपदेश वेदों का जो कोई भी सुनाता है ॥ ४ ॥

भजन ४२१

ध्वनि-क्या कोई गावे क्या सुनावे प्रभु०
टेक-नहीं सुनते हो वेद पुकार मित्रो सोचा न सार असार ।

जो सर्व ज्ञाता आनंद दाता माता पिता करतार॥
वह सर्व व्यापी पूरा प्रतापी लोकों का पालनहार॥
उसको न जाना करके बहाना माना उसे अवतार।
श्री कृष्ण योगी थे मुक्ति भोगी, उनको कहा चोर जार॥
अब माल खाते रुपया कमाते वेश्या से करते प्यार।
मुनी वेशधारी छलिया पुजारी करते महा व्यभिचार॥
गप्पों की पोथी सत्य से थोथी फैली हुई बेशुमार।
जिन को क़बूले वेदों को भूले भाई हमारे गँवार॥
वेदानुगामी दयानन्द स्वामी आकर किया है सुधार।
भ्रम को भगाया सबको जगाया भारत का पुनरुद्धार॥
जड़को बिसारो चैतनको धारो चित्त में गहो सद्विचार।
कीजे न देरी "महलोत" मेरी विनती सुनो बार बार॥

ग़ज़ल ४२२

उसको कहां न मैंने ढूंढ़ा मगर न पाया।
मिलने की आर्जू में खोजा मगर न पाया॥
दैरो हिरम कलीसा जाकर तमाम ढूंडे।
उसको बग़ौर हरजा देखा मगर न पाया॥
मसजिद में पञ्जवक्ता जा २ उसे पुकारा।
कावे में भी निशाँ कुछ उसका मगर न पाया॥ ३॥
तिब्बे मसीह का भी एक एक वर्क देखा।
कोई भी दर्दे दिल का नुसखा मगर न पाया॥ ४॥
जब जुस्तजूए नुरुल हक़ में मैं शांम पहुँचा।
कुहे तूर पर भी उसका जलवा मगर न पाया॥ ५॥
की मुद्दतों गुलामी हम हिन्दुओं की मैंने।
कोई भी खद्मे परवर आका मगर न पाया॥ ६॥
कोसों चला गया मैं उस वाममार्ग होकर।

कुछ दूर चलके आगे रस्ता मगर न पाया ॥ ७ ॥
अफ़सोस कुल जहां का ला खाक छान डाली ।
किस २ तरह न उसको ढूंढा मगर न पाया ॥ ८ ॥
अपनी तलाश ही में है मित्र ग़लती ।
उसको तो खाने दिल में देखा मगर न पाया ॥ ९ ॥

ग़जल ४२३

शेर—ढूंढ़ा पता न पाया परेशान हो गया ।
मैं ढूँढते ही ढूंढ़ते हैरान हो गया ॥
उसकी ही जुस्तजू में भटकता हूं रोज़ शब ।
दर्शन न जाने उसका मुझे होगा मित्र कब ।
जाऊँ कहाँ जहाँ दिली पूरी मुराद हो ।
परमात्मा के वस्ल से दिल अपना शाद हो ।
टेक—कहां जाके छिपा होगया लापता,
कहीं मिलता है उसका पता ही नहीं ।
मैंने ढूँढ़ा जहां सारा कोनो मकां,
वह प्यारा हमारा मिला ही नहीं ॥ १ ॥
जाके मन्दिर में उसको मनाने लगा,
उसे सोता समझ कर जगाने लगा ।
वह तो ऐसा था कोई बुते संग दिल,
कि जगाने पै भी वह जगा ही नहीं ॥ २ ॥
फिर काबे का जाके तवाफ़ किया,
संग असवद का मैंने बोसा लिया ।
कैसा बेताब हो हो पुकारा उसे,
लेकिन उसने ज़रा भी सुना ही नहीं ॥ ३ ॥
जब कहीं नुस्खए दर्दे दिल न मिला,
तो मसीहा का मैंने इलाज किया ।

फिर होसकी वहां पै मसीहा से भी,
मेरे इस दर्दे दिल की दवाई नहीं ॥ ४ ॥
वाममार्ग पै चलते ही चलते थका,
न मुझे मंज़िले मक़सूद मिला।
आख़िर हिम्मत हार के बैठ रहा,
गया आगे तो मुझ पर चला ही नहीं ॥ ५ ॥
तीर्थों में मैं मुद्दतों भटका फिरा,
घूमते घूमते फिर मैं काशी गया।
सारी काशी को घर घर मैं ढूंडा फिरा,
पर चला उसके घर का पता ही नहीं ॥ ६ ॥
सब जगह हार कर तीर्थ राज गया,
हाईकोर्ट में वां पर अपील किया,
एक पंडा को अपना वकील किया,
फ़ैसला पर वहा भी हुआ ही नहीं ॥ ७ ॥
फिर तो बैठा मैं उस पर ही मूंड मुंडा,
अपने सारे बदन पर ली ख़ाक लगा।
उसे लाखों तरह मैंने धोखा दिया,
मेरे फन्दे में वह फँसा ही नहीं ॥ ८ ॥
जिसे वैदिक धर्म कहे सारा जगत्,
है सुना मैंने प्यारा मेरा है वहां।
सारी दुनिया तो ढूँढ़ी मगर ढूँढ़ने,
'मित्र' अब तक वहां तो गया ही नहीं ॥ ९ ॥

गजल ४२४

ख़ानए दिल में छिपा था, मुझे मालूम न था।
परदा ग़फ़लत का पड़ा था मुझे मालूम न था ॥ १ ॥
दैरो काबे में फिरा पूछता मैं तेरा निशां।

दिल में ही क़िबलेनुमा था मुझे मालूम न था ॥ २ ॥
लामकां अर्श मुअल्ला पै नहीं तक्ते नशीं ।
लेकिन यह फ़र्ज़ी खुदा था मुझे मालूम न था ॥ ३ ॥
लामकां तुझको कहैं ढूढ़ने चले तेरा मकां ।
हैफ़ यह मकरो रिया थी मुझे मालूम न था ॥ ४ ॥
हुआ यमराज के धोके से मैं गरदूं गरदां ।
कब भला मुझ से जुदा था मुझे मालूम न था ॥ ५ ॥
जान जानां के लिये जाने को तैयार ही थी ।
जान से जाना मिला था मुझे मालूम न था ॥ ६ ॥
मिस्ल आहू की मैं सरगरदां फिरा सहरा में ।
नाफ़ में नाफ़ा छुपा था मुझे मालूम न था ॥ ७ ॥
मिस्ल बुलबुल के हरेक गुल को बताया महबूब ।
गुनचये दिल में छुपा था मुझे मालूम न था ॥ ८ ॥
ताहिशे दिल से मदहोश हुए में रही कुछ न तमीज़ ।
आवे गफलत में छिपा था मुझे मालूम न था ॥ ९ ॥
हैफ नादानी से ज़म कहा आब हयात ।
दिल ही पस आबवक़ा था मुझे मालूम न था ॥ १० ॥
भोजदत्त जाग बहुत सोया नसीबा जागा ।
यार पहलू में छिपा था मुझे मालूम न था ॥ ११ ॥

गज़ल ४२५

मिस्ल नाफ़े के छिपा नाफ़ में था रब प्यारा ।
मिस्ल आहू तू फिरै दश्त में मारा मारा ॥
परदा गफलत का उठा बुलबुले शैदा दिलसे ।
बजड़ा जता है चमन देखो तुम्हारा सारा ॥
तुम को मंजूर है आबाद रहे गुलज़ार अगर ।
पढ़ गुलिस्तां का सबक़ छोड़ सि पारा सारा ॥

काबा ओ दैर में ढूंढ है तू किसको ज़ाहिद।
खानए दिल में बसे है वह तुम्हारा प्यारा॥
बुतपरस्ती का किया विरद जो तूने आबिद।
बुत के मानिन्द हुआ ढंग तुम्हारा सारा॥
उसको जब्बर कहो आप हुए संगी दिल।
ज़ातअक़दस का हो फिर कैसे नज़ारा प्यारा॥
ख्वाब में भी नहीं देखा है वह महबूब हसी।
नक्श फिर कैसे मसव्वर ने उतारा प्यारा॥
होवे सदा चाक जिगर जिसके हों सदहा महबूब।
दिल्लगी एक से दिल हो नहीं पारा पारा॥
दम फ़िदा उसपै जुदा हम से न हो एक लहज़ा।
हो अलहदा नहीं दरिया से किनारा प्यारा॥
है यह ईमाए दयानन्द की होवे अक्सीर।
भोजदत्त जिसने कि यह नफ्सका पारा मारा॥

इस्लामी दुनियां से मेरी प्रार्थना।

ग़ज़ल ४२६

आर्यों की नस्ल हो मुस्लिम कहाना छोड़ दो।
छोड़दे इस्लाम का झूंठा फ़िसाना छोड़दो॥
एक ईश्वर की करो पूजा अब तुम बहरे खुदा।
संग असवद को मियां जी सर झुकाना छोड़दो॥
है रवां गंगा तुम्हारे दर पै सदियों से अज़ीज़।
जाके मक्के आबे ज़मज़म भर के लाना छोड़दो॥
छोड़दो दैरो हरम आदियों को तुम सवाब हो।
कब्रों पर पीरों फ़क़ीरों के भी जाना छोड़दो॥
तुम बने हो वास्तो सब पाक खाके हिंद से।

तर्कों और ईरान के अब गीत गाना छोड़दो ॥
क्या मज़ा हो गर फ़रिश्तों से मैं कहदूं अर्श के ।
तुम खुदा का तख़्त अब सर पर उठाना छोड़दो ॥
गर तुम्हें दरकार है रहमत खुदा की भाइयो ।
खून नाहक बेकसों का तुम बहाना छोड़दो ॥
बैठ उठ और लेट जाने से नहीं मिलता खुदा ।
इसलिये अब तुम निमाज़े पंजगाना छोड़दो ॥
हो चुकी अब दिल्लगी बरसों खुदा के वास्ते ।
हूरो गिलमां से मियां अब दिल लगाना छोड़दो ॥
है ये तस्नीफ़े मुहम्मद मत खुदा का नाम लो ।
दोस्तो कुरआं को इलहामी बताना छोड़दो ॥
क़ैद मुर्दों को क़यामत तक के ख़ातिर क़ब्र में ।
मत करो अब ये खुदाई जेलखाना छोड़दो ॥
गर कहीं मिल जाय मुझको तो कहूं कर जोड़ कर ।
मैं खुदा से अर्श का दीवान खाना छोड़दो ॥
कर दिया बदनाम इसने दीनो दुनियां में तुम्हें ।
भाइयो कुरआन पर ईमान लाना छोड़दो ॥
है मुसाफ़िर की सदा सुनलो खुदा के वास्ते ।
बुलबुले इसलाम का अब आशियाना छोड़दो ॥

ग़ज़ल ४२७

किसी किताब में इलहामियत का नाम नहीं ।
सिवाय वेद खुदा का कोई कलाम नहीं ॥
जहां शराब की नहरें जवान हूरें हों ।
सुनले पे रिन्द वहां जाहिदों का काम नहीं ॥
अगर क़दीम है जिन्नत ख़िलाफ़ कुरआं है ।
अगर जदीद है हरगिज़ इसे दवाम नहीं ॥

कुछ हम भी पूछेंगे जिन्नत का जिक्र अय फ़ाजिल।
हमारा आपका गो साहिबो सलाम नहीं॥

भेड़ों की बग़ावत पर अफसोस।

गजल ४२८

बाग़ मेरी मेहनतों का आह! कुम्हलाने लगा।
हर शजर हर वर्ग हर गुल आह मुरझाने लगा॥
की हिफ़ाज़त एक मुद्दत मैंने जिन भेड़ों की थी।
उनको इक शेरे बबर चुन चुन के ले जाने लगा॥
जिन की खातिर जान दी औ सख़्तियां झेली तमाम॥
हैफ़ वह भी मिस्ल तोता आंख दिखलाने लगा॥
बढ़ गया बाभे शफाअत और क़फ़्फ़ारा मेरा।
बाइबिल वीबी का भी अब पांव थर्राने लगा॥
कुवांरी से होने की इज्जत होगई काफूर सब।
जुल्फये यूसुफ झूठ हर शख़्श बतलाने लगा॥
आज मेरे माज़िजों पर कौन करता है यक़ीन।
बाल तक की खाल हर इक शख़्श खिचवाने लगा॥
पोट इलज़ामात की सर पर मेरे रखने लगा।
दब के जिस के बोझ से पाताल को जाने लगा॥
ऐ खुदावन्द! यह ऋषी दयानन्द की करतूत है।
'चन्द्र' वैदिक धर्म अज़्ला सब को बतलाने लगा॥

गजल ४२९

अजब हैरान हूं ईश्वर तुम्हें कैसे रिझाऊं मैं।
नहीं वस्तू कोई ऐसी जिसे सेवा में लाऊं मैं॥
करूं किस तरह आवाहन कि तुम मौजूद हो हरजा

निरादर है बुलाने को अगर घंटी बजाऊं मैं।
तुम्हीं हो मूर्ति में भी तुम्हीं व्यापक हो फूलों में।
भला भगवान को भगवान पर कैसे चढ़ाऊं मैं॥
लगाना भोग है तुमको यह इक अपमान करना है।
खिलाता है जो कुल जग को उसे कैसे खिलाऊं मैं॥
हैं उसकी ज्योति से रोशन यह सूर्य चन्द्र और तारे।
महाअन्धेर है उसको अगर दीपक दिखाऊं॥
इस विषय में गोस्वामी तुलसीदास जी कहते हैं:—

चौ०—बिन पग चलै सुनै बिन काना।
कर बिन कर्म करै विधि नाना॥
आनन रहित सकल रस भोगी।
बिन बाणी वक्ता बड़ योगी॥

इसलिये:—

भुजायें हैं न गर्दन है न सीना है न पेशानी।
तुम हो लाजिस्म नारायण कहां चन्दन लगाऊं मैं॥

ग़ज़ल ४३०

भाइयों बुतों की पूजा, करते फ़जूल क्यों हो।
कुछ करसके न पत्थर, डरते फ़ज़ूल क्यों हो॥
कर क़त्ल मेंढ़ा भैंसा, पत्थर की भेंट देते।
जीवों के प्रान भाई, हरते फ़जूल क्यों हो॥
माता पिता की सेवा, करना है तुझको लाज़िम।
पंडों के कदमों में सर, धरते फ़जूल क्यों हो॥
ऐ रूप, योग साधन, बिन मुक्त न मिलैगी।
पड़ पोप जाल में तुम, मरते फ़जूल क्यों हो॥

भजन ४३१

टेक-तुम देखो मित्रो पोपों का शान निराला।
घट २ वासी अविनाशी प्रभु, जो सब का रखवाला।
उसको पत्थर का गढ़ के, मंदिर के बीच बिठारा रे ॥ तुम० ॥
लम्बे २ तिलक लगाकर, डाल गले में माला।
खाते मुफ्ती माल पुजारी, लाखों का घर घालारे ॥ तुम०२ ॥
शोर मचावें बड़ा एक दम, बजा शंख घड़ियाला।
पीवें दूध बताशे निशि दिन, बने फिरें गुललालारे ॥ तुम०३ ॥
'रूपराम' कहे पेट की खातिर, क्या रुज़गार निकाला।
परमेश्वर की मूर्ति बनाई, हाय जुल्म कर डालारे ॥ मतु०४ ॥

भजन ४३२

शेर-चेतन्य ब्रह्म उपासना, तज पूजा जड़ होने लगी।
तभी से जड़ पूजकों की, बुद्धी जड़ होने लगी ॥
त्याग कर ज़िन्दों कि सेवा, पूजने मुर्दे लगे।
मुर्दों की सी हालतें लोगों की बस होने लगी ॥
बे अक़्ल अपने बुज़ुर्गों का हँसी करने लगे।
तब ही से इस देश वालों की, हंसी होने लगी ॥
श्रीमद् स्वामी दयानन्द जी, जगा तुमको गये।
ख्वाबे ग़फ़लत से उठो, बरसों सुबह होने लगी ॥
टेक-अब तो पोप तुम्हारे ढोल की खुल गई पोल।
तुमने हमको बहका कर पुजवाया ईश बताकर ॥
घरावां पत्थर गोल गाल ॥ अब० १ ॥
मुर्दों के श्राद्ध बनलाये, हम को हैवान बनाये।
माल लूटा व तोल ॥ अब० २ ॥
वेदों से विरुद्ध अष्टादश, गढ़ लिये पुराण जाकी बस।
दिया विष रस में घोल ॥ अब० ३ ॥

कहा ईश्वर भक्त छुड़ा कर, मुक्ती दी हमें बताकर।
नहीं पर्वत पर डोल ॥ अब० ४ ॥
देवी पर छत्र चढ़ावें, तो स्वर्ग अवश्य ही पावें।
स्वर्ग भी ले लिया मोल ॥ अब० ५ ॥
स्वामी को बुरा बतावें, आर्यों से मुँह दुबकावें।
वे देते पर्दा खोल ॥ अब० ६ ॥
यूं उदयसिंह उच्चारा, जो ग्राम पेमपुर वारा।
सच्चे का बाला बोल ॥ अब० ७ ॥

गजल ४३३

सरे मैदान में आकर पोप जी ढोल बैठे हैं।
मुकाबिल शेरों के आकर ये गीदड़ बोल बैठे हैं ॥
शराबी भंगड़ी चरसी, कबाबी और व्यभिचारी।
अघोरी कुल दुनिया के, बना कर गोल बैठे हैं ॥
जो हैं पंडे पुजारी पे टका पंथी है मत इनका।
बनाकर ढोंग बैठे हैं छिपाये पोल बैठे हैं ॥
न बेजा कुछ कहा हमने, लिखा जो था पुरानों में।
पुराणों में जो पोलें थीं, उन्हें हम खोल बैठे हैं ॥
महीधर सायण आदि ने, बिगाड़ा अर्थ वेदों का।
इसी मतलब पै मतखोवे भी, होकर गोल बैठे हैं ॥
है रद्दी और कूड़ा थे, सनातन धर्म पौराणिक।
रत्न अनमोल जो कुछ थ, उन्हें हम रोल बैठे हैं ॥
उतर आये हैं बर्मा. गालियों पै अब यह पौराणिक।
लड़ाई मुफ्त की लेते ये, हिन्दू मोल बैठे हैं ॥

रसिया ४३४

टेक—बदरा फारिड़ारे पोपोंने पुजाये पथरा।

कहीं पुजावें मियां मसानी कहीं मदरा।
कहीं पुजावें चुड़ैल डंकिनी कहीं भुतरा ॥ १ ॥
चन्डी देवी और चामुन्डा पूजें गुमरा।
मार मार के दुष्ट खाय गये भैंसा बकरा ॥ २ ॥
ठग ठग दुनिया खाई इनने करि करि मकरा।
तीन लोक से न्यारी लिख दई देखो मथुरा ॥ ३ ॥
नारायण को दोष लगावें लिख दियो सुहरा।
हिरणाक्ष पृथ्वी कू लेगयो द्रोणागिरि बंदरा ॥ ४ ॥
धन्य २ श्री स्वामी जी को भारत सुधरा।
नहीं पोप भारत को करते चौरो पटरा ॥ ५ ॥
अब तो इन पर खाक डारदेओ भर २ छपरा।
शर्म्मा जलेसरी ने फैंक दिये अटरा बटरा ॥ ६ ॥

रसिया ४३५

टेक—भारत दीनों गर्द मिलाय, पोपदल पेलो छायो है।
ऋषि मुनिन को दोष लगावें, हाय अधर्मी नहीं शर्मावें।
राम, कृष्ण, सीता, राधा को खूब नचायो है ॥ १ ॥
वेदों में हिंसा बतलावें, कर व्यभिचार नहीं शर्मावें।
अश्वमेध नर्मेध और, गौमेध रचायो है ॥ २ ॥
शीघ्र बोधने विपता डारी, बाल विवाहकर दिये जारी।
कच्चा वीरज गर्भ न ठहरे, यह दुख आयो है ॥३॥
स्वार्थ क बस होकर भाई, धर्म कर्म दीने विसराई।
"इन्द्र रुद्र" खुद ग़र्जी ने सब कुछ करवायो है ॥४॥

भजन ४३६

टेक-पोपों के मरे मां बाप तले पीपल क रहते हैं।

दे ध्यान ज़रा सुन लीजे, हो ख़ता माफ़ कर दीजे।
नहीं बोला हमने झूठ वह अपने मुँह से कहते हैं ॥पो०१॥
जब लगें कनागत भाई, तब खावें दूध मलाई।
सब एक सालमें अन्न नीर पन्द्रह दिन चहते हैं ॥ पो०२॥
फिर कुछ नहिं खावें विचारे रहते दिन रात दुखारे।
हा इतते दिनों की भूख प्यास यह कैसे सहते हैं ॥पो०३॥
पुरुषन की हँसी उड़ाई, इन्हें तनक लाज ना आई।
हा 'रूपराम' सुन २ के नीर नैनों से बहते हैं ॥ पो० ४ ॥

भजन ४३७

टेक—जो तंग करें कंगाल को चंडाल उन्हें कहते हैं।
जो ना किसी का भला चाहते, देख २ पर धन को रहते।
बूढ़े बर के संग ब्याहते, निज कन्या वय बाल को ॥ चं०१ ॥
जो नहीं दिल में दया विचारें, पैनी छुरियां हाथ सम्हारें।
बिना खता जीवोंको मारें, खींचें उनकी खालको ॥ चं० २ ॥
मात पिता की टहल न करते, खोटे कर्मों में चित धरते।
रण्डी के घर जाके मरते, चाटें उसकी राल को ॥ चं० ३ ॥
'रूपराम' जो सत्य न बोलें, झूठ कहन को ही मुख खोलें।
स्याने बन जग ठगते डोलें, खायें पराये माल को ॥ चं० ४ ॥

तीर्थ तत्व।

ग़ज़ल ४३८

तीरथ का तत्व कोई नर अब न जानते हैं।
इससे फिरें भटकते, सब खाक छानते हैं ॥ १ ॥
यह कुछ नहीं समझते तीरथ हैं किस को कहते।
चारों तरफ़ भटकते को, तीर्थ मानते हैं ॥ २ ॥

हैं देश देश फिरते, भारी क्लेश सहते।
हैं चोर भी सताते तिस पर न जानते हैं॥ ३॥

अब हम तुम्हें बताते किस को हैं तीर्थ कहते।
जिस बात को कि विद्वज्जन ठीक मानते हैं॥४॥

संसार से जो तारे उसको है कहते तीरथ।
माता पिता की सेवा तीरथ बखानते हैं॥ ५॥

सद्‌शास्त्र तीर्थ है इक सत्संग भी है तीरथ।
तीरथ अतिथि है जिसकी तिथि को न जानते हैं॥६॥

ईश्वर का ध्यान धरना अरु योग नित्य करना।
ब्रह्मचर्य, न्याय, शान्ति, शम दम को जानते हैं॥ ७॥
बिज्ञान ज्ञान बुद्धि को भी है तीर्थ कहते।
उपकार सत्य को भी तीरथ बखानते हैं॥ ८॥

अधर्म कभी न करना नित वेद पथ पै चलना।
इन सारे धर्म तत्वों को तीर्थ मानत हैं॥ ९॥
आशा है समझा होगा तुमने कि तीर्थ क्या है॥
"सागर" है तरते वह जो मन इसमें आनते हैं॥१०॥

---:o:---

पाठक गण! मैं कभी यह न कहूंगा कि दान न करो या किसी साधू महात्मा तीर्थ आदि का आदर सन्मान न करो, किन्तु यह ज़रूर कहूँगा कि अव्वल ख्वेश बादहू दरवेश, अर्थात् पहिले माता पिता आदि सम्बन्धियों का आदर सत्कार मनुष्य मात्र का धर्म है ऐसा न करो कि घर में तो आप के फ़ाके हो रहे हैं और आप धर्मात्मा कहलाने के लिये तीर्थ यात्रा पर तैयार हैं, इस लिये :—

"घर का दिया जलाकर मंदिर में तुम जलाना"

गजल ४३६

कैसा बदल गया है दुनियां का कारखाना।
सब चीज़ है नुमायशी, शैदा है एक ज़माना॥
पूजा नुमायशी है, सेवा नुमायशी है।
ईश्वर के साथ छल का क्या ठिकाना॥
घर में हो घुप अँधेरा मन्दिर में रोशनी हो।
ऐ मेरे दोस्तादारो ऐसा ग़ज़ब न ढाना॥ घर०
घर है तुम्हारा तीरथ, सब तीर्थों से बढ़ कर।
दुनियां का कोई तीरथ, इस के नहीं बराबर॥
प्रयाग और काशी, गंगा है या कि यमुना।
सब हैं इसी के अन्दर, कोई नहीं है बाहर॥
मेरी सुनो अज़ीज़ो, कहता हूं बात सच्ची।
गर यात्रा है करनी, कीजे यहां से उठ कर।- घर० २॥
यह धर्म की है भूमी यां ध्यान का मज़ा है।
यां जल है ऐसा निर्मल, अस्नान का मज़ा है॥
तुम यां पढ़ो पढ़ाओ, तुम यां सुनो सुनाओ।
हां शास्तर का इस जा, और ज्ञान का मज़ा है॥
क्यों तीर्थों में तुम हो, यूं मारे मारे फिरते।
घर कर्म की जगह है, यां दान का मज़ा है॥ घर० ३॥
सब देवता हैं इस जा, सब देवियां हैं इस जा।
जितने ऋषी हुये हैं, उन के मकां हैं इस जा॥
दर्शन यहां हैं जैसे, ऐसे कहीं नहीं हैं।
हैं इष्टदेव इस जा, कुछ देवियां हैं इस जा॥
मिलता है आदमी यां, अधिकारियों से हर दम।
गर दान देना चाहो, देश और समय है इस जा॥ घर०४
बूढ़े पिता को ईश्वर समझो, करो तुम अपना।
वह शैव है और विश्नू, बस एक वह है ब्रह्मा॥

वह राम की है मूरत, और कृष्णजी की सूरत।
तुम जान और दिल से, करना उसी की सेवा॥
सब देवताओं से वह, बढ़ कर है मर्तबे में।
मन्दिर में जाओ पीछे, पहले है इसकी पूजा॥ घर० ५॥
बूढ़ी तुम्हारी माता, सब देवियों की देवी।
बस सत्य ही समझना, सीता है राजरानी॥
बाहर से आओ घर में, तो पांव उस के चूमो।
जब जाओ घर से बाहर, तो लो दुआयें उस की॥

पूजा में सब से बढ़ कर, माता का पूजना है।
जिन ने कि इस को पूजा, देवी उसी ने पूजी॥ घर०६
हैं विश्व देव घर में, बूढ़े बुजुर्ग सारे,
वह जान और दिल से, तुमको रहें प्यारे॥
घर में ऋषी बहुत है, घर में मुनी बहुत हैं।
वह रिश्तेदार है और भाई बहिन तुम्हारे॥
दर्शन करो तो इन के, सेवा करो तो इन की।
एहसान इन के किसने, सर से भला उतारे॥ घर० ७॥
घर है तुम्हारा मन्दिर, है इस में लक्ष्मी भी।
आओ तुम्हें बताऊँ, पत्नी है वह तुम्हारी॥
ऐसा न काम करना, जिस से कि वह हो नाखुश।
इज्जत से उसको रखना, वह है महान् देवी॥
बातें करो तो मीठी, बोलो तो उससे हँस कर।
यह घरकी लक्ष्मी की, पूजा बहुत है अच्छी॥ घर० ८॥
घर की जो लड़कियां हैं, वह देविया हैं सारी।
और देवियां भी कैसी, जान और दिल से प्यारी॥
इन को चढ़ावे लाकर, ऐ दोस्तो चढ़ावो।
कपड़े चढ़ाओ अच्छे, जेवर चढ़ाओ भारी॥
घर की जो देवियां हैं, जब तक कि वह न खुश हों।

बाहर की देवियां कब, खुश हो सकें तुम्हारी ॥ घर०९

लड़के हैं घर में जितने, वह सब बिहारी जी हैं।
सब हैं अवध बिहारी, मूरत कृष्ण की हैं॥
नाज़ इन के तुम उठाओ, इन को सदा मनाओ।
यह खुश अगर हैं तुम से, खुश देवता सभी हैं॥
मेले इन्हें दिखाओ, जलसों में साथ लाओ।
यह ब्रज और अवध से, आवाज़ें आ रही हैं॥ घर० १०

तीरथ तुम्हारा घर है, और सब ग़रीब भाई।
तीरथ के हैं निवासी, कुछ कीजिये भलाई॥
दान इन को खूब देना, इनकी दुआयें लेना।
हो खर्च दान पे जो, अच्छी है वह कमाई॥
जब ध्यान देके मैंने, ऐ दोस्तो सुना है।
बस यह सदाय दिलकश, है गोश जां में आई॥ घर०११

अहसान दोस्तों पर और नौकरों पै करना।
दम मेहर और वफ़ा का, लैलो निहार भरना॥
यह सर्व भी अय अज़ीज़ो, तीरथ के हैं निवासी।
इनको भी पूजना तुम, तीरथ से जब गुज़रना॥
इनके भी हक़ हैं तुम पर, तुम दो इन्हें बराबर।
पंडे तुम्हें डरायें, तो भूल कर न डरना॥ घर० १२

समझो न इसको घर तुम, तीरथ है या कि मंदिर।
है पास देवियों का, और देवताओं का घर॥
अधिकारी और निवासी, मिलते बहुत यहां हैं।
इस यात्रा से कोई, है यात्रा न बढ़कर।
दर्शन के भी मज़े हैं, और दान के भी इस जा।
यह क़ौल मेहर का तुम, नक्श कर लो दिल पर॥
घरका दिया जलाकर मंदिर में तुम जलाना॥ १३॥

भूत खंडन।

ग़ज़ल ४४०

भूतों की यार शंका बिलकुल फ़ज़ूल मानो।
जो सच्च इसे बतावे उसकी न बात मानो ॥ १ ॥
देखो तो कृष्णजी ने गीता में क्या लिखा है।
उसमें कही ही बातों को पूर्ण सत्य मानो ॥ २ ॥
* जैसे बदल पुराना कपड़ा नया पहिनते।
ये ही विचार पूरा जीवात्मा में जानो ॥ ३ ॥
इस जीर्ण तन को तज कर है और जा जनमता।
कर्मानुसार उस को मिलता शरीर मानो ॥ ४ ॥
अरु भूत शब्द भाई गुज़रे हुये को कहते।
जो कुछ कि हो गया है उसे भूत ही पिछानो ॥ ५ ॥
† जिस वक्त गुरु है मरता वह प्रेत है कहाता।
अरु धर्म शास्त्रों में इस का लिखा ठिकानो ॥ ६ ॥
है आजतक किसी ने भूतों को भी न देखा।
इसका जहां में केवल एक नाम २ जानो ॥ ७ ॥
है भाइयो जहा में ना भूत प्रेत कोई।
इन भूत आदिकों को पोपों का जाल जानो ॥ ८ ॥
आकर कोई कहै यदि हमने भूत देखा।
कहदो कि जल्द उसकी हुलिया अभी बखानो ॥ ९ ॥

---

* वासांसि जीर्णानि यथा विहाय नवानिगृह्णातिनरोपराणि
तथा शरीराणि विहाय जीर्णा न्यन्यानि संयाति नवानि देही
भगवद्गीता

† गुरोः प्रेतस्य शिष्यस्तु पितृमेध समाचरन्।
प्रेतहारैः समंतत्र दशरात्रेण शुद्ध्यति ॥ मनु० अ० ५। ६५।

कुछ मूर्ख लोगों ने यह नई बात है निकाली।
कहते हैं भूत का है अति ही विचित्र बानी ॥ १० ॥
उलटे हैं पांव उसके अरु मिनामना के बोले।
हर एक जगह बना है उस का अजीब थानो ॥११॥
सचमुच किसी ने उस को देखा नहीं है "सागर।
ऐसो अनर्थ बातों में दिल कभी न आनो ॥ १२ ॥

भजन ४४१

टेक–वह पुरुष महानादान हैं जो भूतों से हैं डरते।
भूत कहो किसको कहते हैं, कैसा रूप और क्या करते है ?
जो मनुष्य इनसे डरते हैं।
अपने ही अज्ञान से, वह लोग व्यर्थ दुख भरते। जो भू० ।१।
भूत बताओ क्या खाता है, कौन पिता अरु को माता है ?
उसका जग से क्या नाता है ?
सारा हाल बताय दो, जो प्रश्न हैं अब हम करते जो भू० २
भूत कहां रहते हैं भाई, क्यों नहीं हम को देत दिखाई ?
तुमने अच्छी चाल चलाई।
भूतो के तुम नाम से, हो अधर्म करते फिरते ॥ जो ३ ॥
कभी न देखा है भूतों को, नहीं समझ पड़ता ऊतों को।
सागर धिक है इन झूठों को, उन को हिये न ज्ञान है ॥
जो इन से हैं डरते॥ जो० ४ ॥

(१४) अनाथ–पुकार

लावनी ४४२

करुणासागर जगदीश दीन दुखहारी।
हम हैं अनाथ तुम रक्षा करो हमारी ॥
दुर्गम दुष्काल ने कोप कृशानु पचारे।
जलगये जीविका के शुभ साधन सारे ॥

रह सके न जीवित पिता भूख के मारे।
वे पेट पीट परलोक तुरन्त सिधारे॥
पड़गया विपति का बोझ हाय! सिर भारी। हम० १॥
जब मरे पिता घर था न अन्न का किनका॥
था बढ़ा चढ़ा सुख में सुमित्रपन जिनका।
उस समय हाय! मिटगया भरोसा तिनका॥
सब रक्त मांस खागई क्षुधा हत्यारी। हम० २॥
मा हमको घर छोड़ निकल जाती थी।
सन्ध्या को भिक्षा मांग विकल आती थी॥
झट दौड़ कुएं से ठण्डा जल लाती थी।
कुछ खिला पिला हमको तब कल पाती थी॥
इस भांति हुए इस जीवन के अधिकारी। हम० ३॥

मा देख देख हमको रोती रहती थी।
आंखों से उसकी अश्रुधार बहती थी॥
वह दुसह शोक की महामार सहती थी।
मुख चूम हमारा कभी रोय कहती थी॥
बच्चा! तुम तो होगये अनाथ दुखारी। हम० ४॥
निश्चिन्त पड़े कुटिया में संकट झेले।
माता का मुखड़ा देख खुशी से खेले॥
पर अधिक दिवस इस मोह में भी न मेले।
निर्दयी दैव ने हा! कर दिये अकेले॥
मर गई अचान प्राणप्रिया महतारी। हम० ५॥

गिर पड़ा वज्र निर्बल पर घोर विपति का।
हा! गई शीघ्र कुम्हला जीवनकी लतिका॥
कुछ बन न पड़ा आघात सहा अवनतिका।
ले चला वहा हम को समुद्र दुर्गति का॥

हो गई धीरता साथ छोड़ कर न्यारी ॥ हम० ६ ॥
बस मरी हुई मा को बहुबार बुलाये।
हो निपट निरुत्तर चीख मार चिल्लाये ॥
जिवित मा को खोजा पर पता न पाये।
तब घोर भयानक घर में घिर घबराये ॥
चुभ गई हृदय में विषमय विरह-कटारी। हम० ७ ॥
किसकी गोदी में बैठ शांति सुख पावें।
किसको मा कहकर जाकी जलन मिटावें ॥
किस से रोकर निज इच्छा पूर्ण करावें।
किसका मुख देखें पिता-वियोग विसरावें ॥
अब कौन बुलावेगा कह बातें प्यारी। हम० ८ ॥
जब सहते सहते थके कठिन दुख नाना।
रह गया न जब रहने का ठीक ठिकाना ॥
जब पड़ा भूख से व्याकुल दिवस बिताना।
तब बना निकम्मे भिकमंगों का बाना ॥
घर छोड़ मन्दभागी हम बने भिखारी। हम० ६ ॥
घर घर भारत में भीख मांगत डोले।
रोकर टुकड़े के लिये मलिन मुख खोले ॥
जब अपनी स्थिति दीनता तुला पर तोले।
पाकर पामर परिणाम न कुछ भी बोले ॥
चित लगी झुलसने चिन्ता की चिनगारी। हम० १० ॥
बढ़ गई देह दुर्बलता दुखदाई।
मुख पर मलीनता और उदासी छाई ॥
यह लखकर पीछे पड़े यवन ईसाई।
फुसलाने लगे बता अपनी प्रभुताई ॥
पर हम ने वैदिक धर्म से न मति टारी। हम० ११ ॥
अब तो है देखो दशा हमारी खोटी।

खाने को मिलती नहीं पट भर रोटी ॥
फिरते हैं बिन बिथड़ों की मार लंगोटी ।
दुर्दिन सब ठौर घसीट रहा धर चोटी ॥
हम से पा कुसुम फबी कंगाली-क्यारी । हम० १२ ॥
ऋतुनायक साजि समाज जगत में आया ।
पर हमें न भाया उलटे और जलाया ।
ग्रीषम ने भबकि शरीर झपटि झुलसाया ।
पावस ऋतु शरद शिशिर ने सदा सताया ॥
थर थर कांपे जब आई हिम की बारी । हम० १३ ।
कंकर का बना बिछौना सो रहते हैं ।
तन कड़ी दुपहरी में निदाघ दहते हैं ॥
पट बिना शीत चुप चाप पड़े सहते हैं ।
निर्बल जीवन पर कठिन दण्ड लहते हैं ॥
निर्दयता का फल है यह हृदय-विदारी ॥ हम० १४ ॥
मा बाप गये मर आशा-लता सुखानी ।
दे कौन क्षुधा तृष्णा में भोजन पानी ॥
सुन लो हे सज्जन देव दयामय दानी ।
हम दीन अनाथों की दुख भरी कहानी ॥
हर लो कातरता और कठिनता सारी ॥ हम० १५ ॥
हे दयानिधान धनी हम को अपनाओ ॥
कर कृपा हमारा दुख सन्ताप मिटाओ ।
सूखे सर के झख पर सुख-जल बरसाओ ॥
कवि 'रामनरेश' प्रसिद्ध परम पद पाओ ।
यश लहो, वीर बनकर अनाथ हितकारी ॥हम० १६॥

गजल ४४३

हा ! मार दीनता की य दीन खा रहे हैं ।

घूमें गली गली में दाना न पा रहे हैं ॥
बेचैन मन्दभागी चिथड़े रहे न तन पै।
भूखे पड़े धरा पै जीवन बिता रहे हैं ॥
कर्त्तव्य इन्द्रियों ने अपना भुला दिया है ॥
सूखा शरीर सारा पंजर दिखा रहे हैं।
कैसे नरेश दानी सुन कर दुखी न होंगे।
ये दृश्य दीनता के आंसू बहा रहे हैं॥

गजल ४४४

दोहा—सोवत हौ सुख नींद में, सौरि सुरंगीतान।
हा! अनाथ बाहिर पड़े, देहिं शीत सों प्रान ॥
टेक—दया दीनों पै करने से, दुखों से छूट जाओगे।
जहां में कीर्ति होगी नाम दीनानाथ पाओगे ॥ १ ॥
अहा! क्याही है दरदीली दशा इन दीन दुखियों की।
इसे भी देखकर क्या तुम दया दिल में न लाओगे ॥ २ ॥
अरी अम्मा! अरी अम्मा! पुकारें रात दिन रो, रो।
पटकते सिर विचारों को कहो कब तक रुलाओगे ॥ ३ ॥
निरे अनजान बच्चे हैं नहीं कुछ बोध है इन को।
उठा पुचकार कब कर प्यार छाती से लगाओगे ॥ ४ ॥
रहे हैं दृष्टि भोरी स सहारा तक तुम्हारा ही।
कृपा कर आप बरसा ताप इन के, कब बुझाओगे ॥५॥
हजारों होगए भूखे मुसलमां और ईसाई।
इन्हें भी त्यागकर अब क्या विधर्मी ही बनाओगे ॥६॥
पिता के प्यार के प्यारे दुलारे मात के भारे।
किसी दिन ये मां थे य ख्वाब क्या तुम दिल में लाओगे७
बिनय ये चन्द्र की है ब आप कर स्वीकार तन मनसे।
इन्हें अपनाइ अपने मान सब संकट मिटाओगे ॥८॥

(१५) प्रायश्चित्त विषय।

गजल ४४५

ये हिन्दू क़ौम हालत देख तेरी ज़ार कैसी है।
ज़रा उठ सोच ऋषि सन्तां तेरी रफ्तार कैसी है॥
तेरे लख्ते-जिगर शबो रोज़ जो लुटते चले जाते।
न मुतलक ध्यान तुझको उनकी मिट्टी ख्वार कैसी है॥
ज़रा तो गौर कर उनकी गऊ माता की गर्दन पर।
चमकती और दमकती चल रही तलवार कैसी है॥
बने छः कोटि हैं हिन्दू गऊ रक्षक से गौ भक्षक।
ऐ कौम इन तेरे बच्चों की दशा खूंख्वार कैसी है॥
सबब इसका यही है जोकि अहल हिन्द में यारा।
प्लेग हैजा, महामारी पड़े हर बार कैसी है।
लगाओ शुद्ध कर बिछुड़े हुओं को अपने सीने से।
वगरना दोस्तो, भारत की किश्ती पार कैसी है।
भटकते बेश कीमत लाल गौहर आप के दर दर।
मगर तुम पर ये बेहोशी चढ़ी सरकार कैसी है॥
अगर हालत यही जो आप की अब भी रही साहब।
शिखा और सूत्र की भारत में फिर दरकार कैसी है॥
जहां पर भीमो भीष्म कर्ण से होते थे शूर औ वीर।
बनी औलाद उनकी शोक अब मुर्दार कैसी है॥
उठो वीरो ऋषी पुत्रो करो प्रचार शुद्धी का।
लखो सुखलाल फिर गुलशन हो ये गुलज़ार कैसी है॥

गजल ४४६

ज़रा भी सोचा है क्या सबब है जो हिंदुओं का है हाल अबतर

कि ऐसी तेज़ी से हो रहा है हर रोज़ इनका शुमार कमतर ॥
इसी तरह पर रहेगी घटती गर इन की तादाद आगे-आगे ।
तो कुछ दिनों में रहेगा इनका जहां से नामोनिशान मिटकर ॥
कभी जो तेंतिस करोड़ भारत में हिन्दुओं का शुमार लेकिन ।
रही है बाइस करोड़ से कम अब असली तादाद इनकी घटकर ॥
अरब के उम्मी का पढ़के कलमा हुये जुदा छः करोड़ हम से ।
मसीह के गल्ले में जा मिले हैं मसीही चालीसलाख बनकर ॥
रचा है ज़ुल्मो सितम यहीं गर अछूत क़ौमों पर हिंदुओं का ।
बनेंगे ईसा मसीह के चेले जितने यहां पर चमार मेहतर ॥
भला है ऊंचे वर्ण के लोगों की बदसलूकी का कुछ ठिकाना ।
अछूत क़ौमों को यह समझते हैं कुत्ते सूअर से सख़्त बदतर ॥
खुशीसे कुत्तों को गोदमें ले सुलायें बिस्तर पर साथ अपने ।
मगर जो छूले चमार इनको तो सख़्तनाज़िल हो क़हरउसपर ॥
कुयें का पानी तक भ्रष्ट हो जाय छूले मन गर चमार कोई ।
बले नहीं दूधो घी बिगड़ता है कुत्ते बिल्ली की राल लगकर ॥
रहे हैं जब तक ये लोग हिन्दू तो सख़्त नापाक समझे इनको ।
हों ज्योंही ईसाई और मुसल्मां तो पाक हों फिर एकदमके अंदर ॥
रहे हैं जब तक ये गाय रक्षक हैं उनको छूने में दोष बेशक ।
बने मगर ज्योंही ये गाय भक्षक तो फख़्र समझे हैं उनसे मिलकर ॥
अबे तबे दूर हो परही सुने हैं जब तक रहे ये हिन्दू ।
कटाके चोटी जब हों ईसाई बने तुरन्त ही हज़ूर मिस्टर ॥
कोई अगर हमसे पूछे सालिग ज़वालके हिन्दुओं का बाअस ।
तो साफ़ कह देंगे फिर रहे हैं ये अक्लके पीछे लाठी लेकर ॥

ग़ज़ल ४४७

ग़ज़ब है दिन ब दिन यह हिन्दू जाती घटती जाती है ।
सफ़ह दुनियां से इसकी हाय हस्ती मिटती जाती है ॥

पता तेदाद से मर्दुमशुमारी के लगाओ तुम।
कि किस रफ़्तार से पीछे शुमार अब हटती जाती है॥
हड़पते जा रहे इसको दिनों दिन शेर मतवाले।
मसीही और मुसल्मानों में बस ये बढ़ती जाती है॥
हज़ारों शूद्र हिन्दू मिल रहे ईसा के गल्ले में।
कि जिससे इसकी हरदम शाखें इस्ती छटती जाती है॥
कुल्हाड़ी बन रही है कमसिनी की शादियां जिन से।
जड़ इनकी पाक हस्ती की सरासर कटती जाती है॥
तड़पती बिलबिलाती दुःख से लाखों बाल विधवायें।
कि जिनको देख पत्थर की भी छाती फटती जाती है॥
विरह अग्नी के शोलों में विचारी ये खता विधवा।
जला कर जिस्मों जां को नाम प्रीतम रटती जाती है॥
ब्रह्मचर्य को करके नाश निर्बल होगये हिन्दू।
जुवाने मौत से सन्तान इनकी घटती जाती है॥
दयालू और कौमों पर है अज़हद उन्नती देवी।
खफा इन से हुई ऐसी कि उल्टी नटती जाती है॥
उजाला हो रहा हर सिम्त इल्मो अक्ल का मालिग।
अविद्या अब भी दर पर हिन्दुओं के डटती जाती है॥

गजल ४४८

जिसका एक मुद्दत से खटका था वह वक्त आने को है।
सफ़हे दुनियां से अपना नाम मिट जाने को है॥
मिट चली है हैफ़ दुनियां से वह कौमें पाक ज़ाद।
पतराफ़ अज़मत का जिसकी अपने बेगाने को है॥
होती है हर साल तुम में से जुदा सोला हज़ार।
देख लो रफ़्तार यह क्या रंग दिखलाने को है॥
बन गये उन्नीस लाख ईसाई चालिस साल में।

और नीची क़ौम सब गिर्जा में बस जाने को है ॥
पिछले चालिस साल में मुसलिम बढ़े हैं दो करोड़ ।
ख़ौफ़ इससे हिन्दू जाती तेरे ख़ुल ख़ान को है ॥
लग रहे हैं क़ुफ्ल मन्दिर और शिवालों को जनाब ।
सेठ देखा फिर भी मंदिर और बनवाने को है ॥
ऐसे भी भाई हमारे हैं कि जिनका पासवां ।
खून दिल पीने को है और रंजोग़म खाने को है ॥
वह दिगर्गू हाल तेरा आज हिन्दू क़ौम है ।
रोती है दुनियां जो सुनता मेरे अफ़साने को है ॥
कौन मन्दिर और शिवालों में करेगा पूजा पाठ ।
क़ौम की हस्ती ही जब मिट्टी में मिल जाने को है ॥
दक्षणा धन माल पाते आप के लीडर मगर ।
ज़िन्दगी का फ़िक्र तेरी तेरे दीवाने को है ॥
है लगन दिल में मुसाफ़िर के लगी बस क़ौम की ।
जो लगी जलती शमा के साथ परवाने को है ॥

गजल ४४६

तुम्हारे ज़ुल्म की तुम से ही हम फ़र्याद करते हैं ।
मुहब्बत का नया पहलू यह इक ईजाद करते हैं ।
फटा जाता है दिल रंजो अलम से हम ग़रीबों का ।
मज़ालिम को तुम्हारे, जब कभी हम याद करते हैं ॥
हमें बर्बाद करने के, निकाले सैकड़ों पहलु ।
मगर हम हैं कि हर, ज़ुल्मो सितम पर स्वाद करते हैं ॥
न कैसे हौसला ग़ैरों को टकराने का हो अपने ।
हमारे अपने भाई हम पे जब बेदाद करते हैं ॥
हमें करते हैं शामिल हिन्दुओं में अपने मतलब से ।
फ़रीक़ों के मुक़ाबिल पेश जब तादाद करते हैं ॥

नहीं ऐसा भी करते आप हैं कोई मुहब्बत से।
हमारे आपको मजबूर कुछ अदवार करते हैं॥
वगर्ना आप को साया तलक से अपने नफ़रत है।
वह गो कुत्तों को लेकर, गोदमें दिल शाद करते हैं॥
जो हम गलती से छू जावें, तो हर हर करने लगते हैं
अछुत हम को बताकर, हर तरह बदनाम करते हैं॥
न साथ अपने मिलाते हैं, न करते हैं जुदा बिलकुल
न हम को कैद करते है, नहीं आज़ाद करते है॥
'मुसाफ़िर' क्यों तेरे तेज़े बयां में ऐसा जादू है।
तेरे अश्यार पर जो स्वाद, हर उस्ताद करते हैं॥

गजल ४५०

उठो अय दोस्तो बांधो कमर को।
पिला दो जाम शुद्धी हर बशर को॥
बिछुड़ कर जो चले हमसे हमारे।
कहो उन से कि जाते हो किधर को॥
बहुत से लाडले बच्चे हो नंगे।
तकें हैं भूख में गैरों के घर को॥
उचारन वेद का जो नित करैं थे।
पढ़ैं बाइबिल कुरां शामो सहर को॥
कभी कुर्बान जो गौओं पै होते।
लिये फिरते हैं वह पैनी छुरी को॥
अहिंसा जीव जो तुक्ता रटैं थे।
करैं वह चाक गौओं के जिगर को॥
जनेऊ और शिखा के जो थे रक्षक।
रखा दाढ़ी फिरैं मुंडवाये सर को॥
जो नित करते थे सत बिद्या का प्रचार।

लिये फिरते हैं यह सर पर कुफ़र को ॥
जुदा हम से जो ग़फ़लत में हुये थे।
कहो उनसे कि अब आओ इधर को ॥
बनो हामी ज़रा शुद्धी के प्यारो।
लगादो सीमो ज़र अपना इधर को ॥

गजल ४५१

टेक—शोक हिन्दू क़ौम पर यह कैसे दिन आने लगे।
ग़म के बादल हर तरफ से दम बदम छाने लगे
लूट चारों तरफ से है मच रही इस क़ौम पर।
जो कि इसके खोशाची थे इसको ही खाने ल ॥
बन्द कर आँखें पड़े हैं, ख्वाबे ग़फ़लत में सभी।
हे प्रभु किस नींद के झोंके इन्हें आने लगे ॥
कर रहीं हैं सारी क़ौमें उन्नति पर शोक है।
हिन्दुओं के बच्चे हिन्दु कौम को खाने लगे ॥
धक्के दे दे कर निकाला था कि जिन को आपने ॥
ठोंक-कर ख़म बर सरे मुक़ाबला आने लगे ॥
है ताज्जुब हम को यह अपना बिगाना भूलकर।
उनको दुशमन समझते जो इनको समझाने लगे ॥
किस तरह अज़ा तुम्हारे अलग कट कट कर हुए।
हैफ़ है तुम नींद में घर बार लुटवाने लगे ॥
पंडित और लाला की पदवी छोड़ कर वह क्या बने
गुल मुहम्मद और ईसादास कहलाने लगे ॥
वह हमारे गले लगने के लिये तय्यार हैं।
अब से मिलने के लिये हम हाथ फैलाने लगे ॥
महर्षि की दया से पलटा ज़माना देखलो।
हम से जो रूठे हुए थे वापस अब आने लगे ॥

वक्त है अब भी अगर तुम समझ जाओ दोस्तो ।
वरना अब नज़दीक दिन इस कौम के आने लगे ॥
शुद्ध हृदय करके बिछुड़े भाइयों को लो मिला ।
शुभ कर्म्म में आप क्यों लोगों से भय खाने लगे ॥
कमर हिम्मत बांधकर अब तो उठो यशवन्तसिंह ।
ओ३म् का झंडा मुलक में हरसू लहराने लगे ॥

गजल ४५२

बिछुड़ों को जाम शुद्धी जल्दी पिलाओ प्यारो ।
जितने पतित हुए हैं सब को मिलाओ प्यारो ॥
वैदिक धर्म को छोड़ा जुल्मो सितम के डर से ।
सच्चे धर्म के जल से उन को निहलाओ प्यारो ॥
इंजील कुरां अब पढ़ने लगे जो भाई ।
वैदिक धर्म्म की शिक्षा उन को दिलाओ प्यारो ॥
गौओं के जो थे रक्षक भक्षक जो बन गये हैं ।
मिथ्या मतों को मिलकर जड़ से हिलाओ प्यारो ॥
गुलशन से फूल चोरी, ज़ोरी से जो गये हैं ।
अपने चमन में लाकर उनको खिलाओ प्यारो ॥
मन की मलीनता से छोड़ा है धर्म्म अपना ।
मुर्दों को वेद ध्वनि से ज़िन्दा बनाओ प्यारो ॥
जितने बिछुड़ गये हैं ग़फ़लत में प्राण प्यारो ।
सब को लगा गले से प्रीति दिखाओ प्यारो ॥
गोदों से लाल अब तक निकले बहुत तुम्हारी ।
भूखों को पेट भर कर भोजन कराओ प्यारो ॥
वैदिक धर्म्म का झंडा प्रेमी घुमाओ हर जा ।
एक दिल व जान होकर प्रीती दिखाओ प्यारो ॥

गजल ४५३

भाई बिछुड़ों को छाती लगा लेना जी।
डूबे जाते हैं इनको बचा लेना जी॥
कितने भारत के लाल ईसाई बने।
कितने गौओं के रक्षक कसाई बने॥
इन्हें फिर से तो आर्य बना लेना जी॥ डूबे जाते० १॥
ये हमारे थे धर्म के भाई कभी।
बने फिरते हैं दुशमन जो आज सभी॥
रूठे भाइयों को फिर से मना लेना जी॥ डूबे० २॥
फिर से वैदिक धर्म पर ही लाओ इन्हें।
और प्रीति से शुद्ध कराओ इन्हें॥
गौ माता की जान बचा लेना जी॥ डूबे० ३॥
कोई दैरो हरम में भटकता फिरे।
कोई क़ब्रों पै सर को पटकता फिरे॥
इन्हें ओ३म् का शैदा बना लेना जी॥ डूबे० ४॥
भारत शुद्धी सभा की मदद कुछ करो।
दान दिल से ज़रूरतमन्दों को दो॥
शुभ कार्य में हाथ बटा लेना जी॥ डूबे० ५॥
देवा घर घर दुहाई मुसाफ़िर फिरे।
जो हैं ग़लती से अपने धर्म से गिरे॥
ऐसे भूलों को रास्ता दिखा देना जी॥ डूबे० ६॥

गजल ४५४

ऋषि सन्तान ईसाई मुसलमां होते जाते हैं।
यह हिंदू क़ौम के महशर के सामां होते जाते हैं।१॥
छुरी गर्दन पै चलती है मगर तुम उफ़ नहीं करते।

हज़ारों चश्मगिरियां सीने विरियां होते जाते हैं ॥२॥
तेरी ग़फ़लत ने लाखों बे ज़ुबां को क़त्ल कर डाला।
कि ख़िरमन पेशवर्के आह सोज़ां होते जाते हैं ॥३॥
गौ रक्षा का दम भरते थे उनको आज देखा तो।
है खंजर हाथ में जल्लाद हैवां होते जाते हैं ॥४॥
बुझाओ प्यास गंगाजल से इन तृष्णा लबों की तुम।
जो पीके आबे ज़म ज़म दीनों ईमां खोते जाते हैं ॥५॥
जो गंगादास जमनादास कल थे आज देखो तो।
फ़िदा वह नगद दिल से हूरे गिलमां होते जाते हैं ॥६॥
कहां वह राम और लक्ष्मण कहां वह भीष्म और अर्जुन।
तेरी कम हिम्मतों से सर्व पशेमां होते जाते हैं ॥७॥
सफ़ह हस्ती से बस नामो निशां मिट जायगा उनका।
जो गुमराह होते जाते तेरी जां को रोते जाते हैं ॥८॥
मिलाया खाक में ऋषियों की और वीरों की इज्ज़त को।
तेरी गफ़लत से गीदड़ शेर गुर्रां होते जाते हैं ॥९॥
मिलाओ शुद्ध दिल से शुद्ध करके लख़ने जिगरों को।
तेरे नूरे नज़र नज़रों से पिन्हां होते जाते हैं ॥१०॥
उठालो 'ओ३म्' का झंडा चलो मक्के मदीने को।
मुसलमानी के बस अब होश पर्रां होते जाते हैं ॥११॥
शजर शुद्धी को सींचा खूने शीरीं से 'मुसाफिर' ने।
कि जिसके ज़ेर साया लाखों शादां होते जाते हैं ॥१२॥

दादरा ४५५

टेक—बजाये जाओ जी दयानन्द जी की आज्ञा।
देखो विचारो बैठो ना आंखों को मींच के,
अपने लोहू से जिसको गये स्वामी सींच के,
इसमें थोड़ा सा जल तो बहाये जाओ जी ॥१॥

गुरुदत्त इसकी रक्षा में ही जान दे गये,
कुर्बां होके लेखराम प्राण दे गये,
तुम भी अपने प्रण को निभाये जाओ जी ॥२॥
फल मीठे २ लग रहे शुद्धि की शाख पर,
कई भाई इसे खाके है हो गये अमर,
सारी दुनिया को यह फल चखाये जाओ जी ॥३॥
हिम्मत स घड़ी आर्यों की ऐसी आयेगी,
यह शाकृत फूट फूट के मक्के को जायेगी,
ज़रा हिम्मत को अपने बढ़ाये जाओ जी ॥४।
चन्द्र कहे तोफ़ा ये फल सब को खिलाओ,
गौ कन्या दीन अनाथ की आहों से बचाओ,
इनके दुखड़े का कूड़ा हटाये जाओ जी ॥५॥

(१६) गौ रक्षा।

भजन ४५६

टेक-गौ माता करत पुकार, प्रभु जी रक्षा कीजे हमार।
दुनियां के धन्दों में फंस कर किया न कुछ भी विचार।
बाबू जी बनरके टमटम पै चढ़रके भगवतको दिया बिसार ॥ १
शादी गमी और लड़के के होने में किये हैं खर्च हज़ार।
खुशामद बरामदसे जाकरके लाकर रंडी की देखी बहार ॥२ ॥
जोरू और जोरू के भैया, ने आकर पढ़ा कर बनाता गँवार ॥
जाज बिरादर फ़ादर मादर, सेवा न कीन्हीं सँभार ॥३॥
विस्की की चुश्की की खुश्की मिटाने की मुँह में दबाई सिगार।
बाईसिकिल सजा करके टन २ बजा कर पहुँचे बज़ार ॥ ४ ॥
रीजनिंगकी रोटीको लौजिककी लौंजी से खाने से हुआ विकार
ईश्वर न अल्ला न जीसिस, क्राईस्ट राधा न कृष्ण मुरार ॥५॥

ग़ज़ल ४५७

योंही सोवोगे तुम बेख़बर कब तलक,
क्या तुम्हें मेरी अब तक ख़बर ही नहीं।
आह ऐसे हुए संग दिल कुछ भी तो,
मेरे नालों का तुम पर असर ही नहीं ॥ १ ॥
कर रहे ख़ून नाहक़ मेरा आज यों,
गोया मेरे दिलो जाँ जिगर ही नहीं।
इन मेरे खून के प्यासे खूंखारों को,
है ज़रा भी तो ख़ौफ़ो ख़तर ही नहीं ॥ २ ॥
मैंने तावप्र एहसानें क्या २ किये,
मेरी तो भी तो जानी कदर ही नहीं।
मेरी ख़िदमत का अच्छा नतीजा मिला,
मेरे दिल को तो आता सबर ही नहीं ॥ ३ ॥
हर तरह से हूँ हाज़िर मैं अब भी अर्जी,
जाँ भी देने में मुझको उज़र ही नहीं।
है फ़क़त रंज इतना ही की आपने,
कभी मुझ पै भी मद्दे नज़र ही नहीं ॥ ४ ॥
सुन ले फर्याद आ करके मासूमों की,
ऐसा दुनियाँ में कोई बशर ही नहीं।
होगा क्योंकर गुजर मित्र कहिये अगर,
आप अब भी उठाओगे सर ही नहीं ॥ ५ ॥

भजन ४५८

जीना धिरकार कटि रहीं मात हमारी।
नहीं दोष किसी को भाई, खुद हिंदू रहे कटाई।
धर्म को रहे विसार। कटि ॥ १ ॥

ब्राह्मण क्षत्री कहलाते, और ऋषि सन्तान कहाते ॥
धरांत गले कटार । कटि० २ ॥
मक्खन घी खूब उड़ाया, जब दूध दही नहीं पाया ।
निकासे चले ते यार । कटि० ॥ ३ ॥
जिन्हें बुड्ढी लंगड़ी पाते, उन्हें बूचड़ हाथ गहाते ।
अधर्मी बड़े लबार । कटि० ॥ ४ ॥
छुरी गले पै धरें क़साई, तेरी गौ माता चिल्लाई ।
रक्त की बहि रही धार । कटि० ॥ ५ ॥
हम युग को दोष लगावें, और काल प्रताप बतावें ।
कहाते हैं निरधार । कटि० ॥ ६ ॥
बस इसी पाप का मारा, हुआ भारत मुल्क हमारा
पड़े ताऊन अपार । कटि० ॥ ७ ॥
दशरथ को ध्यान में लाओ, तुम उनके पुत्र कहाओ।
सो रहे पैर पसार । कटि० ॥ ८ ॥
क्यों ऋषियोंका नाम डुबाओ, गऊ रक्षाकरो कराओ ।
प्राण गौ लेऊ उबार । कटि० ॥ ९ ॥
छेदीलाल बहुत सरमारा, कुछ तुमभी करो सहारा ।
बंश गौ होता छार । कटि० ॥ १० ॥

लावनी ४५९

गौहनन का कारण एक मात्र यह पाया ।
चमड़े का व्यय लोगों ने बहुत बढ़ाया ॥
हा स्वर्ण चांदी को लोग छोड़ते जावें ।
इन के स्थान में चमड़ा काम में लावें ॥
हम शोक सिंधु में क्यों न गोते खावें ।
जब चोटी से एड़ी तक चमड़ा पावें ॥
अबबढ़के रोगयह आर्य्यवर्तमे आया । चमड़े० १॥

यह क्रिलटकैप में यूं चमड़ा लगवावें।
कपड़ा कागज़ तो अति शीघ्र गलजावें॥
गैलिस में चमड़ा कांधे पर लटकावें।
पतलून की पेटी चमड़े की मंगवावें॥
फुलबूट पगोंका डासन् से मंगवाया॥ चमड़े० २॥
चमड़े की चैन ही लगै घड़ी में प्यारी।
चमड़े का बटुवा देखा नैन उघारी॥
चमड़े की कलाई वाच पहन नर नारी।
न फूले समाते अंग शोक है भारी॥
हा मनीबेग भी चमड़ेका बनवाया॥ चमड़े० ३॥
विस्तरा बंध भी चमड़े का सुखदाई।
घोड़ों की ज़ीन भी चमड़े की सिलवाई॥
यूं कहे "चन्द्र" थोड़ी सी कसर है भाई।
चमड़े के कोट पतलून लिहाफ़ रज़ाई॥
हा ऋषियोंकी संतानने धोखाखाया॥ चमड़े० ४॥

गजल ४६०

करें घड़ाधड़ जो गाय माता,
    है दोष अपना ही हाय सारा।
बने हैं अपने ही हन्त घातक,
    है अपने हाथों हि वज्र मारा॥
खिलावें क्योंकर वे मुफ्त उन को,
    इसी से बूचड़ से धन सकारा॥
जो रंडियों को हो तुम नचाते,
    हो अपने धन से गऊ कटाते॥
नहीं हो मित्रो जरा लजाते,
    अवश्य झांकोगे नर्क द्वारा॥

करें हैं बूचड़ से बंच गौएँ,
ज़रा नफ़े की वजह से पापी।
करें दलाली बहुत से हिंदू,
है उनसे अच्छा तो खानेहारा॥
है खोट यह भी तुम्हारा भाई,
जो अहले इसलाम से लड़ो हो।
चिड़ा चिड़ा के ही तुमने इन को,
गऊ के वध पर अधिक उभारा॥
हैं बीस कोटि हिन्दू भाई,
बहुत से इन में से मांस खावें,
सिवा गऊ के तजें हैं किस को,
यही है हिन्दू धर्म तुम्हारा॥
करें हैं चट बकरा मुर्ग़ मुर्ग़ मच्छी,
बटेर तीतर चिड़ा व अण्डा।
खरा लोमड़ी व गोर सूअर,
चकोर कछुवा हिरन चिकारा॥
असंख्य जीवों को मार खाना,
अकेली गौओं हि को बचाना।
है इक खिलौना धरम तुम्हारा,
कभी भी मित्रा है तुम विचारा॥
है हक्क क्योंकर तुम्हारा इन पर,
न खायें गायों को जो मुसलमां।
बनो अहिंसक व जीव रक्षक,
दो सर्व जीवों को तुम सहारा॥
तो शर्त करते हैं तुम से प्यारो,
कोई मुसलमां न गाय खावे।
व भेड़ बकरी व मुर्ग़ माही,

को खाके अपना करे गुज़ारा ॥
है देश सब का ये दीन भारत,
अकेले तुम हो न इसके मालिक।
हैं गाय माता के सर्व साझी,
नहीं तुम्हारा ही है इजारा ॥
की भी हठ तज उन्हें बताया,
कि नाज पर है गुज़र सभों की।
है बैल गायों पर सब का जीवन,
है सब का यकसां नफ़ा खिसारा।
लड़ो न मित्रो बढ़ाओ प्रीती,
यही गौ बचने की है रीती।
भजो 'राम' को तजो अनीती,
जो देश चाहो हो तुम सुधारा।

गजल ४६१

यह दैव कोप मुझ से, अब है सहा न जाता।
जाऊँ कहां करूं क्या, कह तू मुझे विधाता ॥
सुत तीस कोट मेरे, विख्यात बुद्धि बल में।
संसार को उलट दें चाहें तो एक पल में ॥
सुत तीस कोटि मेरे, कर साठ कोटि जिनके।
चाहें तो वज्र लाखों, दें तोड़ यथा तिनके ॥
सुत तीस कोटि मेरे, पद साठ कोट जिनके।
डालें कुचिल मही क, एक एक देश गिन के ॥
यदि एकसाथ जिद्दा, हिन्दू सकल हिलावें।
क्या बात मेदनी की, सुर धाम कांप जावें ॥
इस भांति शक्तिशाली, सुत तीस कोटि रहते।
गौ मात कट रही हूं, क्यों विरक्त सहते ॥

ए पुत्र हिन्द वासी, मैं अवलम्ब हूं तुम्हारी।
दुख से मुझे बचाओ, हिन्दू यवन ईसाई।
असहाय मैं शरण में, तुम सबके आज आई॥
अबभी न जो करोगे, गौ मात की भलाई।
इस से अधिक न जग में होगी कृतघ्नताई॥

गजल ४६२

गऊ माता को ऐ मित्रों, सताने में नफ़ा क्या है।
बिना तक़शीर के इनको, कटाने में नफ़ा क्या है॥
भलाई दूध घी यारो कहो, फिर कहां से लाओगे।
हा अपने आप अपना सुख मिटाने में मज़ा क्या है॥
न होंगे बैल भी पैदा कुआं और हल में चलने को।
हाय इनके गले छुरियां, चलाने में नफ़ा क्या है॥
तुम्हारे पेटकी खातिर दी लाखों चीज़ ईश्वरने।
गऊको मार करके, मांस खाने में नफ़ा क्या है॥
भला ऐ गोश्तख़्वारो, बस तुम्हारी होनहीं सक्ता।
जालिमो! 'रूप' को, ज्यादा बकाने में नफ़ा क्या है॥

गजल ४६३

है भलाई मित्र इस में, मांस खाना छोड़दे।
इस मुबारक पेट में, कबरें बनाना छोड़ दे॥
जो चलावें हल, उठावें बोझ तेरे वास्ते।
इनकी गर्दन पर, ज़रा खंजर चलाना छोड़ दे॥
खाके तिनके सूखे २ दूध और माखन दिया।
इसके बदले खून तू, इसका बहाना छोड़ दे॥
इस पवित्र भूमिपर, चशमा था जारी दूधका।
छोड़ हड्डी मांस यह चश्मा सुखाना छोड़ दे॥

शेर को मारो नहीं, जो दुःख तुमको दे रहा।
बेकसों की जान ले, हंडिया पकाना छोड़ दे॥
जो करें खिदमत, कई वक्तों में आवें कामभी।
इन वफ़ादारों को ऐ ज़ालिम सताना छोड़दे॥
जीना इस दुनियां में है, प्यारे कयामत तक नहीं।
चार दिन का है यह मेला, जुल्म ढाना छोड़ दे॥

मालती छंद सवैया ४६४

दीन अनाथ रटैं निशवासर, कोउ नहीं प्रभु दुःख छोड़ैया।
गाय रम्भाय कहे नितही, न हया न दया भय मांस खवैया॥
को विद्वान पुकार सुनै, तजि धर्म भये हैं अनीति गहैया।
रामअधार करै बिनती, प्रभु आप बिना दुख कौन हरैया॥

गजल ४६५

परस्पर तुम बनो रक्षक, यह उत्तम मत हमारा है।
खुले शब्दों यह वेदों में, ईश्वर ने पुकारा है॥
हनो मत गौ माता को, पदार्थ देने हारी है।
जरा टुक गौर से देखो, यह भारत का सहारा है॥
हमें जो दूध मीठा है, तुम्हें क्या मक्खन खारा है।
तास्सुब का कुल्हाड़ा, हाथ से पैर अपने मारा है॥
मुसलमान क्या ईसाई, क्या यहूदी क्या नसार है।
यथार्थ ज्ञान जो जाने, वही ईश्वर का प्यारा है॥
नहीं अनजील कुरां है, नहीं पुरान अठारा है।
परस्पर एक का एक द्वेषी, इसी का बिघन सारा है॥
सनातन वेद का मार्ग, उसे सब ने बिसारा।
प्रेम का कोष है उसमें, यह स्वामी ने निहारा है॥
थी उस के भाष्य में गड़बड़, दयानन्द ने सुधारा है।

पक्ष को छोड़कर देखो, वही सुख का किनारा है ॥
भलाई सब की है उस में, प्रभु पद का निज़ारा है।
सुनो या मत सुनो यारो, धर्म का सच्चा नक़ारा है॥
ग्रहण किया वेद का मार्ग, अहिंसा धर्म धारा है।
यही मार्ग है मत भूलो, न काला है न गोरा है ॥
मिलो सब जीव आपसमें,मथन समझो तो सारा है।
नहीं फिर दुःख वहां हमको, 'नवलसिंह'यह विचारा है॥

लावनी ४६६

हे हे हिन्दू ! हे आर्य। यवन ! ईसाई !
सुनलो गोमाता की पुकार है भाई !
भूतल के जड़ चैतन्य चराचर सारे।
हैं सकल सहोदर प्रकृति प्रिया के प्यारे ॥
ये एक दूसरे के दुख नाशन हारे।
करदिये इन्हें ईश्वर ने दास हमारे ॥
सब से बढ़कर है गोमाता सुखदाई। सुन० १ ॥
दिनभर बेचारी बन में जा चरती है।
तृण नोच खाय पी नीर उदर भरती है ॥
सरला भोली भाली सब से डरती है।
दिन रात सदा सब की सेवा करती है ॥
घृत दही मही देती है दूध मलाई ॥ सुन० २ ॥
अपना बच्चा होता है सबको प्यारा।
पर गोमाता ने ऐसा नहीं विचारा ॥
अपने पैरों में बांध उसे कर न्यारा।
लेने देती है हमें दूध की धारा ॥
कर कौन सकेगा इस से बड़ी भलाई। सुन० ३ ॥
यह जन्म-भूमि भारत कहते हो जिसको।

सो कृषि-जीवी है मित्र ! समझलो इसको ॥
यदि बैल न होंगे तो जोतोगे किसको ? ।
क्या विना गाय के पा सकने हो तिसको ?
कैसे तब होगी नहीं बड़ी कठिनाई ? । सुन० ४ ॥
बैलों ही के बल से भारत जीता है ।
जल उस के बल से मारवाड़ पीता है ॥
बिन अन्नोदक क्षण भर किसका बीता है ।
नर कौन भलाई से उसकी रीता है ? ॥
यह केवल गो माता की है प्रभुताई । सुन० ५ ॥
गाड़ी में चलते बैल खींचते हल हैं ।
करते बेचारे कृषि के कार्य सकल हैं ॥
वे धीर वीर व्रतशील अनन्य अटल हैं ।
श्रमजीवी कृषक गृहस्थ मात्र केवल हैं ॥
कर रहा एक स्वर से संसार बड़ाई । सुन० ६ ॥
गो माता ऐसे पुत्र नहीं जो देती ।
सो होती भाई किस प्रकार से खेती ॥
तब मृत्यु सहज में क्यों न खबर ले लेती ।
मरजाती प्रजा, न रहजाती अपनेती ॥
गो माता से सब ने सहायता पाई । सुन० ७ ॥
तुम प्रतिदिन रोटी दाल भात खाते हो ।
घृत दूध दही या छाछ हड़प जाते हो ॥
पर जी में इसका ध्यान न क्यों लाते हो ।
किस की उदारता से यह सब पाते हो ॥
कुछ समझ बूझ कर करलो धर्म कमाई । सुन० ८
जब अन्तकाल में वह मा मरजाती है ।
निज पुत्र हमारे सेवक कर जाती है ॥
जिससे गृहस्थ की दशा सुधर जाती है ।

नर जाति दुकाल-समुद्र उतर जाती है ॥
जीवन-यात्रा पड़ती न समझ दुखदाई। सुन० ९ ॥
मरने पर उसका चाम, काम आता है।
देखो चरणों का सेवक कहलाता है ॥
हड्डी से बनती खाद खेत खाता है।
जिस से गृहस्थ दूना अनाज पाता है ॥
यों उपयोगिता कहो किसने दिखलाई। सुन० १० ॥
गो भक्ति पूर्वजों को थी नरपति प्यारी।
उन के जीवन में हो न सकी वह न्यारी ॥
प्रति क्षण गोमाता रक्षा करें हमारी।
हैं मनुज मात्र के लिये सदा हितकारी ॥
महिमा महान उस की वेदों में गाई ॥ सुन० ११ ॥
जिस ने जग में अतुलित उपकार किया है।
हित हेत हमारे जीवन-दान दिया है ॥
तजि पक्षपात सब को अपनाय लिया है।
यह देश सदा जिसका बल पाय जिया है ॥
है शोक उसे खाते जाते काट कसाई ॥ सुन० १२ ॥
क्या यवन अरब से गायें लेकर आये।
या ईसाई इंगलैंड देश से लाये ? ॥
वे सब ने केवल हम सब से ही पाये।
इसमें कहिये किस का अपराध बताये ? ॥
जिन की गोमाता वे ही हैं 'अन्यायी ॥ सुन० १३ ॥
गोमाता का हो चला निरादर जब से।
भारत की काया हुई निकम्मी तब से ॥
बल वीर्य ज्ञान गुण रूठ गये हम सब से।
घट गई आयु सुख मिले कहो किस ढब से ॥
दारुण दुकाल पड़ने की बारी आई ॥ सुन० १४ ॥

अब तो हे भारतवासी पलक उघारो।
अपनी स्थिति, दीनता, कुदशा निहारो॥
जो होना था सो हुआ, न हिम्मत हारो।
सब मिल कर भाई अपना देश सुधारो॥
आगे जो होगा, उस से हो न बुराई॥ सुन० १५॥
सब से पहिले गोमाता को अपनाओ।
सब गांव गांव में गोशाला बनवाओ॥
निज दान-वीरता उस में ही दिखलाओ।
कवि "रामनरेश" सुधर्म-धनी बनजाओ॥
वह धन्य! प्रशंसा इसमें जिस की छाई॥ सुन० १६॥

भजन ४६७

अपने गांव में रे, मित्रो! गोशाला बनवा दो।
जिनको गोमाता कहते तो बड़े प्रेम से भाई।
देखो उनको काट रहा है निर्भय निठुर कसाई॥ अ० १
जो दिन रात तुम्हारी सेवा सब प्रकार करती है।
हाय! हाय! दुखिया बेचारी तड़प २ मरती है॥ अ० २
घर घर से चन्दा ले ले कर गोशाला बनवालो।
उसमें गोमाता का प्यारे प्यारा प्राण बचालो॥ अ० ३
इसमें है सब भांति भलाई 'रामनरेश' तुम्हारी।
जो न करोगे तो पछताकर भोगेगे दुख भारी॥ अ० ४

गजल ४६८

क्या पाप हो रहा है आँखें उघार देखो।
गायों की दुर्दशा को मित्रो बिचार देखो॥
जिस शक्ति के सहारे यह देश जी रहा है।
उसके बिनाश से क्या होगा सुधार, देखो॥

सेवा करे हमारा मरकर न पैर छोड़े।
उस के गले को तौ भी काटे कटार देखो ॥
गोवंश को बचाओ मिलकर नरेश लोगो।
भारत का यह हरेगा सारा विकार देखो ॥

गजल ४६९

लुट रहा जिनका खज़ाना किस तरह सोते हैं वह।
आंख खुलने पर हमेशा पीट सर रोते हैं वह ॥ १ ॥
बेजुबां गौओं की जो सुनते नहीं फर्याद को।
अपनी बर्बादी का दुनियां में समर बोते हैं वह ॥ २ ॥
कम से कम हर रोज़ लाखों पर चले तेगो तबर
फिर कहां दर्दे जिगर की औषधी टोहते हैं वह ॥ ३ ॥
कुछ नहीं जिन को खबर भारत के अबतर हालकी।
हाथ अपनी ज़िन्दगी से इस तरह धोते हैं वह ॥ ४ ॥
थी हमारी तन्दुरुस्ती की गिज़ा दूधो दही।
इसकी जड़ को काटकर नामो निशां खोते हैं वह ॥ ५ ॥
अपने पैसे से गरज़ कोई जिये कोई मरे।
सबक इन बेचारियों के क़त्ल का देते हैं वह ॥ ६ ॥
जिन के बछड़ों की कमाई से हम पुरशिकमी करें।
आज उनके वास्ते खंजर लिये होते हैं वह ॥ ७ ॥

होली ४७०

माता गऊ तुम्हारी, करत बिनती इक भारी। टेक ॥
दीन्हों तुमहिं दूध घृत माखन, खाकर घास विचारी।
पुत्र करत हैं काम अनेकन, एक एकतें भारी ॥
जियत जासे नर नारी ॥ माता गऊ० १ ॥
जीवित रहत सुक्ख पहुँचावत, मरहु होत सुखकारी।

बनि जूती चरणन सेवा महँ आवत आत तुम्हारी ॥
अन्न की सींचत क्यारी ॥ माता गऊ० २ ॥
जीवनमूल हाय माता को, जीवित डार मारो।
दूध हराम पुत्र नहिं नेकहु, हाय ! करत रखवारी ॥
यही संकट उर भारी ॥ माता गऊ० ३ ॥
शिवनारायण अबहूं चेतो, माता दुखित निहारी।
पी पी दूध हाय ! माता को, भुजन भयो बल भारी ॥
बनो अब तो उपकारी ॥ माता गऊ० ४ ॥

(१७) मांस भक्षण निषेध

कव्वाली ४७१

अय मांस खाने वालो क्यों जुल्म ढा रहे हो।
क्यों बेकसों पर नाहक़ छुरियां चला रहे हो ॥ १ ॥
सोचो तो दिल में अपने ख़ालिक वही है उनका।
जिसको कि आप खालिक सब का बता रहे हो ॥ २ ॥
क्या हक़ ये आप का है बतलाइये ज़रा तो।
मखलूक को खालिक क़े तुम क्यों मिटा रहे हो ॥ ३ ॥
खलकत के जो नफ़े की खातिर बनाये हैवां।
तुम काट काट उन की हड्डी चबा रहे हो ॥ ४ ॥
लेते हो दूध और घी मक्खन मलाई इन से।
तेगे सितम गलों पै उनके घुमा रहे हो ॥ ५ ॥
बेदम तड़प रहे हैं इस बेकली से बेकस।
खंजर ले तुम गलों पै जिन के घुमा रहे हो ॥ ६ ॥
जिन की कमाई खा २ पाले हो जिस शिकम को।
तुम उस शिकम का उनकी क़बरें बना रहे हो ॥ ७ ॥
हड्डी वो मांस खाकर खूने सितम बहाकर।
क्यों दूध घी का चश्मा शीरीं सुखा रहे हो ॥ ८ ॥

मोहसिनकुशी नहीं गर तो क्या है यह बता दो।
अहिंसा करें जो तुम पर उन को सता रहे हो ॥ ९ ॥
बेदर्द बेरहम क्यों इतने हुए हो भाई।
जो खून बेगुनाहों का यों बहा रहे हो ॥ १० ॥
इस बात का ही हमको भारी तअज्जुब है।
क्यों रहमो अक्ल वाले इंसां कहा रहे हो ॥ ११ ॥
सालिग नहीं मिलेगा सुख तुम को भी कदाचित्।
अब दूसरों के दिल को नाहक़ दुखा रहे हो ॥ १२ ॥

कवित्त ४७२

प्रथम क़साई मति पशू कटिबे की देत, दूसरे क़साई जौन काट के गिराते है। तीसरे क़साई जौन धरत सिंघार कर, चौथे वे क़साई जो खरीद कर लाते हैं ॥ पांचवें जो मांस तौले, छठवें पकाये देत, सातवें परोसे, आठें स्वाद बतलाते हैं। भनै रामधार मुनि मनुह बताते, दिल दरद न लाते आठों नरक माहिं जाते हैं ॥

भजन ४७३

देखो अच्छा नहीं है यार, पक्षी पशू मार के खाना ॥
जैसे तुम को प्यारे प्रान, वैसे पशुओं को नादान।
फिर क्या बने हो दुशमन जान, उनके गले पै छुरी चलाना ॥
तुम इंसान कहे जाते हो, फिर क्यों नहीं ध्यान लाते हो।
कांटा लगे तो चिल्लाते हो, पर पशुओं का शीश उड़ाना ॥
जब से बहुत बढ़ा यह कार, पशु भी घट गये बे शुम्मार।
घी और दूध की गई बहार, बीमारी ने किया ठिकाना ॥
दिल से दया चली जाती है, मुँह से बदबू भी आती है।
बुद्धी पशुवत् हो जाती है, छोड़ो पाप का कर्म कमाना ॥

छेदालाल बदी करता है, वैसा ही वह फल भरता है
धर्म से वे मुख हो मरता है, निश्चय जान लीजिये दाना।

भजन ४७४

टेक—वह पुरुष महाअज्ञान हैं, जो जीव मार कर खाते।
मांस पराया जो खाते हैं, मन में दया नहीं लाते हैं॥
खड़े खड़े पशु कटवाते हैं,
ऐसे मनुज कठोर है वे दया ज़रा नाहिं लाते। जो जीव० १
खून पीप से मांस बना है, हड्डी मज्जा भरा घना है।
इस को खाना दुष्टपना है,
ऐसी वस्तु खायके, वह कुछ भी नहीं घिनाते। जो जीव० २
कुछ तो दया हृदय में लावो, मांस पराया तुम मत खावो।
दीन जीव को मति कटवावो,
समके भी तो जानते, यह बात ध्यान नहिं लाते। जो जीव०३
अब तुम कहना मानों यारो, दया दृष्टि से सबहि निहारो।
नहीं दीन पशुवों को मारो,
"सागर" की यह सीखहै, क्यों नाहक पाप कमाते जोजीव०४

ग़ज़ल ४७५

तू जो हाथ में खंजर उठावे फिर,
तेरे दिल में ज़रा रहम आता नहीं।
जुल्म करना बहाना लहू हर घड़ी,
किस जगह है लिखा क्यों दिखाता नहीं॥ १॥
जो कि जीवों को मार सतावे निडर,
मांस आदि का भक्षन करे है जो नर।
जैन शास्त्रों में ऐसा लिखा है बशर,
वह तो मुक्ति के सुखों को पाता नहीं॥ २॥

वेद द्वारा है ईश्वर ने यह कह दिया,
है अहिंसा का उपदेश हमको किया।
हमने सारी किताबों में देख लिया,
इस को खाना कहीं पाया जाता नहीं ॥ ३ ॥
मनु आदिक स्मृति में यूं कह रहे,
वह तो पापी है जीवों को जो दह रहे।
जहां लाखों ही मुरदे जमा हो रहे,
क्या वह क़बरस्तान कहाता नहीं ॥ ४ ॥
सिक्खों गुरुओं की वाणी दिल से पढ़ो,
अब ज़रा हाथ छाती पे रखके कहो।
तुम से किसने कहा है कि भटका करो,
गुरु ग्रन्थ तो तुम को सिखाता नहीं ॥ ५ ॥
हादी ईसा ईसाइयों तुम्हारा हुआ,
खून उस का कहां है गँवारा हुआ।
है मति वाब उन्नीस में देख लो,
वह खून किसी का कराता नहीं ॥ ६ ॥
सूरे हज़ है रुकू चार क़ुआन में,
आयत छत्तीसवीं दिखलाऊं इस आन में।
तुम तो फंस बैठे सारे ही कुफरान में,
खुदा गोश्त किसी का मंगाता नहीं ॥ ७ ॥
यह तो होहो नहीं सका साबित ज़रा,
कि मज़हब में गोश्त का खाना रवा।
"चन्द्र" दीन और दुनिया में वह ही भला,
कि जो खून किसी का बहाता नहीं ॥ ८ ॥

भजन ४७६

टेक—तुम्हें क्या शान है जी, खाओ मांस मनुष्य कहलाके।

ज़रा ग़ौर से सोचा दिल मोती सा साफ़ कहावै।
मांस की कीचड़ उसके ऊपर गन्दी मैल चढ़ावै, ॥तुम्हें० १॥
छोटे छोटे पशुओं पर तो छुरा चलाने धावें।
गरज शेर की सुन जीवित ही मृतक तुल्य होजावें, ॥तुम्हें०२॥
एक मुरदा जहां दफ़न करें हैं उसको क़ब्र बतावें।
अनगिन मुरदे दाब पेट में क़बरस्तान बनावें, ॥ तुम्हें० ३ ॥
किसी का मुरदा जले आग में कोई दफ़न कराते।
यह पापी घर चूल्हे पर हंडिया बीच पकाते, ॥ तुम्हें ४ ॥
बूंद मूत्र की लगे एक तो कपड़े साफ़ कराते।
रज वीर्य से बने जो अंडे गप्प गप्प खाजाते, ॥ तुम्हें० ५ ॥
बेदर्दी से गला काट कर खाने लगे तमाम।
हुक्मे खुदा से जो मरजावे उसको कहें हराम, ॥ तुम्हें ६ ॥
कुर्बानी का करें बहाना है यह ख्याले खाम।
पहिले उसकी खेती उजाड़े फिर मांगे इनाम, ॥ तुम्हें० ७ ॥
प्रथम तो नहीं होवे सफ़ाई दूजे पाप अपार।
म्युनिस्पिलटी के भंगियों के जो देते हैं मार, ॥ तुम्हें० ८ ॥
क्या रावण के कुल से लंका खाली होगई सारी।
उसके ही कुल में तो हैं यह सारे मांसाहारी, ॥तुम्हें० ९ ॥
'चन्द्र' कहे हे बुद्धिमानों, छोड़ो इसका खाना।
दूध घृत की गंगा में फिर, न्हाय सकल ज़माना, ॥तुम्हें०१०॥

[१८] मादक वस्तु निषेद।

भजन ४७७

दोहा—ईश्वर ने बुद्धी करी, सब के लिये प्रदान।
पर मूरख जन खोरहे, कर २ मदिरा पान॥

टेक—ग़ज़ब की बात है रे, शराब पीकर धर्म बिगाड़ा।

सीरा महुआ बबूल कस से है इस की बुनियाद।
पानी डाल लाहन को सड़ाते हो शराब ईजाद। गज़ब०१॥
भिस्ती पानी भरे मशक से धानुक घड़ा उठाले।
चमार कोरी भबका तोड़ छूकर के जिन्हें न्हाते॥ गज़ब०२॥
सदहा चींटे मक्खी झींगुर लाहन में पड़जाते।
बर्र छुपकली और छछूंदर चूहे तक सड़जाते॥ गज़ब० ३॥
सौंफ़ सन्तरा सब कुमेड़ा नारंगी डलवाते।
मेवाज़ात चीज़ों को सड़ाकर अंगूरी बतलाते॥ गज़ब० ४।
मुरदा चूहा घर के अन्दर छूने से चकराते।
सड़े हुओं का अर्क अधर्मी गट्ट २ पीजाते॥ गज़ब० ५॥
कड़वी तीखी नजिस् कसैली जिसमें बदबू आती।
तिस पर चोखी कह कर पीते ज़रा शर्म नहीं आती॥ गज़ब६
शराब पीते क़बाब खाते करते रंडी बाज़ी।
बी० ए० एम० ए० बेरिष्टर तक बड़े २पंडित काज़ी॥ गज़ब०७
ब्राह्मण क्षत्री वैश्य दुजाती पीकर पाप कमाते।
हैवानों के बाबा बनकर मयखाने को जाते॥ गज़ब० ८
धर्म कर्म इज़्ज़त धन सारा शराब पीकर खोते।
जायदाद भी कुर्क कराकर कुल का नाम डुबाते॥ गज़ब०९॥
इन्सां से हैवान बनादे ऐसा नशा ख़राब।
पड़े कीच मे लेट मुंह में कुत्ते करें पेशाब॥ गज़ब० १०
सीताराम सुन हाल मुफ़स्सिल जो हों दाना बीना।
मित्रो दिल से अहद करो, अब छोड़ो इसका पीना॥ ग० ११

भजन ४७८

दोहा—शराब बड़ी ख़राब है, होय नवाब कबाब।
यमपुर भेजे जायगे, देंगे कहा जवाब॥
टेक—अब तो छोड़ दो रे ताड़ी शराब के पानी को।

मदरा ताड़ी पा पी करके दाना धर्म गमाय।
बहुतक धन हीन होगये मय ख्वारी से हाय ॥ अब० १ ॥
मुसलमान ताड़ी को बेचते देते पानी मिलाय।
खड़े खड़े बाबू जी पीते ज़रा शर्म नहिं आय ॥ अब० २ ॥
कायस्थ क्षत्री वैश्य कहाते हिन्दु कहें पुकार।
यवन हाथ का पानी पीते करते नहीं विचार ॥ अब० ३ ॥
शराब ताड़ी मांस छुड़ाओ होगये बुद्धी हीन।
इसी सबब से देश तुम्हारा हो रहा तेरह तीन ॥ अब० ४ ॥
जितनी वस्तु नशे की कहिये हैं सब मित्र खराब।
बुद्धि भ्रष्ट धन हीन बनाकर दिल को करें कबाब ॥ अब०५ ॥
जितने अवगुण हैं पीने से जानत हो सब भैय्या।
जान बूझ कर बनो अनारी सोचो भला पिवैय्या ॥ अब० ६ ॥
मय नोशी के करने वालो डरो ज़रा ईश्वर से।
आंखें खोलो पलक उघारो मुह मोड़ो पीने से ॥ अब० ७ ॥
अब भी होश में आओ धन और धर्म बचाओ।
मज़ा कहा मदरा में मिलता हमको भी समझाओ ॥ अब०८ ॥
भूलों को अब राह बताना यही काम है मेरा।
आयन्दा अख्त्यार तुम्हीं को करो नर्क में डेरा ॥ अब० ९ ॥
पंडित चतुर कहाकर मित्रो तजो पान मदरा का।
छेदालाल कहे अब हितकी शुभ चिन्तक है सबका ॥ अब० १०

गजल ४७६

छोड़ो शराब पीना हे भाइयो! हमारे।
इसको ही त्याग करके होगे महा सुखारे ॥ १ ॥
जिस २ ने इसको छोड़ा पाया उसी ने सुख को।
जो इसमें रम रहे हैं वे हैं महा दुखारे ॥ २ ॥
है धर्म शास्त्रों में छूने की भी मनाही।

पर लोग पा रहे हैं तजि धर्म कर्म सार ॥ ३ ॥
इसमें सिवाय हानि कुछ भी न लाभ देखा।
इससे ही प्राप्त होते दुःख वो दरिद्र सारे ॥ ४ ॥
जो नर हैं इसको पीते, बेहोश हो नशे में।
नाली व खंदकों में रहते हैं रोज़ डार ॥ ५ ॥
सर फूटते हैं इनके अरु चोर भी हैं खाले।
ग़ाफ़िल बने ही रहते पर वे नशे के मारे ॥ ६ ॥
है गालियां ही बकते औ मारने को करते।
कहीं फिर रहे हैं नंगे धोती तलक उघारे ॥ ७ ॥
हानी ग्लानि, सहने पर भी न मानते हैं।
देखो जब ही ठाढ़े कलवार के दुआरे ॥ ८ ॥
यह कर्म है पिशाची इसको तो शीघ्र त्यागो।
एक हानि छोड़ इसमें कुछ भी न प्यारे ॥ ९ ॥
गर छोड़ दोगे इसको तो सत्य हूं मैं कहता।
लावोगे सुःख को तुम "सागर" कहै पुकारे ॥ १० ॥

दादरा ४८०

टेक—मानो मानो शराब मती पिया करो।
शेर—अच्छा नहीं है दोस्तो पीना शराब का।
बर्बाद घर हो जायगा आखिर जनाब का ॥
मती हाथों से भी इसे छुआ करो ॥ मा० १ ॥
शेर—लाओ मती मयखाने में जाकर शराब को।
रोना पड़ेगा एक दिन वर्ना जनाब को ॥
पैसा ज़िया दे तो दीनों को दिया करो ॥ मा० २ ॥
शेर—रक्खी हुई है घर में जो बोतल शराब की।
इज़्ज़त बिगाड़ देयगी बिलकुल जनाब की ॥
अच्छी बातों पर और दुक किया करो ॥ मा० ३ ॥

शैर—मुट्ठी में भर के खाक तुम डालो शराब में।
अच्छी यह बात आप से कहता जनाब मैं॥
'रूप' ईश्वर का नाम सदा, लिया करो ॥ मा० ४ ॥

भजन ४८१

टेक—पीओ न मित्रो भूले से कभी भंग।
इसके नामसे ही तुम समझो करे भजन में भंग। पि०
पलट गया है सकल ज़माना, शिव पूजा का किया बहाना।
भंग धतूरा नशा जमाना बुद्धि ज्ञान विदा होजावे॥
जम जावे जब रंग ॥ मित्रो० १ ॥
भंग गधे से यों फ़रमावे, इस लिये तू पाजी कहलावे,
मुझे विजिया को क्यों नहीं खावे, नित्य प्रति रहती हूँ, मैं तो
भोला नाथ के सँग ॥ मित्रो० २ ॥
उत्तर गधे का तुम्हें सुनावें, मनुष्य तुझ से प्रीति लगावें,
पीकर तुझे गधे हो जावें, मैं तो पीहले से ही गधा हूं।
और बिगड़ आये सब ढँग ॥ मित्रो० ३ ॥
'चन्द्र' सभा में यों समझावे, गधे न जिसको नाक लगावे,
मनुष्य उसको पीयें पिलावें, बुद्धि हीन हुये नर नारी।
हो गया भारत तंग ॥ मित्रो० ४ ॥

भजन ४८२

दो-भँग चरस गांजा मदक पोस्त अफ्यून शराब।
देखो मित्रो गौर से सारे नशे खराब॥
टेक—अजी एजी नशे में तुम मत होना कभी चूर।
जब की बदमस्त नशे में रहता नहीं शऊर॥ नशे में० १ ॥
भंग चढ़ा भंगी कहलावे, कुंडी सोटा हाथ उठावे,
मिर्च मसाज बादाम मिलावे, बम बम बम बम बम बम भोला।
है लोटा भरपुर ॥ नशे में० २ ॥

चरस ने कर दिया दम्मा भारी, खौं खौं खौं खौं की बिमारी,
बदन की चमके हड्डा सारी, धन दौलत का उड़ गया धुवां
नहीं देखते कूर ॥ नशे में० ३ ॥

चारपाई पे गांजा सुलावे, चंडू जब नलकी में आवे,
दिये की लौ उस में मिल जावे; औंधा पड़के जोर से खींचे।
गया नयन का नूर ॥ नशे में० ४ ॥

पोस्त पोस्ती कर दिखलावे सारे तन का पोस्त उड़ावें,
ज़रा उठा न बैठा जावे, इधर तो घर में आग लगी पर
उठते नहीं हजूर ॥ नशे में०५ ॥

अफ़्यूनी ने गोली खाई, सुध बुध सब तन की बिसराई,
दूध का पीना भूला भाई, पेट पकड़ के सुबह को रोवे।
होता क़ब्ज जरूर ॥ नशे में० ६ ॥

मदिरा ने यह ढंग बनाया, कुत्तों का पेशाब पिलाया,
बाजारों तक में पिटवाया, "चन्द्र" कहे होश संभालो।
, करो नशों को दूर ॥ नशे में० ७ ॥

ग़जल ४८३

डबो न अपना तू दीनो ईमानू, शराब खाना खराब पीकर।
बनेगा इन्सान से तू हैवाँ, शराब ख़ाना खराब पीकर॥
यह सल्तनत को उजाड़ती है, यह बेख दौलत उखाड़ती है।
फ़कीर बनते हैं नस्ल शाहां, शराब खाना खराब पीकर॥
बने हुए को बिगाड़ती है, यह बेख अफ़लास गाड़ती है।
नहीं है हासिल सिवय नुकसान, शराब खाना खराब पीकर।
नहीं मरज- हो दवा न जिसकी, दवा नहीं है अगर तो इसकी॥
हज़ारों इन्सान हुए हैं बेजाँ, शराब खाना खराब पीकर।

कोई तो राशा मे मुबतला है, किसी को सरसाम हो गया है ॥
किसी को आसार दिक नुमायां, शराब खाना खराब पीकर ॥
रहे न शर्मो हया कुछ इससे, रहे न खौफ़े खुदा कुछ इससे ।
रहे किसी का न दीनो ईमां शराब खाना खराब पीकर ॥
अगर्चे ज़ाहिर में है यह पानी, हरेक खराबी का है यह बानी ।
अगर हो दाना बना न नादां, शराब खाना खराब पीकर ॥
यह रोजमर्रा का है तजुर्बा, यह बादय ख्वारी का वाकआ है ॥
कि खींचे जाते हैं सूय ज़िन्दान, शराब खाना खराब पीकर ॥
यह है दुआये गुलाम 'खुस्ता' कि शीशये मय रहे शकिश्ता ।
कोई न होये खराबो हौ हैरान, शराब खाना खराब पीकर ॥

भजन ४८४

देखो सोचो प्रीतम प्यारे क्यों हुये शराब पीने वाले ।
यह खोती है पूंजी सारी, और घर घर का करै भिखारी ।
इज्जत हुरमत जा सब मारी, ऐसे जालिम इसके प्याले ॥
॥ देखो० १ ॥

लहर जब नशे की चढ़ आती है, सुधबुद्ध सकल चली जाती है।
काया अति कष्ट पाती है, नरक में पड़जाते है पाले ॥
॥ देखो० २ ॥

कै हो बदबूमारे खोटी, कहीं जूता कहीं पड़जाय टोपी ।
कुत्ता सूंघ आय लंगोटी, जलसा देखें देखने वाले ॥
॥ देखो० ३ ॥

शराब क्यों पीते हो रुपयां, छोड़ो इसे मैं पड़ती पैय्यां ।
छेदालाल कहै समभैय्यां, इस ने काढ़े लाखों दिवाले ॥
। देखो० ४ ॥

१९ वेश्या खण्डन

कवित्त ४८५

(हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं)

करके शृंगार यार मारत हज़ार धार ज़हर कटार वार तिरछी चलावतु है। नैनन कमान बान सैनन को तान आन मारन के हेत तान तोफ़ा सुनावतु है॥ सभा के मँझ र शब्द पायल झनकार नार वेश्या मक्कार ख्वार जारकी लुभावतु हैं। मानुष कहाय राम 'रूप' पैलुभाय हाय चातुरी भुलाय मूरख पातुरी नचवतु हैं॥१॥

दूसरी।

(हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु है)

पैसे की चाह राह देती ललचाय खाय दौलत अरु माल जाल जाहिल फँसावतु हैं। काजल चमकाय गाय लेती बहँकाय जाय बैठे है पास फांस फांसुरी लगावतु है। मीठो कलाम घाम बोले सहकाम जाम जाहर विष देत चोट माहरी चलावतु हैं। मानुष कहाय राम 'रूप' पै लुभाय हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं॥ २॥

तीसरी।

(हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं)

धरती धन धाम देत चेतना अचेत चेत वेश्या के हेत दीन दुखिया सतावतु हैं। प्यारी सुख दैन नैन पोछें दिन रैन चैन नेक हू न लाग आग बिरहा जलावतु हैं॥ शरा वो भाय माय रोवें बिलखाय हाय मारे दिन रात गात आंसुन धुल जावतु हैं। मानुष कहाय राम 'रूप' पै लुभाय हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं। ३॥

चौथी ।

(हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं)

भावतु नहिं बात तान बनिता विलजात साथ औरों के जात तुम्हें वेश्या जो भावतु हैं । गणिका के लागि त्यागि प्यारी सौभागि आगि विरह की उजागी आप वेश्या संग जावतु हैं । होकर बेज़ार बेक़रार बारबार हार घूमत बाज़ार नार वेश्या कहलावतु हैं । मानुष कहाय राम 'रूप' पै लुभाय हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं ॥ ४ ॥

पांचवीं ।

(हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं)

टोपी पतलून कोट मोज़ा चन्द रोज़ा चारु चादर चुनेली ले रँगीली पहँ जावतु हैं । बने हैं नवाब आप चेहरे की ताब वाह वाह जी जनाब लौट रोते घर आवतु हैं ॥ दारुण दुख द्वन्द मन्द वेश्या का फन्द चन्द लहमें की लुत्फ माल मुफ्त ही लुटावतु हैं । मानुष कहाय राम "रूप" पै लुभाय हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं ।

छठी ।

(हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं)

कैसे बेहाल हाल काल की मिसाल जाल खोके धन माल जाल चातुर दरसावतु हैं । केते हो दाम नाश करके सब आश वास वेश्या के पास खास पेशा ही उठावतु हैं ॥ केते कुल कान आन देते हैं जान मान करते हैं हान नाम दुनियां से मिटावतु हैं । मानुष कहाय राम "रूप" पै लुभाय हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं ॥ ६ ॥

सातवीं ।

(हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं)

केते हो फ़क़ीर पीर मुन्किर नकीर खीर पूड़ी वखीर नित्य पूजा चढ़वावतु हैं ॥ शंकर सुल्तान हनूमान बेगवान को ये पूर्ण भगवान आप रूप को बतावतु हैं ॥ मूड़को मुड़ाय जाय धुई रमाय खाय मुफ़्ती मंगवाय धूमि चेलन कहावतु है मानुष कहाय राम "रूप" पै लुभाय हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं ॥७॥

आठवीं ।

(हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं)

सांवर क्या गोर अंग रंग क्या कुरंग रंग एक ही प्रसंग भंग नेकहू न आवतु हैं । काया सब एक एक माथा कर टेक बुद्धि दाया सब एक मेक एक ही लखावतु हैं ॥ मालिक कर तार ढार कीन्हों तैयार डार सांचे इकसार सृष्टि सारी जे रचावतु हैं मानुष कहाय राम 'रूप' पै लुभाय हाय चातुरी भुलाय मूर्ख पातुरी नचावतु हैं ॥८॥

सोरठा ।

बासन गढ़े कुम्हार, रंग बिरंगा रंग रंगत ।
समझहु चित्त उदार, त्यों रचना करतार की ॥१॥
शीत घाम अरु मेह निशिबासर जीवन मरण ।
अवशि होत सन्देह, विलग २ कारि देत औ ॥२॥

सवैया ।

(जो 'रूप' के खातिर प्राण गंवावें)

नारी बिचारी उघारी फिरैं,व्यभिचारीको सारी रँगीनी रँगावैं।
प्यारीके हाथोंमें चूरी नहीं गणिका माणिक्का झुमका झुमकावैं॥
धर्मके ताईं तो पाइ नहीं, व्यभिचारी में सारी कमाइ लगावैं।
नाम भी दें बदनाम भी होवें, जो'रूप' के खातिर प्राण गँवावें १॥

दूसरी।

(जो 'रूप' के खातिर प्राण गंवावैं)

लोटा बिका अरु थारी बिकी,घरबारी की सम्पति सारी लुटावैं।
हाथी बिके रथ घोड़े बिके, गऊ माता कसाई के हाथ बिकावैं॥
ऋन उधारे न पारे लगे, ज़मींदारी के ऊपर हाथ चलावैं।
नाम भी दें बदनाम भी होयँ,जो 'रूप' के खातिर प्राण गँवावैं २॥

तीसरी।

(जो 'रूप' के खातिर प्राण गँवावैं)

शर्म वेशर्म को आती नहीं, दिन राती बुलाय के रांड नचावैं।
खाने को एक टका घर ना, पर वेश्या को पानों की ढेर लगावैं॥
धृग अहै इन जीवन को, जिन आपु सिखे अरु आन सिखावैं।
नामभी दें बदनाम भी होयं, जो 'रूप' के खातिर प्राण गवावैं॥

चौथी।

(जो 'रूप' के खातिर प्राण गँवावैं)

नैन नचाय लुभाय सभा, अरु तान के बान से मारि गिरावैं।
कितनों खा विष जान दिया, अरु केतिक योगी वियोगी कहावैं॥
लाखन मूड़ मुड़ाये फिरैं, मन चाहै तो बैठि समाधि जगावैं।
नाम भी दें बदनाम भी होयँ, जो 'रूप' के खातिर प्राण गवावैं ४

पांचवीं।

(जो 'रूप' के खातिर प्राण गँवावैं)

नारी के छूये तो छूत लगे, पर वैश्या के पांयन शीश नवावैं।
ऐसे कपूत भये न भये, जिन आपु गये कुल नाम डुबावैं।
लोक गयो परलोक गयो, तन शोक भयो तिहुँ लोक हँसावैं।
नाम भी दें बदनाम भी होयँ, जो'रूप' के खातिर प्राण गवावैं॥

सवैया।

(पति जीवत रांड़ भई तिरिया)

पूत कपूत भये कुल ज, निज नारिन से मन फेर लिया।
मातु पिता सगबन्धु कुटुम्ब, कबीलन को तजि न्यारे भिया॥
ज्ञान गुमान भुलाय गयो गणिका सँग जाय के बास किया।
डायन 'रूप' बनी सजनी, पति जीवत रांड़ भई तिरिया॥१॥

दूसरी।

(पति जीवत रांड़ भई तिरिया)

जूंय की धून लगीही रही, सुरती अरु चून सवाद लिया॥
गांजा नशान को राज्य लिख्यो, तन पोषक हेत शराब पिया।
भंग से दुन उमंग बढ़ै, गणिका सँग आवत चातुरिया।
डायन 'रूप' बनी सजनी, पति जीवत रांड़ भई तिरिया॥२॥

तीसरी।

(पति जीवत रांड़ भई तिरिया)

पांच बरीस के दूलह हैं दुलही की पचास की ऊमरिया।
प्रान पयान कियो तिय को, जब घूमत देखेउ भांवरिया॥
नैहर सासुर एक भयो, अरु भारी हुई तन चूनरिया।
डायन 'रूप' बनी सजनी, पति जीवत रांड़ भई तिरिया॥३॥

चौथी।

(पति जीवत रांड़ भई तिरिया)

वर्ष पचास को है लड़िका, अरु पांच बरीस की दूलरिया।
बारी बहू कछु जानत ना, यह बाप लगैं कि कहावैं पिया॥
नाम निशान दियो तिय को, अरु आप गये मरघट मियां।
डायन 'रूप' बनी सजनी, पति जीवत राँड़ भई तिरिया॥४॥

पांचवीं।

(पति जीवत रांड़ भई तिरिया)

रंग उमंग में ब्याह कियो, अरु बोभेउ पाहन नावरिया।
दंड कमण्डल हाथ लियो, अरु कांख दबायेउ कामरिया।
आप भये रमता भगता, घर नारी विचारी है बावरिया।
डायन 'रूप' बनी सजनी पति जीवत राड़ भई तिरिया॥

सवैया।

(दुनिया उलटी भई जावतु है)

कूर को शूर कहै दुनियां, अरु शूर को कूर बतावतु है।
सांच को आंच से भागि फिरे, अरु झूठ की ओट लुकावतु है॥
वेद पुरान कुरान पढ़े, पर दीन दया नहिं भावतु है।
'रूप' छटा उलटी सिगरी, दुनियां उलटी भई जावतु है॥१॥

दूसरी।

(दुनिया उलटी भई जावतु है)

धूर्त पखंड भरा जग जो, निशिवासर गप्प उड़ावतु है।
सांच असांच विचार नहीं, ठगिया सम रूप बनावतु है॥
बात सहस्र असत्य गढ़ै, जग सोई प्रवीन कहावतु है।
'रूप' छटा उलटी सिगरी, दुनियां उलटी भई जावतु है।२॥

तीसरी।

(दुनियां उलटी भई जावतु है)

मातु पिता सुत बन्धु तजे, एक धर्म की टेक पै ध्यावतु है।
धर्म पै प्राण निसार कियो, अरु धर्म पै पेट फड़ावतु है॥
धर्महि धर्म लई धुनि जे, तेहि को जग धूर्त बतावतु है।
'रूप' छटा उलटी सिगरी, दुनिया उलटी भई जावतु है॥३॥

चौथी।

(दुनिया उलटी भई जावतु है)

नीति नई निकली जग में, जड़ बाल विवाह रचावतु है।
मूर्ख भुलाय लुभाय टका, ब्रह्मचर्य्य की रीति मिटावतु है।
होगा भला न कभी उनको, जिन उन्नति देश नसावतु है।
'रूप' छटा उलटी सिगरी, दुनिया उलटी भई जावतु है ४।

पांचवीं।

(दुनिया उलटी भई जावतु है)

धर्म के भाग तो आग लगै, कुल दाग लगै सोई भावतु है।
दाम के नाम निलामी भई, बदनामी पै द्रव्य लुटावतु है॥
जा मुख माहिं महा दुख है, कहि चन्द्रमुखी ले नचावतु है।
'रूप' छटा उलटी सिगरी, दुनियां उलटी भई जावतु है॥५॥

छठी

(दुनियां उलटी भई जावतु है)

जा तन छूये ते छूत लगे, जड़ तासन प्रेम बढ़ावतु है।
ज्ञान को ग्राहक कोय नहीं, मन चाहक मौज उड़ावतु है।
खाय पकान विहान भयो, हरको गुण नेक न गावतु है।
'रूप' छटा उलटी सिगरी, दुनियां उलटी भई जावतु है॥६॥

सातवीं।

(दुनियां उलटी भई आवतु है)

छाई अँधेरा महा उड़ता, तजि पन्थ कुपन्थ सुझावतु है।
चन्दन वृक्ष को काटि तहा, शठ आक बबूर लगावतु है॥
रत्नहार सुधा तजि के, विष घानक घोंटि अघावतु है।
'रूप, छटा उलटी सिगरी, दुनियां उलटी भइ जावतु है॥७

दादरा ४८६

कभी भूल न रंडी घर जाना,
इस से बेहतर ज़हिर खाके मेरे जाना॥ कभी०

शेर-धम धन लेन को बैठी है यह बन ठन रंडी।
अज़मनो हशमतो इज़्ज़त की है दुश्मन रंडी॥
ज़हिर से कम नहीं यारो बनी चितवन रंडी।
सच पूछो तो है, व्याभिचार की मखज़न रंडी॥
बचो फन्दा बुरा है न फंस जाना॥ कभी० १॥

शेर-धन भी जाता है यार और धरम जाता है।
पैंच में इसके जिस्मो जां तलक गमाता है॥
आफतें सकड़ों बीमारी की उठाता है।
रंडी बाज़ों को न विश्वास कोई लाता है॥
तुम्हें होगा सदा यार पछताना॥ कभी० २॥

शेर-जब तलक धन है पास तब तलक बिठाती है।
न होय माल तो मुतलक न पास आती है॥
न करें खुद यकीं तुमको यकीं दिलाती हैं।
तुम्हारे धन से यह गौओं को हा! कटाती हैं॥
कहे झुन्नी ज़रा तो शरम खाना॥ कभी० ३॥

दादरा ४८७

मारे डाले पतुरिया के ठनगन रे।

मियां बाज़ार जो जाते हो दुशाले के लिये।
दो गज़ तनजेब भी लाना मेरी खाला के लिये॥
थोड़ा सा सोना भी लाना मेरे वाला के लिये।
लेते आना सुनरवा से कंगन रे॥ मारे० १।
मियां बाज़ार में जाकर, खरीद करने लगे।
जो क़ौल आशना के थे वह पूरे करने लगे॥
ज़िमीं जायदाद को वह अपनी गिरों धरने लगे।
मियां के बाल बच्चे सब भूखों मरने लगे॥
बिक गया जोडू का नथ और लटकनरे॥ मारे० २॥
ऐसा डसा चुड़ैल ने कि भूत बन गये।
सारे जिस्म से सूख के तावून बन गये॥
डाइन की मुहब्बत में ऐसे चूर बन गये।
कौड़ी रही न पास तो मज़दूर बन गये॥
लूट खाया भुतनियां ने तन धन रे॥ मारे० ३॥
भूल कर इस से कोई भी न लगावे दिल को।
वही चातुर है जो पातुर से बचावे दिल को॥
इश्क के फंदे में कोई न लगावे दिल को।
कहता मंगली बचालो धर्म धन रे॥ मारे० ४॥

कवित्त ४८८

प्यारी नारी छोड़ के छिनारी से करो न प्रीति, विष रस बैन पिलाय मत फेर देती है। भनै रामधार ये अमोल तन पोल करै, ज़मीं को पट्टा लिख तुम्हें दे देती है॥ धन लैलेती धर्म ताख धर देती, वेश्या वीर्य छीन बदल सुज़ाक दै देती है। तुम्हारे सुतन के सुतन क कहां लों कहूं, अपनी गुप्त इन्द्रियों में गुप्त कर लेती है।

कवित्त ४८६

छोड़ निज नारी को निर्लज्ज अभिमानी जौन, रंडियों के चकलों पर चक्कर लगाते हैं। मातु पितु बन्धहु की कहन सुनैना कछु, वेश्या से प्रीति कर मन हर्षाते हैं॥ अपना लुटाते माल आलम हँसाते, वह आतिश बुलाते नीम टहनी हिलाते हैं। भनै रामधार वीर्य नाहक गँवाते, मित्रो अपनी संतानों का अंकुर मिटाते हैं।

दादरा ४६०

जगाय रहे हैं जाने कौन नींद सोये।
कोई चोर आर पाजी, कोई करता रंडी बाजी।
कोई जुये का द्वन्द मचाय रहे हैं॥ ज०॥
कोई पीता शराब, कोई कलिया कबाब।
कोई सुलफे की हुक्क उड़ाय रहे हैं॥ ज०॥
कोई प्रतिमा पुजावें, पराडा पुजारी कहावें।
कोई घंटा और झांझ, बजाय रहे हैं॥ ज०॥
यह कहता घांसाराम, जिसका भठीपुर ग्राम।
कर जोड़ २ तुमको, समझाय रहे हैं॥ ज०॥

दादरा ४६१

कही मानो न रएडी नचाओ पिया॥ टेक॥
रएडी के पीछे हो फिरते दिवाने,
सैयां न मोरा जरावो जिया॥ क०॥
फूट जो निकलेगी गर्मी बदन में,
फिरि हो लगाये मरहम के फिया॥क०॥
गर्मी से सड़ २ के दुर्गति से मरिहौ,
मानो न घर को बुझावो दिया॥क०॥
देखो अब हूं पिया प्यारी की मानो,

नाहीं भोगोगे अपना किया ॥ क० ॥
मित्र मैं रोऊँगी कब तक पिया को,
इनका न अब हूँ पसीजा हिया । क० ॥

दादरा ४६२

टेक—मत रण्डी के चकले म जाओ पिया ।
शैर—बेदिल किया दिलदारों का दिल छीन २ कर ।
मारे हैं इसने लाखों ही यों बीन २ कर ॥
मानो तो बात मेरी को बिल्कुल यक़ीन कर ।
रण्डी यह तुम को छोड़ेगी इक दिन कमीन कर ॥
इस डाइन से मत दिल लगाओ पिया । म० १ ॥
रण्डी है अपनी यार कि जब तक है पास दाम ।
तब तक ही बस करेगी यह झुक २ तुम्हें सलाम ॥
शायद बुरा लगे वो सच है मेरा कलाम ।
इक दिन मियां कहाओगे रण्डी के तुम गुलाम ॥
तुम फन्दे में इसके न आओ पिया ॥ म० २ ॥
क्यों आज मुझ से रिश्तए उलफत को छोड़कर ।
मंझधार मेरी किश्तए हरमां बोर कर ॥
अफ़सोस मेरे शीशए क़िस्मत को फोड़कर ।
कूँचे में रण्डियों के बसे, घर को छोड़ कर ॥
मत छाती पै होला जराओ पिया ॥ म० ३ ॥
ना शर्बते विसाल की समझो इसे बोतल ।
इस में भरा है देखा तो यह ज़हर हलाहल ॥
इक नाम जिस का पाते ही हो जाओगे ग़ाफ़िल ।
ग़ाफ़िल न बल्कि करदे जहन्नुम में भी दाख़िल ॥
मत यों मोल ले ज़हर खाओ पिया ॥ म० ४ ॥
देखो जो कहीं पड़ गया बीमार से पाला ।

गुड़ ढूंढ़ते फिरोगे दुकानों पै तिसाला ॥
समझो आतिशक यह क़ज़ा का है क़बाला ।
सारे जहां में होवेगा मुंह आप का काला ॥
मत आफ़त में जान फँसाओ -पिया ॥ म० ५ ॥
सारे बदन को फोड़ जो निकलेगी आतिशक ।
रोते ही बस फिरोगे मियां सर पटक २ ।
पास आएगी न रएडी मरोगे भटक २ ॥
निकलैगी आखिरश को यह दम भी अटक २ ॥
क्यों मुफ्त में ज्ञान गँवाचो पिया ॥ म० ॥
होती न यार किसी की भी कभी रण्डियां ।
कर देंगी आप को भी सनम ख़्वार रण्डियां ॥
होती हैं जो न फ़ाहिशा बद्कार रण्डियां ॥
समझो न मित्र गुल इन्हें है खार रण्डियां ॥
मत प्यारी का कहना भुलाओ पिया ॥ म० ॥

भजन ४६३

टेक—सब दोज़ख में जाओगी, पर पुरुष भोगने वाली ।
यह योवन दिन चार तुम्हारा, इक दिन उड़ जावेगा सारा ।
यारबाश कर जाय किनारा, फिर पीछे पछुताओगी ।
जब मुंह की उड़ जाय लाली ॥ पर० १ ॥
उड़ गया जोबन सूखी चमड़ी, पल्लै रही न कौड़ी दमड़ी ।
भूल जाओगी गाना ठुमरी, फिर किसे नाज़ दिखाओगी ।
हुई भीख मागने वाली ॥ पर० २ ॥
टुकड़े मांगोगी घर २ के, कुत्ते भुकाओगी दर २ के ।
रोओगी आंसू भर २ के, जिन २ यारों के जाओगी ।
देवेंगे सौ २ गाली ॥० ३ ॥
एकको छोड़ अनेक का करना, वेश्या बनकर पर धन हरना

आखिर होगा दोज़ख सहना, पड़ी वहां दुख पाओगी।
अय हमल गिराने वाली ॥ पर० ४ ॥

जितना पर पुरुषों को चाहो, उतना ध्यान खुदा में लाओ।
भवसागर से पार हो जाओ, स्वर्ग धाम पाओगी।
बनो धर्म कमाने वाली ॥ पर० ५ ॥

उत्तम नारी वही कहावे, एक पती व्रत धर्म निभावे।
शिक्षा यह 'यशवन्त' सुनावे, कभी नहीं सुख पाओगी।
जो अब भी न होश सँभालो ॥ पर० ६ ॥

भजन ४९४

टेक—कहां गये वे दिन बुढ़िया-बोल।
तब तू धारत ही यातन पै, सुन्दर रूप अतोल।
अब तो जंग जरा की लागी उड़ गयो जोबन झोल ॥
कहां गये० ॥ १ ॥

श्वेत भये सारे कचकारे, पटके कलित कपोल।
भूल गये नयना कमनैती, झूल गये कुच गोल ॥
कहां गये० ॥ २ ॥

जिन पै वारत है जीवन धन, मन की खिड़की खोल।
आज न ताकत तिन-अंगन को, ये रसिया बिन मोल ॥
कहां गये० ॥ ३ ॥

अब क्यों डगमगाति डोलत है, इत उत डामाडोल।
सब तजि भज 'शंकर' स्वामी को, पीट प्रेम को ढोल ॥
कहां गये० ॥ ४ ॥

भजन ४९५

टेक—नागिन बनकर डस जायगी, इस बार वधू की चोटी।
सटकार कोरे कचे इसके, जब जी पर लोटेंगे जिस के।

तब क्या प्रमाण रहेंगे तिसके, बंधन में कस जायगी।
मतवाले की मति मोटी ॥ इस० १ ॥
भ्रकुटी कुटिल कमान बनेगी, बंक विलोकनि बान बनैगी।
भाल भैरवी तान बनेंगी, हा हिये में धस जायगी।
फड़केंगी बोटा बोटी ॥ इस० २ ॥
नीकी नाक अधर अरुणारे, गाल कपोल पीन कुच प्यारे।
कृश कटि पृथस नितम्ब निहारे, उर पुर में बस जायगी।
बन व्याधि बड़ी छबि छोटी ॥ इस० ३ ॥
नित नीके शृंगार करेगी, भावों कर भरमार करैगी।
प्यारे कहि कहि प्यार करैगी, नस नस में गस जायगी।
लड़कों की लोटा पोटी ॥ इस० ४ ॥
ठुमक २ ठगनी ठग मन को, छिन २ छार करैगी तन को।
छल कर छीन धनी के धन को, और ठौर फंस जायगी।
मुख मोड़ छोड़ हित खोटी ॥ इस० ५ ॥
पोच पजारैगी तन गरमी, लोग कहेंगे कूर कुकरमी।
शिर पै नाचैगी बेशरमी, लोक लाज बस जायगी।
फिरना फिर फेंक लँगोटी ॥ इस० ६ ॥
नगर नारि तजरे नर नरकी, भोग यथा विधि करनी घरकी।
सुखदा सीख मान 'शंकर; की, धर्म ध्वजा खस जायगी।
मत पी विष रस की लोटी ॥ इस० ७ ॥

दादरा ४६६

टेक—पिया रण्डी के घर मति जाया करो।
धन योवन न प्यारे लुटाया करो ॥ पि० ॥
शेर—चकले में जब न जाते थे सुन्दर था यह बदन।
रण्डी से दिल लगाते ही मिट्टी हुआ यह तन ॥
पीछे होता है क्या पछताया करो ॥ पि० १ ॥

शैर—सूरत जो पेशतर थी वह सूरत नहीं रही ॥
चहरे पै नाम को भी वह रौनक़ नहीं रही ॥
तेल कितना ही अब तुम लगाया करो ॥ पि० २ ॥
शैर—गालों में झांई पड़ गई रंगत बदल गई।
आते हुये न देर जावनी भी ढल गई ॥
दवा लाला हकीमों की खाया करो ॥ पि० ३ ।
शैर—सुख से जो चाहो ज़िन्दगी अपनी बिताना तुम।
फंद में इन के भूल के आना कभी न तुम ॥
वर्ना नाहक यूं ही दुख उठाया करो। पि० ४ ॥

दादरा ४६७

टेक—यह डस जायगी, काली नागिन है रंडी।
शैर—सारा यह वीर्य्य चूसके कर देगी तुम्हें ठूंठ।
आतिश भी होगी देखना निकलेगी फूट फूट ॥
सब काया तुम्हारी यह नाश जायगी ॥ का० १ ॥
शैर—खुशी व ब्याह काज में रण्डी नचाओ मत।
सब हो गये बर्बाद दें औरों को नसीहत ॥
सब शेखी तुम्हारी यह घुस जायेगी ॥ का० २ ॥
शैर—अपने ही वीर्य्य से हुई पैदा जो रंडियां।
लड़की और बहिनें सारी हैं अपनी ही रण्डियां ॥
बस येही तुम्हारे मन बस जायेंगी ॥ का० ३ ॥
शैर—कहता ये 'धारमलाल' ज़रा सोच लो मन में।
जो कुछ हुआ सो होगया शर्माओ अब दिल में।
जाती इज्ज़त तुम्हारी यह बच जायगी ॥ का ०४ ।

भजन ४६८

टेक—पग धरते हो जाय पार है, पर नार कटारी पैनी।

सिर पर चढ़ी कैसी शैतनी, तकता जिससे वस्तु बिरानी।
तेरा तकै गैर अभिमानी, जाना तेरा धिक्कार है।
निशदिन सहता बेचैनी ॥ पर० १ ॥
देही का जौहर नासानी, मूरख दे ताकत जिस्मानी।
ऐसा पड़ा बुद्धि पर पानी, कहलावे बदकार है।
पड़े बहुत मुसीबत सहनी ॥ पर० २ ॥
अधरम करता ना शरमावे, निशदिन पापी पाप कमावे।
हो पीड़ित जब हर गुण गावे, यह पूरा मक्कार है।
कर माला बगल में छैनी ॥ पर ३ ।
देही में वह घमक रहेना चेहेरे पर वह चमक रहेना।
दिल में दिलेरी तनिक रहेना. यह कारन, व्याभिचार है।
सिर मोल फ़जीहत लेनी पर० ४ ॥

गज़ल ४६६

लानत २ है तुम्हें रंडी के जो माते हुये।
शर्म तो कुछ लाइये रंडी के घर जाते हुये॥
पीते हो मद्य भटियों में शाम को जा जा के तुम।
ज़रा घिन लाते नहीं गोश्त को खाते हुये॥
पीके मद्य बेहोश होकर सुध बिसारी देह की।
नालियों में मुंह गढ़ा कुत्तों को मुतवाते हुये॥
पहुँचे फिर वेश्या के दर फाटक में डाले हाथ को।
कैसे खुश होते है धन रंडी पै लुटवाते हुये॥
घरकी नारी यां तड़पती आप वां करते हराम।
सोचते नहिं ये अमोलक वीर्य छिनवाते हुये॥
होगई लड़की अगर रंडी के तुम्हारे बीर्य से।
डुब मरना देख उसे व्याभिचार करवाते हुये॥
या अगर लड़का हुआ पैदा हो वो नुतफ़े हराम।

क़ौमका दुश्मन बनेगा, गाय कटवाते हुये ॥
इसके मित्रो जहां तक बेशक इसको रोक दो।
शादी आदि में भी रोको इसको बुलवाने हुये ॥
सोच लीजै सब तरह जो कुछ कि इसके नुक़्स है।
धूक 'बदयासिंह' फिर बुलाओ इतना समझाते हुये।

दादरा ५००

टेक—रंडीबाज़ी में दौलत लुटाओ मती।
शैर—जो रंडियों के पास जा दिल शाद करोगे ॥
तो अपने घर को आपही बर्बाद करोगे।
माने मानो निकट इनके जाओ मती ॥ रंडी० १ ॥
शैर—गर रंडी के पास ही तुम जाके मरोगे।
बीमारियों का ज़ार हो दुख पाके मरोगे ॥
खुद ब खुद जान दुख में फंसावो मती ॥ रंडी०२ ॥
शैर—ऐ दोस्तो मत रंडी की राल चाहिये।
पैसा जो ज्यादा बढ़ गया दीनों को बांटिये ॥
नीच क़ौमों से मुंह में थुकाओ मती ॥ रंडी०२ ॥
शैर—सच्ची यह बात जानियेगा 'रूपराम' की।
ये रंडियां हैं घोड़िया बस बेलगाम की ॥
गिरा देवेंगी चढ़ने को जावो मती ॥ रंडी० ४ ॥

[२०] जुवारियों की शिक्षा।

भजन ५०१

टेक—इसे कभी न खेलो यार जुये का खेल बुरा है रे।
भूप युधिष्ठिर जुआ खेल कर हुये बड़े लाचार।
मारे मारे फिरे मित्र- वर, सकट सहे अपार। जु० १ ॥
राजा नल भी जुआ खेल कर, राज पाट गये हार।

सहित दमयन्ती नारि सहे दुख, कीजे ज़रा विचार ॥ जु० २
ऐसे ऐसे महाराज भी हुए बहुत बेज़ार ।
तो फिर क्या औक़ात तुम्हारी, सुनो सकल सर्दार ! जु३ ॥
'रूपराम' कहे जुआ न खेलो, समझाऊं हर बार ।
सत्यानाश करेगा इक दिन यह जुआ बदकार ॥ जु० ४ ॥

ग़ज़ल ५०२

किमारबाजी अज़ीज़ो छोड़ो, तुम्हारे हक़ में बुरी बला है।
ख्याल करलो नलो दमनका जोरंज झेला और दुखमिला है॥
ध्यान देकर जरा तो सोचो, क्या करनाचाहिये औरक्याहोकरते
पड़े हो क्यों आबरू के पीछे, जोसुस्त चेहरा दिलबुज़दिला है॥
जो अच्छी चाहो तो यार मानो, बुरा फेल है भुला दो दिलसे।
कहीं बाजी हरादी प्यारे, फिर ऐसा कोई न मिल सिला है॥
जुआरियों का जो होती हालत, किसी सेमुतलक छिपी नहीं।
और उनकी स्त्री दें जान कुढ़ २, के सुख हर्गिज नहीं मिलताहै॥
आराम खोओ खरीदो दुख को, बुरी बला है बचो ए मित्रो।
तुम्हारे हित कहे है झुन्नी' जुआ नहीं गम का क़ाफ़िला है॥

दादरा ५०३

टेक-त्यागो खेल, जुआ को भाई।
जब से इसको खेलन लागे, बहुतक हानि उठाई जु० १ ॥
जिस जिसने इसको खेला है, पूँजी तलक गवांई ॥ जु० २ ॥
सांझ सवेरे रोज़हि घरमें, होती खूब लड़ाई ॥ जु० ३ ॥
जाय जुआ में सब धन खोवें, बैठ करें रोवाई॥ जु० ४ ॥
मिलता नहीं जब पैसा उनको, चोरी करत जाई। जु० ५ ॥
पकड़े जाने पर फिर उनको, बांध पुलिस लेजाई ॥ जु० ६ ।
आखिरकार नतीजा यह हो, सड़कै जेल में जाई ॥ जु० ७ ।

बहुतन को हमने देखा है हारे अपनी लुगाई ॥ जु० ८ ॥
सर्वस हारि खेल में अपना, करै मजूरी धाई ॥ जु० ९ ॥
अगर जीति जाते हैं तो फिर, खूबहि उड़ै मिठाई ॥ जु० १० ॥
पर हार पर तुरत नारिकी, नथुनी तक बिकजाई ॥ जु० ११ ॥
इस प्रकार सब सम्पति नाशी, लेते खाक लगाई ॥ जु० १२ ॥
लड़के वाले सबहि त्याग कर, बनमें कुटी रमाई ॥ जु० १३ ॥
कीर्ति नफ़ा इन दो में, उनके कुछ भी हाथ न आई ॥ जु० १४ ॥
तुमको होश न आया अब तक, सब शुभ कर्म नशाई ॥ जु० १५ ॥
"सागरसिंह" की मानो विनती, अब कुछ समझो भाई ॥ जु० १६ ॥

(२१) स्त्री शिक्षा ।

गज़ल ५०४

पुत्रियो ! विद्या पढ़ने के हेतु अलसाना नहीं ।
जा समय जाता रहा, वह हाथ फिर आता नहीं ॥
सीखलो प्यारी कला कौशल, पठन पाठन अभी ।
ऐसा अवसर और भी है, तुमको फिर पाना नहीं ॥
यह समय अन्मोल है, मत मुफ़्त में खोओ इसे ।
व्यय करो शिक्षा में तो, पीछे हो पछताना नहीं ॥
द्वेष ईर्षा आदि मिथ्या-वाद चंचलता तजो ।
नम्र रहना स्वप्न में, अभिमान दिखलाना नहीं ॥
शील लज्जा तुम न त्यागो, सत्य मृदु भाषण करो ।
भूल कर प्यारी बुरी संगत में तुम जाना नहीं ॥
पीठ पीछे मत करो निन्दा, किसी की पुत्रियो ।
दूसरे के औगुणों को, चित्त में लाना नहीं ॥
ध्यान अपने दूषणों का, दूसरों के गुणों का ।
द्वार उन्नति का है प्यारी, तुमने यह जाना नहीं ॥

प्रीति भक्ती, दान, दया, सत्यता और धृत क्षमा।
सज्जनों के गुण यही हैं इनको विसराना नहीं॥
सर्व कामों में बनो, उत्कृष्ट राखो मन सुखी।
भीरुता भारी परिश्रम में भी दिखलाना नहीं
प्रात अरु सन्ध्या समय, कृष्णा भजो जगदीश को।
धर्म पथ से पैर प्यारी, अपना विलगाना नहीं॥

ग़ज़ल ५०५

पुत्रियों गुण सीखलो, जिससे तुम्हारा मान हो।
प्रेम से विद्या पढ़ो, तब लाभ सच्चा ज्ञान हो।
हार हँसुली और कड़ा कंगन से कुछ शोभा नहीं।
हो दया शोभा हृदय की, कर की शोभा दान हो।
गुणवती कन्या के तन पर, कोई भूषण हो न हो॥
जगत् में पूजित है वह, सर्वत्र जिसका मान हो॥
विद्या देवी ही की सेवा, में सदा मन दीजिये।
कामना पूजें सभी, कन्या गुणों कल्यान हो॥
गुणनियों की पांति में, एक मुर्खा रहती है यों।
राज हंसों में कोई इक काक ज्यों अज्ञान हो॥
काम दुनियां के सभी, निर्भर हैं प्यारी ज्ञान पर।
इस लिये सुख चाहती हो, तो चतुर सज्ञान हो॥
लोक में है पूज्य विद्या, देखलो 'कृष्णा' विचार।
अन्त में भी इसके द्वारा, लाभ पद निर्वान हो॥

लावनी ५०६

प्यारे पिता, पुत्रवर, भाई बन्धु आदि जो सारे हैं।
ससुर, जेठ, देवर पति पुरजन, जो जगबीच हमारे हैं॥
दया-दृष्टि करिये थोड़ीसी, सुनिये हम क्या कहती हैं।

अबला होकर सबलों के घर, किस प्रकार हम रहती हैं ।
कितने ही तुम मजिस्ट्रेट जज, न्यायासन के अधिकारी ।
बड़े शरम की बात ! दुःख जो, पावें तुम से ही नारी ।
अब तक रहीं पेट में डाले, दुख अपने भारी भारी ।
पर अब नहीं सही जाती है, विपति मर्म कृन्तनकारी ॥ २ ॥
अपनी दशा याद करते ही, फटा कलेजा जाता है ।
निकल पेट के भीतर से वह मुंह में आ आ जाता है ॥
किया कौन अपराध हाय कुछ नहीं समझ में आता है ।
निरपराध निर्बल नारी गण, वृथा सताया जाता है ॥ ३ ॥
यदि न जगत् में होवें हम तो, नाश नरों का होजावे ।
रक्खी रहे बुद्धि, विद्या, बल, काम नहीं कुछ भी आवे ॥
ध्रुव, प्रह्लाद, व्यास, शंकर ने, जन्म हम्हीं से पाया है ।
मनुज रत्न जो हुए सभी को, हमने गोद खिलाया है ॥ ४ ॥
जिस घर में हम नहीं, शीघ्र ही, बियावान होजाता है ।
क़दम हमारे पड़ते ही वह, नन्दन बन-बन जाता है ॥
दुख में हम जी जान होमकर, साथ तुम्हारा देती हैं ।
तुम्हें खिलाकर रूखा सूखा, जो बचता खालेती हैं ॥ ५ ॥
"जहां हमारा आदर होता, वहीं देवता करते वास ।
जहां निरादर होता वह घर, होजाता है सत्यानाश" ॥
देखो खोल पोथियां अपनी, यह मनुजी की बानी है ।
तुम में से किसने किसने यह गई यथाविधि मानी है ॥ ६ ॥
सच पूछो तो हम, हे भाई, अपने घर की महरानी ।
खुशियों में हम खुशी मनावें, दुख में ज़रा न घबरानी ॥
पड़ने पर विपत्ति हमसे हो, मिलता तुम्हें दिलासा है ।
'भीरु' बनाया तिस पर हमको, तुमने अजब तमाशा है ॥ ७ ॥
इज़्ज़त और आबरू सारी, जिस पर तुम इतराते हो ।
सोचो ज़रा बन्धुवर प्यारे, उसे कहा से पाते हो ॥

अगर नेक चलनी में हम से, ज़रा भूल हो जाती है।
चाहो यतन करो तुम लाखों, फिर न हाथ वह आती है॥ ८॥
पति को देव तुल्य हम मानें, बच्चों की भी दासी हैं।
सेवा सदा करें नहिं सोचें, भूखी हैं या प्यासी हैं॥
धर्म-कर्म तुम जिसे पुकारो, उसे हम्हीं में पाओगे।
सोचो समझो अभी नहीं तो, फिर पीछे पछताओगे॥ ९॥
यदि अभाग्य वश अपने पतिका, चिर वियोग दुख पाती हैं।
परिणामों पर ध्यान न देकर, जीती ही जल जाती हैं॥
दुराचरण में तुम्हें देख रत, बिलख बिलख रह जाती हैं।
वश कुछ नहीं करें क्या तुमसे, केवल क्षा हा खाती हैं॥ १०॥
पैदा जहां हुई हम घर में, सन्नाटा छा जाता है।
बड़े बड़े कुलवानों का तो, मुंह फीका पड़ जाता है॥
कन्या नहीं बला है कोई, यही चित्त में आता है।
किसी किसी के ऊपर मानों, वज्रपात हो जाता है॥ ११॥
हे भगवान! भला फिर क्यों तुम, हमें हाय उपजाते हो।
क्या न हमारे लिये ठिकाना, कहीं और तुम पाते हो॥
नारी, नर, दोनों ही जग में, यदि प्रभु तुम्हीं पठाते हो।
तोकहिये किसलिए दयामय! हमको निरे दुखातहो॥ १२॥
जो बच गईं मौत के मुंह से, जल्द बड़ी होजाती हैं।
माता, पिताबंधु वर्गों के, हुक्म स्वदेश बजाती हैं॥
काम महा मैले घर के सब, करने में न लजाती हैं।
जो कुछ मिलजाता खा पीकर, खुशी २ सो जाती हैं॥ १३॥
कूड़ा, करकट, बर्तन चौकी, गोबर सदा उठाती हैं।
शिक्षा और कला-कौशल में, इतना ही गुन पाती हैं॥
जो विद्या पुरुषों को सुखकर, सुधा सदृश मंगलकारी।
वही हमारेलिए विषमविष, बिमल बुद्धिका बलिहारी॥ १४॥
पढ़े लिखे जो नहीं जिन्हों ने शिक्षा नहीं कभी पाई।

इनके साथ बात तक करते, सकुचाते हो हे भाई ॥
पर हम जो घर में ही रहतीं, जिन से सब सुख पाते हो।
उन्हें मूर्ख रहने में क्यों तुम, ज़रा नहीं शरमाते हो। ॥७१॥
सबके सब दिन नहीं बराबर जाते, इस में नहीं विवाद।
कभी अवश्य मिलेगी हम को भी दुनियां में चुप की दाद ॥
है हम को विश्वास हृदय से आगे वह दिन आवेगा।
जो अन्याय होरहा उसका, सब हिसाब चुक जावेगा ॥ ७१ ॥

ग़ज़ल ५०७

स्त्री का जग में भूषण, पतिव्रत ही है भाई।
सन्मुख हैं इसके भूषण, सब तुच्छसे दिखाई ॥ १ ॥
नारी के वास्ते हैं व्रत, भी न कोई जग में।
पति ही की एक सेवा, उसको है सुख दाई ॥ २ ॥
पति की टहल में रहतीं, जो नारियां हमेशा।
उसको न कोई जग में, दुर्लभ है वस्तु भाई ॥ ३ ॥
चाहे कुरूप, लंगड़ा, लूला बधिर पति हो।
स्त्री के वास्ते पर वह, देव सा दिखाई ॥ ४ ॥
ऐसे पती को पाकर, करती हैं सो निरादर।
सहती विपति भारी, पड़ती हैं नर्क जाई ॥ ५ ॥
सेवा पति की तज, भूतों को पूजती हैं।
भइया मदार, भैरव, ढिग दौरि २ जाई ॥ ६ ॥
सैयद व देवरागाज़ी, हरदेव और माजी।
चामुडा व जखईया, चुकरा है लेता खाई ॥ ७ ॥
बिल्कुल खिलाफ़ विधिके इनसबकाजानोपूजन।
संडों को पुजनारी, पाती हैं जग हँसाई ॥ ८ ॥
गंधारि व सावित्री, दमयन्ती और सीता।
दुर्गावती सुमित्रा, जिस की है कीर्ति छाई ॥ ९ ॥

पतिव्रत धर्म ही से, पाई है कीर्ति "सागर"
यश कौमुदी है अपनी, संसार में उड़ाई ॥ १० ॥

भजन ५०८

टेक—बिन स्त्री शिक्षा प्रचार के, तुम को नहीं सुख सरसाई ।
पति है बी-ए-एम-ए- भाई, पत्निहिं गिनती तक नाहिं आई ॥
नित उठि घर में होत लड़ाई,
अरु दैनिक व्यवहार में, नित दुखही दुःख दिखाई ॥तुमको० १।
विना विद्या हुई मूरख सारी, पतिव्रत धर्महि दीन्ह निसारी
रही न पति की आज्ञाकारी,
सारो प्रेम बिसारकै, है फँसती दुखः में जाई ॥ तुमको० २ ॥
लीलावती सुमित्रा नारी, विद्यावती गार्गी भारी ।
अनुसुईया अरु मैत्री सारी,
विद्याहि खूब प्रचारकै, दी कीर्ति चहुं फैलाई ॥ तुमको० ३ ॥
कन्या शाला खुले यहाँ हैं, स्त्री शीक्षा होत जहाँ हैं ।
पढ़ने भेजो उन्हें तहां हैं,
"सागर" खूब पढ़ायकै, मूरखता देव भगाई ॥ तुमको० ४ ॥

गजल ५०९

देखो तो प्यारी बहिनों क्या है दशा तुम्हारी ।
गई भूल शुभ करम को फँसकर भरम में सारी ॥
पतिव्रत धर्म भूलीं कर्त्तव्य था जो तुम्हारा ।
पति छोड़ पूजे पत्थर ईंट व वृक्ष झारी ॥
लाज़िम था सेवा करना सास और ससुर की बहिनों ।
पर व्याही पीछे पहिले होती हो उन से न्यारी ॥
अपने कुटुम्बियों से करती हो पर्दादारी ।
पर हाट बाट में तुम फिरती हो मुंह उघारी ॥

सासु ननद से बहिनों रखतीं हो नित्त लड़ाई ।
सब रीति प्रीति बहिनों तुमने कहाँ विसारी ॥
वेदों का ज्ञान भूलीं विद्या विहीन होकर ।
ईश्वर भजन को तज कर गाती निर्लज्ज गारी ॥
सारी कुरीतियों को स्वीकार करती दिल से ।
पर अच्छी विद्या, वहिनों तुमको नहीं है प्यारी ॥
सेवक की है यह विनती धारण करो वही गुण ।
यश हो जगत् में वहिनों निश दिन रहो सुखारी ॥

दादरा ५१०

मेरी बहिनों दशा निज सुधारोरी ।
डूबी जात है भारत नैया मिलकर इसे उभारोरी ॥ मे० ॥
बहुत सोई अब निद्रा त्यागो, उठो आंख उघारोरी ॥ मे० ॥
वल विद्या में पहिले निपुण थी अब कहा हाल तुम्हारोरी ॥ मे० ॥
सीता दमयन्ती कुंती गार्गी, इनकी ओर निहारोरी ॥ मे० ॥
जल्दी देश की रक्षा करो तुम, प्रभु का लो सहारोरी ॥ मे० ॥
सेवक की ये विनय है बहिनों, पतिव्रत धर्म को पालोरी ॥ मे० ॥

भजन ५११

भारत में कितनी होगई, विदुषी पतिव्रता नारी ।
क्षत्रानी मरती थीं शानपर, असमत की तरजीह थीं-जानपर ।
अपने कुल की आन वान पर, विष का प्याला पी गईं ॥
रूपावती कृष्णकुमारी ॥ विदुषी० १ ॥
कमलावती सती सावित्री, विद्यावती और सर्व सुन्दरी ।
सती वीर बाला और गौरी, पति की साथी होगईं ॥
जलकर परलोक सिधारी ॥ विदुषी० २ ॥
राज पाट सुख सम्पति छोड़ा, सकल पदार्थों से मुख मोड़ा ।

साथ पती का पर नहीं छोड़ा, प्रसिद्ध जगत् में होगई ॥
दमयन्ती जनक दुलारी ॥ विदुषी० ३ ॥

नील देवी और सुन्दर बाई, दुर्गा उर्मिला तारा बाई।
मीना मोहनी, चंचल थाई, लड़ी समर में सिंहवत।
पुरुषों से अछुन कुमारी ॥ विदुषी० ४ ॥

विद्योत्तम विद्यावती नारी, कुन्ती गार्गी और गंधारी
सुलभा और मन्दालसा सारी, पुरुषों से बाज़ी ले गई ॥
लीलावती गणिताधारी ॥ विदुषी० ५ ॥

धन भारत की क्षत्रानो, सती सिरोमणि धर्म की खानी ॥
अटल ध्वजा जग में फौरानी, सेवक ऐसी होगई ॥
भारत की राज दुलारी ॥ विदुषी० ६ ॥

भजन ५१२

टेक-ध्यान धर देखना जी नहीं औलाद मिले पूजन से !
कब्र ताजिये जिन्द फरिश्ते, कितनेहु पूजो प्यारी।
बकरा मुर्गा मेंठा काट कर, वनी फिरो हत्यारी ॥ १ ॥
चाहे पूजो काली माई, या पूजो चामुण्डा।
चाहे स्यानेन को बुलवा कर, बाँधो गले में गन्डा ॥ २ ॥
पूजो मियां और मसानी, आक ढाक जंजाला।
दिन और रात न्हलावो पत्थर तौउ न मिले नन्दलाला ॥ ३ ॥
धुला बुझा के घर में जोगिया, जाहिर, पीर मनालो।
चाहे पोप जी को बुलवाकर, दुर्गा पाठ करालो ॥ ४ ॥
छुपक छिपक कर सास ससुरले, कितना ही माल लुटादो।
स्याने दिवाने लुच्चे गुन्डे, पूरी भात खिलादो ॥ ५ ॥
रामचन्द्र की आज्ञा मानो, यही वेदकी शिक्षा।
अशुभ कर्म तज पतिव्रत धारो, सुफल होय जय कुक्षा ॥६॥

भजन ५१३

टेक—इस मिट्टी की दीवार को, तुम माता बतलाती हो।
आप गढ़ी और आप बनाई, चूना मिट्टी आप लगाई, हरे
कहां से इसमें माता आई, लेकर कुल परिवार को,
जिसको पूजन जाती हो ॥ तुम माता० ॥
जिस माता ने जन्म दिया है, कष्ट सहे सुख तुम्हें दिया है हरे
उसका कभी न नाम लिया है, भूलके उस उपकार को।
क्यों मूर्ख कहलाती हो ॥ तुम माता० ॥
पति पड़ा पानी बिन तरसे, तुम जाती हो निकल कर घरसे,
ईंट न्हलाती हो आदर से, पूजो चूढ़े चमार को
बेटे उनसे चाहती हो ॥ तुम माता० ॥
कहीं साधु मुष्टन्डे, कहीं बंधाओ पीर के गंडे, हरे
देखके तुम उनके हथकंडे, लुटा दिया घरबार को,
फिर पीछे पछताती हो ॥ तुम माता० ॥
पति की टहल करो चितलाई, दोनों लोक में हो सुखदाई, हरे
शिक्षा यह यशवंत ने गाई, तज अपने शृंगार को,
तुम क्यों धक्के खाती हो ॥ तुम माता० ॥

भजन ५१४

टेक—तुम उत्तम कर्म बिसार के, फँस गईं भरम में सारी।
छोड़ दिया विद्या का पढ़ना, अपने पतिकी सेवा करना-हरे
जा नीचों के पैरों पड़ना, तन मन धन सब वार के,
सब लाज और शरम उतारी ॥ फँस गईं० ॥
पति की सेवा नहीं कमावे, पत्थरों पर पानी छिड़कावे-हरे
मन्दिरों में जा धक्के खावे, बुरी दृष्टि डारके।
तुम्हें देखें दुष्ट पुजारी ॥ फँस गईं० ॥

मढ़ी मसानी पूजन जाती, जा भावों के गले कटवाती-हरे
घर में शरम हजूर कहलाती, बैठी पारदा धारके।
मेलों में फिरें उघारी ॥ फँस गई० ॥
भवसागर जो तरना चाहो, वेदों के मार्ग पर आओ-हरे
एक पातिव्रत धर्म निभाओ, कहे यशवन्त पुकार के।
नहीं दुःख भोगोगी भारी ॥ फँस गई० ॥

भजन ५१५

विनय सुनिये करतार, अवतर हाल हमारी।
जन्मतही शोक मनाते, विद्या नहीं हमें पढ़ाते ॥
करें शूद्रों में शुमार ॥ अ० ॥
मोहिंवेंचि २ धन लावें, करि गौ बध पाप कमावें।
बने पूरे हत्यार ॥ अ० ॥
वालक बूढ़ों की शादी, करि २ करते बरबादी ॥
बढ़ा जिससे व्यभिचार ॥ अ० ॥
हम अबला अलख जगावें, रो रो कर आयु बितावें।
बहे अँसुओं की धार। अ० ॥
जब हरी थी भूमि हमारी, यह ऋषियोंकी फुलवारी ॥
स्वयम्बर का था प्रचार ॥ अ० ॥
यह खुदगर्ज़ी चली जब स, सब आश्रम बिगड़े तब से।
दुखों की है भरमार ॥ अ० ॥
गर चाहो वही ज़माना, संतति हों भीम समाना।
बुद्धि बल अपरम्पार ॥ अ० ॥
अब खुदगर्ज़ी को त्यागो, प्यारो निद्रा से जागो।
वेगि सुधि लेहु हमार ॥ अ० ॥
जो "रूप" पार जाना है, भवसिन्धु थाह पाना है।
गहो कर में पतवार ॥ अ० ॥

राग बिलावल ५१६

जागिये पुनीत पर्म पत्नी पति प्यारी ॥ टेक ॥

इगन में न नींद भरौ, आलस छल कपट हरौ। सत्यमांहि चित्त धरौ, धर्म करहु जारी। १॥ विविध वृन्द गुंज भरें, कुटकुर सुर कण्ठ धरें। पण्डित उपदेश करें, धार्मिक शुभकारी ॥ २॥ वेदभान जग कृपाल, निकसौ अतिही विशाल। दूर भयौ तिमिर जाल, कपट निशा सिधारी ॥ ३॥ धर्म को प्रचार भयौ, थावू भवजाल गयौ। चतुर्दिश प्रकाश छयौ, चेतो नर नारी ॥ ४॥

लावनी ५१७

दोहा—हाय भारत वर्ष, तेरे जन्मी ऐसी स्त्री।
शुद्ध ब्रह्म विसार के, पूजन लगीं सब पत्थरी ॥
अपने पुरुष को छोड़के, अन्य पुरुष की सेवाकरें।
सण्डे मुसण्डे लुच्चे गुण्डे, पोप के पैरों पड़ें ॥

टेक—सुन २ के मिथ्या कथा यह भारत नारी।
गई भूल भ्रम में उत्तम क्रिया सारी ॥

चौक १

पड़े शब्द कान में जब से मिथ्याकारी।
शुद्ध ब्रह्म छोड़ लगी पूजन झुंड और झाड़ी ॥
गई पतिव्रता का भूल अर्थ हत्यारी।
रखने लगीं करवा चौथ व्रत निराहारी ॥
यह वेद धर्म्म की रही न आज्ञाकारी।
गई भूल भ्रम में उत्तम क्रिया सारी ॥

चौक २

था सास स्वसुर की सेवा करना भारी।
यह व्याही पीछे होगई पहिले न्यारी॥
रहे अपने कुटुम्ब से मुख पर पल्लू डारी।
और हाट बाट में फिरती नित्य उघारी॥
यह विवाह काज में दें निर्लज्जा गारी।
गई भूल भ्रम में उत्तम क्रिया सारी॥

चौक ३

यह जच्चा हो जब खावे न औषधकारी।
फिर हो प्रसूत तब करती झाड़ा झाड़ी॥
जब हो बच्चों को विस्फोटक बीमारी।
यह स्थान सीतला सींचें भर २ झारी॥
हैं इनके यत्न बच्चों के लिये कटारी।
गई भूल भ्रम में उत्तम क्रिया सारी॥

चौक ४

यह व्यर्थ लड़ाई लावें मोल उधारी।
और सास नन्द से रहती ताड़म ताड़ी॥
रहें इसी अग्नि में जलती नित्य अनाड़ी।
सब रीति प्रीति की बुद्धी दूर विसारी॥
रहा सत् असत का इनको नहीं विचारी।
गई भूल भ्रम में उत्तम क्रिया सारी॥

चौक ५

हैं आर्य्य कुल !! नहीं इनको विद्या प्यारी।
यूंही सिठनी पिटनी में खोई आयु सारी॥
यह मन्दिर शिवालों में फिरैं हैं मारी २।

उन्हें पाप दृष्टि से घूरें दुष्ट पुजारी ॥
यह स्वांग श्मशानों में हो जायें व्यभिचारी।
गई भूल भ्रम में उत्तम क्रिया सारी ॥

चौक ६

नहीं अपनी सन्तानों को तनिक सुधारी।
रहीं खेल कूद में जो हैं कन्या, कुमारी ॥
नहीं उनको सिखावें कोई कर्म हितकारी।
गुणहीन वह होकर पावें नाम गँवारी ॥
यह भारत में कर रही हैं अन उपकारी।
गई भूल भ्रम में उत्तम क्रिया सारी ॥

चौक ७

कहां गई द्रोपदी सीतादि सम नारी।
जो महा क्लेश के बीच धर्म नहीं हारी ॥
जिन के अब जाएं सभा में नाम पुकारी।
करो उनके ग्रहण गुण सुधरे बुद्धि तुम्हारी ॥
कहे ख्याल नवलसिंह वेद धर्म प्रचारी।
गई भूल भ्रम में उत्तम क्रिया सारी ॥

ग़ज़ल ५१८

सुता नारी पढ़ें विद्या, अहो आनन्द भारी हो।
परस्पर प्रीति हो पैदा इक २ का आज्ञाकारी हो ॥
पशु तुल्य मत बनो बहनो न झेलो जुल्म की सख्ती।
हर इक जा बनके आदर का तरीका फिर से जारी हो ॥
सुशिक्षित क्यों न हो सन्तान छोटी ही अवस्था से।
यदि माता को विद्या के गुणों से खबरदारी हो ॥

गृह कार्य्य के धन्दों से मिले अवकाश और फुरसत।
होय घर साक्षर पत्नी सब उसकी ज़िम्मेदारी हो॥
पुरुष स्त्री में हो विद्या तो गुज़रे प्रेम से आयू।
धुरे हों दो बराबर, जब सुबक रफ़्तार गाड़ी हो॥
कुरीति जो हटावें हम रहैं घर में वह ज्यूं की त्यूं।
पढ़ी घर हो यदी पत्नी तो क्यों यह शरमसारी हो॥
जो कहता है पढ़ी औरत, हो खुद सर और व्यामिचारी
वह गुण विद्या के क्या जाने, निरक्षर भ्रष्टाचारी हो॥
लीलावती गार्गी मैत्रेयी इस्त्री भारत का भूषण थीं।
तअज्जुब है कि विद्या पढ़के नारी दुराचारी हो॥
कहो किस्से कहानी और कुसंत को यदि विद्या।
निस्सन्देह यह अविद्या ही सबों को विघ्नकारी हो॥
पढ़ाओ धर्म्म मर्यादा सुनाओ सत्त की गाथा।
हो 'धर्म' आयु सफल उनकी वृथा न दिन गुज़ारी हो॥

गजल ५१६

सुनो ऐ भाइयो, गृहस्थी लोगों! घरों की अपने दशा सुधारो। गृहस्थी रूपी है एक गाड़ी, है स्त्री पुरुषोंके जिस में पहिये। चलती नहीं एक पहिये की गाड़ी, मिलाकर दोनों धुरे सम्भालो॥ ये हम ने माना कि तुम पढ़े हो, और कुछ न कुछ पदवी भी लिये हो। मगर यह मूर्खा स्त्री तुम्हारी, घरों में चलकर ज़रा निहारो॥ सुनो०॥ पदारथ जितने हैं यह जगत में, दिये हैं ईश्वर ने सबको यकसां। हैं स्त्री पुरुषों के हक़ बराबर, मनू ने क्या २ लिखा विचारा॥ सुनो०॥ किया न सत्कार देवियों का घरों में स्त्री हैं जो तुम्हारा। फिरो हो कब्रों का सर झुकाय, इन्हीं से मिथ्या क्यों मूड़ मारो। सुनो०॥ तुम्हारा आधा शरीर मुर्दा, हुआ पड़ा है यह प्यारे भाइयो। हुई है

अर्धांग की बीमारी, दवा करा करके शीघ्र टारो ' सुनो० ॥ घर अपनी स्त्री चुड़ैल भुतनी, बताके रंडी के पैर पूजो। फिर इससे बढ़ करके पाप क्या है, इस प्राण प्यारी को, क्यों विसारो ॥ सुनो० ॥ जो अपने पुत्रों को चाहते हो, कि हम ऋषी मुनि बनावें उनको। तो पहले माता सुधरनी चहिये, कि जिस के सांचे में पुत्र ढालो ॥ सुनो० ॥ विनय यह बसुदेव कर रहा है पढ़ाओ पुत्री बनाओ देवी। तब ही यह सुधरेगा देश हमारा, गृहस्थाश्रम की नींव डालो ॥ सुनो० ॥

गजल ५२०

देखियो बहनो ! यह पहले कैसी नारी तुम में थीं।
वेद की ज्ञाता विवेकी धर्म धारी तुम में थीं ॥
लोपामुद्रा गार्गी सुलभा सी विदुषी हो चुकीं।
शास्त्रार्थ पुरुषों से कीन्हें ऐसी नारी तुम में थीं ॥
शोक है बहनो ! कि तुम सौ तक न गिनती जानतीं।
यहां कभी लीलावती सी गणितधारी तुम में थीं ॥
हो चुके धृतराष्ट्र राजा जोकि नयन विहीन थे।
उनकी रानी दुख में साथी रहने वाली तुम में थीं ॥
दिल में यह सोचा मुझे आंखों का सुख धिक्कार है।
बांध के पट्टा रहा वह गान्धारी तुम में थीं ॥
चित्तौड़ के राजा रतन की रानी थी पद्मावती।
रूप गुण सम्पन्न और प्रीतम की प्यारी तुममें थीं ॥
धोखे से राजा रतन को बादशाह जब ले गये।
क़ैद से लाई छुड़ा कर, शस्त्रधारी तुम में थीं ॥
हो गईं जलकर सती अपने पती के साथ में।
धर्म व्रत छोड़ा नहीं वह वीर रानी तुम में थीं ॥
जिसने क्षात्रिय धर्म की इज्ज़त पिता की राखली।

ज़हर का प्याला पिया कृष्णाकुमारी तुम में थीं ॥
राज को छोड़ा गई सीता पती के साथ में ।
राम की प्यारी जनक जी की दुलारी तुम में थीं ॥
कहां गईं विद्युत्तमा मन्दालसा विद्याधरी ।
धर्म की शिक्षक पती की आज्ञाकारी तुम में थीं ॥
और भी संयोगता शैव्या व विमला हो गईं ।
धर्म की ख़ातिर जिन्हों नें जान वारी तुममें थीं ॥
देती थी शिक्षा पतीको और बचाती थी पाप से ।
लंका में मन्दोदरी रावण की प्यारी तुम में थी ॥
कहता है वसुदेव बहनो ! हो गई हालत ख़राब ।
छोड़ दी वह रीति जो भारत की जारी तुम में थी ॥

ग़ज़ल ५२१

चेतो री देश बहिनो, भानू निकल के आया ।
इस नींद ने तुम्हारी, तुमको ये दिन दिखाया ॥ १ ॥
आंखें तो खोल देखो कितना प्रकाश फैला ।
पर तुमको हाय बहिनो, आलस्य ने दबाया ॥ २ ॥
चहुँ ओर नर औ नारी, निज काम में लगे हैं ।
क्यों तुमने आज अपना, कर्तव्य सभी भुलाया ॥ ३ ॥
विद्या न बल न बुद्धि, नहिं धर्म है सती का ।
स्वामी का साथ छोड़ा, घर में दरिद्र आया ॥ ४ ॥
तुमही थीं राज लक्ष्मी, अन्नपूर्णा भावनी ।
तुमही थीं जगत जननी, तुमही थीं योग माया ॥ ५ ॥
वो लोपामुद्रा सीता, और गारगी कहां हैं ।
उन शुद्ध देवियों के, क्यों वंश को लजाया ॥ ६ ॥
वेदान्त की थीं ज्ञाता, मन्दालसा कि जिसने ।
बचपन में बालकों को वैराग था सिखाया ॥ ७ ॥

अंजनी पवन की रानी, विद्या गुणों की खानी।
हनुमान जैसा योधा, निज गोद में खिलाया ॥ ८ ॥
धन्य २ सुमित्रा तुमको, धन्य हो तुम्हारी शिक्षा।
तुमने ही ब्रह्मचारी, लक्ष्मण यती बनाया ॥ ९ ॥
रघुवरको समझो दशरथ, सीताको माता जानो।
लक्ष्मण को बन में जाते, उपदेश यह सुनाया ॥१०॥
अय सान्तनू की रानी, गंगे सुपुत्र तेरा।
आदित्य ब्रह्मचारी, भीषम पिता कहाया ॥११॥
जो हो चुके हैं योधा, योगी बली वो दानी।
जितने ऋषी मुनी थे, सबको ही तुमने जाया ॥१२॥
बहनो री अपने तपसे भारत जगत गुरू था।
तुमने ही आज इसको, हिन्दोस्तां बनाया ॥१३॥
जिस गृहस्थाश्रम, को सब स्वर्ग मानते थे।
वो अब नरक का द्वारा, तुमने है कर दिखाया ॥१४॥
भारत की देवियों तुम, किस कोने में छुपी हो।
किसका गृहस्थ तुमने, अब स्वर्ग जा बनाया ॥१५॥
कह दे तूही हिमलाय, तेरी ये चोटियां को।
ऋषियों से क्यों हैं खाली, लेकर कहां छुपाया ॥ १६ ॥
भारत की हाय माता, कर याद रो रही है।
स्वामी ने देके धीरज, कुछ उसको है बँधाया ॥ १७ ॥
ब्रह्मचारिणी बनो तुम, यज्ञोपवीत धारो।
पढ़ने वेद तुम को, अधिकार अब दिलाया ॥ १८ ॥
कह वासुदेव बहिनों, अपनी दशा सुधारो।
जिससे कि यश तुम्हारा, जावे जगत में गाया ॥ १९ ॥

दादरा ५२२

विद्या पढ़ने पढ़ाने पै रूठी है सास ॥

न रोटी खावे न मुह से बोले, गाली सुनाती है मुझ को पचास ॥ विद्या० १ ॥ संध्या की पुस्तकका देखने न देवे, पढ़ने न देवे सत्यार्थ प्रकास ॥ वि० २ ॥ स्त्री सभा में जो जाने को पूछूं, तो मुझ को दिखलावे लाठी सा वांस ॥ विद्या० ३ ॥ विद्या पढूंगी मैं सन्ध्या करूगी, अपने करूंगी न दिल को उदास ॥ विद्या० ४ ॥

गजल ५२३

मेरी माता मेरी बहिनो तुम्हें क्यों नींद प्यारी है।
उठो दिन भी निकल आया न सोने की यह बारी है॥
दयानन्द की दया से वेद भानू फिर निकल आया।
तुम अपन घरको अब सुध ला कि हालत क्या तुम्हारी है।
कहां खोई वह गान्धारी पतिव्रत पालने हारी।
कहां गई गारगी रुक्मन कहां सीता सी नारी है॥
न दीखे ह य वह पद्मावती सी नार इस घर में।
चिता में भसम हो जिसने धर्म पै जान वारी है॥
कहां हैं माता वह अंजनी कहां वह कौशिल्या सी जननी।
जिन्हों के वीर पुत्रों का यह जाने दुनिया सारी है॥
वह थीं सब वीर माताएं जिन्हों ने वीर ही जाये।
मगर अब आप की सन्तानकी हालत हो न्यारी है॥
है काहिल सुस्त और डरपोक बेटा भूत से डरता।
खिलन्नी और चिलन्नी मूर्खा कन्या कुंवारी है॥
हाय! है शोक कि बहिनो नहीं तुम जानती बिलकुल।
तुम्हीं से आर्य-कुल की झलकती ज्योत भारी है॥
उठो अब और करो हिम्मत दिखाओ पहिले से करतब।
बनी क्यों मूर्खा क्यों बुद्धि और विद्या विसारी है॥
ऐ छदालाल नारी वंश जब सुधारेगा-सुख होगा।

नहीं तो अब गृहस्थी घर की बस मिट्टी ख्वारी है ॥

लावनी ५२४

टेक—हमारे सुनो बचन दे कान, वृथा क्यों होती हो हैरान।

करौ पति की ताबेदारी, बनो प्रिय प्रीतम की प्यारी।
लेउ उर सत्य वचन धारी, परस्पर करौ धर्म जारी।
दोहा-जो कोई कुछ भी कहै, सो सब की सुनि लेउ।
निजगुण पर अनगुण सदा, इनपर चित्त न देउ॥
कभी मत बोलौ सख्त जुबान, हमारे सुनो बचन दे कान ॥१॥

बहुत गैरों से बतलाना, बुरा है घर पर का जाना।
नाचना उचित न नचवाना, न ब्याहों में गाली गाना ॥
दोहा-माता भगनी हम सखी, पिता पुत्र पति भ्रात।
इन सब के सनमुख बकौ, बड़े शरम की बात ॥
जरा तो गहौ लाज कुलकान, वृथा क्यों होती हो हैरान ॥२॥

करौ नितसत्य धर्म के काम, मुफ्त क्यों होती हो बदनाम।
कपटपन अब तजदेव तमाम, वेद नीतों के यही कलाम॥
दोहा-भूका नंगा मंगता, घर आवे जो कोय।
यथा शक्ति कुछ दीजिये, महापुन्य फल होय॥
बने सो करौ सखी सन्मान हमारे सुनो वचन दे कान ॥३॥

कभी मत देखो सजनी रास, कृष्ण सखियों का विविध बिलास।
न इनपर करौ कभी बिश्वास, झूठक खड़े न होना पास॥
दोहा ये सब कल्पित कल्पना, महा कपट कर-जाल।
झूठी बातें छोड़ के, भजमन चरण कृपाल॥
तुम्हें बाबू बतलावे ज्ञान, हमारे सुनो वचन दे कान ॥४॥

दादरा ५२५

टेक-त्यागो २ ये खामे खयाली रे।

गैरों की शान देखके जलना नहीं अच्छा।
घरवालों से हरशै पै मचलना नहीं अच्छा॥
सीखो २ न रस्में निराली रे। त्यागो २ ये० १॥
तुम नाच तमाशों के कभी पास न जाना।
मेले में धक्के खाके न इज्जत को गमाना॥
कीजे २ न लाली को काली रे। त्यागो २ ये० २॥
अशियाय नशेदार का पीना खराब है।
नाहक़ में ये बेफायदा लेना अज़ाब है॥
बच्चो २ न तुम मतवालीरे। त्यागो २ ये० ३॥
कीजे सरूर दूर व रक्खो गरूर तुम॥
और रिश्तेदारियों में बहुत जाव नहीं तुम॥
सोचो २ बड़ी और वाली रे। त्यागो २ ये०४॥
छोटी उमर में शादियां करना नहीं अच्छा।
बेफ़ायदा बरबादियां करना नहीं अच्छा॥
गाओ २ ने ब्याहों में गाली रे। त्यागो २ ये० ५॥
आपस में मेल जोल से दिल शादमा रहो।
बेजा किसी से बात न जिनहार तुम कहो॥
बोलो २ जबां को सम्हाली रे। त्यागो २ ये०॥
बदचाल चलन के न कभी पास खड़ी हो।
सोहबत में रहौ उसके जो विद्वान पढ़ी हो॥
दाखे २ कितीबें नै जाली रे। त्यागो २ ये० ७॥
जो २ हैं बुरी बात चित्त उन पै न दीजे।
बाबू की नसीहत पै ज़रा गौर तौ कीजे॥
आवै २ चिमन में बहाली रे। त्यागो २ ये० ८॥

भजन ५२६

टेक-तुम अपना धर्म बिसार के, किस गफ़लत में सोती हो।

जो तुम हो कुलवन्त प्रवीना, मत सीखो हुक्के का पीना। जला देय सारा दिल सीना, बद आदत उरधारके, क्यों मुफ्त ख्वार होती हो ॥ किस० १ ॥

जब सजनी पति के घर जाओ, रुदन करो दृग नीर बहाओ ज़रा नहीं दिल में शरमाओ, नाहक़ बीच बज़ार के, क्यों ज़ार ज़ार रोती हो ॥ किस० २ ॥

तात भ्रात भगिनी महतारी, दिवर जेठ पुनि भैनाचारी। बनो सबन की आज्ञाकारी, सास सुसुर भर्तार के, क्यों चरण नहीं धोती हो ॥ किस० ३ ॥

कभी किसी से वैर न कीजै, बुरी भली सबकी सहिलीजै बाबू नित पति पद चित दीजै, बोलो बचन सम्हार के, क्यों वृथा जन्म खोती हो ॥ किस० ४ ॥

भजन ५२७

टेक-तुम सर्व कपट छल त्याग के, प्रीतम से ध्यान लगाओ।

विद्या पढ़ो अविद्या त्यागो, गई रैन ग़फलत से जागो। दूर दुष्ट कर्मन से भागो, दिल जी जान सकोड़ के, सतिस्त्री धर्म निभाओ ॥ प्रीतम० १ ॥

कपट त्याग निज धर्म गहो तुम, कभी न निरजल व्रत रहो तुम। नाहक़ क्यों तकलीफ़ सहो तुम व्रतों से मुख मोड़ के, बच्चों को दुख न दिखाओ ॥ प्रीतम० २ ॥

सकल इन्द्रियां अपनी मारो, मति पर पुरुषन ओर निहारो, भूत प्रेत की आस बिसारो। जाल कपट को तोड़ के, अब सत्य मार्ग में आओ ॥ प्रीतम० ३ ॥

मात पिता को हित कर जानो, सास सुसुर का कहना मानो। पति को पति समान पहचानो, बाबू तन मन जोड़ के, तुम बात मेरी चितलाओ ॥ प्रीतम० ४ ॥

रेखता ५२८

टेक—बदियों में कभी दिलको फँसाना नहीं नहीं।
निजधर्म त्याग लाज गमाना नहीं नहीं॥
कहने में बात झूठ मिलाना नहीं नहीं।
ओछे सखुन जुबान पै लाना नहीं नहीं॥
परपुरुष से प्रिय प्रीति लगाना नहीं नहीं।
दिलदार से कुछ भेद छिपाना नहीं नहीं॥
शेखी घमण्ड दिल में जमाना नहीं नहीं।
बेफ़ायदा किसी को सताना नहीं नहीं॥
लाज़िम क़सम किसी की भी खाना नहीं नहीं।
हरगिज़ खराब राह में आना नहीं नहीं॥
बोला सम्हल के शोर मचाना नहीं नहीं।
अब मैन अविद्या का ज़माना नहीं नहीं॥
गुज़रे हुए का रंज उठाना नहीं नहीं।
बाबू की बात दिल से हटाना नहीं नहीं॥

गजल ५२६

हमेशा धर्म पर चलना चलाना ही मुनासिब है।
जहालत नींद से जगना जगाना ही मुनासिब है॥
अगर तुम चाहती हो खुद व औरों का भला करना।
अविद्या छोड़ना सजनी छुटाना ही मुनासिब है॥
मुस्फ़ा इल्म के दरिया बहम रफ्तार जारी है।
कि गोते हरतरह खाना लगाना ही मुनासिब है॥
बड़ों से और छोटों से बराबर वालियों से भी।
बहर शीरीं सखुन सुनना सुनाना ही मुनासिब है।

ज़रा सी बात बाबू की कृपा कर गौर से सुनना।
अक़लमन्दान से मिलना मिलाना ही मुनासिब है॥

गजल ५३०

किसी को देखकर हँसना हँसाना नामुनासिब है।
बदी की राह में सोना सुलाना नामुनासिब है॥
परस्पर प्रीति की बातें बखानो हर घड़ी हरदम।
बुराई बेसबब करना कराना नामुनासिब है॥
बनो प्रिय धर्म पतिप्यारी करो शुभकर्म नितजारी।
बले बद बात का सुनना सुनाना नामुनासिब है॥
जो तुम हो नार सतवन्ती बड़ी हुशियार कुलवन्ती।
कभी बद काम में लगना लगाना नामुनासिब है॥
हमेशा मानती रहना नसीहत एक बाबू की।
किसी से क्रोध में लड़ना लड़ाना नामुनासिब है॥

दादरा ५३१

टेक—देश की ओर निहारो सखीरी तुम, देश की ओर निहारो
खान पान पुनि वस्त्र अभूषण, सर्व स्वदेशी धारो। सखीरी०
हितचित कर नित तन मन धन से, वैदिक धर्म प्रचारो। स०
चूड़ी छपकल और विदेशी, लिपटे चीर उतारो। सखीरी०
बाबू चाहो देश भलाई. यही निज धर्म तुम्हारो। सखीरी०

छन्द गीतिका ५३२

अब नींद ग़फ़लत से जगो सब भांति भारत भामिनी।
मुखधोय आलस खोय देखो कर्म निज कुल कामिनी॥१॥
लोहा बना पारस व पारस हाय मिट्टी होगया।
अब तो ज़रा तू चेत भारत इस तरह क्यों सोगया॥२॥
निर्बल किया ये देश सारा आनकर परदेश ने।
परदेश ने नाहिं नाहिं हमारे फैशनेबिल भेष ने॥३॥

सीखौ सुधार सुधर्म डालो प्रकृत सर्व हितेश की।
बाबू परस्पर क्रोध तजि कीजै तरक्की देश की ॥ ४ ॥

गजल ५३३

सीता-दर्शन।

अगर सती सीता यहां आज आये।
हमारी अवस्था को यूं देख पाये॥
करे शोक नयनों से आंसू बहाये।
मले हाथ दांतों में अंगुली दबाये॥
कहे भारत नारी यह क्या, हो गया है।
नसीबा तुम्हारा कहां सो गया है॥ १ ॥
हुई कबसे हालत यह ऐसी तुम्हारी।
लगी कब से पापिन अविद्या बिमारी॥
कहो विद्या बुद्धि कहां को सिधारी।
न अब तक दशा तुमने अपनी निहारी॥
तुम्हें देखकर मेरा जी जल रहा है।
जिगर हो २ पानी उधर ढल रहा है॥ २ ॥
यह माना कि तुम पै हुए जुलम भारी।
बने पुरुष भारत के हैं अत्याचारी॥
बनाया तुम्हें देख नारी अनारी।
तुम्हें समझ अबला की दुर्गत तुम्हारी॥
मगर तुम हो देवी हो शक्ति भवानी।
तुम्हीं घर की शोभा तुम्हीं घर की रानी॥ ३ ॥
यह माना तुम्हें पांउ जूती बताया।
तुम्हें कह के शूद्रा न कुछ भी पढ़ाया॥
जो आया बाहर से उसी ने सताया।
मरीं और मिटीं धर्म तुम ने बचाया॥

तुम्हीं में से कई लाख ज़िन्दा जली थीं।
मरीं कूद पानी में सजनी बिकी थीं॥ ४॥

मुझे याद आता है पिछला ज़माना।
धर्म था थे धर्म्मी सभी लोग दाना॥
पहिन धर्म्म विद्या का भूषण सुहाना।
था सब देश का पहिनना एक खाना॥

धर्म्म एक पूजा ज़बां सब की इक थी।
थी इक सब की आशा उपासना भी इक थी॥५॥

थे घर घर हवन यज्ञ नर नारी करते।
धर्म्म-पथ से पांउ उठाकर न धरते॥
सबही मिल के आनन्द रस पान करते।
न आपस में यूं थे वे लड़ते झगड़ते॥

प्रकृति पै ज़ां यूं न देते गृहस्थी।
थे पंच यज्ञ कर्त्ता सभी भारत गृहस्थी॥ ६॥

छुपे वेद पाठा बरहमन कहां हैं।
बतावो वह बलवीर क्षत्री जहां हैं॥
नहीं वैश्य धनवान दानी यहां हैं।
न सेवा पै राज़ी भी शूद्र यहां हैं॥

यह बदला क्यूं भारत का सारा ज़माना।
ऋषि भूमि में हो रहे पाप नाना॥ ७॥

थीं चारों तर्फ दूध की नहरें जारी।
लगे थी मथानी की आवाज़ प्यारी॥
बिलोती दही प्रात भारत की नारी।
यहां गाय पूजक थे नर और नारी॥

न पीने को दूध और न खाने को घी है।
न मक्खन न छाछ और न यहां अब दही है॥ ८॥

कहां वो स्वयम्बर की रीति सिधारी।

कर्म गुण सुभाओं की रीति प्यारी ॥
न देखें महल और न देखें अटारी।
थे वर देखें ना देखें तहसील दारी ॥
परीपक्व अवस्था में होते विवाह थे।
न थे बाल व्याह और न बढ़ते गुनाह थे ॥ ६ ॥
न सोने व चांदी के भूषण थे पियारे।
न गोटे किनारी न सलमें सितारे ॥
न हीरे जवाहर वहु मूल भारे।
सभी लोग पहिचानते गुन थ थारे ॥
विद्या[1] ज्ञान[2] बुद्धि[3] कर्म[4] ही प्रधान थे।
थे सब शुद्ध आचारी और बुद्धिमान थे ॥ १० ॥
न विधवायें घर घर थीं जो अब यहां हैं।
नहीं निज को मालूम कैसे जहां (जहान) है ॥
बहुत नन्हीं बच्चा बहुत सी जवां हैं।
फटे देख सीना व निकले धुआं है ॥
हाहाकार से कांपता आसमां है।
दुखित और कलेशित है पीड़ा महां है ॥ ११ ॥
यहां सारे गृहस्थी भी थे ब्रह्मचारी।
मनु आज्ञा पालें रहें शुद्ध आचारी ॥
न था देश भर में कोई दुर अचारी।
कहां आज पहिली सी पतिव्रता नारी ॥
जिन्हें पति निन्दा का सुनना ही पाप था।
पाप भी था कैसा गऊ का ही शाप था ॥१२॥
जहां मिलके रहते इकट्ठे घराने।
जहां मान पाते सदा थे स्याने ॥
बुजुर्गों की आज्ञा सदा छोटे मानें।
न चूल्हे गियारह (११) न थे तेरह (१३) खाने ॥

न होती थी सासो बहू में लड़ाई।
भावज ने नन्दी को जहरें खिलाई ॥ १३

ये हलदी से मुखड़े हुए क्यूं तुम्हारे।
ये रोगी क्यों हैं आज सारे के सारे ॥
करें नित्य औषध जो सेवन विचारे।
कोई वैद्य आ इनके दुःख को निवारे ॥
न साहस है तुम में जो बिगड़ी सँवारो।
बनो वैद्य और अपने दुख को निवारो ॥ १४ ॥

न बिगड़ा है कुछ भी अगर तुम सँभालो।
अगर चाहो जीवन तो पढ़लो पढ़ालो ॥
पाउं को ठहराकर जरा पीछे चालो।
पराचीन साँचे में जीवन को ढालो ॥
नहीं तो तुम मृत्यु की राह जारही हो।
समझ जीवन बुटी यह विष खा रही हो ॥१५॥

कोई कृष्ण पैदा तो करके दिखा दो।
किसी देवकी साती को तो जगा दो ॥
चहूं ओर विद्या की धुन को सुनादो।
किसी गायरक्षक को फिर से बुलादो ॥
जनो भीम अर्जुन से बालक प्यारे।
मिटें कष्ट भारत के सारे के सारे ॥ १६ ॥

तुम्हीं में से दुर्गा थी देवी कुमारी।
करी जिसने खुद सिंह की थी सवारी ॥
वह ब्रह्मचारणी तेजस्वी तेज धारी।
जिसे जाने भारत के नर और नारी ॥
मगर अब तो अपने ही साया से डरतीं।
समय था कोई रण में जाके थीं लड़तीं ॥ १७ ॥

कहां गार्गी और लीला सी नारी।
वह विद्याधरी कान विद्या की भारी॥
वह मन्दालसा ब्रह्म ज्ञानिन सिधारी।
दमयन्ती द्रौपदी सती सत्य धारी॥

हो कोई जो तुम में मुझे तो बता दो।
कोई कर्म तो इनसा करके दिखा दो॥ १८॥

भविष्य अब तो भारत का हाथों तुमारे।
उठाओ हैं बलहीन सारे के सारे॥
खड़ा देश केवल तुम्हारे सहारे।
तुम्हारे सिवा कौन दुख को निवारे॥

तुम्हीं में तो बल और तुम्हीं में धर्म है।
कुकर्मी बनें सब तुम्हीं में कर्म हैं॥ १९॥

ऋषि तुमको आया था देवी बनाने।
सभी कष्ट आया था सब के मिटाने॥
अविद्या का अँधकार आया हटाने।
करो उसके जै जै के मिल के ही गाने॥

दयानन्द था प्राण दाता तुम्हारा।
तुम्हारा हमारा नहीं जग का सारा॥

उसी ने है मुर्दों में जीवन को डाला।
सिसकते तड़पते हुओं को सँभाला॥
उसी ने यतीमों को ले गोद पाला।
वह गौओं का था बन के आया गुपाला॥

वह था "दीन" भारत के जीवन का दाता।
करो मिलके जै जै दयानन्द त्राता॥२१॥

(२२) वैदिक विवाह

वर वधू का परस्पर वचन मांगना ।

गजल ५३४

बचन दो सात जब मुझको तभी पत्नी बनाना जी ।
करौ इक़रार पंचों में तो फिर प्रीतम कहाना जी ॥
अगर पत्नी बनाते हो मुझे दिलजान से इस दम ।
तो साहब दोस्ती अबकी हमेशा तक निभाना जी ॥
न रखना कुछ दगा दिल में न रहना बेवफ़ा होकर ।
न कोई बात तुम घर की कभी हम से छिपाना जी ॥
बिला सोचे बिला समझे न मेरा दिल दुखाना तुम ।
किसी तकलीफ़ में मुझ से अलहदा हो न जाना जी॥
बनो हर तौर से साथी रहौ दुख दर्द में शामिल ।
कि मुमकिन हो सके जैसा मेरा पालन कराना जी ॥
जो गर हमराह हों मेरे सखी हमजोलियां जिसदम ।
तौ सब के सामने मेरी न इज्जत तुम गमाना जी ॥
न करना ख्वाब में भी तुम किसी पर नारि से प्रीती ।
मुहब्बत तोड़ कर हम से न ग़ैरों से लगाना जी ॥
वचन जो आज दो मुझको इन्हें वाबू तहे दिल से ।
हमेशा हर घड़ी हरदम न हरगिज तुम भुलाना जी ॥

गजल ५३५

प्रति उत्तर ।

मैं मानूंगा सभी जो आप की ज़ाहिर जुबाँ होगा ।
मगर पैमान मेरा भी तुम्हें करना रवां होगा ॥
कि, यानी जिस तरह तुमने अहद हमसे कराये हैं ।
उसी विध आप को इकरार करना बे गुमां होगा ॥

सदा दिलजान से रहना मददगार दमे आखिर।
तुम्हारे बिन न कोई खास मेरा पासबां होगा॥
गुज़र करना उसी में तुम कि जो कुछ मैं कमालाऊं।
निभाना धर्म का हरतार से हां जाबिदां होगा॥
देखकर शान औरों की न हरगिज तुम हसद करना।
नतीजा रश्क का हरदम खराबी का निशां होगा॥
किसी दुख दर्द आफत में न होना तुम अलग हमसे।
उसी पर बस यकीं करना कि जो मेरा बयां होगा॥
कभी भी गैर मरदों की न लाना ख्वाहिशें दिल में।
मुहब्बत और से करना न तुमको दिलवरां होगा॥
जो इतनी बात बाबू की खुशी से आज मानोगी।
तो फिर खिदमत तुम्हारी में मेरा दिल शादमां होगा॥

गजल ५३६

प्रति उत्तर।

मैं नारी हो चुकी अब से व तुम प्यारे हुए अब से।
सनम् बस हाथ पकड़ो चश्म के तारे हुए अब से॥
मैं पत्नी आप की स्वामी व तुम प्रीतम पिया मेरे।
जिगर दिल जान के साथी व रखवारे हुए अब से॥
तुम्हारे हुक्म की तामील करना फर्ज है मेरा।
हमारे जान पर बर आप दिलदारे हुए अब से॥
हुई फस्ले खिजां रुखसत की आमद है बहारों की।
शुरू बस बुलबुलों के खूब चहकारे हुए अब से॥
खुशी का वक्त ईश्वर ने य कैसा आज दिखलाया।
अहा दुखदर्द फुरकत के रवा[illegible] हुए अब से॥
बसी है आप की प्रीती जिगर में सरबसर बाबू।
तुम्हारी ही मुहब्बत के तलब गार हुए अब से॥

गजल ५३७

प्रति उत्तर।

मुझे भी आप की गुफ्तार है, मंजूर प्यारी जी।
कि जैसी चाहिये खिदमत करूं पूरी तुम्हारी जी॥
शमैरूगुलबदन गुँचा दहन रश्के चिमन नौसिन।
सरापा नाजनी तुझपर मैं तनमन धन से वारीजी॥
तुम्हारे दिल में कुछ शक हो तो तुम जानों कमलवदनी।
मगर अब देखना प्यारी वफादारी हमारी जी॥
मेरा दिल आपके दिल में चला चाहे, कहीं जाऊं।
रहेगी जानमन हरदम तुम्हारी यादगारी जी॥
जमाया नक्श उलफ़त का जिगरमें आपने कैसा।
कि अब तुम से बिछुड़ने में बड़ी हो बेक़रारी जी॥
समन गुलेनस्तरन गुलेबुन गुले रैहां व गुले लाला।
गुले गुलबांस गुलतुर्रा खिले गेंदाहज़ारी जी॥
गया मौसम खिज़ां का बुलबुलें गायें नये नग़में।
कि बाबू बाग़ में आई अहा कैसी बहारी जी॥

भजन ५३८

प्रति उत्तर।

टेक—बिनती करूं नाथ सिरनाय, मधुरे वचन सुनानेवाले॥
तुमहीं जीवन प्रान अधार। तुमहीं धर्म पिया भरतार।
तुमहीं यार सनम दिलदार तुमहीं पेश दिखाने वाले॥ विन० १
कहतीप्रेम सहित कर जोर। प्रभुजी अस्तुति करूं निहोर।
रखना कृपा दृष्टिमम ओर। दिलका रंज मिटानेवाले॥ विन० २
अबकी बातें भूल न जाना। हितकर पूरी प्रीति निभाना।
हमसे बात न कभी छिपाना प्रीतम पर्म कहाने वाले॥ विन० ३
मैं हूं चरनन की अनुगामी। मेरे सीस मुकुट पति स्वामी।
बाबू पुनिपुनि नमो नमामी। बेड़ा पार लगाने वाले॥ विन० ४

भजन ५३९

प्रति उत्तर।

टेक-मेरी प्यारी पर्म प्रवीन सारा पेश दिखानेवाली ॥

प्यारी शीलवती गुणवान। मम उर शोकहरन दिलजान।
सुंदरवदनी रूप निधान। शीतल शब्द सुनानेवाली ॥ मेरी० १ ॥
तू है गावन मंगल चार। तू है जनन महा सुकुमार।
तुझमें आनँद भरे अपार। बिगड़े काज वनाने वाली ॥ मेरी० २ ॥
खूशरू खुशसखुनी खुशरंगिन। दिलवर दिल अफ़जा अर्धंगिन।
हरदम हरसुखदुखकी संगिन। पूरी प्रीति निभानेवाली ॥मे० ३॥
कैसी तन पर कोमलताई। बोलै मधुर २ मुसिकाई।
बाबा सब विधि मो मनभाई। तेरी अदा हँसाने वाली ॥ मे० ४॥

जोनार आदि के समय के भजन।

लावनी ५४०

टेक-जे साजन आप सब जुरि-मिलि हम द्वारे।
धनि धनि सजनी कैसे बड़ भाग हमारे ॥
इनके कारन अति सुन्दर वस्त्र बिछाओ।
सबको आदर सन्मान सहित बिठलाओ ॥
पुनि जैसा कुछ है भोजन इन्हें जिमाओ।
बहु प्रीति रीति से निज कर ब्यार डुराओ ॥
अति मुदित हुए हम, आप भवन पगधारे।
धनि धनि सजनी कैसे बड़ भाग हमारे ॥-१
किस भांति प्रकाशित करें सुयश मुखगाई।
मन हर्षित करत विनोद प्रेम उर लाई ॥
इस समय यहां क्या आज महा छविछाई।
जो भ्राजमान होरहे नाथ सुखदाई ॥

मानों अकाश में शोभित चन्द्र सितारे।
धनि धनि सजनी कैसे बड़ भाग हमारे ॥ २ ॥
जो भूल चूक देखो कुछ नाथ हमारी।
सो सभी क्षमा कर देउ पर्म हितकारी ॥
अब रखौ लाज महाराज दया उर धारी।
हम हाथ जोड़ कर कहैं सकल नरनारी ॥
तुम कृपा अनुग्रह करौ सुजन सुकुमारे।
जे साजन आप सब जुरि मिलि हम द्वारे ॥ ३॥
जब सुने आप के वचन प्रेम रस पागे।
तब मधुर मधुर धुनि होन बधाए लागे ॥
हम देख तुम्हारा दरस हुए बड़ भागे।
सब किया निवेदन विदित तुम्हारे आगे ॥
बाबू हम सेवक हैं दिनरैन तुम्हारे।
जे साजन आप सब जुरि मिलि हम द्वारे ॥ ४ ॥

दादरा ५४१

बहु विधि ज्युनार दिलसे जिमाओ इनको।
हित से जिमाओ भोजन जिमाओ भोजन।
निज कर कर प्यार दिलसे जिमाओ इनको ॥१॥
आदर सहित करजोरी, सहित कर जोरी।
कीजे सत्कार दिल से जिमाओ इनको ॥२॥
जैसी कहैं ये समधी कहैं ये समधी।
सोई उरधार दिल से जिमाओ इनको ॥ ३ ॥
बाबू करो सब काजा करो सब काजा।
वैदिक अनुसार दिल से जिमाओ इनको ॥ ४ ॥

दादरा ५४२

टेक–इक विन्ती सुनो तुम हमारी जी।
दरशन जनाब हमने कि जब आप के पाए।
मारे खुशी के फूले बदन में न समाए॥
देखी जिसदम सुरतियां तुम्हारी जी॥ इक० १॥
हर तौर से हो आप तो पूरे अमीर हैं।
हम तो तुम्हारे सामने बिलकुल हकीर हैं॥
देखो देखो ज़रा तो निहारो जी॥ इक० २॥
जो कुछ कसूर हम से हुआ हो जनाब मन।
माफ़ी करो तमाम हां आला सहाब मन॥
कीजे हर काम दिल को सम्हारो जी॥ इक० ३॥
दिल का गुबार जोकि है सब छोड़ दीजिये।
किश्ती हमारी शर्म की अब पार कीजिये॥
भला दीजे किनारे उतारो जी॥ इक० ४॥
हम आप के ज़िनहार कभी हैं न मुक़ाबिल।
महाराज आज लाज रखो होके शाद दिल॥
होवें बात दुतर्फ़ा विचारी जी॥ इक० ५॥
अपने मिज़ाज के हो बमूजिम तमाम काम।
कीजे कि जिससे फ़ायदा होता रहे मुदाम॥
कुछ हम को न है उजूदारी जी॥ इक० ६॥
कुछ शिकवा शिकायत का नहीं है मुक़ाम ये।
खुददिल में समझ लीजिये पेखुश कमाल ये॥
हमें बेहतर है खिदमत गुज़ारी जी॥ इक० ७॥
मौजूद है बुरा भला सो पेश नज़र है।
बाबू न क़िसी बात में कुछ हमको उज़र है॥
जैसी चाहो हमें है गँवारी जी॥ इक० ८॥

गजल ५४३

करो अब माफ़ समधी जी खता जो कुछ हमारी है ।
तुम्हारी बात में न हमें ज़रा भी उजूदारी है ॥
कहां तुम बेकरां दरिया कहां हम शबनमीं क़तरा ।
कहां खुरशैदए आलम कहां ज़र्रा शरारी है ॥
कहां तुम सीमज़र गौहर कहां हम ज़ंग आहन के ।
कहां गुल आब का जोबन कहां पौहर बिचारी है ॥
कहां पुर खाक है सरसर कहां बादे सहर खुश्तर ।
कहां मौसम खिज़ां का है कहा फस्ले बहारी है ॥
कहां तारी ज़मीं पर की कहा सर आसमां अनवर ।
कहां मैदान खारों का कहां गुलशन हज़ारी है ॥
कहां कम्बल गदाई का कहां सरताज शाही का ।
कहां बिलकुल तिहीदस्ती कहां परवरदिगारी है ॥
मुक़ाबिल आप के ज़िनहार बाबू हो नहीं सके ।
कहां औक़ात है हमरी कहां इज़्ज़त तुम्हारी है ॥

मुबारिकबाद विवाह संस्कार ।

गजल ५४४

बनी अद्भुत सुगढ़ जोड़ी, भले दुलहा दुलिहन दोनों ।
हैं गोया चांद और सूरज भले दुलहा दुलिहन दोनों ॥
सदा हो कीर्ति इन की, बढ़े बल बुद्धि और लक्ष्मी ।
रहें फल फूलते जग में भले दुलहा दुलिहन दोनों ॥
पती पत्नी का हितकारी, दुलिहन पति आज्ञाकारी ।
मुहब्बत से रहें तत्पर भले दुलहा दुलिहन दोनों ॥
धर्म मर्य्यादा को पालें और होवें सर्व हितकारी ।
निभायें गृहस्थाश्रम को भले दुलहा दुलिहन दोनों ॥
गृहस्थाचार, सद्व्यवहार कुल मर्य्याद का पालन ।

करें यह सप्त पद पालन भले दुल्हा दुल्हिन दोनों ॥
रहैं खुश हर दो जानिव में दुल्हिन दुल्हा के सम्बन्धी ।
उन्हें हो और मुबारिक यह भले दुल्हा दुल्हिन दोनों ॥
दुआ सेवक की है जगदीश पूर्ण ब्रह्म प्रभु से ।
रहैं शादां व खुश खुर्रम भले दुल्हा दुल्हिन दोनों ॥

गजल ५४५

थे वैदिक व्याह दोनों का मुबारिक हो मुबारिक हो ।
सुजनता और सुन्दरता मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
हवन सन्ध्या व गायत्री औ सेवन पंचयज्ञों का ।
परस्पर प्रेम अरु प्रियता मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
तुम्हारी बुद्धि अरु विद्या व पर उपकारता क्षमता ।
सनातन धर्म में श्रद्धा मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
तुम्हारा नियम व्रत दृढ़ता सरलता सत्यता गुरुता ।
सहनता शील अरु समता मुबारिक हो मुबारिक हो ॥
तुम्हारे कुल की उज्जलता दिलेरी शूरता शुभता ।
तुम्हें बलदेव धन प्रभुता मुबारिक हो मुबारिक हो ॥

अभिनन्दन पत्र

गजल ५४६

आज अपने भाग्य की हम क्या बड़ाई कर सकें ।
सींप में सागर कहो कैसे सरासर भर सकें ॥
अगणित अमित आनन्द के चारों तरफ़ सामान हैं ।
श्रीमान समधीजी हमारे द्वार पर महमान हैं ॥ १ ॥
संसार में नर जन्म का हम आज ही फल ले रहे ।
वर बराती सहित समधी दरश सन्मुख दे रहे ॥
कर सकें तारीफ़ क्या अहसान जो हम पर किया ।
तकलीफ़ करके दूर से आकर हमें दर्शन दिया ॥ २ ॥

थक थक रहे रसना विचारी आप के गुण गान में।
थिक गये बेदाम हम भर पूर इस अहसान में॥
यद्यपि हमारी बहुत ही झेली ढिठाई आपने।
तो भी बड़ों की भांति ही करुणा दिखाई आपने॥ ३॥
पाकर दया की दृष्टि को यह थल सुहावन हो गया।
पावन चरण रज से हमारा गेह पावन हो गया॥
होकर मगन सुख में हमारा होरहा गद गद हिया।
समता सहित हे नाथ हमको आपने अपना लिया॥४॥
कर दिया कृत कृत्य हमको है बड़ाई आप की।
ढूंढ़ी मगर हमने कहीं उपमा न पाई आपकी॥
आप तो सच मुच हृदय की वाटिका के फूल हैं।
कर सकें सन्मान क्या हमतो चरण की धूल हैं॥ ५॥
पासंग भी तो है नहीं वैभव सकल संसार का।
बदला चुकावें क्या भला हम आप के उपकार का॥
इस दया के पुंज को अब सहज हो सकते नहीं।
सर्वस्व देकर भी कभी हम उऋण हो सकते नहीं॥ ६॥
यह जान सेवा के लिये सेवक दिया है आप को।
अपना कलेजा काढकर अर्पण किया है आपको॥
दुहिता हमारी प्राण प्यारी जिन्दगी का सार है।
किन्तु सेवा में समर्पण प्रेम का उपहार है॥ ७॥
कह गये विद्वान बुध अन दान वित्त समान है।
प्राण प्यारी वस्तु देना प्रेम की पहिचान है॥
हैं आप तो परिपूर्ण तो भी भेंट स्वीकृत कीजिये।
इस बालिका को प्रेम पूरित पद कमल में लीजिये॥ ८॥
कह सकें अब क्या अधिक हम को अटल विश्वास है।
खिलती हुई जीवन लता परिपूर्ण सर के पास है॥
सर्वदा रखिये दया यह अर्ज़ बारम्बार है।
अब हमें तो आप के ही प्रेम का आधार है ६॥

[२३] बाल विवाह से हानि

गजल ५४७

लड़कपन ही में जो संतति, का अपने व्याह करते हैं।
नहीं शक इसमें वह चिउँटी, के ऊपर कोह धरते हैं। १॥
बरस छै सात के बच्चे, गृहस्थी में फँसा करके।
दुखों में मुब्तिला कर, सुक्ख सारे उनके हरते हैं॥ २॥
अमीरों औ शरीफों के, बहुत बच्चे जवानी में।
शराबी, चोर, व्यभिचारी, जुँवारी, ठग निकलते हैं॥ ३॥
बिला सोचे कि यह बच्चा, जवां होनि पै कैसी हो।
बरोबर देखकर पुत्री को, अपनी व्याह देते हैं॥ ४॥
कृपा से "मित्र" ईश्वर के, अगर वह होगया अच्छा।
नहीं तो देख दुख पुत्री का, निशिदिन हाथ मलते हैं॥ ५॥

भजन ५४८

दुखदाई बाल विवाह से, भारत कैसे सुधरेगा।
जिसके यह न समझ में आई, किस मतलब से हुई सगाई।
उस अबोध बालिका लुगाई, कच्चे बच्चे नाह से॥
क्या जीवन प्रेम करेगा॥ भारत० १॥

यदि वे दम्पति आयु लहैंगे, तो रोगी बलहीन रहैंगे।
नाना संकट शोक सहैंगे, वह जोड़ा किस राह से॥
फिर दुख-सागर उतरेगा। भारत० २॥
मृतक बन्धु मतिमन्द विचारे, रह न सके तनुभार सँभारे।
यदि प्रीतम परलोक सिधारे, तो विधवा की आह से॥
कुल कैसे धीर धरेगा॥ भारत० ३॥

अबतो बालबिवाह बिसारो, वेदों की आज्ञा शिर धारो।
'रामनरेश' स्वदेश सुधारो, इस कुरीति की दाह से॥
सुख गौरव ज्ञान जरेगा॥ भारत० ४॥

गजल ५४६

बचपन की शादियों ने भारत को मार डाला।
ब्रह्मचर्य आश्रम को बिलकुल उजाड़ डाला॥ १॥
जब से यह दुष्ट रीति भारत में पधारी।
उस दिन से वीरता भी मुंह कर गई है काला॥ २॥
पौरुष नहीं है तन में साहस नहीं है मन में।
इसने सभों को एक दम हिजड़ा बना ही डाला॥ ३॥
जिस को जहां में देखो रोगी सभी पड़े हैं।
वीरत्व, धीरता को दुनियां से है निकाला॥ ४॥
बाई प्रमेह होता गठिया भी आ पकड़ता।
चारों तरफ़ से बहता रोगों का है पनाला॥ ५॥
दुःखों को खूब सह कर जाते हैं शीघ्र ही मर।
रोते ही छोड़ कर एक दुखिया बिचारी बाला॥ ६॥
सब ही तरफ़ से उसको घनघोर दुख दिखाता।
कोई नहीं है उस के दुख का बटाने वाला॥ ७॥
इस भांति वह बिलखकर पृथ्वीसे सिरको धुनकर।
उसके लिये है रोती जिसने यह ढँग निकाला॥ ८॥
जो थी पुरानी रीति हे भाइयो यहां पर।
उसको भुला के प्यारे क्यों दुखमें सबको डाला॥ ९॥
सोचो ज़रा विचारो वेदों की रीति पकड़ो।
समझा रहा है तुमको "सागर" निनायें वाला॥१०॥

गजल ५५०

निर्बुद्धि हैं मनुज वह जो बाल ब्याह करते।

इसी कारण से बिगड़ा गृहस्थाश्रम,
रहता घर घर में रोना यही रात दिन।
जहां सुख था सदा बना मातम कदा,
ध्यान देते मगर तुम इधर ही नहीं॥
बढ़ी तादाद विधवाओं की देश में,
हुआ भारत यह ग़ारत इसी पाप से।
धुयें उठते हैं आहों के चारों तरफ़,
खाली इससे बचा कोई घर ही नहीं॥
कम से कम लड़का हो वर्ष पच्चीस का,
और लड़की न हरगिज़ हो सोलह से कम।
लिखा ऐसा मनु जी महाराज ने,
तुमने देखा धर्म शास्त्र ही नहीं॥
चक्र शुश्रुव किताबें जो वैदक की हैं,
वह भी शिक्षा सरासर यही देरहीं,
फिर न मालूम हटधर्मी क्योंकर रहे,
जबकी वेदों तलक में ज़िकर ही नहीं॥
ब्रह्मचर्य से भीष्म पितामह बना,
लाबल्द थ बुजुर्गाना रुतबा मिला,
ब्रह्मचर्य का बल था दयानन्द में,
जिनका सानी कोई भी बशर ही नहीं॥
अब तो मन मानी नादानी छोड़ो ज़रा,
मत करो अपने बच्चों के बचपन में ब्याह।
अगर मानोगे होगा भला आपका,
वरना यशवन्त सिंह का उजर ही नहीं॥

भजन ५५२

टेक-बालों कन्या करैं विलाप, जब से बाल बिवाह हुये जारी।

जो थी फूल फुलन की बारी, करके बाल विवाह की त्यारी ॥
इन बच्चों की गर्दन मारी, जो थे होन हार ब्रह्मचारी ॥ला०१॥
रचके छोटी उमर में शादी, बाला कन्या ब्याह बिठादी।
अब ये किस पर जायं फिरादी, छोटी अबला दीन बिचारी, ला०२
सुनियो पिता और सब भाई, आखिर हम हैं तुम्हारी जाई।
फिर भी तुम्हें दया नहीं आई, कैसी छातीवज्रतुम्हारी॥ला०३॥
तुमको कन्याओं की आह, दिन २ करती जाय तबाह।
फिर भी तजें न बाल विवाह, बुद्धिगई है सबोंकीमारी॥ला०४
झूंठा किया लाड़ और प्यार, अपनी सन्तति लई बिगार।
सारे छूट गये संस्कार, विद्या विमुख हुये नर नारी ॥ला०५॥
स्त्री जाती के अधिकार, तुमने छीने बेशुमार।
इनको बनादिया लाचार, आयु कटे दुःखों में सारी ॥ ला०६॥
इसका हुआ यही परिणाम, घर में नित्य सुबह और शाम।
होवे देवाऽसुर संग्राम, कैसी दुर्गति हुई है तुम्हारी ॥ ला०७॥
अब भी अगर भलाई चाहो, इनको ब्रह्मचर्य सधवाओ।
सच्ची विद्या वेद पढ़ाओ, विदुषी बनें देश की नारी ॥ला०८॥
ऐसे ही पुरुष पूर्ण विद्वान्, होवे इन्द्रियजीत बलवान्।
सीखें वेद धर्म का ज्ञान, हों धर्मज्ञ देश हितकारी । ला०९ ॥
युवती कन्या पुरुष युवा हो, और गुण कर्म स्वभाव मिलाहो
तब ही पाणिग्रहण सच्चा हो, ये है विवाह वेद अनुसारी १०
बिनती 'वासुदेव' की भाई, सुनलो वेद धर्म अनुयाई।
छोड़ो बाल विवाह दुखदाई, जिसने करीदेशकीहानी ला०११

(२४) अमेल विवाह।

भजन ५५३

टेक-पड़ी धूल बुद्धी पै, नहीं करत विचार।

मेरे खरच का इन्तजाम कौन अब करे।
नहीं सासु ससुर हैं कमाने को ॥ ६ ॥
कटजाये जुबां तौ भी न जुबां हिलायँ गी।
लेकिन जिगर की आह तुम्हें खूब रुलायँगी।
चन्द्र, कहत हैं सारे ज़माने को ॥ ७ ॥

दादरा ५५६

टेक–करूं कैसी मैं बलमा निखट्टू मिले।
देखो सुफ़ेद बालों का सब उड़ गया खिजाब।
किस काम का वह अब्र है जिस में नहीं है आब।
यह तो बिलकुल ही लदने को टट्टू मिले ॥ १ ॥
हिलती है नाड़ इस तरह से बूढ़ पीर की।
जैसे मदारी कोई बजाता है डुगडुगी।
देखो बच्चों के घुमाने के लट्टू मिले ॥ २ ॥
फर्मायशी खाना बनाऊं रोज़ दाल भात।
रोटी चबाये किस तरह मुँह में नहीं हैं दांत।
यह तो बिलकुल ही बस दाल चट्टू मिले ॥ ३ ॥
देखे से शक्ल पति की जलती बदन में आग।
'चन्द्र' कहे कि सोचिये किस काम का सुहाग।
हाय बलमां निपट बजर बट्टू मिले ॥ ४ ॥

भजन ५५७

टेक–मित्रो तुम इन्हें निकालदो, जो है कुरीति शादी में।
क्या जाने कन्या बाली ब्याह को, पतिव्रत पाणि ग्रहण राह को, सास स्वसुर क्या जाने नाह को, जबरन ब्याह बिठालदो, रहे चित बाबा दादी में ॥ १ ॥ नाइ विप्र तुम्हारे आवें झूंठी सांची बात बनावें, छै की उमर चौदह की बतावें

थाकट में दक्षिणा डालदो, करें गर्म मुट्ठी चांदी में ॥ २ ॥ पंडितजी को तुरत बुलाया, मकर कुम्भ और मीन मिलाया, गुण कर्म का कुछ ख्याल न आया, पड़वा चौथ निकालदो, क्या लोगे बकवादी में ॥ ३ ॥ अब तुम सोच समझ कर भाई, बस्म रोवक करो सगाई, रामचन्द्र कहते समझाई, इस कुरीति टालदो, रहो ईश्वर की यादी में ॥ ४ ॥

ग़ज़ल ५५८

जईफ़ी में जो शादी कर के खुद दिल शाद करते हैं।
वह इक मासूम पर वेदाद गर वदाद करते हैं ॥ १ ॥
फ़क़त कहने के हैं शौहर हक़ीक़त में न शौहर हैं।
वह अपने नाम से घर औरों का आबाद करते हैं ॥ २ ॥
अदम के रास्ते में आप तो बैठे हैं ऐ साहब।
किसी की ज़िन्दगी बेफ़ाइदा बर्बाद करते हैं ॥ ३ ॥
कहैं अन्धा न क्यों उनको भला बतलाइये साहब।
जो अपना ऐसे बुड्ढे को ग़जब दामाद करते हैं ॥ ४ ॥
हज़ारों खूने नाहक हो रहे हैं यों ज़माने में।
मिटाओ यह रिवाज ऐ मित्र हम फ़र्याद करते हैं ॥ ५ ॥

दादरा ५५९

(एक बुड्ढे और बेटी वाले की वार्तालाप)

बुड्ढा—मानो मानो यह बातें हमारी रे।
बेटीवाला—कैसे मानूं मैं बातें तुम्हारी रे।
बुड्ढा—इस वक़्त उम्र लड़की की क्या मेहरबान है।
बेटीवाला—पन्द्रह वर्ष की उम्र है बिलकुल जवान है।
कैसे मानूं मैं० ॥ १ ॥
बुड्ढा—क्या कुछ है मर्ज़ी आपकी हमसे करो इज़हार।

बेटीवाला—तुम से मैं सत्य कहता हूं लूंगा मैं छः हज़ार।
कैसे मानूं मैं० ॥ २ ॥
बुड्ढा—थैली यह चार हज़ार की कर लीजिये शुमार।
बेटीवाला—कौड़ी न कमती होवेगी मत कहना बार २॥
कैसे मानूं मैं० ॥ ३ ॥
बुड्ढा—कल आपके ही शहर का कहता था एक बशर।
हुसनो शबाब अच्छा मगर आंख में कसर।
मानो मानो यह० ॥ ४ ॥
बेटीवाला—अब खाना खान आप मेरे घर में जायेंगे।
शंका मिटेगी आपकी जब देख आयेंगे।
कैसे मानूं मैं० ॥ ५ ॥
बुड्ढा—लो अब तो कहना मानलो यह लेलो ५ हज़ार।
बस बाक़ी मुझ को छोड़ दो मैं तो हूं ताबदार
मानो मानो यह० ॥ ६ ॥
कवि—आखिर को छः हज़ार में ही फ़ैसला हुआ।
बुड्ढे का बिवाह होगया दो दिन में मर गया।
अब तो मानो नसीहत हमारी रे ॥ ७ ॥
कैसे शरम की बात है पे ऊंचे कुल के लाल।
न आकबत का ख़ौफ़ न दुनियां का कुछ ख्याल ॥
अब तो मानो० ॥ ८ ॥
अब अक़्ल से तो काम लो यह रस्म टालदो।
"चन्द्र" का कहिना मानलो लालों के लाल हो ॥
अब तो मानो० ॥ ९ ॥

भजन ५६०

दोहा—रहे न कौड़ी पाप की, ज्यों आवे त्यों जाय।
लाखों का धन पायके, मरे न कफ्फन पाय ॥

टेक—कन्या कर रही हाहाकार– गहरा द्रव्य कमाने वाले ॥
क्यों तुम पाप बढ़ावनहार, आखिर नहीं है इस में सार।
मरती पृथ्वी इसके भार, ऐसा पाप कमाने वाले ॥ कं० ॥
कहते मात पिता और भाई, जिनको शर्म ज़रा नहीं आई।
बनगये सबके सभी कसाई, जीवित मांस बेचनेवाले ॥ कं० ॥
लंगड़ा लूला अति बेहाल, बूढ़े बालक का नहीं ख्याल।
होना चाहिये मालोमाल, कन्या नाश कराने वाले ॥ कं० ॥
कन्या जब बिधवा होजाय, उठती तन में कैसी लाय।
बनती जब है कैसी हाय, हिय में आग जलाने वाले० ॥ कं ॥
टिकता पैसा यह नहीं पास, करलो मन झूठा बिश्वास।
आखिर होय नरक का बास, सत्यानाश करानेवाले ॥ कं० ॥
यह गहलोत करे अभिलाष, जिसका देश जोधपुर बास।
काटो दुहिता की गलफांस, मोटे नाम धराने वाले ॥ कं० ॥

रसिया ५६१

टेक—बुड्ढे ने ब्याह रचाया है।
डगमग चलत दांत सब गिरगये अद्भुत होगई काया है। बु०
आखों से नहीं देख पड़त है, सर पै काल मंडराया है। बु०
डाढ़ी नाक एक में मिल गये, सारा बदन सुखाया है। बु०
ऐसे समय ब्याह की सूझी, तन उमंग में आया है। बु०
बुड्ढा मानत नहीं मनाये, बुद्धि ज्ञान बिसराया है। बु०
सत्तर के हैं बुढ़ाऊ बाबा, सात बरस की जाया है। बु०
धनि धनि तुमको बुड्ढे बाबा, अच्छा जोड़ मिलाया। है बु०
जामा पहिना पगड़ी बाँधी, सिहरा खूब बनाया है। बु०
मूँछें कटवा पट्ठा बनि गये, सुर्मा खूब लगाया है। बु०
दूलहा बनिकै चढ़े पालकी, अच्छा स्वांग बनाया है। बु०
ब्याह हुआ जब पत्नी आई, फूला नहीं समाया है। बु०

चार दिनाकी शौक निकलगई, कुछनहीं बनत बनायाहै। बु०
कछु दिनन में मर गये बुड्ढ, पत्निहिं रांड बनाया है। बु०
त्रिया रोवे उन पुरुषों को, जिसने ब्याह रचाया है। बु०
करन लगी व्यभिचार अन्त में, कुल को दाग लगायाहै। बु०
इन बातन को दूर हटावो "सागर" ने समझाया है। बु०

दादरा ५६२

टेक—बुड्ढा बाबा को आती न बिलकुल शरम।
शैर-मुंह में तो एक दांत ना, सिर के सफेद बाल।
ये ब्याह कर के क्या करें, कीजे ज़रा ख्याल॥
दो दिन पीछे होगी, बदन की भसम॥ बुड्ढे० १॥
शैर—चलने में आप सकते हैं, लाठी का सहारा।
दिन रात आप करते हैं, हलवे से गुज़ारा॥
किसी कन्या का पत्थर से फोड़े करम॥ बुड्ढे०॥
शैर - गर्दन पै सिर का बोझ, संभाला नहीं जाता।
है दम का मर्ज, बोल निकाला नहीं जाता॥
देखो कैसा बिगाड़े, ये अपना जनम॥ बुड्ढे ३॥
शैर—जब से यहां पर होने लगे बुड्ढों के विवाह।
ऐ ,रूपराम' तब से, मुल्क हो गया तबाह॥
ये तो रक्खें नरक में, उछल के क़दम॥ बुड्ढे० ४॥

भजन ५६३

बुड्ढे ने करालिया विवाह।
सुनलो यह दुखभरी कहानी॥
जिसके मुंह में एक न दांत, खाता मांड दाल या भात।
सीधी नहीं निकलती बात, मुंह पर फेन फिरे उतरानी॥
तनकी झूल पड़ी है खाल, दोनों चुचक गये हैं गाल

सनसे हुए शीश के बाल, चलता डगमग चाल दिवानी ॥
आंख धुँधली बहरे कान, सारा अंग बात की खान।
ताक रहा दिन रात मसान, अब कब आवेगा अभागी ॥
मुआ हाय ! भारत का सांड, करतो गया एक को रांड।
राम नरेश उसे ले भांड, धिक २ नचा करै मनमानी ॥

(२५) विधवा विलाप।

गज़ल ५६४

किस जन्म का यह बदला लिया आपने,
प्राण प्यारे मुझे कुछ बता तो सही।
आंखें खोलो ज़रा देखो मेरी तरफ़,
टुक जबां अपनी इक बार हिला तो सही ॥
किस तरह से कटगी यह बाली उमर,
कोई इसका उपाय बता तो सही।
क्या अधर में ही डोबोगी किश्ती मेरी,
इक किनारे पै इस को लगा तो सही ॥
जो जो वायदे किये थे बिवाह के समय,
ज़रा उनको दोबारा दुहरा तो सही।
मैंने देखा ही क्या था तुम्हारे सिवा,
जो किया था प्रण सो निभा तो सही।
छोड़े जाते हो मुझ को कहां पर बलम,
पास अपने मुझे तो बुला तो सही।
यूं न दर दर रुलाओ सताओ पिया।
मेरी मिट्टी ठिकाने लगा तो सही ॥
क्या खता मेरी दो दिन में ही देखली,
यह भरम मेरे दिल से मिटा तो सही।

मुझे छोड़ो न तनहा खुदा के लिये,
कुछ मेरे हाल पर रहिम ला तो सही ॥
जिस जबान् रस भरी से बुलाते मुझे,
ज़रा कबार फिर भी बुला तो सही।
सारे वस्तर व भूषण यहाँ पर पड़े,
अपने हाथों से मुझ को पहना तो सही ॥
ऐसा पत्थर का हृदय भी क्यों कर लिया,
मेरे रोने पर कुछ तरस खा तो सही।
रोती रोतो के कांटे गले में पड़े,
घूंट पानी की मुझको पिला तो सही ॥
छाड़ा किस के सहारे यहां पर मुझे,
नाम उसका मुझे भी बता तो सही।
हा! यह सूरत उमर भर दिखेगी नहीं,
एक बार अपना मुखड़ा दिखा तो सही ॥
ऐसी करली है मेरे से क्यों बेरुखी,
ज़रा गर्दन को ऊपर उठा तो सही।
मैं तो हारी जगा करके यशवन्त सिंह,
अब ज़रा तू ही आकर जगा तो सही ॥

गजल ५६५

माता पिता ने मुझको दुलहन बना के मारा।
दो दिन बहार गुलशन मुझ को दिखाके मारा ॥
अंग में मेरे था बटना मातम का बस लगाया।
बाली उम्र में खूनी महंदी लगा के मारा ॥
मैं तोड़ देती कँगना होता जो होश मुझको।
बस मेरे हाथ कोरा कँगना बँधा के मारा ॥
शादी हो अष्ट वर्षा गौरी के तुल्य है यह।

बस ऐसे पापियों ने गाथा रचाके मारा ॥
एहे ! सुहाग का सुख मैं देख भी न पाई ।
प्रीतम तेरे सिधारे मुझको सुना के मारा ॥
सहरे के फूल ताज़ा मुरझाने भी न पाये ।
जब कि सुहाग मेरा घोड़ों चढ़ाके मारा ॥
फेरों की चोर मैं हूं ए धर्म वीर बेशक ।
नहीं और सुख मैं देखा दुःखने रुलाके मारा ॥

गजल ५६६

करूं क्या गैर का शिकवा मुक़द्दर अपना दुश्मन है ।
जिसे समझी थी मैं रहबर वह ही तो पूरा रहज़न है ॥१
पिता बनकर भी गोदी में उठा कर देता है सूली ।
जिसे कहती थी मैं माता वह भी तो काली नागन है ॥२
यह बारहसाला की शादी करी जो साठ साला है ।
लिखा है किस जगह ऐसा बता तू कैसा ब्राह्मण है ॥ ३
मुझे जिस घर में व्याही है वहां भी फेर दी झाड़ू ।
करूं दो रोज़ का फ़ाका हुआ कांटा मेरा तन है ॥ ४ ॥
दलालों ने ग़ज़ब ढाया दीवारों तक को भी चाटा ।
उजाड़ा बाग़वां बन कर मेरा अफ़सोस गुलशन है ॥ ५ ॥
कहो इन ज़ालिमों को अब मैं अपने किस तरह समझूं ।
जिन्होंने दीदो दानिस्ता उतारी तन से गरदन है ॥ ६ ॥
कहां जाऊं कहूं किससे सितम है "चन्द्र" यह मुझ पर ।
पति के जीते जी भी देखलो हासिल रंडापन है ॥ ७ ॥

ग़जल ५६७

सुध लेउ हर हमारी हम पर है कष्ट भारी ।
रो रो के यों पुकारी विधवा विपत की मारी ॥

दिन रात दुःख भरती मन में न धीर धरती ॥
बिन आई मौत मरती भूखी मरें विचारी ॥
सुध लें न बाप भाई सब ने दिया भुलाई ।
करती फिरें पिसाई हम से भला भिखारी ॥
सधवा मजे उड़ावें हलवा व खीर खावें ।
तो भी हमें जलावें मन से दया बिसारी ॥
निज पति की है जु प्यारी ओढ़ें वे चीर सारी ।
गोटा टका किनारी हम फिर रही उघारी ॥
माता पिता थे दुश्मन वैरी थे नाई बामन ।
बाली बयस में कामिन करके करी दुखारी ॥
पति को विरह सतावे फिर धीर को बँधावे ।
कामाग्नि तन जलावे दे देह को पजारी ॥
दुख अति उठा चुकी हैं बेड़ा डुबा चुकी हैं ।
लज्जा गवां चुकी है वह बैठ कर अटारी ॥
करती हैं भ्रूण हत्या खो कर दया व लज्जा ।
कितनी हुई है वेश्या जब मार मार मारी ।
तारो हरी सवेरी अब कीजिये न देरी ।
दुर्दैव हाय मेरी नैया भँवर मझारी ॥
पुरुषों ने तो डुबाई मन से दया उठाई ॥
अब राम हो सहाई तुमहि हो न्यायकारी ॥

ग़ज़ल ५६८

विधवों के हाल ज़ार का मुझ से बयां न हो ।
ख़ाली न है मकां ज़हां आहो फुग़ाँन न हो ॥
जिस घर में हाय हाय है बेवों की रात दिन ।
आबाद इस तरह का कभी ख़ानदां न हो ॥
मर्घट से भी सिवाय है वीरां वह क़लबे स्याह ।

इन बेकसों के दर्द का जिस में निशाँ न हो ॥
बपरे हों कान जो न सुने इन की आह को।
फूटे वह आंख जिस से कि आंसू रवां न हो ॥
जल कर हो खाक वह दिले बेदर्द जल्दतर।
रंडों की आह गर्म का जिसमें धुवाँ न हो ॥
ना कामियावियों की कुछ तो हद हो।
इनसाँ भी बदनसीब तले आसमां न हो॥
खाने को हो न नाज न हो पहन्ने को वस्त्र।
टूटा सा इनके रहने को इक साइबां न हो।
दिल में है दर्द ज़ब्त करो उस को आप राम।
आँखें वह कह रही हैं कि मुह से बयां न हो ॥

गजल ५६६

भुलाया देश हितैषी तुमने क्यों दिल से निहां हम हैं।
नहीं मालूम तुम को किस तरह से और कहां हम हैं।
सुनायें किस को हम अपनी मुसीबत की कहानी को।
कोई पुरसान हाल अपना नहीं है बेनिशां हम हैं॥
ज़माना कमसिनी है हाय वारिसी भी नहीं सर पर।
मुसीबत सैकड़ों एक दिल पै हैं और बेजुबां हम हैं।
किया आग़ाज़ में वीरान ख़िज़ां ने लूट कर गुलशन।
मुसीबत कब तलक झेलें अभी तो नौजवां हम हैं॥
बहार अपनी गई आई ख़िज़ां इस पर भी दुखिया हैं।
सताने को तुझे क्या एक फ़क़त अय आसमा हम हैं॥
उधर सरदी है ज़ोरों पर इधर कपड़ा नहीं तन पर।
लबों पर जान आई भूख से अब नीम-जां हम हैं॥
करें किस २ मुसीबत को बयां बेहद मुसीबत हैं।
नहीं पोशिश न कौड़ी पास भूखे ला-मकां हम हैं॥

कोई चारा नज़र आता नहीं दुनिया में जुज तेरे।
उठा मौत अब तो यक मुश्ते उस्तुख्वां हम हैं॥
मुबारिक हो अमीरों आशिकाना राग रंग तुम को।
यहां तो ग़म मुजस्मिम और आनाथों की फुग़ां हम हैं॥
अगर फुर्सत मिले तुमको अमीरो! पेशो अशरत से।
तो करना कुछ दया दृष्टी इधर भी मेहरवां हम हैं॥
समझ लो, सोचलो और ग़ौर करलो, साफ़ कहते हैं।
तुम्हारी आबरू के बाग़ की तो पासवां हम हैं॥
लुटाओ खूब ज़र बेजा मगर यह ध्यान भी रखना।
तुम्हारी हुब्ब कौमी और सखा की इमातिहां हम हैं॥
न हो खुशहाल हम जब तक न होगी उन्नती 'सेवक'।
हमीं ज़रिया हैं देश उन्नति का और भारतकी जां हम हैं॥

भजन ५७०

टेक—विधवा करें विलाप हो लाचार बिचारी।
क्या करें किधर हम जावें, सुख पल भर को नहीं पावें।
सहें निशि दिन संताप, दिल को नहीं क़रारी॥ बिधवा० १॥
बुड्ढे संग फेरे डारे, पिय तजि परलोक सिधारे।
अधर्मी बन गयो बाप, माता बनी हत्यारी॥ बिधवा० २॥
दिन रात बहैं दृग पानी, नहीं जाती बिथा बखानी।
रहें इस से चुप चाप, कोई न सुनै हमारी॥ बिधवा० ३॥
ऋषि दयानन्द तुम आओ, इन पोपन को समझाओ।
कहां पर छुप गये आप आती है याद तुम्हारी॥बिधवा०४॥
अपने कई ब्याह रचाते, पर हमको ज्ञान सिखाते।
बढ़ाते जग में पाप, ये मतिमंद अनारी॥ बिधवा० ५॥
बिधवों की खबर अब लीजै, कहै रूप देर मत कीजै।
पड़े इन पै दुख थाप, हे प्रभु जगदाधारी॥ विधवा० ६।

दादरा ५७१

टेक—बिधवा नारी दुखारी है भारी ॥
त्रिय बिन सबर न जैसे तुमको,
तैसे ही पिय बिन ये ब्याकुल बिचारी ॥ बिधवा० ॥
अपने ब्याह करो तुम छै छै,
इन के गलों पर क्यों रखते कटारी ॥ विधवा० ॥
रात दिवस ये आंसू बहावें,
आंखों से हरदम नहर सी है जारी ॥ विधवा० ॥
नींद न आवै खाना न भावै,
रोती हैं निश दिन मुसीवत की मारी ॥ विधवा० ॥
रूप कहै हा इन की आहते,
कर दीना ये देश भारत भिखारी ॥ विधवा० ॥

गजल ५७२

हा पती का बियोग मुझ से अब सहा जाता नहीं ।
क्या करें जावें किधर हमें काल भी खाता नहीं ॥
सासरे में तो हमें पत्थर की शिल बतलाते सब ।
हाय पीहर में भी बोलें मुंह से पितु माता नहीं ॥
रात दिन शामो सहर दिल पर रहे ग़म का दखल ।
ज़िन्दगी किस्तौर हो कहीं चैन दरसाता नहीं ॥
रोते रोते लाल रंग आंखों का देखो हो गया ।
पर हमारे हाल पर कोई रहम लाता नहीं ॥
हा ! हमारा हमदर्द जो पैदा हुआ था यक यहाँ ।
खोगया वह भी कहां ढूंढूं नज़र आता नहीं ॥
कर गया उपदेश इन का बारहा समझा गया ।
उस ऋषी का सत्य कहना भी इन्हें भाता नहीं ॥

आह विधवावों की भारत नाश कर देंगी तेरा।
ले समझ हम को रुलाने में नफ़ा पाता नहीं॥
रूप अब हम ना जियें बस ज़हर के प्याले पियें।
हाय बेवों को, यहा कोई धीर बँधावाता नहीं॥

ग़ज़ल ५७३

हैं विधवा दुखी दुख दिखाना न अच्छा॥
बहुत रो चुकी है रुलाना न अच्छा॥
अरे दोस्तो देखो इनके गले पर।
हा सदमों के खंजर झुकाना न अच्छा॥
जो विद्वान् थे सो यही लिख गये हैं।
कि भाई किसी को सताना न अच्छा॥
जो व्याह इनका दूजा बुरा आप कहते।
तो अपने भी छै छै रचाना न अच्छा।
अरे रूप विधवायें विष खा मरेंगी।
इन्हें विष के प्याले पिलाना न अच्छा॥

दादरा ५७४

टेक—कहो तो बहना कैस धरूं मन धीर।

प्राण पती परलोकसिधारे होत करेजा चीर॥ कहो तो०।
सासुसुसर मुखसों नहिं बोलें हाइ बिना तक़सीर॥ कहो तो०
पीहर में भी बात न पूछे भौजाई अरु बीर॥ कहो तो०॥
कित मैं जाऊं करूं अब कैसे नैनन बरसे नीर॥ कहो तो०॥
व्याह हमारो करता न दूजौ मात पिता वे पीर॥ कहो तो०॥
रूप कहै जियरा दुख पावै मार मरूं शमशीर॥ कहो तो०॥

ग़ज़ल ५७५

हमारी आहने भारत को ग़ारद कर दिखाया है॥
जो हमने हाँ शहंशा से गदा इस को बनाया है॥
हमारे हाल पर कोई नज़र रहमत नहीं लाता।
सनम के फ़ुर्क़ते ग़म का गले खंजर झुकाया है॥
तरश करलो ज़रा अब भी सताते वे खता क्योंकर।
सुनो अय ज़ालिमों तुमने बहुत हमको रुलाया है॥
दूसरा ब्याह बेवों का करो इस में बुराई क्या।
दयानन्द देश हितकारी ने ये तुमको सुझाया है॥
मगर उस ब्रह्मचारी की कहन कोई नहीं माने।
सितम है सत्य शिक्षा को बुरा तुमने बताया है॥
अरे ओ पापियो अब भी ज़रा सोचो तो अच्छा है।
ज़हर खाके मरेंगी हम यही अब जी में आया है॥
दशा भारत की तब सुधरे कि जब बेवा न दुख पावें।
जो है ज़रिया सुधरने का सो बस तुमको सुनाया है॥
मुसीबत रंज ग़म आफ़त में हमको क्यों फँसाया है।
भला जो चाहते अपना तो हमारा मत दुखाओ दिल॥
बुरी हालत हमारी को नज़र कर देखियो भगवन्।
शान इन पापियों को दो क्यों अब असों लगाया है॥
कहैं यों रूप पे मित्रो ज़रा कर ग़ौर सुन लेना।
ग़ज़ल मेरी न ये बिधवों ने ग़म का गीत गाया है॥

ग़ज़ल ५७६

पिया प्यारे बिना कैसे काटूं दिना,
　मुझ को सूना ये सारा ज़माना हुआ
रहैं रंजो अलम का दख़ल दम बदम,

अग्नि होत्र

दादरा ५७६

दो०—यज्ञ हवन के करने से, मिटैं सकल दुख द्वन्द।
मेघ वृष्टि हो सृष्टि पर, आवे अति आनन्द॥

टेक—यज्ञ हवन, सारे सुःखों का मूल॥ यज्ञ०॥

वायु शुद्ध हो रोगों को नाशै, उत्तम हो शाखा बढ़े फल फूल। गंग, जमुन के जल होंवें निर्मल, प्राणी चलें सब धर्मानुकूल॥ सत्य विद्या को धारण करके, पापिन अविद्या पै डालें सब धूल। पैदा उत्तम औषधि होवें, मिट जावें सारे दुख आदि शूल॥ रामचन्द्र शुभ कर्म हवन है, हो शुद्ध बुद्धी मिटै सारी सूल॥ यज्ञ०॥

कवित ५८०

मित्र विचार करो तुम क्यों नहिं अग्नि होत्र हवै सुखदाई
जीवन वायु विना नहिं होवहि, श्वासहि बंद करो तौ लखाई॥
द्रव्य सुगंधित औषधि लें, करो अग्निहहोत्र हो वायु सफ़ाई।
रामअधार अकालप व्याध मिटैं घन वर्षहि भू नियराई॥

भजन ५८१

टेक—लिखा वेदों में विधान अद्भुत है महिमा हवन की॥
जो वस्तु अग्नि मजलाई, कर हलकी ऊपर को उड़ाई।
वायु से होकर मिलान, जाती है रास्ता गगन की॥लि०१॥
फिर आकाश मंडप में आई, पानी की होती सफाई।
वृष्टि होय अमृत समान, वृद्धि हो अन्न और धनकी॥लि०॥
जब धनकी वृद्धि होती है, सब प्रजा सुखी रहती है।

न रहता दुख का निशान, आजाव लहर अमन की ॥लि०३॥
जब से यह कर्म छुटा है, भारत का सुकख मिटा है।
सो कहता दीन कल्यान, लहने दो मार दुखन की। लि०४॥

गजल ५८२

पिता तेरा है वह ईश्वर उसी को याद कर प्राणी।
हवन सुन्दर रच्यो घर २ उसीको जान अभिमानी ॥१॥
जो घी अग्नि में जलता है, ज़हर को दूर करता है।
मर्ज़ ताऊन हरता है, यही है वेद की बानी ॥२॥
पड़ी कस्तूरी और केसर, महक छाई हुई घर घर।
चलो वेदों की आज्ञा पर, नहीं होगी बहुत हानी ॥३॥
विनय करता है यह पाठक, अगर सुख चाहते मित्रो।
करो मिलकर हवन सुन्दर, यही है यज्ञ सुख खानी ॥४॥

(२७) होली आदि विविध विषय

होली ५८३

कैसी अनारिन होली मचाई ॥ टेक ॥
पी मदिरा उन्मत्त भये सब, सुधि बुधि सकल गँवाई।
गावत पद अश्लील फिरत हैं राधाकृष्ण नचाई ॥
कहत जिन को पितु माई० । कैसी अनारिन० ॥ १ ॥
कोउ कारिखा कोउ कीच लिये कर, छिपत गलिन मँह जाई।
जो निकरत नरनारी उत ते, ताके देत लगाई।
गली बिच धूल उड़ाई ॥ कैसी अनारिन० ॥ २ ॥
भाभी मामी माता सदृश, तिन संग करत हँसाई।
रीति सनातन हवन आदि तजि, धास फूस सुलगाई।
पाप सों प्रीति लगाई ॥ कैसी अनारिन० ॥ ३ ॥

शिवनारायण नेक विचारो, अबहूँ झूँठ सचाई।
वैदिक भानु उदय भयो प्यारो, सारो तिमिर नसाई।
कान्ति जग भर में छाई ॥ कैसी अनारिन० ॥ ४ ॥

होली ५८४

टेक-आर्यगण होरी मचाई, सुनत सज्जन मन लाई।
उधर कोलाहल कर रहे भारी, वृथा ही गाल वजाई॥
आर्य वेद के मंत्र उचारत, अर्थ विचार लगाई।
तत्व फल पावत भाई ॥ १ ॥
उधर काला मुख कर असवारी, पैर में घूंगर पाई।
बहु विधि रूप कुरूप बनाये, घूमत गलियों माहीं॥
प्रतिष्ठा और लाज गँवाई। २ ॥
इधर समाज सँवारे बैठे, प्रभु गुण ध्यान जमाई।
यथा योग सब कर रहे भाषण, भ्रातृ भाव दिखाई॥
परम प्रीति मन लाई ॥ ३ ॥
उधर निर्लज्ज गालियां, मुख से सबको रहे हैं सुनाई।
इधर उपदेश वेद रीति से, करत सज्जन समुदाई॥
श्रोता सब रहे हर्षाई ॥ ४ ॥
मिट्टी खाक मोरी का पानी, या केसू रंग बनाई।
डारे सारे गात्र बिगारे, गल हार जूतियां पाई॥
भलों से बने हैं सौदाई॥ ५ ॥
इधर वेद बचनों की वर्षा, शान्ति शब्द सुखदाई।
सत्संग जल से गात्र सुधारें, सतोगुण रंग चढ़ाई॥
व्यसन मन से बिसराई॥ ६ ॥
उधर मद्य में मस्त अज्ञानी, वेश्या प्रीति लगाई।
शास्त्र विचार में मग्न इधर सब, सात्विक बुद्धि पाई॥
पाप से बाचे है मिटाई ॥ ७ ॥

उधर धूप से पवन बिगाड़े, जीवों को दुःखदाई।
इधर सुगन्धित द्रव्य हवन कर, वायु जल सुधराई॥
करें उपकार भलाई ॥ ८ ॥
उधर असुर सम्पति दर्शावें, तमोगुण की फैलाई।
दैवी सम्पति इधर देख लो, दृढ "श्रीराम" बिसराई॥
सत्य हो जो मानो भाई ॥ ९ ॥

होली ५८५

टेक-आर्य्यों ने कैसी होली मचाई, देश में धूम मचाई।
विद्या की पिचकारी बनाकर, धर्म की डण्डी लगाई॥
सत्य के रंग में भर भर, वेद के शब्द सुनाई।
रंगो आत्मा को भाई ॥ आर्य्यों ने कैसी० १ ॥
ज्ञान गुलाल उड़ावत चहुदिश, तन अज्ञान हटाई।
सत उपदेश का राग हैं गात, सत्य व्याख्यान सुनाई॥
समाज की रीति चलाई । आर्य्यों ने कैसी० २ ॥
चूर भक्ति के नशे में रहते, ईश्वर से लौ लाई।
प्रेम तरंग में मन को बढ़ाते, प्राणायाम चढ़ाई॥
योग की रीति दिखाई ॥ आर्य्यों ने कैसी० ३ ॥
धीरज की डारी अवलम्बन कर, कर्म करें सुखदाई।
क्षमा रत्न को धारण करके, शान्ति रहे फैलाई॥
दया सब पर दिखलाई ॥ आर्यों ने कैसी० ४ ॥
शम दम रूप महा तप करते इन्द्रिय मन ठहराई।
आत्मिक शारीरिक उन्नति कर, ज्ञानी शूर कहलाई।
करें फिर देश भलाई ॥ आर्यों ने कैसी० ५ ॥
देशोन्नति व्रत पालन करते, तन धन अपना लगाई।
विद्या सभ्यता को फैलावें, गुरुकुल दिये बनाई।
तथा उपदेश सुनाई ॥ आर्यों ने कैसी० ६ ॥

वेद विरुद्ध असत्य मनन को, रहे अमुल उढ़ाई ।
विविध कुरीति जो प्रचलित होगई, तिनको रहे मिटाई ।
दिया जिन देश डुबाई ॥ आर्य्यों ने कैसी० ७ ॥
सज्जन आओ हम सब मिलकर, देवें समाज बधाई ।
स्वामी 'दयानन्द' के गुण गावें, जिसने घड़ी यह दिखाई ।
हमें सोतों को जगाई ॥ आर्य्यों ने कैसी० ८ ॥
'शर्म्मा' की है विनय यह सबसे, बनो वेद अनुयायी ।
तन मन धन सब अर्पण करके, प्राणाहुति दो छुड़ाई ।
धर्म्म के कारण भाई ॥ आर्य्यों ने कैसी ० ९ ॥

होली ५८६

धूर्तों ने कैसो स्वांग भरोरी ।
काहू ने चरस का दम है लगाया, काहू ने भांग पियोरी ।
पी शराब होगये मतवारे, होश न तन को रहोरी ।
नाली में जाके परोरी ॥ धूर्तों० १ ॥
वैश्या को नहीं नाच नचाते, तान पर ध्यान दियोरी ।
अबीर गुलाब मलन के मिसस, कुचको पकड़ लियोर ।
कहें फिर होरी होरी ॥ धूर्तों० २ ॥
लड़कों को कहीं बना ठना, कर नारी भेष भरारी ।
गली गली में फिरें नचावत, गाली सुनावत कोरी ।
सभ्यपन ताक धरोरी ॥ धूर्तों० ३ ॥
हार जूतियन का गल डाला, और मुँह काला कियोरी ।
गर्दभ पर चढ़ फेरी दीनी, मुख दुर्वचन भरोरी ।
लाज का परदा उठोरी ॥ धूर्तों० ४ ॥
भारतवासी निद्रा त्यागो, "शर्म्मा" कहे कर जोरी ।
आंख उठाकर देखो अब तो, विद्या भानु निकलोरी ।
दूर लुचपन को करोरी ॥ धूर्तों० ५ ॥

होली ५८७

टेक-समाजिक नियम सुनोरी, वृथा क्यों भ्रमत फिरोरी।

प्रथम सत्य विद्या और उससे जो पदार्थ प्रकट्यारी।
आदि मूल सबका परमेश्वर, और कारण समझोरी।
रटन उसही का करोरी ॥ समा० ॥
नियम दूसरा नियत यही है, ईश्वर सब में रम्योरी।
सत्य आनन्द रूप निरंजन, सृष्टि का कर्त्ता लखोरी ॥
ध्यान वाही सों धरोरी ॥ समा० ॥२॥
निराकार सर्वज्ञ अजन्मा, अनुपम समझ पढ़ोरी।
चैतन शुद्ध अमर निर्भय नित्य, सोई उपास्य सब कोरी
उठा जड़ मूर्ति धरोरी ॥ समा० ॥३॥
वेद सत्य विद्या का पुस्तक, वाही को श्रवण करोरी।
सब आर्यों का परम धर्म है, पढ़ना पढ़ाना बहोरी ॥
शान्ति आनन्द होरी ॥ समा ॥४॥
उधर रहना उचित सर्वदा, और आलस्य तजोरी।
सत्य का ग्रहण असत्य का त्यागन कर भवासिन्धु तरोरी
यथार्थ ज्ञान गहोरी ॥ समा० ॥५॥
सत्यासत्य विचार कर्म सब, धर्मानुसार करोरी।
शारीरिक आत्मिक समाजिक, उन्नति सदा करोरी ॥
जगत उपकार रच्योरी ॥ समा० ॥६॥
सब से प्रीति पूर्वक मिल के, यथा योग्य वर्त्तोरी।
धर्मानुकूल न्याय से चल कर, चित्त में सत्य भरोरी ॥
अविद्या नष्ट करोरी ॥ समा० ॥७॥
विद्या बुद्धि करो सब जग में, यही धर्म तुमरोरी।
अपनी ही उन्नति में नाहीं, तुम सन्तुष्ट रहोरी ॥
किन्तु जग वृद्धि करोरी समा० ॥८॥

तन मन धन से समाजिक, पालन नियम चहोरी ।
हो परतन्त्र नियम पालन में, स्वार्थ स्वतन्त्र रहोरी ॥
चित्त में मग्न रहोरी ॥ समा० ॥९॥
'शर्म्मन' कर समाप्त इस पद को, नहिं कुछ शेष रहोरी ।
नियम दशों पूर्ण लिख दीने, जो अभिलाष थी मोरी ॥
हुई पूर्ण यह होरी ॥ सम० ॥१०॥

भजन होली ५८८

दोहा–कैसी होली पूर्व थी, कैसी होवे आज ।
पूछो तो मालूम नहीं, है प्राचीन रिवाज ॥
टेक–न ऐसी खेलनाजी होली हरगिज भारतवासी ।
पितामहा जी ऋषी मुनी थे, करते हवन चित लाई ।
हवन के बदले आज मित्र, कूड़े में आग लगाई ॥ १ ॥
दूजे दिन होली के बाद में, धूल का दिन ठहरावो ।
नहीं उसूल मालूम तुम्हें कुछ, लौंडे भांड़ नचावो ॥ २ ॥
पहले ऋषि मुनि सब जुर मिल कर, करते थे सृष्टि विचार ।
सालाना के बुरे कर्मों पर, देते धूलि सब डार ॥ ३ ॥
इसी धूलि के बदले आज तुम, खुद ही धूलि उड़ावो ।
केशर चंदन शुद्ध वस्तु तजि मुख से कीच लगावो ॥ ४॥
काले मुंह करदो जूतों के, हार गले पहनावो ।
होली का भडुआ कह कर के, गलियों में ले जावो ॥ ५ ॥
गोदुग्ध मिष्टान मिला कर, पीते थे उत्तम प्याले ।
जिसके बदले आज यहां, पीओ शराब मतवाले ॥ ६ ॥
वैदिक रीति धर्म को तज कर, होली नई बनाते ।
दिलमें करें न ख्याल जरा भी, आखिर मनुष्य कहाते ॥७॥
सुनो मित्र धरि ध्यान करो, यह सकल कुरीति बंद ।
वैदिक रीति से हवन करो, कहैं रामचन्द्र यों छन्द ॥ ८ ॥

भजन ५८६

दिवाली।

शैर-देखिये मित्रों दिवाली आज कैसी हो रही।
मस्त सारी रात भर जूए में दुनिया हो रही॥
खेलते ज्वारी जुआ में बेच देते हैं मकान।
लक्ष्मी पूजा के दिन ऐसी दुर्गति हो रही॥
टेक-ज़रा तो सोचना जी कैसी होवे निराली दिवाली।
पितामहा जो बड़े तुम्हारे, जिन की हो संतान।
उनके नियम उसूलों पर तुम्हें, धरना चाहिये ध्यान॥१॥
वर्षा विगत बदलना ऋतुका, पड़ती थी जब ठंड।
नये अन्न अरु वस्त्र दान करने क थे सब घर फंड॥२॥
आजके दिन करते हिसाब सब, धर्म दान क्या हुआ।
जिसकी एवज आप खेलते फिरते, घर २ जूआ॥३॥
गोवर्धन दिन था शुमार का, कितने गौ और बैल।
देते उन सब को इनाम जो करते पशू की टैल॥४॥
फिर दुतिया के दिवस जाधन्या लावनमें आती थी।
भ्राता से मिल भोजन करती सुसरे गृह जाती थी॥५॥
यथा पूर्व नियम ऋषियों का दीया मित्र वतलाय।
रामचन्द्र कहैं पूर्व रीति सब दई भजन में गाय॥ ६॥

भजन ५६०

सलूना।

दो०-सुनो मित्रवर ध्यान धरि, सावन के त्यौहार।
मावस था और पंचमी, तीज सलूना चार॥
टेक-ये श्रावण मास में जी शुभ दिन है त्यौहार सलूना।
आधे श्रावण की मावस्या, हरियाली कहलावे।

जिस से अन्न होता है पैदा, वह हल पूजा जावे ॥१।
फिर श्रावन के शुक्ल पक्ष में, आती है एक तीज।
नहीं तुम्हें मालूम है उसकी है वो तीज क्या चीज ॥२।
जबकि यहां पर छोटी कन्या पढ़ती थीं विद्या बिचारी।
आज के दिन इम्तहान होता है, यह है तीज कुमारी ॥३॥
इस के बाद में नाग पंचमी, वेद मन्त्र उच्चार।
नाद शब्द का नाग बना कर, पूजै हैं नर नार ॥४॥
आखीरी श्रावन दिवस, एक होती है हमेशा पूनो।
इस पूनो के दिन का ही, होता है नाम सलूनो ॥५।
आजके दिन करि हवन ब्राह्मण देवें वेदकी शिक्षा।
ये है अर्थ रक्षा बन्धन का, करो धर्म की रक्षा ॥६॥
श्रावण दिवस समाप्त आजदिन, श्रावणीक कहलाई।
शुभ अवसर पर रामचन्द्र ने नई करी कविताई ॥७॥

होली ५६१

टेक—होली खेलत जन्म सिरानो।
पाय अमूल्य मनुज को जामा, पाप पंक में सनोजी।
भयो उन्मत्त मोह मद पीकर सुधि बुधिज्ञान नशानो॥
हाथ विषयन के बिकानो॥ हो० १॥
लख चौरासी स्वांग बनाकर, धरयो मनुज की बानी।
दुख सुख रोग भोग बहु भोगे, तहुं नहीं तनिक अघानो॥
फेरे भोगन में भुलानो ॥ हो० २॥
दर २ दांत दिखाय दीन हुइ ताकत मुख जो बिरानो।
एसे निर्लज्ज लाज नहीं आवत, निज स्वरूप बिसरानो॥
देख दुनियां को लुभानो॥ हो० ३॥
धन बल रूप पाय के पामर ऐसा निपट बौरानो।
है यह चांदनी चन्द रोज़ की फिर यहां उठिजानो॥
बनत किस पर दीवानो॥ हो० ४॥

रचत प्रपंच बहुत दिन बीते, अजहुं फिरत यह कानो।
चेतत नहीं बलदेव मूर्ख तू चौथापन नियरानो।
नहीं निज पति पहचानो ॥ हो० ५ ॥

होली ५६२

टेक—मैं डूबत हूं भव सिन्धु धार,
प्रभु बांह पकड़ मोहिं करो पार ॥ मैं० ॥
भ्रम भंवर चंचलता है लहरें इनमें पड़ कैसे होऊं पार ॥मैं० १॥
कपट ग्राह और मच्छ ईर्षा इन वैरिनको डालो मार ॥ मैं०२ ॥
दुरवासनासिदबी तनकी नौका, कोई न सूझ बचानेहार॥मैं०३॥
संकट जबही निवारण होय,नाथ बनो तुम करुणाधार॥ मैं०४॥
देखो न अवगुण प्रभु बलदेवके, विनती करत हूं बार २ ॥मैं०५॥

होली ५६३

कैसी बिगड़ गई होली, नहीं कुछ जात कहोरी।
यह त्योहार ऋषि मुनियोंने, लाभ के अर्थ रचोरी ॥
ताको बिगाड़ मूढ़ लोगों ने, सत्यानाश कियोरी।
सुधार का यत्न करोरी ॥ कै० १ ॥
अन्त में वर्ष के खेतों में जिस दम, नवीन अन्न उपजोरी।
हर्ष में सब मिल करते हवन थे, नगर में हो एकठोरी ॥
और घर २ चहुं ओरी ॥ कै० २ ॥
ऋतु के बदलने से मित्रों, सुनलो वायु जो बिगड़ोरी।
शुद्ध हवन से होता था वह भी, दूजे यह लाभ हतोरी ॥
रोगों का नाश कियोरी ॥ कै० ३ ॥
प्राचीन रीतों को तज कर, यह अनरीत कियोरी।
लक्कड़ झांखड़ कंडा जलाकर, होली नाम धरोरी ॥
महा पाखण्ड रचोरी ॥ कै० ४ ॥

युवा बाल वृद्ध-सब नारी, नर रंग में हों सरबारी।
काला लाल बनावें फिर मुख, कैसा स्वांग बनोरी॥
देश से ज्ञान मिटोरी॥ कै० ५॥
गांजा भंग चरस मदिरा पी, बुद्धि को भ्रष्ट कियोरी।
मात बहिन कन्या के सन्मुख फूहड़ गान करोरी॥
लाज नेकौ ना कियोरी॥ कै० ६॥
मनुष्य नाम सार्थक जो चाहो तो यह कुचाल तजोरी।
नहीं तो दोनों लोक बिगड़कर, जीते ही नर्क पड़ोरी॥
बलदेव की बात सुनोरी। कै० ७॥

होली ५६४

टेक-विनय करों कर जोरी, भ्रात ऐसी खेलो न होरी।
अशुचि कीच अरु धूरि उड़ावत, करि २ के बरजोरी॥
निर्लज होके गारी गाओ, घूमहु खोरिन खोरी।
लाज गुरु जन की तोरी॥ विनय० १॥
गांजा भांग अफ़ीम चरस अरु, दारू मजूम वहोरी।
खाय २ वदमस्त भये जब, शास्त्र पथ दियो चोरी॥
वंधे अविवेक की डोरी॥ विनय० २॥
विषय ज्ञान अरु नित्यपेखना धूम मची चहुँओरी।
करि कुमके देखत लवलाये, मुख से मलि मलि रोरी॥
भई ऐसी मति भोरी॥ विनय० ३॥
होरी निधान हवन साझे को, सो विपरीत भयोरी।
कहत दलेल करो विधिवत जो तो सुखबढ़े चहुँओरी॥
मचावहु गहरी होरी॥ विनय० ४॥

बसन्त।

आयो वसन्त बड़ो सुखदाई, दाई। हर एक रंग के फूल
कुदरती ऋतु वहार जग माहीं, माहीं॥ हरि हरि अम्बा बौर

कोमलसी टेसू बसन करि जाई, जाई। वन उपवन रमणीक दिखानी सरसा अजब राई, राई॥ कामी मन कुछ बोध रखत नाहीं किसकी महिमा रवि छाई, छाई॥ लक्ष्मण प्रेम सो रंग बसन्ती हर एक प्रीति करो भाई, भाई॥

मुबारिकाबाद नामकरण संस्कार।

ग़ज़ल ५६५

ये उत्सव नाम रखने का मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभी सुजनों का यहां आना मुबारिक हो मुबारिक हो॥
ये उत्सव की घड़ी यह दिन यह खामां पेशो इशरतके।
खिंचा है नूर का नक़शा मुबारिक हो मुबारिक हो॥
महिक उठती हवन की है और होता गान वेदों का।
महाशयगण का यहां आना मुबारिक हो मुबारिक हो॥
रहै शादां व खुश खुर्रम् चिरंजीव ईश वह बालक।
बने यह चांद निज कुल का मुबारिक हो मुबारिक हो॥
प्रतापी तेज बलधारी निपुण हो वेद विद्या में।
धर्म मर्याद पर चलना मुबारिक हो मुबारिक हो॥
तपस्वी हो दयालु हो और होवे सब हितकारी।
और पालन चारोंआश्रमका मुबारिक हो मुबारिकहो॥
रहे तत्पर सदा पित मात का यह आज्ञाकारी।
रहे मां बाप का साया मुबारिक हो मुबारिक हो॥

आर्यसमाज का अभ्युदय

भजन ५६६

दोहा—सोहत जाके शीश पै, सत्य धर्म का ताज।
　　क्यों न करे संसार में, उन्नति आर्य-समाज॥
　　आर्य-समाज केरे, मित्रो सुनो नियम सुखदाई।

सर्व सत्य विद्या, विद्या से, जो कुछ होता ज्ञान।
आदिमूल उन सबका केवल, है जगदीश प्रधान ॥ आर्य०
करो सदा उसकी उपासना, जो है सर्वाधार।
शुद्ध सच्चिदानन्द निरंजन, निराकार करतार ॥ आ०
सकल सत्य विद्या का पुस्तक, वेद ब्रह्मकृत चार।
है उसका पढ़ना सुनना सब, आर्य-धर्म का सार ॥ आ०
सत्य ग्रहण करने में उद्यत, रहें सर्वदा आर्य।
उसी प्रकार असत्य त्याग का, रक्खें जारी कार्य ॥ आ०
पहले सत्य तथा असत्य का, करलो खूब विचार।
तब सब काम लोक हितकारी, करो धर्म अनुसार ॥ आ०
शारीरिक, आत्मिक, सामाजिक, उन्नति करना जान।
इस समाज का जगत हितैषी, है उद्देश्य प्रधान ॥ आ०
सब से मिलो विरोध त्याग कर, सहित प्रीति सद्भाव।
करो धर्म अनुसार सर्वदा, यथायोग्य वर्त्ताव ॥ आ०
करो अविद्या अन्धकार का, सब प्रकार से नाश।
सर्व सत्य सुखदा विद्या का, करो प्रबोध प्रकाश ॥ आ०
केवल अपनी ही उन्नति से, करो नहीं सन्तोष।
सबकी उन्नति में निज उन्नति, समझो त्यागो दोष ॥ आ०
सब के हितकारी नियमों के, पालन में परतन्त्र।
निज हितकारी नियम में रहें, 'रामनरेश' स्वतन्त्र ॥ आ०

भजन ५६७

आर्यसमाज ने रे, समझो क्या २ कर दिखलाया ॥
हिलमिल मेल मिलाप बढ़ाया, सुधरे आर्य सपूत।
भारत से भागा जाता है, छुआ छूत का भूत ॥ आ०
सज्जन थोथा जात पात के, जाल खटाखट तोड़।

करने लगे उच्च जीवन से, निज जीवन की होड़ ॥ आ०
होता नहीं जन्म से कोई, उत्तम महानुभाव।
ब्राह्मण क्षत्रिय वैश्य बनेगा, सद्गुण कर्म स्वभाव ॥ आ०
अब न रहेगी बात बात में, भूलों की भरमार।
जो प्रमाण से सधे उसी को, ठीक कहे संसार ॥ आ०
जड़ पूजा छुट गई गई मिट, अवतारों की आस।
हुए सचेत साधु संन्यासी, परमेश्वर के दास ॥ आ०
रह न गया अर्थ वहकाने को, गोलमोल व्यौहार।
सब कौतुक परख जाते हैं, जांच आंच में डार ॥ आ०
आर्यों का है प्राणिमात्र से, उपकारी सम्बन्ध।
अन्य मतों की भांति नहीं है, पक्षपात की गंध ॥ आ०
भारतवासी वैदिक पथ पै, आये पाय प्रमाण।
निन्दनीय हो गये अभागे, भूत प्रेत पाषाण ॥ आ०
विद्वानों को हुई सनातन, संस्कारों से प्रीति।
मिथ्या माने पिण्डोदकसी, कल्पित कुमति कुरीति ॥ आ०
आप्तप्रणीत आर्ष ग्रन्थों का, आर्य कर रहे पाठ।
पाखण्डों से गुंथी हृदय की, छूट गई है गांठ ॥ आ०
धर्म करो आलस को त्यागो, और सुधारो देश।
देते हैं पण्डित संन्यासी, उपदेशक उपदेश ॥ आ०
जालपाल पौराणिक मत की, खोल दिखाई पोल।
बाज रहा है गांव गांव में, वेद-धर्म की ढोल ॥ आ०
ठौर ठौर हैं वेदपाठ के, विद्या-भवन प्रधान।
नर नारी जिन में पढ़ होंगे, विदुषी विद्यावान ॥ आ०
विश ब्रह्मचारी समूह को, गुरुकुल बीच निहार।
भावी उन्नति का अनुभव कर, है आनन्द अपार ॥ आ०
नारी-शिक्षा के प्रचार में, हुई घनी तदबीर।
बनें धीर माता बच्चों को, करें अलौकिक वीर ॥ आ०

चारों ओर अनाथालय के, खुले हुए हैं द्वार।
भारत दीन अनाथ जहां पर, पाते हैं आहार ॥ आ०
फल खाने अब लगे मांस के, खाने वाले लोग।
तजि वारुणी विलास दूध का, करते हैं उपयोग ॥ आ०
छोड़ पतुरिया की पहुनाई, यती हो गये जार।
डरने लगे अहर्निशि लोभी, लम्पट लंठ लबार ॥ आ०
ब्रह्मचर्य के ग्रहण मान का, बहा महान प्रवाह।
पास नहीं फटके समाज के, वैरी बाल विवाह ॥ आ०
असहनीय विधवा के सारे, दूर हो गये क्लेश।
दयानन्द ऋषि के प्रताप का, यह फल 'रामनरेश' ॥ आ०

भजन ५६६

इस आर्यसमाज उदार ने,
समझो क्या कर दिखलाया ॥
भारत के सब हिन्दू भाई, होते मुसलमान ईसाई।
पाते फल निदान दुखदाई, वैदिक धर्म प्रचार ने ॥
उनको सन्मार्ग जुझाया। सम० १ ॥
भिक्षुक दीन अनाथ बिचारे, विधवा मर जातीं बिन मारे।
सब के दुख समाज न टारे, उन्नति के सत्कार ने
अवनति का भाव भगाया ॥ सम० २ ॥
सदाचार में नर अनुरागे, कपट कुरीति कुटिलता त्यागे।
धींगीत का घर भागे, सात्विक शुद्ध विचार ने ॥
अपना प्रभुत्व प्रकटाया। सम० ३ ॥
शिक्षित ब्रह्मचारिणी नारी, होगी धीरों की महतारी।
मनुजमात्र का हो हित भारी, गुरुकुल पुनरुद्धार ने।
गुरु गौरव मान बढ़ाया। सम० ४ ॥
टूटे बन्धन छूत-छात के, मिटे अड़ंग जात-पात के।

रहे न संशय बात-बात के, दुर्गति दम्भ-विकार ने।
दुर्दशा दौड़ि अपनाया ॥ सम० ५ ॥
अब न सुधारक वीर डरेंगे, मुदित विदेश प्रमाण करेंगे।
सीख कला कौशल सुधरेंगे, अगणित अत्याचार ने।
दुख परवश का समझाया। सम० ६ ॥
रागद्वेष अज्ञान हटाके, छल का घोर घमण्ड घटाके।
स्वार्थ सिद्धि का पथ पलटा, के विद्या के परिवार ने।
अपना अधिकार जमाया ॥ स० ७ ॥
कटी मोह ममता की फांसी, शिक्षा देते हैं संन्यासी।
'रामनरेश' रही न उदासी, सुखदा सुमति सुधार ने।
क्या सुन्दर फल उपजाया० ॥ ८ ॥

गजल ५९९

वेदोक्त धर्म गोद में समाज पल गया।
पाखण्ड का अधीर कलेजा दहल गया॥
ऋषि के प्रणीत ग्रन्थ माननीय हो गये।
झूठे कथक्कड़ों का भ्रम-जाल जल गया॥
होने लगा महोपदेश सत्य ज्ञान का।
दुख द्वेष दुराचार दम्भ द्रोह टलगया॥
अब धर्मवीर धर्म के प्रचार में लगे।
जैसे सुधार का "नरेश" वृक्ष फल गया॥

भजन ६००

भ्रम तजि आर्य बनो सब भाई ॥ टेक ॥
वेद पढ़ो कर्त्तव्य सुधारो छोड़ो वेगि बुराई।
सुन्दर मति शान्ति पाओगे होगी भूरि भलाई ॥ भ्रम०
सत्य सनातन धर्म कर्मकी गैल परम सुखदाई।

कब आयत्व हीन किस नर ने प्रचुर श्रेष्ठता पाई ।
क्यों न जगत में उन्नति पावे प्रतिभाग प्रभुताई । भ्रम०
जीवनकी यात्रा में अगणित अधिक व्याधि कठिनाई ।
मुक्ति न 'रामनरेश' मिलेगी करके खोट कमाई । भ्रम०

गजल ६०१

सुखी इस दीन भारत को बना दो शूरमा आर्यो ।
सनातन धर्म का डंका बजा दो शूरमा आर्यो ॥
अविद्या के अखाड़े में सदा जो हारते आये ।
उन्हें विज्ञान का बल दे जिता दो शूरमा आर्यो ॥
सुधारो ब्रह्मचर्याश्रम बढ़ाओ बालकों का बल ।
हनूमानादि की समता करादो शूरमा आर्यो ॥
पढ़ाओ वेद कन्या को अनिन्दित क्यों कि वेदों में ।
मिला अधिकार लोगों को बता दो शूरमा आर्यो ॥
पतिव्रत पालने की नारियों में शक्ति पैदा हो ।
सती सीता की श्रेणी में बिठा दो शूरमा आर्यो ॥
प्रशंसाप्राप्त गुरुकुल की करो सेवा लाकर जी ।
प्रतिष्ठा सत्यशास्त्रों की बढ़ादो शूरमा आर्यो ॥
सदाचारी कुलीनों से न रक्खो भेद हे भाई ।
अछूते मेल की मेला लगा दो शूरमा आर्यो ॥
सुधारो देश 'रामनरेश' ईश्वर के बनो प्यारे ।
धरा पर धूम शिक्षा की मचा दो शूरमा आर्यो ॥

भजन ६०२

आओ मित्रो हम सब मिलकर, अब कुछ धर्म-सुधार करें ।
जो हो सच्चा धर्म सनातन, उस को अंगीकार करें ॥

ऋषि मुनि वेद प्रमाण तर्क ये, जिसे कहैं यह ठीक है।
वाद विवाद विसार उसी को, सब कोई स्वीकार करें॥
श्री जगदीश न्यायकारी ने, विरचे चारों वेद हैं।
उसकी आज्ञा के अनुगामी, बन कर उन को प्यार करें॥
विज्ञ ब्रह्मज्ञानी ऋषियों ने माना जिस को श्रेष्ठ है।
ऐसे संशयहीन ज्ञान को, बिना विरोध प्रचार करें॥
जिस से घोर अधोगति घर से, सब बाहर हो जांयगे।
ऐसी शान्तिमयी सुखदाई, रीति सदा व्यवहार करें॥
जिस से फूट अविद्या आलस, भारत से भग जांयगे।
बस ऐसा उद्योग प्रतिज्ञा, दृढ़ करि बारम्बार करें॥
देख महा दुर्दशा देश की, आप दुखी हो जांयगे।
बेशक धीर विचार करेंगे, किस प्रकार उद्धार करें॥
आओ मिले दिल खोल प्रेम से, "रामनरेश" समाज में।
उठो, सुधर्म-बीर बन जावें, दुखसागर को पार करें॥

भजन ६०३

टेक-एक दिन भारत होगा सुखारी, हमें उम्मेद हैरी।
महा अंधेर घोर जड़ता बस, छाई थी जहँ अंधियारी।
तहां देखलो कदम २ पर निसवा हो गये जारी॥ हमें० ॥
हुई थी जहां संतान हमारी निर्बल वो निर्धार।
ब्रह्मचर्य तहं पालन कर के कर रहे देश सुधार॥ हमें० ॥
लूट लूट रहे थे हमें जहां पर धूर्त और मक्कार।
आज वहीं पर होत परस्पर वैदिक धर्म प्रचार॥ हमें० ॥
पूज कर देवल देवी अपना धर्म बिगारा।
मनू वाक्य अब देख लिया हम देवी नाम हमारा॥ हमें० ॥
पतीव्रत जो धर्म हमारा हुआ था काल समान।
उसका भी उपदेश आदि से हो गया सच्चा ज्ञान॥ हमें० ॥

सभी आर्य नारि हुई थीं जाहिल मूर्ख अजान।
इस में भी अब होय चली है बड़ी बड़ी विद्वान॥ हमें० ॥
जानि दीन अबला शूद्रों में गिनती हुई हमारी।
अब तो होने योग्य हुई हूं मैं भी आर्य नारी॥ हमें० ॥
करते पान मांस मदिरा जहां बड़े बड़े विद्वान।
उन्होंने भी अब छोड़ दिया है बच्चों का बलिदान॥ हमें० ॥
हिन्दुस्तान नाश करि धर्महि हुआ था कबरस्तान।
हुआ चाहता है फिर भारत आर्यवर्त्त स्थान॥ हमें० ॥
कोटि कोटि बच्ची बेवों की सुन सुन के फरियाद।
युवा अवस्था में शादी की रस्म होत ईजाद॥ हमें० ॥
धर्म सभा के बीच नाचती जहां वेश्या विष जाल।
वहां आज बजता है प्यारो धर्म ताल करताल॥ हमें० ॥
काम क्रोध में लगे रहें जो सुनि सुनि मीठी तान।
वह भी करने लगे महा ईश्वर का गुन गान॥ हमें० ॥
मांस और मदिरा से जो घर हुआ था मिस्ल मशान।
आज वही घर होत देखलो संध्या होन विधान॥ हमें० ॥
अब तो बड़े बड़े सज्जन भी कर रहे इस पर गौर।
'राम रूप' कहता यह भारत फिर होगा सिर मौर॥ हमें० ॥

दादरा ६०४

पीते जाइयो जी महाशय प्याला प्रेम २ का।
नहीं है स्वांग तमाशा नहीं है यहां थियेटर।
यहां तो बजता है नक्कारा सच्चे वेद धर्म का॥१॥
नहीं है यहां कुछ धोखा नहीं है यहां लालच।
सबको रोशन होके आये य एक नियम प्रेम का॥२॥
रस्ता सीधा तो बताया दयानंद ने आकर।
यश क्यों कर नहीं गावें हमक सच्चे प्रेम का॥ ३॥

सब सज्जनों से कहता प्रेमी हाथ जोड़ कर।
तुम भी पालन करलो आके ऐसे सच्चे धर्म का ॥४॥

गजल ६०५

धर्म वैदिक दुबारा बोल, बाला हो गया।
सिर्फ स्वामी की बदौलत, यह उजाला होगया ॥ १ ॥
छल कपट की खोल कोठी बन गये थे साह जी।
तर्क की डंडी गिरी, उनका दिवाला हो गया ॥ २ ॥
छोड़ दो बहुरूपियापन, अब ज़माना और है।
क्योंकि भारतवर्ष कुछ २ ज्ञान वाला हो गया ॥ ३ ॥
लो बना मन मानी पुस्तक, कह दिया इल्हाम है।
जांच की दी आँच, ता, रही मसाला हो गया ॥ ४ ॥
भ्रम से समझा था भुल्ली, सर्प वैदिक धर्म को।
अब वही वैदिक धरम, फूलों की माला हो गया ॥ ५ ॥

भजन ६०६

टेक—है ये केवल आर्य्य समाज, भलाई सबकी चाहनेवाला।
होवे जहां तुम्हारी हान, वहां पर ये होता बलिदान।
अपने अर्पण करके प्राण, तुम्हारा धर्म बचाने वाला ॥ १ ॥
जब उजड़ा था बीकानेर, मचा था चारों तर्फ अन्धेर।
वहां पर पहुँचा था येहीशेर, मरते भूखों का बचाने वाला ॥ २ ॥
देखीं लाखों विधवा नार, नित करती थीं हाहाकार।
फैला हुआ था अत्याचार, उनके कष्ट मिटाने वाला ॥ ३ ॥
फटाथा जब धर्तीका सीना (कांगड़े) वहां पर पुरुषार्थकीना।
जहाँ पर गिरे तुम्हारा पसीना, वहांपर खून बहाने वाला ॥ ४ ॥
थी जब प्लेग सारे में छाई, भारतवर्ष में मची तबाही।
फिर भी यही हुआथा सहाई, अजी मुर्दों का उठानेवाला ॥ ५ ॥

यहाँ पर ऐसा था अन्धकार, मूर्ख हो रहे थे नर नार।
बस इसने ही किया सुधार, सबको धर्म बताने वाला ॥ ६ ॥
सच पूछो तो आर्य्य समाज, रखता हिन्दू धर्म की लाज।
जिसका बुरा कहो तुम आज, यही था तुम्हें जगानेवाला ॥ ७ ॥

गजल ६०७

आरहा है वह ज़माना सुख के जब सामान हों।
हिर्स खुदगर्जी जहालत तीनों के चालान हों ॥ १ ॥
सुनते हैं सत्युग की बातें दिल में उठती है उमङ्ग।
राहगीरों तक को जिसमें राज तक भा दान हों ॥ २ ॥
बीज वह बोया गया है आयेगी एक दिन बहार।
आय क्यों न महर्षि दयानन्द जब कि कुर्बान हों ॥ ३ ॥
माता पिता गुरु तीनों ही जिनको हुए क़ाबिल नसीब।
छोटी छोटी उम्र में ही क्यों न फिर गुणवान हों ॥ ४ ॥
जब कि हों भारतवर्ष में देवकी कौशिल्या मात।
क्यो न फिर श्रीकृष्ण योगी राम सी सन्तान हों ॥ ५ ॥
हर तरफ़ कुटियां खड़ी हों जब कि विरजानन्द की।
फिर दयानन्द ऐसे लाखों ही निपुण विद्वान हों ॥ ६ ॥
स्वामी जैसे जब कि उपदेशक यहां हों दृढ़ बीर।
एक क्या लाखों मुसाफ़िर धर्म पर बलिदान हों ॥ ७ ॥
ब्रह्मचर्य्य पालना जा कर करें गुरुकुल में जो।
भीष्म हों अर्जुन हों वह अंगद हों वह हनुमान हों ॥ ८ ॥
जीते जी जो कुछ किया स्वामी ने वह प्रगट है सब।
मौत से भी आस्तिक गुरुदत्त से इन्सान हों ॥ ९ ॥
अब अशाअत में धर्म की क्या रुकावट रह गई।
मौतक़िद वेदों के जब कि बाइजे कुरआन हों ॥ १० ॥
धर्म के प्रचार में दें "चन्द्र" जीवन हर मनुष।
उस समय पूरे ऋषि के सब दिली अरमान हों ॥ ११ ॥

भजन ६०८

टेक—मित्रो! देखना जी-क्या क्या आर्य पुरुष करते हैं ॥
कुमति कुरीति निवारण करके करें सुरीति प्रचार ॥
मनुज मात्र का हृदय करेगा वैदिक मत से प्यार ॥ मि० ॥
दिखला दिया समस्त मतों की खोल ढोल की पोल ।
तेज देख कर हथकण्डों की बन्द हो गई बोल ॥ मि० ।
तरल तर्क की बैतरणी में भूला घोर घमंड ।
डूब मर गया मृतक फंड सा अंडबंड पाखंड । मि० ॥
जड़ पूजा की न रह गई अवतारों की आस ।
हुये सचेत साधु सन्यासी चेतन्ता के दास ॥ मि० ॥
विद्या के प्रचार से सब की हुई अविद्या नाश ।
अंधकार अब कहां हुआ जब वैदिक भानु प्रकाश । मि० ॥
गुरुकुल विद्यालय से पाकर विदुषी वर विद्वान ।
फिर से आर्य्यावर्त बनेगा अब यह हिन्दुस्तान ॥ मि० ॥
अनेकता मत भेद छोड़कर होगा मेल मिलाप ।
उन्नति का आनन्द लहेंगे हम सब त्यागि विलाप ॥ मि० ॥
होते है "गहलोत" देश में अब नित नये सुधार ।
केवल आर्य समाज करेगा भारत का उद्धार ॥ मि० ॥

भजन ६०९

टेक-कोई आओ लूट ले जाओ धर्म धन खड़े लुटाते हैं ।
हम भूले हुए भाइयों को ज्ञान की राह बताते हैं ।
और पतित हुए लोगों को आर्य पुरुष बनाते हैं ॥
मिस्ल अंधों के जान बूझ जो जो कुए में जाते हैं ।
हम पकड़ के उनका हाथ सड़क सीधी पै चलाते हैं ॥

सत्य असत्य का निर्णय कर सब को दिखलाते हैं।
हो संशय अगर किसी को तो उसकी संशय मिटाते हैं॥
संध्या और गायत्री के हम मन्त्र सिखलाते हैं।
अन्धाधुन्ध रसमों को सजन हम परे हटाते हैं॥
गंगा यमुना छोड़ वेद सागर में निहलाते हैं।
मुर्दा पितरों की जगह ज़िन्दों की सेवा कराते हैं॥
सच्चिदानन्द सर्वज्ञ अनूपम को पुजवाते हैं।
वोही है पूजने योग्य वेद चारों फ़रमाते हैं॥
बाल विवाह की रीत छुड़ा ब्रह्मचर्य्य रखाते हैं।
विद्या के कारण जगह जगह गुरुकुल खुलवाते हैं॥
खन्ने जैसे धर्म के प्यासे लाखों आते हैं।
वेद रूप अमृत से अपनी प्यास बुझाते हैं॥

ग़ज़ल ६१०

देखो ईश्वर की कृपा से कैसा शुभ दिन आगया।
सत्य वैदिक धर्म अबतो सब के जी को भागया॥ १॥
यक ज़माना था कि वैदिक धर्म्म की तह्क़ीर कों।
आर्य्य से हिन्दु हमारा नाम था रक्खा गया॥ २॥
हा! जला वेदों को मुद्दत तक हुये हम्माम गर्म।
और जनेऊ पर भी जज़िया अब लगाया था गया॥ ३॥
खौफ़ से तलवार के लाखों ने छोड़ा था धरम।
जिसने सर ऊंचा किया सर उसका था काटा गया॥ ४॥
ज़र के लायच से भी कितने हो गये बेदीन थे।
उसने भी छोड़ा धरम बीबी हसीं जो पागया॥ ५॥
जिन मुसल्मानों ने लाखों ज़ुल्म थे हम पर किये।
करते सर तसलीम खम हैं, जो ऋषि फर्मा गया॥ ६॥
भूल अपनी जानकर आते है वेदों की शरण।

लेने में क्या उज्र हो ? जो हम से था छीना गया ॥ ७ ॥
है मुख़ालिफ़ जोकि प्रायश्चित्त, है उनसे सवाल ।
रखते क्या परमान हैं शास्त्रोक्त जब माना गया ॥ ८ ॥
पान और मिष्टान्न उनके हाथ से खाने में छूत ।
शरबत और पीवें अरक़ है जिस में जल डाला गया ॥९॥
होटलों में खांय बिस्कुट सोडावाटर भी पियें ।
जा जगन्नाथों में जूंठा भात भी खाया गया ॥ १० ॥
औरतें बच्चों को लेकर मसजिदों और क़बों पर ।
थूंक डलवाती है जैसा रोज़ ही देखा गया ॥ ११ ॥
हा ! मदारों पर मुड़ाने जाते बच्चों की शिखा ।
क्या इन्हीं कर्मों को हिन्दू धर्म बतलाया गया ॥ १२ ॥
जो कि मांसाहारी वेश्या के लगाये मुंह में मुंह ।
आज तक देखा न कोई जात से काढ़ा गया ॥ १३ ॥
आर्यों को खौफ़ देते जात से च्युत करने का ।
देख लो अब भाइयो अन्धेर कैसा छा गया ॥ १४ ॥
चुप रहो 'मित्र' अब हरगिज़ न डर इनका करो ।
सत्य की जय हो सदा यह वेद में गाया गया ॥ १५ ॥

भजन ६११

टेक—अब भारत के आर्य दुलारे, सकल जागे जागे जागे ।
कन्या पाठशाला हैं जारी,जहँ बनती हैं विदुषी नारी ।
गुरुकुल में भी ब्रह्मचारी, पढ़ने लागे लागे लागे ॥ स० १
चलने अब लगे सत्य मग में, जहँ शान्ती मिली पग २ में ।
जितने कुकर्म थे जग में, सकल त्यागे त्यागे त्यागे ॥ स० २
वैरी इनके प्रतिकूल जो थे, उद्यत करते शास्त्रार्थ को थे ।
वह दाब बगल में पोथे, सकल भागे भागे भागे ॥ स० ३
क्या है धर्म मारग में डरना, तन मन इन पै कुर्बां करना ।
मित्रो पांव-पीछे न धरना, बढ़ो आगे आगे आगे ॥ स० ४

भजन ६१२

भयो है अब वैदिक भानु प्रकाश। टेक।
सत्य सूर्य के उदित होन तें, छल तम भयो है विनाश।
किये है उलूक समान पखंडी, उलटा भारत उसांस ॥१॥
कमल समान सत्यवादिन के, हिय में अतिहि विकास।
भ्रमर समान विषय लोभिन के काटि गई हिय की फांस ॥२॥
रात्रि क्षुधित पक्षिन सम विनश्यो, दीनन को उपवास।
चकई सम मृदु वाला विधवन, पिय मिलिबे की आस ॥३॥
अब उठि निज कर्त्तव्यहिं पालो, जाते हों दुख नास।
बिन सुकर्म कीन्हें नहिं मिटिहै, मित्र हिये की त्रास ॥४॥

भजन ६१३

वेदों का डंका आलम में बजवा दिया ऋषी दयानन्दने।
हर जगह ओं का झंडा फिर फहरा दिया ऋषि दयानन्दने ॥१
अज्ञान अविद्या की हर सू घनघोर घटायें छाईं थीं।
कर नष्ट उन्हें जग में प्रकाश फैला दिया ऋषी दयानन्दने ॥२
सर पर तूफ़ान बला का था नज़रों से दूर किनारा था।
बनकर मल्लाह किनारे पर पहुँचा दिया ऋषि दयानन्दने ॥३
घुस गये लुटेरे घर में थे सब माल लूट कर लेजाते।
सदशुक्र हाथ चोरों का पकड़ बिठला दिया ऋषीदयानंदने ४
मक्कारी दग़ा फ़रेबों से जो माल लूट कर खाते थे।
सब पोल खोलकर दिल उनका दहलादिया ऋषीदयनन्दने ॥५
उड़गये होश मतवालों के मैदान छोड़ कर रफू हुये।
हथ्यार तर्कका निकाल जब चमका दिया ऋषीदयानन्दने ॥६

क़ब्रों में सर को पटकते थे कई देरो हरम में भटकते थे।
देखान उन्हें मुक्ती का मार्ग दिखला दिया ऋषी दयानन्दने ॥७
करते थे हमेशा चीख चाख तौहीन वेद अक़दस की जो।
सर उनका वेदों के आगे झुकवा दिया ऋषी दयानन्दने ॥८
सब छोड़ चुके थे धर्म कर्म, गौरव गुमान ऋषि मुनियोंका।
फिर सन्ध्या हवन यज्ञ करना सिखलादिया ऋषीदयानन्दने ९
विद्यालय गुरुकुल खुलवाये, क़ायम हर जगह समाज किये।
आदर्श पुरातन शिक्षा का, बतला दिया ऋषी दयानन्दने ॥१०
बलिदान किया बलिवेदी पर, जीवन प्रकाश हंसते हंसते।
सच्चे रहवर बनकर सबको, चेतादिया ऋषीदयानंदने ॥

[२९] धन्यवाद

ग़ज़ल ६१४

जो आये आर्यजन आर्य्य भवन में,
बहारे ज़ीस्त आई फिर चमन में।
है शोहरा वेद का हरसू जहां में,
जो डंका बज रहा गुलशन व बन में ॥
हवन से शुद्ध हर कूने मकां है,
सुगन्धित उड़ रही घर २ सहन में।
बस उस के फ़ैज़ को हर इन्सो जांकी,
वियापर है अयां आजिज़ दहन में ॥
किरानी और कुरानी रह गये दंग,
यही तज़कार है हर एक भवन में।
हक़ीक़त में ये है मज़हब बहुत टीक,
कि सानी जिसका नहीं आया जहन में।
यह सब कृपा उसी जगदीश की है,

दया आनन्द दर्शाया जो तन में।
हुआ था हाल "छिदालाल" भारत,
दिये दर्शन, हरी सब पीड़ छिन में॥

गजल ६१५

यह उत्सव तुमको सालाना, मुबारिक हो मुबारिक हो।
सभी भाइयों का यहां आना, मुबारिक हो, मु० ॥
प्रभु तेरी दया में ये हुआ उत्सव हमारा है।
सभा करते हैं शुकराना, मुबारिक हो, मु० ॥
भवनमें हवन करते हैं, सभी पढ़कर के मन्त्रों को।
सुगन्धित वस्तु का पाना, मुबारिक हो, मु० ॥
आये है दूर देशों से, हमारे आर्य भाई।
नमस्ते कह के मिल जाना, मुबारिक हो, मु० ॥
सिवाय नाम ईश्वर के, नहीं कुछ और है चर्चा।
सर्व व्यापक के गुण गाना, मुबारिक हो, मु० ॥
करो हिम्मत तुम आपसमें सब, मिलके महाशयगण।
ये सत विद्या का फैलाना, मुबारिक हो, मु० ॥
सुधारा है जो भारत को स्वामी दयानन्द ने।
शुकर उनका बजा लाना, मुबारिक हो, मुबारि० ॥
हमेशा अर्ज करते हैं, खुशी बेकस सिदिक दिल से।
भजन मण्डली का यह गाना, मुबारिक हो, मु० ॥

गजल ६१६

यह जलसा तुमको सालाना मुबराक हो २।
मिलें हैं खेशो बेगाना मुबारक हो, मु ॥
सुशोभित आपने जो आज मंदिर को किया साहिब।
करम हम पर ये फर्माना, मुबारक हो, मु० ॥
कहां था देशका हित और कहांपर उसकी बलफत थी० ॥

यह बातें हम को समझाना, मुबारक हो, मु० ॥
कहां थीं पाठशालायें, जो वैदिक मतको सिखलाती।
गुरुकुल का ये खुल जाना, मुबारक हो, मु० ॥
दया के चांद ने आनन्द से की दूर तारीकी।
ये शुभ उपकार मरदाना, मुबारक हो मु० ।
सुगन्धित वस्तुओं की आहुती से धर्म जीवन की।
खबर आकाश तक जाना, मुबारक हो मु० ॥
बड़े विद्वान पण्डित और लायक लकचरारों से।
नलाया पन्द सुन पाना, मुबारक हो मु० ॥
महा योगी महा पंडित ऋषि स्वामी सरस्वति का।
धर्म की वृष्टि बरसाना, मुबारक हो मु० ॥
दुआ है "मुदगल" की यह रहें सब शाद आर्य्यगण।
भजन मण्डली का यह गाना, मुबारक हो मु० ॥

भजन ६१७

आज मिल सब गीयें गाओ, बस प्रभु के धन्यवाद।
जिसका यश नित्य गाते हैं गंधर्वगुणिजन धन्यवाद ॥ १ ॥
मन्दिरों में कन्दरों में पर्वतों के शिखर पर।
देते हैं लगातार सौ २ बार मुनिवर धन्यवाद ॥ २ ॥
करते है जंगल में मंगल पक्षीगण हर शाख पर।
पाते हैं आनन्द मिल, गाते हैं स्वर भर धन्यवाद ॥ ३ ॥
कूप में तालाब में सिन्धु की गहरी धार में।
प्रेम रस में तृप्त हो, करते हैं जलचर धन्यवाद ॥ ४ ॥
शादियों में जलसे में यज्ञ और उत्सव के आद।
मीठे स्वर से चाहिये, करें नारीनर सब धन्यवाद ॥ ५ ॥
गान कर "अमीचन्द" भजनानन्द ईश्वर स्तुति।
ध्यान कर सुनते हैं श्रोते कान धर २ धन्यवाद ॥ ६ ॥

गजल ६१८

परस्पर मिलके प्रीति से, ये गुण ईश्वर के गाते हैं।
लगन में पतित पावन के, भजन कीर्तन सुनाते हैं॥
लिखा है ओ३म् का अक्षर,जो उनके साफ सीने पर।
परम पद्वी के उपयोगी, इसी पर दिल लगाते हैं॥
गले में फूलों की माला, भजन संग्रह है हाथों में।
हरियश कैसा गाते हैं, अहो आनन्द पाते हैं॥
बहुत से लोग पूछे हैं, ये उत्सव आज है किसका।
सभासद साज क्यों सारे, नहीं फूले समाते हैं॥
गुणिजन देश देशों से यहां तसरीफ लाते हैं।
यह उनकी पेशवाई है, कि हम सब गीत गाते हैं॥
चलो चल देखिये मेला, समाजिक आर्य मन्दिर में।
धर्म्म को निर्णय करते हैं, सकल संशय मिटाते हैं॥
जो उपदेशों को सुनते हैं, पूरे विश्वास निश्चय से।
वही जन मोक्ष के घर का, सफा मार्ग बनाते हैं॥
सुनो प्यारे परम सज्जन,जो तुम को हम सुनाते हैं॥
भजन बिन नीके २ दिन, ये योंही बीते जाते हैं।
बहुत सोना नहीं अच्छा, सफर में जाने वालों को।
इसी मन्ज़ल पै कई राही, धर्म्म धन को लुटाते हैं॥
"अमीचन्द" धन्यवाद उनका,करे हक कौनसे मुखसे।
जो परस्वार्थ के कार्य्य का, सदा बीड़ा उठाते हैं॥

गजल ६१९

आर्य भाइयों को यह कार मुबारक होवे।
करना उपदेश परउपकार मुबारक होवे॥
आर्य भूमि से थे वेद पोशीदा बिलकुल।

हां किये स्वामी ने नमूदार मुबारक होवे ॥
किया वेदों का भाष्य स्वामी जी ने।
हम पर हां उनका परउपकार मुबारक होवे ॥
था अविद्या का अन्धेरा भारत में पड़ा।
हां अब हुआ वेदोंका चमत्कार मुबारक होवे ॥
पालो नियमों को करो सन्ध्या दो कालों में।
हां जो न माने उसे धिक्कार मुबारक होवे ॥
पढ़ो वेदों को भी तुम पढ़ाओ सब को।
हां सत्य का विद्या प्रचार यह मुबारक होवे ॥
जहे किस्मत हुआ फिर वेदों का प्रचार यहां।
करना आगाज गुरुकुल का मुबारक होवे ॥
इलतजा ईश से दिन रात हमारी है यही।
होना ब्रह्मचर्य का आगाज मुबारक ॥

गजल ६२०

सदा खुशी हो, सदा, सदा हो मगल, सदा हो जलसा ये शादियना १
सदा हो स्वस्ति, सदा हो शांति, सदा सफल हो ये यज्ञ रचाना २
सदा हो कीर्ति, सदा हो लक्ष्मी, हो बालवृद्धि है नौजवाना ३
सदा हो तुष्टि, सदा हो पुष्टि, सदा बल हो पराक्रमबढ़ जाना ४
सदा हो आपस में प्रेम प्रीति, नमस्ते कहकर के कर मिलाना ५

भजन ६२१

दोहा—परात्मा की कृपा स, हुआ सर्व आनन्द।
ईश्वर का धन्यवाद है, कहूं आखरी छंद ॥
यह उत्सव धर्म के जी, होवें सदा देश भारत में ॥ टेक ॥
होवें पुत्र धर्म के रक्षक वैदिक धर्म हितकारी।
रक्षा करें धर्म अपने की बुद्धिमान ब्रह्मचारी ॥ १ ॥
पालन करें पिता माता का बने रहे धर्मात्मा।

अपनी ज्ञान भक्ती का दान दे सब को प्रभु परमात्मा ॥ २ ॥
करें कृपा जगदीश्वर स्वामी होवें पतिव्रतानारी ॥
धर्म अनुकूल गृह अन्दर पती की आज्ञाकारी ॥ ३ ॥
परमेश्वर की कृपा से सब दिन बना रहै यह राज ।
चिरजीव रहें सदा हमारे पंचम जार्ज महाराज । ४ ॥
हे मित्रो सब से प्रार्थना चलना धर्म के रस्ते ।
रामचन्द्र सेवा में खड़े हो सब को करें नमस्ते ॥ ५ ॥

३० आर्य्य समाज के नियम ।

ख्याल ६२२

१—सकल सत्य विद्या, विद्या से जो कुछ जाना जाता है ।
आदि मूल सब ही का शंकर, एक समझ में आता है ॥

चौक १

२—सर्व शक्ति सम्पन्न विधाता ब्रह्म विश्व का करता है ।
शुद्ध सच्चिदानन्द निरामय नित्य निसंक न मरता है ॥
अकल अनन्त अनादि अजन्मा भौतिक देह न धरता है ।
न्याय शील सर्वज्ञ दयानिधि जड़ जीवों का भरता है ॥
धरो उसी का ध्यान दूसरा कौन मुक्ति का दाता है ।
आदि मूलि सब ही का शंकर एक समझ में आता है १ ॥

चौक २

३—जो विद्या वारिधि वेदों को प्यारे पढ़ो पढ़ाओगे ।
सुनो सुनाओ तो अपने तीनों ताप नसाओगे ॥
४—धारो सत्य असत्य विसारौ तब चारौ फल पाओगे ।

५—झूठ सांच को आंच धर्म के धाम काम करजाओगे ॥
तौ न रहौके उनमें जिनका पंच भूत से नाता है।
आदि मूल सबही का शंकर एक समझ में आता है ॥२॥

चौक ३

६—तुम सामाजिकदेहि आत्मिक उन्नतिअनुदिन किया करौ।
मान मुख्य उद्देश पढ़ेगी का सब को सुख दिया करौ ॥
७—यथा योग्य बरतौ सब से प्रतिवार प्रेम यश लिया करौ।
८—आठौयाम अविद्या को तज विद्या का रस पिया करौ ॥
९—सब की उन्नति में निज उन्नति की नवनिधि नरपाता है।
आदि मूल सबही का शंकर एक समझ में आता है ३ ॥

चौक ४

१०—सबके हितकारी नियमों के पालन में परतंत्र रहौ।
नाति रीति सीखो समाज की गुरु लोगों की गैलगहौ ॥
हितकारी नियमों के पालन का आनन्द स्वतंत्र लहौ।
वैदिक मत के सारभूत यों दश नियमों का भाव कहौ ॥
श्रीमद्दयानन्द स्वामी के उपदेशों का खाता है।
आदि मूल सब ही का शंकर एक समझ में आता है।

[३१] श्रीमहाराजाधिराजजार्ज पंचम को धन्यवाद।

गजल ६२३

बिस्तौर कर सकूं मैं तारीफ़ शाह तेरी।
करता है कुल जमाना जब वाह २ तेरी ॥

फिर मुर्दा दिल हमारा हुआ शादमा दुबारा।
हुई फ़ज़्ल ओ करम की जब से निगाह तेरी।
होता अवद सलामत ऐ शाह जार्ज पंचम।
होवे तुझे मुबारिक आराम गाह तेरी॥
सदा होते रहें उत्सव जुड़े ऐसे महाशय गण।
और सेवक को दुआ देवें मुबारिक को मुबारिक हो॥

गज़ल ६२४

मेरी यह अर्ज़ जगदीश्वर, दयाकर आप सुन लीजे।
हमारे जार्ज पंचम को, चिरआयुःहे प्रभो! कीजे॥१॥
दयामय आप हैं स्वामिन, अदल भी आपका कामिल।
हमारे राजराजेश्वर को, दोनों ही अता कीजे॥२॥
दया से दुःख को मेटें, अदल से सुक्ख फैलावें।
तेरी भक्ती में चित लावें, यह शक्ती दान दे दीजे॥३॥
करें सम प्यार पुत्रों पर, वह गोरा हो चाहे काला।
पिता के धर्म हैं जितने, वह सारे ही सिखा दीजे॥४॥
बताया राज का मारग, पिता तुमने जो वेदों में।
उसी मारग का अनुयायी, शहन्शाह को बना दीजे॥५॥
विनय अन्तिम यह शर्मा की, पिता जी आप से हरदम।
हरिश्चन्दर सा सतवादी, करण सा दानी कर दीजे॥६॥